UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186477

UNIVERSAL
LIBRARY

Osmania University Library

Call No H 530 B32M

Accession No P.G H 2458

Author Basu Nagendranath.

Title Madyamik Bhoutik Vigyan

This book should be returned on or before the date last marked below

माध्यमिक भौतिक-विज्ञान

[INTERMEDIATE PHYSICS]

भाग १

Hindi Seminar Library
OSMANIA UNIVERSITY
No. 2458

नगेन्द्रनाथ बसु, एम. एस. सी.
रिपन कालिज, कलकत्ता

तथा

ज्योतिर्मय चटर्जी, एम. एस. सी.
स्कॉटिश चर्च कालिज, कलकत्ता

मिश्रित

१८वे अंग्रेजी संस्करण का
हिन्दी रूपान्तर

Post Graduate Library
College of Arts & Commerce

१९५९
एस० चन्द एण्ड कम्पनी
दिल्ली— जालन्धर— लखनऊ

5. ताप-मापन ... 345
6. अवस्था-परिवर्तन .. 382
7. आर्द्रता-मापन ... 415
8. ताप-सचरण ... 433
9 ताप का यांत्रिक तुल्याक ... 469
10 ताप-इंजिन ... 486

प्रकाश (Light)

I. सीधी रेखा मे चलना : दीप्ति-मापन 501
2. समतलो पर परावर्त्तन ... 523
3 वक्र तलो पर परावर्त्तन .. 538
4. समतलो पर आवर्त्तन ... 561
5. गोलीय तलो पर आवर्त्तन : ताल (लैंस) ... 593
पारिभाषिक शब्द-कोष ... 623

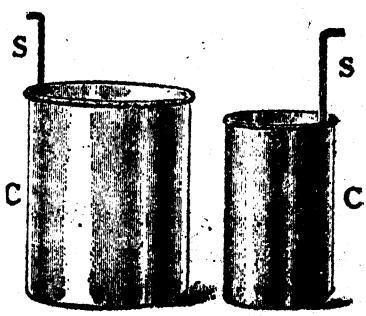
अध्याय 5

ताप-मापन
(Calorimetry)

Checked 1969

40. ताप की मात्रा (Quantity of Heat)—पीछे बतलाया जा चुका है कि ताप (उष्मा), ऊर्जा (energy) का एक रूप मात्र है। इसलिए इसको मापा जा सकता है। जब किसी चीज को गर्म करते है तो वह तापक (heater), जैसे भट्टी, चूल्हा या ज्वालक, से ताप लेती है। चीज के ठडा होते हुए वही ताप, चारों ओर वाली चीजों को मिल जाता है। किसी भी वस्तु को निश्चित तापमान तक गर्म करने के लिए निश्चित मात्रा मे ही ताप की जरूरत होती है। उस वस्तु की अपनी मात्रा दोगुना कर देने पर, उतने ही तापमान तक गर्म करने के लिए, अब दोगुने ताप की जरूरत होगी।

ताप की मात्रा को मापने के लिए ज्यादातर कैलोरीमीटर (C) (calorimeter) (चित्र 34) लिया जाता है। यह नलके (cylinder) जैसा, ताँबे का बर्तन होता है। इसके भीतर, ताँबे का बना 'मथक' (stirrer) (S) पडा रहता है। प्रयोग (experiment) की आवश्यकतानुसार ही उचित ग्राहिता वाला कैलोरीमीटर काम मे लाया जाता है।



चित्र 34

ताप की इकाई—यह शुद्ध पानी की एक ग्राम मात्रा को गर्म करके, उसका तापमान 1° सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप होती है। इसको, 'कैलोरी' (calori) कहते है।

प्रयोगों से पता चला है कि 'कैलोरी' का मान, सभी तापमानों पर एकसा नही रहता। यह पहले तो 0° सें० ग्रे० से घटना शुरू करके 4° सें० ग्रे० पर अल्पतम (minimum) हो जाता है। बाद में 4° सें० ग्रे० से ऊपर इसका मान फिर से बढ़ने लगता है। लेकिन यह बदल इतनी कम होती है कि जब तक बहुत ही शुद्ध फल की जरूरत न हो, इसको छोडा जा सकता है। इस तरह 'कैलोरी' का मान व्यवहारतः (practically) स्थिर ही समझा जा सकता है।

व्यावहारिक कार्यों में 'कैलोरी' काफी छोटी पड़ती है। इसलिए यूरोपीय इंजीनियर एक दूसरी इकाई 'किलोग्राम-कैलोरी' (Kgm-cal.) का प्रयोग करते हैं, क्योंकि एक किलोग्राम पानी का तापमान, 1° सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा होती है। इसी तरह ताप की ब्रिटिश-ताप-इकाई (B. Th. U.), 1 [illegible] पानी का

तापमान, 1° फैरेनहाईट अधिक बढ़ाने के लिए जरूरी ताप की मात्रा होती है। गैस-कम्पनियाँ एक विशेष इकाई 'थर्म' (therm) काम मे लाती हैं, जोकि 100 पौंड पानी का तापमान, 100° फैरेनहाईट अधिक करने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा होती है (=1000 B. Th. U.) इगलैंड में 'सै० ग्रे० इकाई' चलती है। यह 1 पौंड पानी का तापमान, 1° सै० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा होती है।

पानी की (m) ग्राम मात्रा का तापमान, $t°$ सै० ग्रे० बढाने के लिए जरूरी ताप, इस तरह ($m\ t$) कैलोरी होता है। इसी पानी (मात्रा=m ग्राम) को $t°$ सै० ग्रे० ठंडा करने पर ($m.\ t$) कैलोरी ताप बाहर निकलेगा।

क्योकि 1 पौंड=453·6 ग्राम, और 1° फै०=$\frac{5}{9}$ (1) सै० ग्रे०

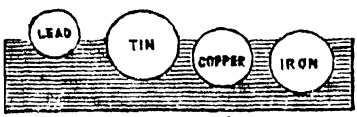
$\therefore$ 1 (B. Th. U.)=(453·6$\times\frac{5}{9}$) कैलोरी =252 कैलोरी

और 1 पौंड डिग्री सै० ग्रे०=1·8 B. Th. U =43·6 कैलोरी

'ताप-मापन' का सिद्धान्त (Principle of Calorimetry)—अगर अलग-अलग तापमानो वाले दो पदार्थ, आपस मे मिला दिए जावे, तो इनके बीच ताप का आदान-प्रदान होने लगता है, जोकि उस समय तक चलता रहता है, जब तक कि दोनों के तापमान बराबर नही हो जाते। इस बीच, जितना ताप एक वस्तु छोडेगी, उतना ही ताप दूसरी वस्तु ले लेगी। ध्यान रहे कि इस क्रिया मे हम यह मान लेते हैं कि (i) इस प्रबध मे से न तो ताप भीतर आ पाता है और न ही बाहर जा पाता है, और (ii) दोनों पदार्थों के बीच कोई 'रासायनिक-प्रतिक्रिया' (chemical reaction) नही होती। अर्थात्

(एक वस्तु द्वारा दिया गया ताप)=(दूसरी वस्तु द्वारा लिया गया ताप)

41. विशिष्ट-ताप (Specific Heat)—अलग-अलग वस्तुओ की बराबर-बराबर मात्रा से, ठडा होते हुए मिलने वाले ताप की मात्राएँ बराबर नही होती। प्रयोग के लिए अलग-अलग धातुओं (जैसे सोना, टिन, ताँबा, लोहा, चाँदी वगैरह) की एक जैसी गेंदें लेकर सबको उष्मक मे डाल दो। इससे सब गेंदे, एक ही तापमान तक गर्म हो जावेंगी।,फिर इन गर्म गेंदों को, पैराफिन-मोम की मोटी और एकसार पर्त्त पर रख दो (चित्र 35)। आप देखोगे कि गेंद, अलग-अलग गहराइयो तक धँसती है।



चित्र 35

यानी उनके द्वारा पिघलाए हुए मोम की मात्रा बराबर नहीं रही। इस अन्तर का कारण, गेंदों की धातुओं का अपना-अपना प्रकार है। तभी हम कहते हैं कि अलग-अलग पदार्थों का 'विशिष्ट-ताप' भिन्न-भिन्न होता है।

किसी वस्तु का 'विशिष्ट-ताप' (s), उसकी कुछ मात्रा (=m) का तापमान किसी भी तापमान (=t) तक बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप, और उतनी ही मात्रा वाले पानी का तापमान भी उतने ही अश (degree) बढ़ाने के लिए आवश्यक [illegible] (ratio) होता है। यानी—

विशिष्ट-ताप (s)

$$= \frac{\text{वस्तु की } (m) \text{ ग्राम मात्रा का तापमान, } 1^\circ \text{ सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप}}{\text{पानी की } (m) \text{ ग्राम मात्रा का तापमान, } 1^\circ \text{ सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप}}$$

$$= \frac{\text{वस्तु के 1 ग्राम का तापमान, } 1^\circ \text{ सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप}}{\text{पानी के 1 ग्राम का तापमान, } 1^\circ \text{ सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप}}$$

$$= \frac{\text{वस्तु के 1 ग्राम का तापमान, } 1^\circ \text{ सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप}}{1 \text{ कैलोरी}}$$

इसलिए दूसरे शब्दों मे वस्तु का वि० ताप, उसकी 1 ग्राम मात्रा का तापमान 1° सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक 'कैलोरी' कहलाता है। इसलिए जब हम कहते हैं कि ताँबे का वि० ताप 0·1 है तो इसका यही मतलब है कि ताँबे की 1 ग्राम मात्रा का तापमान, कुछ डिग्री बढाने के लिए आवश्यक ताप, पानी की उतनी ही मात्रा (= 1 ग्राम) का तापमान, उतने ही डिग्री बढाने मे लगने वाले ताप का (1/10) है। क्योंकि 'वि० ताप' केवल अनुपात ही होता है, इसलिए इसकी कोई इकाई नहीं होती। हाँ, कभी-कभी इसको 'कैलोरी प्रति ग्राम प्रति डिग्री सेंटीग्रेड' अवश्य लिख देते हैं।

'विशिष्ट-ताप' की परिभाषा से—

(m) ग्राम वस्तु का तापमान, t° सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप

$= (m\,s)$ ग्राम पानी का तापमान, t° सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप

$= (m\,s\,t)$ कैलोरी

इसी तरह वस्तु की (m) ग्राम मात्रा द्वारा, t° सें० ग्रे० ठडा होते हुए, छोडा गया ताप भी $(m\,s.t)$ कैलोरी होगा। (m) पौड वस्तु का तापमान t° फैरेनहाइट बढाने के लिए आवश्यक ताप $(m.s.t)$, ब्रिटिश-ताप-इकाई (B. Th. U.) होगा। अर्थात्

लिया गया (या दिया हुआ) ताप = (मात्रा) (विशिष्ट-ताप) (तापमानों में अंतर)

42. ताप-ग्राहिता (Thermal Capacity)—किसी वस्तु की 'ताप-ग्राहिता' उसकी सारी मात्रा का तापमान 1° सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा होती है। गणित के शब्दो में अगर वस्तु की मात्रा (m) ग्राम है, और उसका वि० ताप (s) है तो उसकी 'ताप-ग्राहिता' $(m.s)$ कैलोरी होगी। दूसरे शब्दों में वस्तु की इकाई मात्रा की ताप-ग्राहिता, उसके विशिष्ट-ताप के बराबर होती है। वस्तु के 'विशिष्ट-ताप' और 'घनत्व' का गुणनफल (product) उसकी 'आयतनिक-ताप-ग्राहिता' कहलाती है।

वस्तु का 'तुल्य-जल-भार' (Water-equivalent), पानी की वह मात्रा होती है, जिसका तापमान 1° सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप, उस वस्तु का तापमान भी 1° सें० ग्रे० बढ़ा देता है। इस प्रकार—

मानलो कि वस्तु की मात्रा $= m$ ग्राम

,, का विशिष्ट-ताप $= s$

वस्तु का तापमान, 1° सें० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक तापमान
$=(m.s.)$ कैलोरी

ताप की यही मात्रा, $(m.s)$ ग्राम पानी का तापमान, 1° से० ग्रे० बढा देगी।

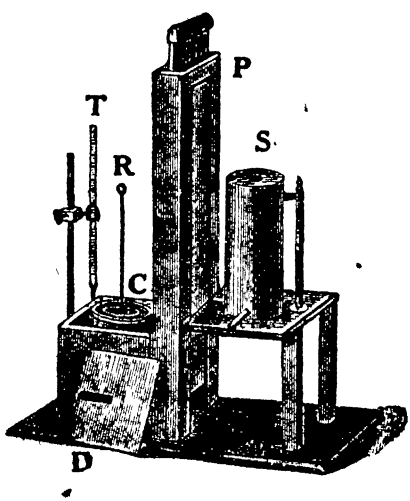
∴ वस्तु का 'तुल्य-जल-भार' $(w)=(m.s.)$ ग्राम

स्पष्ट है कि वस्तु की 'ताप-ग्राहिता' और 'जल-तुल्य-भार', दोनों का आकिक मान (numerical value) बराबर होता है, लेकिन इकाइयाँ अलग-अलग। उदाहरण के लिए 100 ग्राम वाली ताँबे $(s=\cdot1)$ वाली वस्तु का तुल्य-जल-भार, $(100 \cdot 1 = 10)$ ग्राम होगा, और ताप-ग्राहिता 10 कैलोरी।

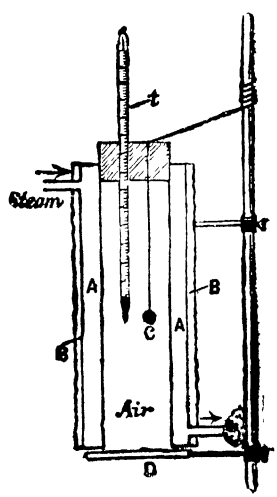
43. रेनूं का कैलोरीमापक (Regnault's Calorimeter)—पीछे हम बतला आए हैं कि तापमापन के सभी प्रयोगो मे, ज्ञात तापमानो वाली दो वस्तुओ—एक ठंडी और एक गरम दोनों—को आपस मे मिलाया जाता है। मिलाने का काम एक खास तरह के बर्तन 'कैलोरीमीटर' में किया जाता है। जब ताप का आदान-प्रदान पूरा हो जाता है, तो फलित (resulting) तापमान की माप ले लेते है॥

ऊपर वाले सारे काम के लिए "रेनूं" (Regnault) ने एक खास तरह का यन्त्र बनाया। (चित्र 36)

इसमें एक 'कैलोरीमीटर' (C), लकडी के खोखले बक्से मे, धागो पर लटका कर रखा जाता है। इसके भीतर एक मथक (stirrer), द्रव को चलाने के लिए,



चित्र 36



चित्र 37

डाला रहता है। एक स्टैंड में लगा हुआ थर्मामीटर (T), कैलोरीमीटर के भीतर डाला जा सकता है। कैलोरीमीटर को उचित आकार वाले ढकने (D) से बन्द कर सकते हैं। इस ढकने (D) के बीच में खाँच (groove), थर्मामीटर वगैरह को, कैलोरीमीटर के भीतर लाने के लिए बनी होती है। 'भाप-कोट' (steam chest),

और कैलोरीमीटर के बीच भी लकड़ी का एक पर्दा (screen) (P) लगा रहता है। इसको ऊपर-नीचे खिसकाया जा सकता है। इसके होने से एक ओर का ताप दूसरी ओर नही जाने पाता। पर्दे को ऊपर खींचकर, कैलोरीमीटर को भाप-कोष्ठ (S) के ठीक नीचे ला सकते हैं।

44. 'रैनूं का' भाप-कोष्ठ—इस कोष्ठ का यह लाभ है कि इसमें ठोस, भाप के सीधे स्पर्श से बचा रहता है, यद्यपि भाप इसका चक्कर अवश्य काटती रहती है जिससे उसका तापमान तो वही हो जाता है जोकि भाप का है, लेकिन इस पर भाप जमने नही पाती और वह पदार्थ सूखा ही बना रहता है। इस काम के लिए, एक दोहरी दीवार वाला (double walled) नलका लिया जाता है (चित्र 37)। दोनों दीवारों (A,A) और (B,B) के बीच वाले भाग को ऊपर-नीचे दोनों ओर से बन्द रखा जाता है। लेकिन अन्दर वाला भाग (C), दोनों ओर से खुला रहता है। बाहरी दीवार (B,B) मे ऊपर और नीचे दो नलियाँ लगी रहती हैं। ऊपर वाली नली से नलके में भाप घुसती है और भीतरी दीवार (A,A) के चारों ओर चक्कर काटती हुई, नीचे वाली नली मे से बाहर निकलती है। नीचे वाली नली मे रबड़ और काँच की एक नली लगाकर, ठडे पानी मे डाल देते हैं। इससे बाहर निकलने वाली भाप ठंडी होकर पानी बनकर बाहर निकल जाती है। ऊपर वाली नली को भपके (boiler-बायलर) से जोड देते है। सबसे भीतरी भाग (C) मे ऊपरी सिरे पर एक डाट (cork) लगी होती है, जिसमे बने छेद मे से थर्मामीटर (T) पिरोया हुआ रहता है। यह ध्यान रखा जाता है कि इस थर्मामीटर की डडी काफी भीतर तक घुसी रहे। इसकी घुडी के पास ही प्रायोगिक ठोस को धागे से बाँधकर लटका देते है। भीतरी भाग (C) का निचला सिरा भी खुला रहता है। जिस तख्ते पर यह दोहरा नलका रखा रहता है, वह भी भाग (C) के काट-क्षेत्र (cross-section) के बराबर ही कटा हुआ रहता है। इसलिए धागा छोड देने पर, ठोस, सीधा, इस छेद में से होकर, नीचे रखे कैलोरीमीटर मे गिर पड़ता है। लेकिन, इस छेद के ठीक नीचे ही एक आगे-पीछे खिचने वाला, लकड़ी का पर्दा (D) लगा रहता है। यह पर्दा (D), उस दशा में जबकि कैलोरीमीटर, छेद के ठीक नीचे होता है, भाप की गर्मी को उस तक नही जाने देता। ज्यादातर कैलोरीमीटर, दोहरी दीवार वाले नलके के दाएँ या बाएँ रखा रहता है। इस सारे प्रबंध से, ठोस का कैलोरीमीटर तक जाने का समय, कम से कम रह जाता है और वह बाहर के तापमान से ठंडा भी नहीं होने पाता। साथ ही कैलोरीमीटर का, अपने चारों ओर वाली गर्मी से भी बचाव हो जाता है।

45. कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार (Water Equivalent) **निकालना**—कैलोरीमीटर को साफ करके सुखा लो और इसको खाली ही तौल लो (मथक सहित) $(=m)$। अब इसको लगभग, आधा पानी से भरकर फिर तौल लो $(=m_2)$। दोनों तौलों का अन्तर $(m_2-m_1=m)$, कैलोरीमीटर में भरे हुए द्रव की मात्रा होगी। कैलोरीमीटर वाले थर्मामीटर से पानी का तापमान मापलो $(=t_1°$ सैं० गे०)। अब

एक बर्त्तन में पानी उबालो। जब इसका तापमान कुछ देर तक स्थिर ($=t_2°$ सें० ग्रे०) रहे, तो जल्दी से, इस खौलते हुए पानी की कुछ मात्रा, कैलोरीमीटर वाले पानी में मिला दो। सारे पानी को लगातार मथक से हिलाते रहो, और थर्मामीटर से, मिले हुए पानी का अन्तिम (अधिकतम) तापमान मापलो ($=t°$ सें० ग्रे०)। कैलोरीमीटर के ठंडा होने पर उसको फिर से तौल लो ($=m_2$)। इस तीसरी और पहले वाली दोनों तौलों का अतर, गर्म पानी की मिलाई हुई मात्रा (m^1) होगी। अगर पदार्थ का 'जल-तुल्य-भार' (W) है, तो—

(m^1) ग्राम खौलते पानी से, ($t_2°$) सें० ग्रे० तापमान से ($t°$) सें० ग्रे० तक ठंडा होने में प्राप्त होने वाले ताप की मात्रा $(m^1)(t_2-t)$ कैलोरी होगी।

इस ताप को कैलोरीमीटर (मथक सहित) और उसमे भरा हुआ पानी मिलकर लेते हैं। और उन दोनो का तापमान, $t°$ सें० ग्रे० से बढकर $t°$ सें० ग्रे० हो जाता है। इसलिए—

(m) ग्राम पानी द्वारा लिया गया ताप $=m(t-t_1)$ कैलोरी

कैलोरीमीटर और मंथक द्वारा लिया गया ताप $=W(t-t_1)$ कैलोरी

लेकिन ताप-समीकरण से—

छोडा गया ताप = लिया गया ताप

$\therefore m^1(t_2-t)=m(t-t_1)(t-t_1)$ W.

या $W(t-t_1)=m^1(t_2-t)-m(t-t_1)$

$$\therefore W=\left(m'\frac{t_2-t}{t-t_1}-m\right) \quad \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots (44{\cdot}1)$$

आंकिक उदाहरण

1. एक कैलोरीमीटर में 30 ग्राम पानी 28° सें० ग्रे० तापमान पर भरा है। 57° सें० ग्रे० तापमान वाले पानी की 44 ग्राम मात्रा, इस पानी मे मिला दी जाती है। सारे पानी को मथक से अच्छी तरह से चलाया जाता है। मिश्रित पानी का अधिकतम तापमान 43° सें० ग्रे० होता है। कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार ज्ञात करो।

(A calorimeter contains 30 gm. of water at 28° C. To it is added 44 gm. of water at 57°C, and the mixture is well stirred. Its maximum temgerature is 43°C. Find the water-equivalent of the calorimeter.)

उत्तर—मान लो कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार $=W$ ग्राम

गर्म पानी द्वारा छोडा गया भाप $=44(57-43)$ कैलोरी

कैलोरीमीटर और उसमे भरे हुए पानी द्वारा लिया गया ताप $=(W+30)(43-28)$ कैलोरी

$\therefore 44(57-43)=(W+30)(43-28)$

अत: **W=11·07 ग्राम**

2. एक देवार-फ्लास्क को, अधिक तापमान वाले पानी से तीन-चौथाई भर लिया गया है। फ्लास्क को अच्छी तरह से हिलाने-डुलाने पर, उसके भीतर वाले पानी का तापमान, 95° सें० ग्रे० पर स्थिर हो जाता है। अब गर्म पानी को निकालकर, उसकी जगह पर फौरन ही 15° सें० ग्रे० पर 50 ग्राम ठंडा पानी भर देते हैं। फ्लास्क को हिलाने से, इस पानी का तापमान बढकर 31° सें० ग्रे० हो जाता है। फ्लास्क का तुल्य-जल-भार मालूम करो। (गोहाटी *1952*)

(A Dewar flask is filled about three-quaters full of water at a high temperature. The water is rolled about the flask until a uniform temperature of 95°C is attained. The hot water is emptied away and 50 gm. of cold water at 15°C. are poured in. After shaking, the resulting temperature is observed to be 31°C. Calculate the water equivalent of the flask.) (*Gau. U.—1952*)

उत्तर—देवार-फ्लास्क मे गर्म या ठडे द्रव को भर लेने पर, उसका तापमान स्थिर रहता है।

मानलो इसका तुल्य-जल-भार W है, तो—

फ्लास्क द्वारा छोडा गया ताप=W (95—31) कैलोरी

इस ताप को, 50 ग्राम ठंडा पानी लेता है और इससे उसका तापमान 15° सें० ग्रे० से बढकर 31° सें० ग्रे० हो जाता है। यानी—

ठंडे पानी द्वारा लिया गया ताप=50 (31—15) कैलोरी

∴ W (95—31)=50 (31—15)

या W=**12·5 ग्राम**

3. दो वस्तुओं के घनत्वो का अनुपात 2 : 3 है और उनके विशिष्ट-ताप, क्रमशः 0 12 और 0·09 हैं। दोनो की ताप-ग्राहिताओ (इकाई आयतन के लिए) की तुलना करो। (कलकत्ता *1922, 1934*)

(The densities of two substances respectively are as 2 : 3, and their specific heats are 0·12 and 0·09 respectively. Compare the thermal capacities per unit volume.) (*C. U. 1922, 34*)

उत्तर—मानलो दोनो वस्तुओ के घनत्व, क्रमशः 2ρ और 3ρ हैं,

तो पहली वस्तु की प्रति इकाई आयतन की मात्रा=2ρ ग्राम

और दूसरी वस्तु की प्रति इकाई आयतन की मात्रा=3ρ ग्राम

∴ पहली वस्तु की प्रति इकाई आयतन की ताप-ग्राहिता=2ρ (0·12) कैलोरी

और दूसरी वस्तु की प्रति इकाई आयतन की ताप-ग्राहिता=3ρ (0 09) कैलोरी

∴ $\frac{\text{पहली वस्तु की प्रति इकाई आयतन की ताप-ग्राहिता}}{\text{दूसरी वस्तु की प्रति इकाई आयतन की ताप ग्राहिता}} = \frac{2\rho\ (0{\cdot}12)}{3\rho\ (0{\cdot}09)} = \frac{8}{9}$

45. ठोस वस्तु का वि० ताप निकालना (रेनूं-यन्त्र से)—एक साफ और

सूखा कैलोरीमीटर (मंथक सहित) लेकर, उसको खाली ही तौल लो ($=W_1$ ग्राम) फिर इसको लगभग, आधा, पानी से भरकर दुबारा तौल लो ($=W_2$) इन दोनो तौलों का अन्तर, पानी की मात्रा (m) होगी। इस पानी का तापमान ($=t°$ सैं० ग्रे०) भी ले लो।

अब ठोस को भौतिक-तुला में तौलो ($=M$ ग्राम)। फिर इसको भाप-कोष्ठ (steam-chamber) के सबसे भीतरी भाग में, धागे से बाँधकर लटका दो। ध्यान रहे कि यह नलके की किसी दीवार को न छुये। 'बायलर' (भपका) से भाप को, दोहरी दीवार वाले नलके के बीच वाले भाग में, प्रवेश कराओ। एक थर्मामीटर ठोस के पास ही लगा दो। जब इसमे तापमान स्थिर हो जावे, तो भाप का तापमान ($=t°$ सैं० ग्रे०) ले लो। तब, कैलोरीमीटर को जल्दी से, भाप-कोष्ठ के ठीक नीचे ले जावो। बीच वाले पर्दे (P_2) (चित्र 37) को हटाकर, ठोस को कैलोरीमीटर में गिरा दो। फौरन ही कैलोरीमीटर को वापस अपने स्थान पर ले आओ, और मथक से उसके पानी को चलाते रहो। अधिकतम (अन्तिम) तापमान की माप से लो ($=t_2°$ सैं० ग्रे०)।

इसके बाद कैलोरीमीटर को कमरे के तापमान ($=t_1°$ सैं० ग्रे०) तक ठडा होने दो। ठडा होने पर, उसको ठोस व मंथक सहित तौल लो ($=W_3$ ग्राम)। अगर कैलोरीमीटर की धातु का वि० ताप (s_1) और ठोस का (s) है तो—

ठोस द्वारा $(t)°$ सैं० ग्रे० से $(t_2)°$ सैं० ग्रे० तक ठडा होने मे, छोडा गया ताप $=M\,s\,(t-t_2)$ कैलोरी। इसी तरह, कैलोरीमीटर, मथक, व उसमे भरे हुए पानी का तापमान, $(t_1)°$ सैं० ग्रे० से $(t_2)°$ सैं ग्रे० तक बढाने के लिए, लिया गया ताप $=\{W.s_1\,(t_2-t_1)+m(t_2-t_1)\}$ कैलोरी

परन्तु ताप-मापन के सिद्धान्त से—

छोड़ा गया ताप = लिया गया ताप

$$\therefore M\,(s)\,(t-t_2)=\{W.s_1)\,(t_2-t_1)+m(t_2-t_1)\}\quad .....(45-1)$$

इस समीकरण (equation) से ठोस के वि० ताप (s) का गणन किया जा सकता है।

ऊपर वाला प्रयोग करते हुए ली जाने वाली सावधानियाँ, और अशुद्धियों के कारण (Precautions and Sources of Error)—

1. ठोस को भाप-कोष्ठ से कैलोरीमीटर तक जाने में कुछ समय लगता है। इस बीच यह ठोस कुछ ताप, बीच वाली हवा को दे देता है, जोकि गणन में नही लिया जाता। इस तरह उसके विशिष्ट-ताप का व्यक्त-मान (observed value) कम आता है। इस अशुद्धि को, रैनूं-यन्त्र में काफी कम कर लिया गया है।

2. प्रयोग करते हुए कैलोरीमीटर से भी कुछ ताप, संचालन और परिवाहन द्वारा, चारों ओर वाली हवा को मिलता रहता है। इस कारण से भी ठोस के विशिष्ट-ताप का व्यक्त-मान कम हो जाता है। इस अशुद्धि को इस तरह दूर करते हैं—

(i) कैलोरीमीटर को किसी ताप-अचालक (non-conductor of heat) आधार पर, या धागों पर लटकाकर रखा जाता है। कैलोरीमीटर को रखने वाला

बक्स या बर्तन भीतर से खोखला काफी गहरा और चौड़ा होता है। कैलोरीमीटर और इस बक्स (या बर्तन) के बीच वाली खाली जगह मे कोई कुचालक (bad conductor) जैसे नमदा या हवा भर देते हैं। इससे संचालन (conduction) द्वारा होने वाला 'ताप-क्षय' (loss of heat) अल्पतम (minimum) हो जाता है।

(ii) कैलोरीमीटर का बाहरी तल, और इसको रखने वाले बर्तन की भीतरी दीवारों पर पालिश कर देते हैं। इससे परिवाहन (radiation) मे होने वाला ताप-क्षय काफी कम हो जाता है।

(iii) गर्म ठोस के कैलोरीमीटर मे गिरने से, उसका और उसमे भरे पानी का तापमान, कमरे के तापमान से ज्यादा हो जाता है। इसलिए विकिरण द्वारा लगातार धीरे-धीरे ताप-क्षय होता रहता है। इसलिए पानी का उच्चतम (maximum) तापमान उतना नही हो पाता, जितना कि इस ताप-क्षय के न होने पर होता। इस अशुद्धि के दूर करने को 'विकिरण-शुद्धि' (radiation-correction) कहते है।

'विकिरण-शुद्धि' के लिए, जैसे ही ठोस, कैलोरीमीटर के पानी मे गिरता है, एक विराम-घडी (stop-watch) चालू कर देते है। जब तक पानी का उच्चतम तापमान ($=\theta_1$) आता है, घडी को चालू रखते हैं। अब जितने समय तक घडी चालू रही हो, ($=t$ सैकिड), उसके आधे समय तक, पानी को ठडा होने देते हैं। और तापमान की माप ($=\theta_2$) ले लेते है। तब उच्चतम और इस तापमान दोनों का अन्तर ($=\theta_1-\theta_2$) 'विकिरण-शुद्धि' का मान होता है। इस मान को व्यक्त उच्चतम तापमान मे जोड देने से विकिरण-मुक्त, अधिकतम तापमान की शुद्ध माप प्राप्त हो जाती है।

पानी को आधे समय तक ठडा करने का कारण यह है कि द्रव के ठडे होने की दर, उसके अपने तापमान, और चारो ओर के तापमानो के अन्तर पर निर्भर करती है। जितना ही यह अन्तर अधिक होता है, द्रव का तापमान समय के साथ-साथ उतनी ही तेजी से कम होता जाता है। इस प्रयोग मे शुरू मे पानी व कमरे के तापमान एक ही होते है (यानी ठडे होने की दर $=$ शून्य)। बाद मे अगर θ_1 से θ_2 तक ठडा होने मे (t) सैकिड समय लगता है, तो ठडा होने की दर $\left(\frac{\theta_1-\theta_2}{t}\right)$ हुई। इस तरह ठंडा होने की औसत दर, $\frac{1}{2}\left(0+\frac{\theta_1-\theta_2}{t}\right)$ हुई। क्योंकि यह क्रिया ($2t$) सैकिड तक होती रही है, इसलिए, तापमान मे, विकिरण के कारण, कमी ($\theta_1-\theta_2$) हुई।

3. तापमान की माप लेने के लिए सुग्राही (sensitive) थर्मामीटर काम मे लाने चाहिये।

4 अगर प्रायोगिक ठोस, ताप-सुचालक नही है तो इसके छोटे-छोटे टुकड़े कर लेने से सभी टकडों का तापमान बराबर हो जावेगा।

आंकिक उदाहरण

1. इस्पात के बने भाप के 'बॉयलर' का वज़न 10 टन है। इस्पात का विशिष्ट-ताप 0·12 है। बॉयलर में 8 टन पानी भरा हुआ है। उसका तापमान 15° सें० ग्रे० से 100° सें० ग्रे० करने के लिए कितने ताप की आवश्यकता होगी ?

(A steel boiler weighs 10 tons, sp. heat of steel is 0·12. The boiler contains 8 tons of water at 15°C. How much heat will be required to raise its temperature to 100°C).

उत्तर—बॉयलर की मात्रा (m) $=10$ टन $=$ (10×2240) पौंड

,, ,, धातु का वि० ताप $=s$ $=0{\cdot}12$

इसलिए बॉयलर का तापमान 15° सें० ग्रे० से 100° सें० ग्रे० करने के लिए आवश्यक ताप $=(10\times2240)(0{\cdot}12)(100-15)$ कैलोरी

इसी तरह, बॉयलर के भीतर भरे पानी का तापमान. 15° से 100° सें० ग्रे० करने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा $=(8\times2240)(1)(100-15)$

$\therefore$ आवश्यक ताप की कुल मात्रा $=2240\ (8+10\times{\cdot}12)(100-15)$

$=$ **1751,680 पौंड-डिग्री**

2. 200 ग्राम पानी (तापमान 98° सें० ग्रे०) को 200 घन सें० मी० दूध (घनत्व 1·03 और तामान 30° सें० ग्रे०) मे मिला देते हैं। दूध, 8 ग्राम ताप-ग्राहिता वाले पीतल के बर्त्तन मे रखा है। पानी और दूध को मिलाने से उच्चतम तापमान 64° सें० ग्रे० हो जाता है। विकिरण द्वारा होने वाले ताप-क्षय को नगण्य मानकर, दूध के विशिष्ट-ताप का गणन करो।

(200 gm of water at 98°C. are mixed with 200 c. c. of milk of density 1·03 at 30° C, contained in a brass vessel of thermal capacity equal to that of 8 gm. of water ; the temperature of the mixture is 64°C. Assuming that there is no loss of heat by radiation find the specific heat of milk.)

उत्तर—मानलो दूध का विशिष्ट-ताप $=S$

दूध में मिलाए गए पानी की मात्रा $(m)(=V\rho)=(1{\cdot}03\times200)$ ग्राम

पानी द्वारा छोड़ा गया ताप $(m\ s_1.\ t)=(200)(1)(98-64)$ कैलोरी

पीतल के बर्त्तन द्वारा लिया गया ताप $=8\ (64-30)$ कैलोरी

दूध द्वारा लिया गया ताप $=(200\times1{\cdot}03)(s)\times(64-30)$ कैलोरी

अतः ताप-मापन के सिद्धान्त से—

$(200\times1)(98-64)=(8+200\times1{\cdot}03\ s)(64-30)$

$\therefore$ **दूध का वि० ताप** $(s)=0{\cdot}93$

3. प्लैटीनम की एक गेंद का भार 80 ग्राम है। इसको भट्टी मे रखकर काफी देर तक गर्म करते हैं। जब भट्टी और गेंद का तापमान बराबर हो जाते हैं, तो गेंद

को भट्टी मे से निकाल कर, तुरन्त ही पानी से भरे कैलोरीमीटर मे डुबो देते हैं। शुरू में इस पानी का तापमान 15° सैं० ग्रे० था। गेंद डालने से बढ़कर, यह मान 20° सें० ग्रे० हो गया। कैलोरीमीटर और उसमें भरे पानी का तुल्य-जल-भार 400 ग्राम है। भट्टी का तापमान मालूम करो। (गोहाटी *1953*)

(प्लेटीनम का वि० ताप=0·0365)

(A ball of platinum, whose mass is 80 gm., is kept for some time in a furnace. When it has acquired the temperature of the furnace, it is immediately transferred to a vessel of water at 15°C. The temperature rises to 20°C. If the weight of water together with the water equivalent of the calorimeter be 400 gm, what was the temperature of the furnace? (sp. heat of platinum=0·0365)

उत्तर—प्रश्न के अनुसार, $m=80$ ग्राम, $s=0.0365$, उच्चतम तापमान. =20 सैं० ग्रे०, शुरू मे तापमान=15° सैं० ग्रे०

मानलो भट्टी का तापमान=T° सैं० ग्रे०

प्लैटीनम की गेद द्वारा छोड़ा गया ताप $(Q_1)=(m\ s.\ t.)$

$=80\times0.0365\ (T-20)$ कैलोरी

इसी तरह (कैलोरीमीटर+पानी) द्वारा लिया गया ताप (Q_2)

$=400\ (20-15)$

परन्तु ताप-मापन-सिद्धान्त से, लिया गया ताप=छोड़ा गया ताप

$\therefore\ 80\times0.0365\ (T-20)=400\ (20-15)$

या भट्टी का तापमान $(T)=\left\{\left(\frac{400\ (20-15)}{80\times0.0365}\right)+20\right\}$

$=705°$ सैं० ग्रे० लगभग

46. द्रव का विशिष्ट-ताप निकालना—

(1) मिश्रण-विधि (The Method of Mixtures) (क) रैनूँ यंत्र से—इस विधि मे ज्ञात (known) विशिष्ट-ताप $(=s_2)$ वाला ठोस लेकर, पानी की जगह पर, प्रयोगिक द्रव (experimental liquid) भर ली जाती है। बाकी सारा ढग, धारा 46 जैसा ही है। हाँ, यह ध्यान जरूर रखते हैं कि ठोस, द्रव मे घुलने वाला न हो। साथ ही उन दोनो मे आपस मे कोई रासायनिक प्रक्रिया न होती हो।

अगर, W, s_1, m, t_1, M, t और t_2 का वही मतलब हो जोकि धारा 46 मे था, तो—

ठोस द्वारा $(t°)$ सैं० ग्रे० से $(t_2)°$ सैं० ग्रे० तक ठडा होने मे छोड़ा गया ताप=$M.s_2\ (t-t_2)$ कैलोरी

इसी तरह (कैलोरीमीटर+मथक+द्रव) द्वारा, $(t_1)°$ सैं० ग्रे० से (t_2) सैं० ग्रे० तक गर्म होने के लिए लिया गया ताप=$\{W.\ s_1\ (t_2-t_1)+m.\ s.\ (t_2-t_1)\}$ कैलोरी

परन्तु "छोड़ा गया ताप = लिया गया ताप"

$\therefore$ M.s_2 $(t-t_2) = \{W.\ s_1\ (t_2-t_1) + m.\ s\ (t_2-t_1)\}$

या $m\ s\ (t_2-t_1) = \{M.\ s_2\ (t-t_2) - W.\ s_1\ (t_2-t_1)\}$

इस समीकरण से, द्रव के वि० ताप (s) का गणन किया जा सकता है।

(ख) द्रव को पानी के साथ मिलाकर—(i) अगर द्रव ऐसा है कि वह पानी में डालने पर रासायनिक प्रतिक्रिया नहीं करता, तो उसकी ज्ञात मात्रा को ज्ञात तापमान तक गर्म करके, सीधे ही, ज्ञात मात्रा और तापमान वाले पानी मे मिलाकर, उच्चतम तापमान की माप ले लेते हैं।

(ii) यदि पानी और द्रव को मिलाने से रासायनिक प्रतिक्रिया होती है तो दोनों को सीधे ही नहीं मिलाते। गर्म द्रव को एक पतली दीवार वाले व सुचालक धातु के बने कैलोरीमीटर में डालकर, पूरे कैलोरीमीटर को ही पानी मे डाल देते हैं।

(iii) उडने वाले द्रव का वि० ताप निकालने के लिए, द्रव को पतली दीवार वाली सुचालक धातु के बने कैलोरीमीटर मे ऊपर तक भरकर, डाट से बंद कर देते हैं। पूरे कैलोरीमीटर (द्रव-सहित) को ज्ञात तापमान तक गर्म करके, इसको ज्ञात मात्रा व तापमान वाले पानी में रख देते हैं। कैलोरीमीटर से मथक का कार्य ले लेते हैं। पानी के उच्चतम तापमान की माप लेकर, विशिष्ट-ताप का गणन कर लेते हैं।

47. शीतलीभवन-विधि (Method of Cooling)—जब किसी बर्त्तन मे गर्म द्रव रखा जाता है, और उसके चारो ओर का तापमान (t), उसके अपने तापमान (θ_1) से कम होता है, तो द्रव ठंडा होने लगता है और उसका तापमान धीरे-धीरे कम होने लगता है। तापमान गिरने की दर (rate of cooling), (i) दोनों तापमानों के अंतर $(=\theta_1-t)$ और (ii) द्रव को भरने वाले बर्त्तन के बाहरी तल और धातु के प्रकार पर निर्भर करती है। मानलो कि द्रव का तापमान, (S_1) सैकिंड मे, घटकर (θ_2) हो जाता है। तो—

तापमान घटने की दर $= (\theta_1-\theta_2)/S_1 = R_1^\circ$ सैं० ग्रे० प्रति सैकिंड

और द्रव का औसत तापमान $= [(\theta_1+\theta_2)\ 2]^\circ$ सैं० ग्रे०

$\therefore$ चारों ओर, और स्वयं द्रव तापमानों मे अंतर $= \left(\frac{\theta_1+\theta_2}{2}-\right)$ सैं ग्रे.

न्यूटन नियम से—

$$\frac{\text{ठंडे होने की दर}}{\text{तापमानान्तर}} = \left[\frac{(\theta_1-\theta_2)\ S_1}{\frac{1}{2}(\theta_1+\theta_2)-t}\right] = \text{स्थिर (constant)}$$

ऊपर के समीकरण से स्पष्ट है कि द्रव के ठंडे होने की दर पर उसके प्रकार (nature) का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए अगर भिन्न-भिन्न द्रवों को एक सी ही हालत में ठंडा किया जावे तो उनके ठंडे होने की गति उतनी ही रहेगी। यही सिद्धान्त, शीतलीभवन-विधि से, द्रव का विशिष्ट-ताप ज्ञात करने में प्रयोग किया जाता है।

दो एक जैसे ही (मात्रा व तल-क्षेत्र में) कैलोरीमीटर ले लो। एक में गर्म पानी और दूसरे में प्रायोगिक द्रव को गर्म करके भर दो। दोनों को पास-पास ठंडा होने के

लिए रख दो। अगर प्रति मिनिट R कैलोरी ताप, कैलोरीमीटर से बाहर हवा में जाता है, तो (T_1) मिनिट में, (R-T_1) कैलोरीताप बाहर जावेगा। इस परिवर्तन से द्रव का तापमान (θ_1) से (θ_2)° सें० ग्रे० हो जाता है। अब अगर पानी भी θ_1 से (θ_2)° सें० ग्रे० तक (T_2) मिनिट में ठडा होता है, तो पानी द्वारा छोडा गया ताप, ($R. T_2$) कैलोरी होगा। क्योंकि दोनों ही एक अवस्था मे ठडे होते हैं, दोनो का तापमान भी बराबर ही कम हुआ है, और दोनों मे पानी या द्रव का आयतन बराबर ही लिया गया है, इसलिए ($R. T_1$) = ($R. T_2$)

लेकिन $R. T_1 = (m+w)\ (\theta_1 - \theta_2)$

और $R. T_2 = (M.s+w)\ (\theta_1 - \theta_2)$

जब कि m = पानी की मात्रा, S = द्रव का विशिष्ट-ताप

M = द्रव की मात्रा ; W = कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार

$$\therefore \quad \frac{T_1}{T_2} = \frac{(m+w)}{(M\,s+w)}$$

$$\therefore \quad \text{द्रव का वि० ताप} = \left[(s) = \left(\frac{m+w}{M}\right)\frac{T_2}{T_1} - \frac{w}{M}\right] \quad (47—1)$$

प्रयोग के लिए, दोनों कैलोरीमीटरों को, एक दोहरी दीवार वाले नलके मे रखा जाता है। इस नलके की दोनो दीवारो के बीच का हिस्सा, ऊपर-नीचे से बन्द रहता है। इस बडे बर्त्तन की तलेटी (bottom) के पास वाले छेद से पानी अन्दर आता है, और ढकने के पास वाली नली से बाहर निकल जाता है। टोंटी से, नली को जोडकर, पानी की धार को कम-ज्यादा किया जा सकता है। नलके के भीतरी भाग मे हवा भरी रहती है। इसकी भीतरी दीवार को सूखा और काला किया रखते है। कैलोरीमीटरो के बाहरी तल को भी सूखा और काला कर लेते है। दोनों कैलोरीमीटर, बडे बर्त्तन की भीतरी खाली जगह मे रखे जाते है। इनके भीतर वाले द्रवों का तापमान, सारे मे एकसार रखने के लिए उसे मथक (stirrer) से चलाते रहते हैं। द्रव या पानी, दोनों के शुरू वाले तापमान, कमरे के तापमान से 15-20 सें० ग्रे० ऊपर रहने चाहिएँ। पानी और द्रव के बराबर-बराबर आयतन लेने के लिये 'पिपेट' (pipette) का प्रयोग किया जाता है।

अब अगर एक ग्राफ समय और तापमान के बीच खीचा जावे, तो हमें दो वक्र (curve), एक पानी का और दूसरा द्रव का, प्राप्त होगे। इस ग्राफ से, पानी और द्रव का एक ही तापमान तक गिरने का समय (T_1, T_2) ज्ञात किया जा सकता है, और (T_1/T_2) का औसत मान, ऊपर वाले समीकरण मे लगाकर, द्रव का विशिष्ट-ताप (S) मालूम हो जावेगा।

अगली तालिका (table) में कुछ साधारण पदार्थों के विशिष्ट-तापों का मान दिया गया है।

पदार्थों के विशिष्ट ताप

पदार्थ	वि०ताप	पदार्थ	वि० ताप	पदार्थ	वि० ताप	पदार्थ	वि० ताप
निकिल	·109	अलमूनियम	·214	टीन	·055	ग्लिसरीन	·56
पीतल	·088	सोना	·03	पारा	·04	तारपीन	·42
ताबा	·094	काच	·16	बर्फ	·50	ईथर	·56
लोहा	·119	सगमरमर	·22	अलसी का तेल	·50	क्लोरोफार्म	·23
सीसा	·031	तारपीन	42	रैंडी का तेल	·44	बैनजीन	·41
चाँदी	·055	जैतून का तेल	·47	ब्रोमीन	·51	जस्ता	·095
प्लेटीनम	·032	गधक	·18	अलकोहल	·62	पानी	1 000

आंकिक उदाहरण

1. एक ही कैलोरीमीटर मे एक बार 50 ग्राम पानी, और दूसरी बार, उतने ही आयतन मे अलकोहल (आ० घनत्व = 0·8) भरा जाता है। 60° सैं० ग्रे० से 55° सैं० ग्रे० तक ठण्डे होने मे इनको क्रमशः 2 और 1 मिनिट लगते है। अलकोहल का विशिष्ट-ताप बतलाओ। कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार 2 ग्राम है।

(यू० पी० बोर्ड *1951*)

(50 gms. of water and an equal volume of alcohol (relative density = 0 8) are placed one after the other in the same calorimeter. They are found to cool from 60°C to 55°C in two minutes and one minute respectively. Find the specific heat of alcohol. The watear-equivalent of calorimeter is 2 gms. (*U. P. B. 1951*)

उत्तर—2 ग्राम तुल्य-जल-भार वाले कैलोरीमीटर मे भरे 50 ग्राम पानी द्वारा, 60° से 55° सैं० ग्रे० तक 2 मिनिट मे ठण्डा होने में छोडा गया ताप =

$$(50+2)\ (60-55) = 260 \text{ कैलोरी}$$

∴ कैलोरीमीटर और पानी द्वारा छोडे जाने वाले ताप की दर =

$$(260 \div 60 \times 2) = \tfrac{13}{6} \text{ कैलोरी प्रति सैकिंड}$$

50 ग्राम पानी का आयतन 50 घन सैं० मी० होगा। इतने ही आयतन में, इसी कैलोरीमीटर मे अलकोहल लिया जाता है। अलकोहल का आ० घनत्व 0 8 है। इसलिए अलकोहल की मात्रा ($50 \times 8 = 80$) ग्राम होगी।

मानलो अलकोहल का विशिष्ट-ताप (S) है।

40 ग्राम अलकोहल और कैलोरीमीटर (तुल्य-जल-भार = 2 ग्राम) द्वारा, 60° से 55° सैं० ग्रे० तक 1 मिनिट मे ठण्डा होने में छोडा गया ताप =

$$(40.\ S+2)\ (60-55) \text{ कैलोरी}$$

∴ (कैलोरीमीटर + अलकोहल) द्वारा छोड़े गये ताप की दर =

$$(200.\ S+10) \div 60 \text{ कैलोरीमीटर प्रति सैकिंड}$$

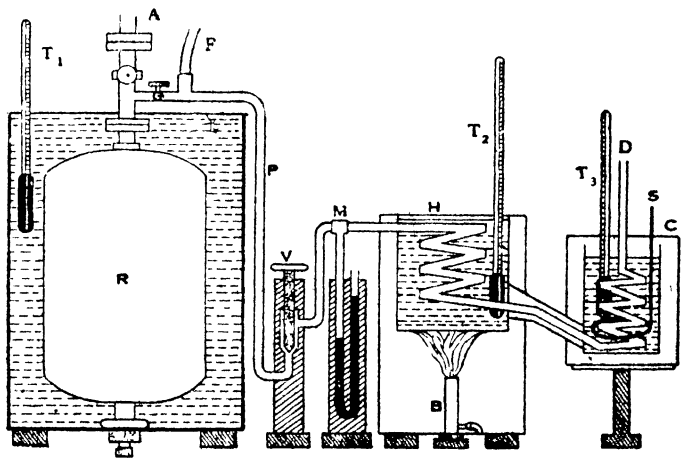
अतः 'शीतलीभवन-नियम' से—

$$\left(\frac{200.\ S+10}{60}\right)=\frac{13}{6}$$

$\therefore$ **द्रव का वि० ताप** $(S)=0.6$

48. गैसों का विशिष्ट ताप—गैस के वि० ताप पर, उसके आयतन और दबाव, दोनों का ही काफी प्रभाव पडता है। गैस को गर्म करते हुए या तो उसका दबाव स्थिर रखा जा सकता है या फिर आयतन। इस तरह हरएक गैस के दो विशिष्ट-ताप होते है—एक तो स्थिर दबाव पर और दूसरा स्थिर आयतन पर। **'स्थिर-दाबी-विशिष्ट-ताप'** $(=C_p)$, स्थिर दबाव पर, गैस की एक ग्राम मात्रा का तापमान 1° सें० ग्रे० बढ़ाने के लिए आवश्यक ताप होता है। इसी तरह दूसरा वि० ताप आयतन को स्थिर रखते हुए, गैस की एक ग्राम मात्रा का तापमान 1° से० ग्रे० बढाने के लिए आवश्यक ताप होता है और इसको (C_v) से व्यक्त (represent) करते है। इन दोनों विशिष्टतापो मे से, स्थिर-दाबी मान $(=C_p)$ अधिक होता है, क्योकि दबाव को स्थिर रखते हुए, गैस को गर्म करने पर, गैस के तापमान और आयतन दोनों ही बढते है। स्थिर दबाव के विपरीत फैलते हुए गैस को कुछ अतिरिक्त कार्य करना पड़ता है। इस अतिरिक्त कार्य को करने के लिए आवश्यक ऊर्जा, गैस के भीतर से ही आती है। ऊर्जा कम हो जाने से, गैस का तापमान भी कम हो जाता है। इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ अधिक ताप लेना पडता है। प्रयोगो द्वारा पता चला है कि द्वि-परमाणविक (diatomic) गैसो, जैसे नाइट्रोजन आदि के लिये, इन दोनो वि० तापों का अनुपात $(=C_p/C_v)$ 1·41 होता है, और एक परमाणविक (mono-atomic) गैसों के लिए लगभग 1·6.

स्थिर दबाव पर गैस का विशिष्ट-ताप ज्ञात करना—**रेनूं-विधि**—(चित्र 38) इस प्रयोग मे काम आने वाले रेनूं-यन्त्र के एक बर्तन (R) मे सूखी गैस भरी रहती



चित्र 38

है, जिसकी मात्रा का नियन्त्रण टोंटी द्वारा करके उसका दबाव स्थिर रखा जाता है बर्तन (R) को एक 'जल-उष्मक' (water bath) में रखकर, उसके अन्दरवाली गैस का तापमान भी स्थिर रखा जाता है। इस स्थिर दबाव और तापमान वाली गैस को, पाइप (P) मे से बाहर ले जाते है। वाल्व (V) इसके वेग का नियन्त्रण करता है। गैस के स्थिर दबाव को जलीय-दाब-प्रमापक (मैनोमीटर) (M) से मापा जाता है। इसके बाद यह गैस, एक लम्बी सर्पिलाकार (spirical) नली मे जाती है जोकि स्वयं, एक तेल-उष्मक (oil-bath) (H) मे पडी रहती है। इस तेल को ज्वालक (बर्नर) (B) से गर्म करके, नली के भीतर वाली गैस का तापमान बढाया जाता है, जिसकी माप थर्मामीटर (T_2) बतलाता है। यहाँ से फिर यह गर्म गैस, ताँबे की बनी दूसरी सर्पिलाकार नली (D) मे जाती है जो कि स्वय एक कैलोरीमीटर (C) के भीतर पडी रहती है। इस कैलोरीमीटर मे ज्ञात मात्रा मे पानी भरा रहता है। नली (D) मे चक्कर काटने के साथ-साथ यह गैस, अपना ताप, इस पानी को दे देती है, जिससे इस पानी का तापमान बढने लगता है जिसकी माप, थर्मामीटर (T_3) देता है। सबसे बाद मे गैस बाहर हवा मे आकर मिल जाती है।

मानलो कि कैलोरीमीटर और उसमे भरे हुए पानी का शुरू मे तापमान (t_1) सें० ग्रे० है। बाद में गैस से ताप लेकर, इसी पानी का तापमान (t_2) सें० ग्रे० हो जाता है। बर्तन (R) से आने वाली गैस की मात्रा (m), और कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार (W_1), सर्पिलाकार-नली (D) का तुल्य-जल-भार (W_2) और कैलोरीमीटर मे भरे पानी की मात्रा (m) होने पर—

कैलोरीमीटर इत्यादि द्वारा लिया गया ताप $(H_1) = (m + w_1 s_1 + w_2 s_2)(t_2 - t_1)$ कैलोरी जबकि s_1, s_2 कैलोरीमीटर (C) और सर्पिलाकार नली (D) के विशिष्ट-ताप हैं।

यह लिया गया ताप गैस द्वारा छोड़ा गया है। गैस पहले तो (T°) से (t_1) सें० ग्रे० तक ठण्डी होती है। अगर गैस का "स्थिर-दाबी-विशिष्ट ताप" (C_p) तो (M) ग्राम मात्रा द्वारा छोड़ा गया ताप—

$$H_2 = M.C_p \left(T - \frac{t_1+t_2}{2}\right) \text{ कैलोरी}$$

परन्तु ताप-समीकरण से, $H_1 = H_2$

$$\therefore M.C_p \left(T - \frac{t_1+t_2}{2}\right) = (m + w_1 s_1 + w_2 s_2)(t_2 - t_1)$$

अतः $$C_p = (m + w_1 s_1 + w_2 s_2)(t_2 - t_1) \div M\left(T - \frac{t_1+t_2}{2}\right)$$

स्थिर आयतनिक विशिष्ट-ताप C_v मालूम करना—(जौली-भाप-कैलोरीमीटर-विधि) (Joly's Steam Calorimeter Method)—इस यन्त्र का पूरा-पूरा वर्णन आगे धारा 55 में दिया गया है। प्रयोग के लिए गैस को ताँबे के खोखले गोले मे भर लेते हैं। यह खोखला गोला भौतिक-तुला के एक पलड़े से लटकता रहता है। गोले

को एक कोष्ठ में बन्द रखते हैं। पहले इस गोले को खाली, और बाद में गैस से भर-कर तौल लेते हैं। दोनों तौलों का अन्तर, गोले में भरी हुई गैस की मात्रा होती है। जब कोष्ठ में भाप भेजते हैं, तो यह इस गोले के बाहरी तल (outer surface) पर जम (condense) जाती है, और अन्त में गोले और भाप, दोनों के तापमान, बराबर हो जाते हैं। गोले के तल पर जमी हुई भाप की मात्रा को तौलों से जानकर गोले द्वारा भाप से लिये गये, ताप की मात्रा का गणन कर लेते हैं और ताप-समीकरण का प्रयोग करके, गैस का स्थिर-आयतन पर विशिष्ट-ताप ($=C_v$) ज्ञात हो जाता है।

48-A. गैसों की आयतन-स्थिति-स्थापकतायें (Volume Elasticities of Gases)—साधारण भौतिक-विज्ञान, अध्याय–7 मे बतलाया जा चुका है कि गैसों की सिर्फ आयतन में ही स्थिति-स्थापकता हो सकती है। क्योंकि गैस का आयतन, दो तरह से बदला जा सकता है इसलिए, उसकी स्थिति-स्थापकता के भी दो मान होते है। (i) समतापिक-आयतन-स्थिति-स्थापकता (isothermal volume elasticity) और (ii) रुद्धोष्म-आयतन-स्थिति-स्थापकता (adiabatic volume elasticity)

(क) समतापिक-स्थिति-स्थापकता—तापमान स्थिर रहने पर, गैसें बॉयल-नियम को मानती है। मान लो किसी नलके मे भरी हुई गैस का आयतन (V), तापमान $(t)^\circ$ सै० ग्रे० और दबाव (P) है। नलके के मुंह पर वायु-रुद्ध (air-tight) पिस्टन लगा हुआ है। अब पिस्टन पर बहुत थोड़ा सा ($=p$) दबाव बढ़ा दिया जाता है। इससे, भीतरी गैस का आयतन थोडा ($=v$) कम हो जावेगा। अगर इस क्रिया मे गैस का तापमान स्थिर रहता है, तो बॉयल-नियम से—

$$(P+p)\ (V-v)=P.V$$

या $$(P.V-Pv+pV)=P.V$$

या $$P.v=pV \qquad \text{(क्योंकि } p.v \text{ का मान बहुत ही थोड़ा है}$$

$$\therefore\ P=\frac{p}{v/V}=\frac{\text{इकाई क्षेत्र पर पडने वाले दबाव मे बढोतरी}}{\text{इकाई आयतन मे होने वाली कमी}}=\frac{\text{चाप}}{\text{विक्रिया}}=E\theta$$

अर्थात् गैस का दबाव (P), उसके 'समतापिक-आयतन-स्थिति-स्थापकता-गुणक ($E\theta$) के बराबर होता है।

(ख) रुद्धोष्म-आयतन-स्थिति-स्थापकता—जब किसी गैस को दबाते है तो उसका आयतन तो कम होता ही है, साथ-साथ उसका तापमान भी बढ़ जाता है। इसी तरह जब गैस फैलती है तो उसका तापमान कम हो जाता है। इस तरह स्पष्ट है कि दबाव बढाने (या घटाने) से उत्पन्न (या लुप्त) हो जाने वाले इस ताप को अगर न तो नलके से बाहर जाने दिया जावे और न बाहर के ताप को उसके भीतर आने दिया जावे, तो इस हालत में प्राप्त होने वाले "आयतनिक-स्थिति-स्थापकता-गुणक" ($E\theta$) को रुद्धोष्म (adiabatic) कहेंगे। तब इस पर बॉयल-नियम लागू न होकर 'रुद्धोष्म-परिवर्तन-नियम' लागू होता है। इस नियम के अनुसार अगर गैस का दबाव p_1 से बढ़कर p_2 हो जाता है, और उससे, उसका आयतन v_1 से घटकर v_2 हो जाता है, तो—

$p_1.v_1^{\gamma}=p_2.v_2^{\gamma}$ या $p.v^{\gamma}=$स्थिर

जबकि $\gamma=C_p/C_v$ (गैस के लिए)।

मान लो कि नलके की दीवारों और 'वायु-रुद्ध-चल-पिस्टन' (air-tight-movable-piston) वगैरह में से न तो भीतर वाला ताप बाहर जा सकता है और न बाहर वाला ताप भीतर जा सकता है ; गैस का शुरू मे आयतन (V), और दबाव (P) है। पिस्टन पर थोडा सा ($=p$) दबाव बढ़ाने से, मान लो, आयतन मे (v) कमी आ जाती है, तो—

$$P.V^{\gamma}=(P+p)(V-v)^{\gamma}=(P+p)V^{\gamma}\left(1-\frac{v}{V}\right)^{\gamma}$$

$$\text{या}\quad P=(P+p)\left[1-\gamma\frac{v}{V}+\frac{\gamma(\gamma-1)}{\angle 2}\left(\frac{v}{V}\right)^2\ldots\right]$$

क्योकि (v/V) का मान बहुत कम है, इसलिए $(v/V)^2$, $(v/V)^3$...वगैरह का मान और भी कम होने से, नगण्य (negligible) मानकर छोडा जा सकता है। इसलिए—

$$P=(P+p)\left(1-\gamma\frac{v}{V}\right)=\left[P-P.\gamma\frac{v}{V}+p-p.\gamma\frac{v}{V}\right]$$

फिर से, क्योकि $\left(\frac{p\,v}{V}\right)$ का मान भी काफी कम है, इसलिए छोड़ा जा सकता है। तब—

$$0=\left(p-P.\gamma\frac{v}{V}\right)\text{ या }(\gamma.P)=p/\frac{v}{V}=E\phi$$

यानी गैस का "रुद्धोष्म-आयतन-स्थापकता-गुणक $(E\phi)$", उसके अपने दबाव (P) और दोनों विशिष्ट-तापों के अनुपात (C_p/C_v) के गुणनफल (product) के बराबर होता है। हवा के लिए $\gamma=1{\cdot}41$। इस तरह वैधिक-दबाव पर हवा का रुद्धोष्म-आयतन-स्थापकता-गुणक $E\theta$, साधारण-वायु-दाब का 1·41 गुना होता है।

49. पानी का विशिष्ट-ताप—ठोस और द्रव पदार्थों में, पानी का विशिष्ट-ताप सबसे अधिक ($=1$) होता है। इसका यह मतलब हुआ कि पानी की निश्चित मात्रा को निश्चित तापमान तक गरम करने मे, दूसरे ठोस या द्रव पदार्थों की अपेक्षा, अधिक ताप देना पड़ता है। इसी तरह ठंडा होते हुए भी, पानी, दूसरे पदार्थों की अपेक्षा अधिक ताप छोड़ता है। यही कारण है कि गरम पानी को बोतलों में ही भरते हैं। ठंडे देशों में कमरों को गरम करने के लिए, पाइपों में गरम पानी भेजा जाता है। इसी तरह, धूप में कुछ देर तक रखने पर, पानी, दूसरे द्रव या ठोसों की अपेक्षा (बराबर मात्रा में होने पर) कम गरम होता है।

फिर भी नीचे लिखे कारणों से, पानी को ताप-मापन के उपयुक्त (suitable) नहीं माना जाता—

(i) पानी का वि० ताप, दूसरे द्रव और ठोसों की अपेक्षा अधिक होने के कारण, केवल थोड़े से ताप द्वारा होने वाली इसके तापमान में बदल अधिक न होने से, उसको शुद्धता से नही मापा जा सकता।

(ii) पानी के विशिष्ट-ताप का मान, तापमान के साथ-साथ बदलता है। इसलिये अधिक सूक्ष्म और शुद्ध माप वाले प्रयोगों में इसको काम मे नहीं लाते।

पानी की बनिस्बत, जमीन आसानी से गर्म या ठडी हो जाती है। इसीलिये द्वीप (island) के तापमान पर, उसके चारो ओर वाले समुद्र के पानी के तापमान का काफी असर पडता है। गर्मी के दिनों में जबकि सूर्य आकाश में, दूसरी ऋतुओं की अपेक्षा अधिक देर तक प्रकाश और ताप देता रहता है, द्वीप का तापमान, महाद्वीप के तापमान से कम हो जाता है। जाडे के दिनों में जबकि सूर्य आकाश में, दूसरी ऋतुओं की अपेक्षा, सबसे कम समय तक रहता है, तो द्वीप का तापमान, महाद्वीप के तापमान से अधिक हो जाता है। दिन मे समुद्र का पानी, स्थल की अपेक्षा कम गर्म होता है। लेकिन रात मे यही पानी, स्थल की अपेक्षा धीरे-धीरे ठडा होता है। इसलिये समुद्र का पानी, स्थल के बराबर ठडा नहीं हो पाता। इस तरह द्वीप या समुद्र के किनारे पर की जलवायु पर, समुद्र के पानी का काफी नियन्त्रण रहता है और जलवायु सम-शीतोष्ण (गर्मी-सर्दी बराबर) (moderate) हो जाती है।

50. कैलोरीमीटर से ऊँचे तापमानों को मापना—(i) प्लैटीनम-प्रतिरोध-ताप-मापक (Platinum Resistance Thermometer) और (ii) ताप-विद्युत-युग्म (Thermo-electric-Couple) की सहायता से ऊँचे तापमानों को मापने की विधि 'विद्युत' के अन्तर्गत बतलाई गई है।

तीसरी विधि को कैलोरीमीटर-विधि कहते हैं। इसमें ज्ञात मात्रा (M) व विशिष्ट-ताप (S) वाला धातु का (जैसे प्लैटीनम) ठोस पिंड लेकर उसको मापे जाने वाले ऊँचे तापमान (जैसे भट्टी या ज्वाला) मे डाल देते है।

जब पिंड का तापमान (t) स्थिर हो जाता है, तो उसको एक बड़े कैलोरीमीटर में भरे पानी (मात्रा $= m$) में डाल देते है। अन्तिम उच्चतम तापमान (t_2) की माप लेकर ताप-समीकरण से, इस ऊँचे तापमान (t) का गणम कर लेते हैं। हाँ, यह ध्यान अवश्य रखा जाता है कि यह ठोस पिंड, ऊँचे तापमान पर, पिघल जाने वाला न हो। अगर कैलोरीमीटर का तुल्य-जल-भार (W) ग्राम और पानी का शुरू में तापमान (t_1) हो, तो ताप-समीकरण से—

$$\text{M. S } (t - t_2) = (\text{W} + m)(t_2 - t_1)$$

$$\text{अतः ताप-स्रोत का तापमान } (t) = \left(\frac{(\text{W} + m)\ (t_2 - t_1)}{\text{M. S}} + t_2 \right)$$

उदाहरण के लिए, एक प्रयोग में निम्न मापें प्राप्त हुईं : M $= 100$ ग्राम; W $= 5$ ग्राम; $m = 495$ ग्राम; $t_1 = 22°$ सें० ग्रे०; $t_2 = 30°$ सें० ग्रे० और S $=$ ०·०९५ तो—

ज्वाला (flame) का तापमान $(t) = \left[\frac{(5+495)\ (30-22)}{(100)\ 0{\cdot}036} + 30\right]$

$= 1141°$ सें० ग्रे० (लगभग)

ईंधन का कैलोरीमान (Calorific Value of a Fuel)—किसी भी ईंधन की निश्चित मात्रा के पूरी तरह से जल जाने पर मिलने वाले ताप को उसका 'कैलोरी-मान' कहते हैं। इसलिये जब हम कहते है कि अमुक कोयले का कैलोरीमान, 10,000 ब्रिटिश-ताप-इकाई (B. Th. U) प्रति पौंड है, तो इसका यही मतलब है कि उस कोयले की 1 पौंड मात्रा को पूरी तरह से जलाने पर 10,000 B. Th. U. ताप प्राप्त होगा। इसको 'बम-कैलोरीमीटर' (Bomb Calorimeter) से मापा जाता है। बम के भीतर अधिक दबाव पर, आक्सीजन भर दी जाती है, और मुंह को अच्छी तरह से बंद कर देते हैं। बम को कैलोरीमीटर मे भरे पानी मे डुबोकर रखते है। ईंधन को, तार मे विद्युत-धारा प्रवाहित करके, विस्फोट (explode) करते है। विस्फोट से उत्पन्न होने वाला ताप, पानी को गर्म करता है। पानी के शुरू और बाद वाले तापमानों को मापकर, और कैलोरीमीटर व बम की धातुओ के तुल्य-जल-भार मालूम होने पर, विस्फोट से प्राप्त होने वाले ताप का गणन कर लेते है। इससे ईंधन का कैलोरीमान मालूम हो जाता है।

51. गुप्त-ताप (Latent Heat)—किसी ठोस को लगातार गर्म करने पर उसका तापमान बढता जाता है। होते-होते एक ऐसा तापमान आता है जबकि ठोस पिघलने लगता है। तब पदार्थ को गर्म करने पर उसका तापमान नही बढ़ता, बल्कि उसके द्वारा लिया गया ताप, पदार्थ को, ठोस से द्रव की हालत मे, बदलने मे काम आता है। जब तक पूरा ठोस द्रव नही बन जाता, तापमान स्थिर रहता है। इसी तरह जब पानी को गर्म करते है, तो शुरू में पानी का तापमान, समय के साथ-साथ बढता जाता है। लेकिन पानी के 'वाष्पाक' पर पहुँच कर, तापमान बढना बंद हो जाता है, और लिये गये ताप से, पानी की भाप बनने लगती है। जब इसकी उल्टी क्रिया होती है तो भाप, पानी बनते हुए कुछ ताप बाहर छोड़ देती है। इस तरह स्पष्ट है कि जब कोई पदार्थ पिघलने लगता है या द्रव की भाप बनने लगती है, तो दिया गया ताप, तापमान न बढाकर, उसका 'अवस्था परिवर्तन' (Change of State) करता है। इस अवस्था-परिवर्तन में सोखा (absorb) गया ताप, एक तरह से पदार्थ में भीतर विलीन हो जाता है। इसीलिए इसको 'गुप्त-ताप' कहते हैं, जबकि साधारणतः ताप, जिससे पदार्थ का तापमान बदलता है, 'प्रकट-ताप' (sensible heat) कहलाता है।

52. गलन-गुप्त-ताप—ठोस पदार्थ को उसके गलनांक पर, ठोस से द्रव की अवस्था में बदलने के लिए, आवश्यक ताप को उसका 'गलन-गुप्त-ताप' कहते हैं। यह अवस्था-परिवर्तन एक तापमान विशेष (पदार्थ का 'गलनांक') पर होती है। यही पदार्थ जब द्रव से ठोस की अवस्था में आता है तो अपने हिमांक (freezing point) पर इतना ही ताप बाहर छोड़ देता है। इन दोनों क्रियाओं में, जब तक बदल पूरी नहीं हो जाती तापमान स्थिर रहता है।

जब हम कहते हैं कि 'बर्फ का गलन-गुप्त-ताप' 80 कैलोरी है तो इसका यह मतलब है कि 1 ग्राम बर्फ द्वारा, 0° सें० ग्रे० तापमान पर, पिघलने से 80 कैलोरी ताप बाहर प्रकट हो जाता है। इसी तरह 1 ग्राम पानी को, O° सें० ग्रे० पर, बर्फ बनाने के लिये 80 कैलोरी ताप चाहिए। पौंड डिग्री सें० ग्रे० वाली इकाई में, बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 ताप-इकाई (पौंड डिग्री) होता है। ब्रिटिश-ताप-इकाई में यह मान 9 : 5 के अनुपात में बढ़ जाता है यानी ($80 \times 9/5 = 144$ B. Th. U.)। अगर किसी ठोस की मात्रा (m) है और उसका गलन-गुप्त-ताप L है तो इस मात्रा को, ठोस से द्रव बनाने के लिये (m. L.) कैलोरी ताप की ज़रूरत पड़ेगी।

53. भाप का गुप्त-ताप—100° सें० ग्रे० पर पानी खौलने लगता है और उसकी भाप बनने लगती है। जब तक पानी की भाप बनती रहती है, तापमान, 'वाष्पांक' (boiling point) पर स्थिर रहता है। इस परिवर्तन मे लिया गया ताप, अपनी वस्तु का तापमान बढ़ाकर व्यक्त करने के बजाय, पदार्थ मे ही विलीन हो जाता है। इसलिये थर्मामीटर की माप, इस अवस्था-परिवर्तन मे स्थिर रहती है, बदलती नही। इसी अप्रकट ताप को 'भाप का गुप्त-ताप' (Latent Heat of Steam) कहते है। जब भाप ठंडी होकर, पानी बनने लगती है तो यही गुप्त-ताप, बाहर प्रकट हो जाता है। पानी की 1 ग्राम मात्रा को, वाष्पांक पर, भाप बनाने के लिए 537 कैलोरी ताप चाहिये। ताप की इतनी ही मात्रा, इसी तापमान पर, भाप से द्रव बनते हुए प्रकट हो जाती है। अतः भाप का गुप्त-ताप 537 कैलोरी हुआ। ब्रिटिश-ताप-इकाई में इसका मान ($537 \times 9/5 = 966{\cdot}6$) B. Th. U. हो जाता है।

यही कारण है कि जब बर्फ पिघलती है तो वह अपने चारों ओर से अपने गुप्त-ताप के बराबर ताप ले लेती है। इसी तरह जब भाप ठडी होकर पानी बनती है तो उसके भाप के गुप्त-ताप के बराबर ताप बाहर प्रकट हो जाता है। इसीसे, दाँतों को 'आइस-क्रीम' (मलाई की बर्फ), ठण्डे पानी की बनस्बित, अधिक ठण्डी लगती है, और खौलते हुए पानी की अपेक्षा, भाप से जलने से पड़ने वाले फफोले (blisters) ज्यादा खतरनाक होते हैं।

54. बर्फ का गलन-गुप्त-ताप निकालना—एक साफ और सूखा कैलोरीमीटर और उसका मथक (stirrer) लेकर, इन दोनों को खाली तोल लो ($=W$)। इस मथक के छल्ले (ring) पर, तार की जाली (wire-gauge) लगी हो तो अच्छा रहेगा फिर कैलोरीमीटर को करीब 2/3, साफ पानी से भरकर तौल लो (मंथक-सहित) ($=W_1$)। एक सुग्राहक (Sensitive) थर्मामीटर में इसका तापमान ($=t$) माप लो।

अब पानी भरे हुए कैलोरीमीटर और उसके भीतर पड़ा हुआ मंथक, को थर्मामीटर सहित, किसी कुचालक आधार, जैसे कि काठ का बक्स, पर रख दो। बर्फ के छोटे-छोटे टुकड़े लेकर, साफ स्याही-सोख्ते (blotting paper) से सुखा लो। इन सुखाये हुए टुकड़ों को, स्याही-सोख्ते से ही उठा-उठाकर, कैलोरीमीटर के भीतर, पानी में धीरे-धीरे डालते जाओ। सारे पानी को मंथक से चलाकर, सभी भागों में

पानी का तापमान एकसार कर लो। इसी बीच मंथक के छल्ले पर लगी जाली से बर्फ के टुकड़ों को पानी में डुबोया हुआ रखो। टुकड़ों के पिघल जाने पर जो कम से कम तापमान आवे, उसकी माप ($=t'$) ले लो। पश्चात्, केलोरीमीटर की तीसरी बार तौल लो ($=W_2$)। बाद की दोनों तौलों का अन्तर, पिघले हुए बर्फ की मात्रा (M) होगी। अगर कैलोरीमीटर की धातु का विशिष्ट-ताप (S) और बर्फ का 'गलन-गुप्त-ताप' L हो तो—

कैलोरीमीटर (मन्थक+पानी) द्वारा t से t'° सैं० ग्रे० तक ठंडा होने में छोड़ा गया ताप $=[W.\ S\ (t-t')+m(t-t')]=(W.\ S+m)(t-t')$ कैलोरी होगा। यही छोड़ा गया ताप, बर्फ को मिलता है। इससे (i) पहले तो बर्फ पिघलता है और (ii) फिर बर्फ के पिघले हुए पानी का तापमान, t' से t हो जाता है। इन दोनों क्रियाओं में क्रमशः (M. L.) और (M. t') कैलोरी ताप काम मे आता है। लेकिन ताप-समीकरण से—

$$(W.\ S+m)(t-t')=M\ L+Mt'$$

$$\text{या गुप्त-ताप } (L)=\left[\frac{(W.\ S+m)(t-t')}{M}-t'\right] \text{ कैलोरी/ग्राम}$$

.....(54·1)

प्रयोग करते हुए ली जाने वाली सावधानियां—(i) बर्फ को अच्छी तरह से, स्याही-सोखते से सुखाकर, कैलोरीमीटर के पानी मे डालना चाहिए। अगर बर्फ के टुकड़े सूखे न होकर गीले ही पानी मे डाले जावेंगे तो जितना पानी इन टुकड़ो के साथ लगा होगा, उतने ही से बर्फ की तौल बढ जावेगी। लेकिन इस बढी हुई मात्रा के लिये (पानी होने के कारण) गुप्त-ताप की जरूरत ही नही पडेगी। अतः गुप्त-ताप (L) का मान काफी कम (too low) आवेगा।

(ii) बर्फ के टुकडों को पानी में डुबोया हुआ रखने के लिये, मंथक के छल्ले पर तार की जाली लगी होनी चाहिये। अगर यह टुकड़े तैरते रहेंगे, तो टुकड़ों का वह भाग, जो कि पानी के स्वतन्त्र-तल से बाहर रहेगा, पानी के साथ-साथ बाहर की हवा से भी गुप्त-ताप लेगा। इससे फल अशुद्ध हो जावेगा।

(iii) विकिरण (radiation) द्वारा भी, कैलोरीमीटर और उसमें भरा हुआ पानी, कुछ ताप, बाहर की हवा से लेता रहता है। इससे (L) का व्यक्त (observed) मान काफी कम हो जावेगा। इस अशुद्धि को दूर करने के लिये, कैलोरीमीटर में लिये गये पानी का तापमान, कमरे के तापमान से लगभग 5° सैं० ग्रे० अधिक होना चाहिये। इस पानी में इतना बर्फ मिलाते हैं कि मिश्रण का तापमान, कमरे के तापमान से लगभग 5° सैं० ग्रे० कम हो जावे। इस विधि को क्षतिपूरण (Compensation) कहते हैं।

(iv) मिलाये गये बर्फ की मात्रा अधिक नहीं होनी चाहिये। नही तो अधिक बर्फ मिलाने से, मिलाये गये पानी का तापमान, इतना कम हो जावेगा कि कैलोरी-

मीटर की बाहरी दीवारों पर, हवा के कुछ जल-वाष्प-कण (Water-vapours) बूंदों के रूप में जम जावेगी। इससे भी (L) का मान बहुत कम हो जावेगा।

आंकिक उदाहरण

1. बर्फ का गलन-गुप्त-ताप निकालने के एक प्रयोग में काम आने वाले कैलोरी-मीटर का तुल्य-जल-भार 20·1 ग्राम है, और इसमें 300 ग्राम पानी, 19·5° सें० ग्रे० तापमान पर भरा हुआ है। इस पानी में शुद्ध बर्फ का टुकडा डाला जाता हैं। लेकिन गलती से, इस टुकड़े को डालने से पहले सुखाया नही गया। टुकड़ा, पानी में डाल देने पर, कैलोरीमीटर में भरे पानी की मात्रा 17·9 ग्राम बढ जाती है, और मिश्रित पानी का तापमान घटकर 14·7° सें० ग्रे० हो जाता है। बर्फ के गलन-गुप्त-ताप का मान 80 कैलोरी प्रति ग्राम लेकर, बर्फ के साथ लगे हुए पानी की मात्रा का गणन करो।

(In an experiment to determine the latent-heat of fusion of ice, a carefully insulated calorimeter of water-equivalent 20·1 gm. contains 300 gm. of water at 19·5°C. Into this is dropped a hump of pure ice, *not previously dried*. The mass of the calorimeter with its contents is found to have increased by 17·9 gm. and the resultant temperature comes to 14·7°C. The correct value of latent heat of fusion of ice is 80 calories per gramme; what was the mass of water adhering to the ice ?)

उत्तर—मान लो बर्फ के टुकडे के साथ (x) ग्राम पानी लगा हुआ था।

$\therefore$ मिलाये गये बर्फ की मात्रा $=(17{\cdot}9-x)$ ग्राम $=M$

प्रश्न के अनुसार सूत्र (54·1) में—

W. $S=20{\cdot}1$; $M=300$; $t=19{\cdot}5$, $t'=14{\cdot}7$ और $L=80$; तो—

$(17{\cdot}9-x)\ 80=(20{\cdot}1+300)\,(19{\cdot}5-14{\cdot}7)-(17{\cdot}9)-(14{\cdot}7)$

या $(17{\cdot}9-x)(80)+(14{\cdot}7)\times(17{\cdot}9)=(320{\cdot}1)\,(4{\cdot}8)$

$\therefore$ $x=19{\cdot}8$ ग्राम

2. 20 ग्राम पानी में 5 ग्राम बर्फ मिलाया जाता है। पानी का तापमान 45° सें० ग्रे० और बर्फ का 0° सें० ग्रे० है। मिश्रित पानी की मात्रा और तापमान ज्ञात करो।

(Find the result of placing 5 gm. of ice at 0°C. into 20 gm. of water at 45°C.)

उत्तर—(i) 20 ग्राम पानी (45° सें० ग्रे० पर) द्वारा, 0° सें० ग्रे० तक ठंडा होने में छोड़ा गया ताप $=20{\cdot}1{\cdot}45=900$ कैलोरी

(ii) 5 ग्राम बर्फ को 0° सें० ग्रे० पर, ठोस से द्रव बनाने के लिये आवश्यक ताप $=5{\cdot}80=400$ कैलोरी; अर्थात् पूरा बर्फ, पानी में मिलाने पर गल जावेगा।

20 ग्राम पानी द्वारा 45° सें० ग्रे० से (t) सें० ग्रे० तक ठंडा होने में छोड़ा ताप=20 $(45-t)$ कैलोरी

5 ग्राम बर्फ द्वारा 0° सें० ग्रे० पर पिघल कर द्रव बनने में लगने वाला ताप=$5\times80=400$ कैलोरी।

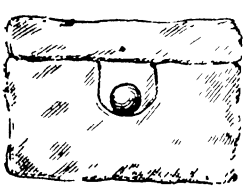
5 ग्राम पिघले हुए बर्फ द्वारा, 0° सें० ग्रे० तक गर्म होने में लगा ताप= $(5.t)$ कैलोरी।

$$\therefore 20\ (45-t)=80\times5+5\times t$$

यानी **मिश्रित पानी का तापमान** $(t)=20°$ **सें० ग्रे०**

55. बर्फ के कैलोरीमीटर (Ice Calorimeters)—निश्चित मात्रा मे लिया गया बर्फ, गलने के लिए, निश्चित मात्रा का ताप अपने चारो ओर से सोख लेता है। इसी सत्य को लेकर, बर्फ के कैलोरीमीटर बनाये गये है। इनसे, पदार्थ का वि० ताप मालूम किया जाता है।

(1) ब्लैक-कैलोरीमीटर (Black's Ice Calorimeter)—इस कैलोरीमीटर में बर्फ का बडा टुकडा (चित्र 39) लेकर, उसमे एक छेद (hole) बना लेते है, जिसकी गहराई और चौडाई करीब 1-1 इच होती है। छेद के मुँह को, बर्फ के एक ढकने (क) से ढक देते है। एक साफ स्याही-सोख्ते से छेद को अच्छी तरह सुखाकर, गर्म ठोस को छेद मे डालकर, तुरन्त ही ढकने से बन्द कर देते है। जब ठोस, छेद मे 0° सें० ग्रे० के तापमान पर आ जाता है, तो गला हुआ बर्फ, पिपेट और सूखे स्याही-सोख्ते से बाहर निकाल लिया जाता है।



चित्र 39

इस सोख्ते को पहले से ही तौल रखते है। इस पानी को तौलकर, ठोस के विशिष्ट ताप का गणन इस तरह करते है—

मान लो ठोस की मात्रा =M ग्राम; ठोस का शुरू मे तापपान=t° सें० ग्र०

पिघले हुए बर्फ की मात्रा=m ग्राम; ठोस का विशिष्ट-ताप =s

M ग्राम ठोस द्वारा, t° से 0° सें० ग्रे० तक ठडा होने में छोडा गया ताप=(M. s. t.) कैलोरी

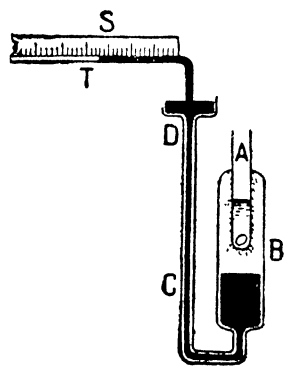
(m) ग्राम बर्फ द्वारा, पिघलने में लगा ताप =(m. L) कैलोरी

$$\therefore \text{M. } s. \text{ t.}=m.\text{ L या } s=\left(\frac{m,\text{ L.}}{\text{M. t.}}\right)$$

इस विधि से शुद्ध मान नहीं आता, क्योकि (i) बर्फ के पिघलने से बनने वाला पानी पूरी तरह से छेद में से बाहर नही निकाला जा सकता। (ii) साथ ही गर्म ठोस को छेद में डालते हुए, बर्फ, कुछ ताप अपने चारों ओर वाली हवा से भी ले लेता है। ठोस को अन्दर डालकर ढकना बंद करने में कुछ देर तो लगती ही है। इतनी ही देर में मुंह खुला होने से, यह अशुद्धि आ जाती है।

फिर भी यह विधि काफी सरल और आसान है। इसमे विकिरण द्वारा ताप-क्षय नहीं होता और अन्तिम तापमान पढने के लिए किसी सुग्राही थर्मामीटर की जरूरत नही पड़ती।

बुन्सन-कैलोरीमीटर (Bunsen's Ice Calorimeter)—(चित्र 40) इस कैलोरीमीटर का यह सिद्धान्त है कि जब बर्फ की निश्चित मात्रा पिघलती है, तो उसका आयतन भी निश्चित मात्रा मे कम हो जाता है। आयतन की इस कमी को मापकर, पिघले हुए बर्फ की ठीक मात्रा जान ली जाती है, और उससे, इस क्रिया मे लगने वाले ताप की मात्रा ज्ञात हो जाती है।



चित्र 40

इसमे एक पतली और लम्बी दीवारो वाली परख-नली (A), काँच की दूसरी, चौडी नली (B) मे जुडी हुई (fused) रहती है। यह चौडी नली (B), नीचे जाकर, पतली होकर, दो बार समकोण पर मुडी होती है। इसके पतले और सीधे खडे (vertical) भाग (C) का ऊपरी सिरा (D) चौडा होकर प्याले-नुमा बन जाता है। इस प्याले (D) मे, मुडी हुई केश-नली पडी रहती है। केश-नली के सीधे पडे (horizontal) भाग के सहारे, उससे सटा हुआ एक पैमाना (scale) (S) लगा रहता है। ऊपरी सिरे (D) को कार्क की डाट से बन्द रखते है। डाट लगाने से पहले, इसमे थोडा सा भाप का पानी (distilled water), और फिर पारा डालते है। इससे नली (B) का निचला हिस्सा पतली नली (C, D) और प्याला (D), सभी मे पारा भर जाता है। साथ ही नली (A) और (B) के बीच वाले भाग मे भाप का पानी आ जाता है। डाट लगाने से, कुछ पारा, केश-नली मे भी चढ जाता है।

प्रयोग करने से पहले, सारे यत्र को पिघलते हुए बर्फ से ढक देते हैं, और पहले से ही हिम-मिश्रण (freezing mixture) से ठंडी की हुई ईथर या अलकोहल की मात्रा, नली (A) मे डाली जाती है। इस नली के चारो ओर की हवा को वेग से चलाकर, 'ईथर' का तेजी से 'वाष्पीकरण' (vapourisation) कराया जाता है। इस वाष्पीकरण के लिए आवश्यक ताप (गुप्त) नली (B) मे भरे हुए, नली A का बाहरी तल (surface) से सपर्क (contact) रखने वाले पानी से प्राप्त होता है। इसलिए कुछ देर बाद नली (B) का पानी जमने लगता है। जमते हुए इसका आयतन बढता है इस बढाव से, केश-नली मे पारा, बाहर की ओर बढता जाता है। जब नली (B) का सारा पानी जम जाता है तब केश-नली मे पारे का तल स्थिर (constant) हो जाता है। तभी पैमाने (S) पर इसकी माप पढ लेते हैं।

इसके बाद जिस चीज़ का विशिष्ट-ताप (=s) निकालना है, उसके एक छोटे से टुकड़े को साधारण तापमान पर हवा मे तौल लेते है (=M)। फिर इसको एक स्थिर और ऊँचे तापमान (=t°) तक गर्म करके, तुरन्त ही परख-नली (A) में भरे ठंडे

पानी (0° सै० ग्रे० पर) में डालकर, नली (A) का मुंह फौरन ही डाट से बंद कर देते है। ठोस द्वारा दिये गए ताप से नली (A) के चारों ओर नली (B) वाला बर्फ पिघलने लगता है। बर्फ के पिघलने से उसके आयतन में कमी होती है। इससे केश-नली मे पारे का सिरा, अन्दर की ओर सरक आता है। पूरे बर्फ के पिघल लेने पर जब इसकी माप स्थिर हो जाती है तो उसको नोट कर लेते हैं। केश-नली के छेद का क्षेत्रफल ($=a$) पहले ही से मापकर, आयतन की यह कमी ($=v$) मालूम हो जाती है। इससे पिघलने वाले बर्फ व उसके लिए आवश्यक ताप का गणन करके वि० ताप का मान ज्ञात हो जाता है।

प्रयोगो से पता चला है कि 1 ग्राम बर्फ के 4° सै० ग्रे० पर पिघलने से आयतन में 0·091 घन सै० मी० की कमी आ जाती है। अगर केश-नली मे पारे के सिरे की दो मापो का अन्तर (l) है, तो आयतन की कुल कमी ($=v$), ($a.\ l$) हुई। यह कमी ($v/0{\cdot}091$) ग्राम बर्फ के पिघलने से हुई है। और बर्फ की इस मात्रा को पिघलाने के लिए (L. $v/0{\cdot}091$) कैलोरी ताप, गर्म ठोस से लिया गया है, जब कि L, बर्फ का गलन-गुप्त-ताप है लेकिन ठोस ने (M. $s.\ t$) कैलोरी ताप छोडा है। 'ताप-मापन' के सिद्धान्त से लिया गया और छोडा हुआ ताप बराबर होने चाहिएँ। यानी—

$$\text{M. } s.\ t = \frac{v.\ \text{L}}{0{\cdot}091}\ ;\ \text{या S} = \frac{v.\ \text{L}}{0\ 091,\ \text{M. } t} = \frac{10\ 99\ \text{L}.v}{\text{M. } t.}$$

क्योंकि (v) का मान काफी कम होता है, इसलिए केश-नली के छेद का क्षेत्रफल काफी शुद्धता से मापा जाना चाहिए। इसी तरह पैमाने (S), पर पारे के सिरे की दोनो मापों मे बहुत कम अन्तर होता है। इसको भी शुद्धता से मापना जरूरी है। कभी-कभी कुछ यत्रों मे पैमाने (S) को सीधे ही 'कैलोरी मे' अशाकित किया होता है।

बुन्सन-कैलोरीमीटर से लाभ—

(i) यह काफी सुग्राहक (sensitive), और शुद्ध (correct) माप देने वाला यंत्र है।

(ii) बहुत ही थोडी मात्रा मे मिलने वाले ठोसो के विशिष्ट-ताप को इसी यत्र से मापा जा सकता है।

(iii) इस विधि में विकिरण (radiation) द्वारा 'ताप-क्षय' (loss of heat) नहीं होता।

(iv) इस विधि में कैलोरीमीटर का 'तुल्य-जल-भार' जानने की जरूरत नही होती।

(v) तापमान मापने के लिये इस यंत्र में थर्मामीटर नही लगाना पडता।

आंकिक उदाहरण

1. लोहे की एक गोल गेंद को बर्फ के बड़े और सुखाये हुए टुकड़े पर रख दिया जाता है। बर्फ का तापमान 0° सै० ग्रे० है। धीरे-धीरे गेंद बर्फ में धँसने लगती

है और आखिर में पूरी तरह से बर्फ में समा जाती है। गेंद का तापमान कितना था ? (लोहे का आ० घनत्व 7·7, बर्फ का आ० घनत्व 0·92; लोहे का वि० ताप 0·12 और बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 कैलोरी प्रति ग्राम है।)

(A spherical iron ball is placed on a large block of dry ice at 0°C, into which it sinks until submerged. What was its temperature ? (Density of iron=7 7 gm./c.c. and that of ice=0·92 gm./c.c.; sp. heat of iron=0·12 and latent heat of fusion of ice =80 calories/gm.)

उत्तर—प्रश्न से स्पष्ट है कि इस प्रयोग मे विकिरण द्वारा होने वाले ताप-क्षय को ध्यान मे नही रखा गया है। मानलो कि गेद का आयतन (V) घन सैं० मी० है और शुरू में इसका तापमान $(t)^\circ$ सें० ग्रे० है। यह गेंद, अपने ताप द्वारा अपने आयतन से आधे आयतन के बराबर वाले बर्फ को पिघलाकर, खुद 0° सें० ग्रे० तापमान पर आ जाती है।

$\therefore$ गेद की मात्रा $=7{\cdot}7\ (V)$

पिघले हुए बर्फ की मात्रा $=0{\cdot}92\ (V/2)$ ग्राम

$\therefore$ गेंद द्वारा ठडे होने मे छोडा गया ताप $=7{\cdot}7.V(0{\cdot}12)\ t$ कैलोरी

और बर्फ द्वारा लिया गया ताप $=0{\cdot}92(V/2)\ 80$ कैलोरी

$\therefore\ 7{\cdot}7\ (V)\ 0\ 12\times t = 0{\cdot}92\ (V/2)\ 80$

या गेंद का तापमान (t) $=$ **39·8° सें० ग्रे०**

2 एक ग्राम बर्फ के पिघलने से, उसके आयतन मे 0·091 घन सैं० मी० की कमी होती है। एक पदार्थ की 40 ग्राम मात्रा (60° सैं० ग्रे० पर) को बर्फ के कैलोरीमीटर में डालने से, आयतन में 0·273 घन० सैं० मी० की कमी हो गई। तो पदार्थ का विशिष्ट-ताप मालूम करो, जब कि बर्फ का गलन-गुप्त 80 कैलोरी प्रति ग्राम है। (राजपूताना *1948*; उत्तर प्रदेश *1933*)

(A gm. of ice at 0°C contracts by 0·091 c.c. in melting. Calculate the specific heat of the substance when 40 gm. at 60°C. dropped into an ice-calorimeter cause a change in volume of 0·273 c.c. latent heat of fusion of ice=80 cal/gm.)

उत्तर—पिघले हुए बर्फ की मात्रा $(\cdot273/\cdot091)$ ग्राम

बर्फ की इसी मात्रा को पिघलाने मे लगा ताप $=\left(\frac{\cdot273}{\cdot091}\right)(80)$ कैलोरी

पदार्थ द्वारा 60° से 0° सें० ग्रे० तक ठंडा होने में छोड़ा गया ताप

$=40\times60\ (s)$ कैलोरी

अतः $40\times60\ (s)=\left(\frac{\cdot273\times80}{\cdot091}\right)$

या पदार्थ का विशिष्ट-ताप (s) $=$ **0·1**

3. किसी वस्तु की 0·96 ग्राम मात्रा 100° सें० ग्रे० तक गर्म करके, बुन्सन-कैलोरीमीटर की परख-नली में डाल दी गई। इससे केश-नली मे पारे का सिरा 8·3 मि० मी० हट गया। केश-नली के छेद का क्षेत्रफल 1 वर्ग मि० मी० है। अगर पानी की बर्फ बनने से; आयतन मे 0·0905 घन सें० मी० बढ़ जाता हो; और इस क्रिया मे 80 कैलोरी ताप बाहर निकल आता हो, तो पदार्थ का वि० ताप मालूम करो। (नागपुर *1952*)

(A mass of 0·96 gm. of a substance heated to 100°C, is dropped into a Bunsen's calorimeter. The thread of mercury receded through a distance of 8·3 m.m. in the capillary tube of 1 sq. m.m. section. Calculate the sp. ht. of the substance, given that 1 gm. of water on freezing expands by 0·0905 c.c. and evolves 80 calories.

उत्तर—आयतन मे कमी = छेद का क्षेत्रफल (= 1 वर्ग सें० मी०) (पारे के सिरे की दो मापो मे अन्तर = 8·3 मि० मी०) = 0·0083 घन सें०मी०

आयतन में यह कमी, बर्फ के पिघलने से होती है (0° सें० ग्रे० पर)

लेकिन आयतन मे ·0905 घन सें० मी० कमी, 1 ग्राम बर्फ के पिघलने से होती है

$\therefore$ आयतन मे 1 घन सें० मी० कमी, $\frac{1}{\cdot 0905}$ ग्राम बर्फ के पिघलने से होगी

और आयतन मे 0 0083 घन सें० मी० कमी, $\left(\frac{\cdot 0083}{\cdot 0905}\right)$ ग्राम बर्फ के पिघलने से होगी

परन्तु 1 ग्राम बर्फ पिघलते हुए 80 कैलोरी ताप सोख लेता है

$\therefore \left(\frac{0083}{0905}\right)$ ग्राम बर्फ, पिघलते हुए $\left(\frac{80 \times 83}{905}\right)$ कैलोरी ताप सोख लेता

यह ताप, पदार्थ की 0 96 ग्राम मात्रा के 100° से 0° सें० ग्रे० तक ठंडा होने से मिलता है।

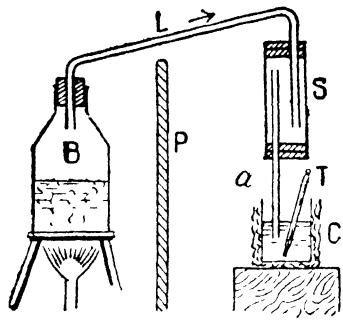
अगर पदार्थ का वि० ताप (s) है तो—

$$(0{\cdot}96 \times 100.s) = \left(\frac{80 \times 83}{905}\right)$$

या विशिष्ट-ताप $(s) = \left(\frac{80 \times 83}{905 \times 96}\right) = 0{\cdot}075$

56. भाप का 'गुप्त-ताप' निकालना (Determination of Latent Heat of Steam)—एक साफ और सूखा कैलोरीमीटर लेकर उसे (मथक सहित) तौल लो (= W)। फिर कैलोरीमीटर को लगभग 2/3 साफ पानी से भरकर तौल लो ($= W_1$)। दोनों तौलों का अन्तर, कैलोरीमीटर में भरे पानी की मात्रा (m) होगी। थर्मामीटर से इस पानी का तापमान (t) मापो।

अब एक भपके (बायलर) (B) (चित्र 41) में पानी भरकर उसे गरम करो। इस भपके का मुँह एक डाट (cork) से बंद रहना चाहिए। इस डाट में से, एक मुडी हुई वाहक-नली (delivery-tube) (L) लगी रहती है, जिसका दूसरा सिरा, एक 'जल-कूट' (water-trap) (s) से जुडा रहता है। जल-कूट लगाने से, भाप मे से जल-वाष्प-कण (water-vapours) दूर हो जाते हैं। इस प्रबन्ध मे काँच की एक चौड़ी नली लगी होती है, जिसके दोनों सिरे डाट से बन्द रहते है। इन डाटो मे से एक-एक काँच की पतली नली पिरोई हुई रहती है। इन नलियों का कुछ हिस्सा तो बडी नली के अन्दर, और बाकी



चित्र 41

बाहर रहता है। साथ ही इनमे एक ऊपरी सिरे पर मुडी हुई रहती है। इसके मुडे हुए हिस्से को रबड की एक नली द्वारा, भपके (बायलर) से जोडा जाता है। दूसरी नली का बाहरी सिरा, कैलोरीमीटर के भीतर भरे पानी मे भाप मिलाने के काम आता है। जितनी भी भाप का पानी बनता है, वह इस जल-कूट मे ही रह जाता है (अपने भार के कारण) इस तरह जल-कूट मे से बाहर निकलने वाली भाप पूरी तरह सूखी होती है।

जल-कूट (s) को इतना ऊँचा रखा जाता है कि नली (D) का निचला सिरा, बॉयलर से ऊपर रहे। इससे बॉयलर से आने वाली भाप मे मिले हुए 'जल-वाष्प-कण' जल-कूट की ओर न जाकर, स्वय अपने भार के कारण, वापस बॉयलर की ओर चले जाते है। वाहक-नली के ऊपर नमदा (felt) या ऊन (wool) लपेट दी जाती है। इस प्रबन्ध से भी इस बात मे सहायता मिलती है। जल-कण, सिर्फ खौलते हुए पानी की बूंदे होते है। इसलिए वह भाप के बराबर गुप्त-ताप नही दे पाते। अगर कैलोरीमीटर मे मिलाई गई भाप मे कुछ जल-कण भी चले गए, तो उससे द्रवित होने वाली भाप की मात्रा तो बढ जावेगी, लेकिन उसी अनुपात मे ताप बाहर प्रकट नही हो पावेगा। इससे गुप्त-ताप (L) का मान अशुद्ध हो जावेगा।

कैलोरीमीटर को, पानी और मथक सहित, लकडी के एक बडे और खोखले बक्से में रखा जाता है। जब जल-कूट में से सूखी भाप आने लगती है तो उसकी नली के बाहरी सिरे को कैलोरीमीटर के भीतर डाल देते है और पानी को मंथक से चलाते रहते हैं। कुछ देर बाद इस नली को बाहर निकालकर, कैलोरीमीटर के पानी का अधिकतम तापमान नोट कर लेते है ($=t_1$)। फिर कैलोरीमीटर और उसमे भरे हुए पानी को कमरे के तापमान तक ठडा होने देते हैं। ठंडा होने पर कैलोरीमीटर की तीसरी तौल ($=W_3$) लेते हैं। पिछली दोनों तौलो का अन्तर, द्रवित (condensed) भाप की मात्रा (M) होती है। भाप का तापमान (t_2) प्रयोग के समय वाले दबाव पर पानी का 'वाष्पांक' होता है, जिसको 'रैनूं-तालिका' से मालूम किया जा सकता है। अगर भाप का गुप्त-ताप (L) है, तो—

भाप द्वारा, द्रवित होने में छोड़ा गया ताप (t_2° सें० ग्रे० पर) = (M.L) कैलोरी

भाप के पानी द्वारा, t_2 से t_1° सें० ग्रे० तक ठंडा होने मे छोड़ा गया ताप

$$= M(t_2 - t_1) \text{ कैलोरी}$$

कैलोरीमीटर (मथक सहित) और पानी द्वारा (t)° से (t_1)° सें० ग्रे० तक गरम होने मे लिया गया ताप = $[W.s)\ [t_1 - t) + m(t_1 - t)]$ कैलोरी

अतः ताप-समीकरण से—

$$[M.L + M(t_2 - t_1)] = [(W.s + m)\ (t_1 - t)]$$

या $$M.L = (W\ s + m)\ (t_1 - t) - M(t_2 - t_1)$$

अत. भाप का गुप्त-ताप $(L) = \left(\frac{W\ s + m}{M}\right)(t_1 - t) - (t_2 - t_1)$

यह मान लगभग 537 कैलोरी आता है।

प्रयोग के समय ली जाने वाली सावधानियाँ और संभावित अशुद्धियां :—

1. कैलोरीमीटर में भरे हुए पानी मे मिलाई जाने वाली भाप में जल-वाष्प-कण नही मिले होने चाहिएँ। इसके लिए वाहक-नली को बॉयलर की ओर नीचा और कैलोरीमीटर की ओर ऊँचा रखना चाहिए। वाहक-नली को नमदे, रूई या ऊन से लपेट देना चाहिए। जल-कूट का प्रयोग करने से भी इस अशुद्धि को दूर करने मे सहायता मिलेगी।

2. विकिरण द्वारा होने वाली अशुद्धि को दूर करने के लिए, कैलोरीमीटर के पानी को, कमरे के तापमान से कुछ डिग्री नीचे तक ठडा कर लेते हैं। प्रयोग के समय इसमे इतनी भाप मिलाई जाती है कि पानी का तापमान, कमरे के तापमान से, उतने ही डिग्री (अश) अधिक हो जावे जितना कि शुरू मे कम था।

3. भाप के तापमान पर, हवा के दबाव का असर पड़ता है। इसके लिए रैनूँ-तालिकायें (Regnault's Tables) काम मे लानी चाहिएँ।

4. ज्वालक (बर्नर) या बॉयलर से सीधे ही, विकिरण द्वारा, कैलोरीमीटर तक पहुँचने वाले ताप को रोकने के लिए, दोनों के बीच, लकड़ी का एक पर्दा (P) (चित्र 41) लगा होना चाहिए।

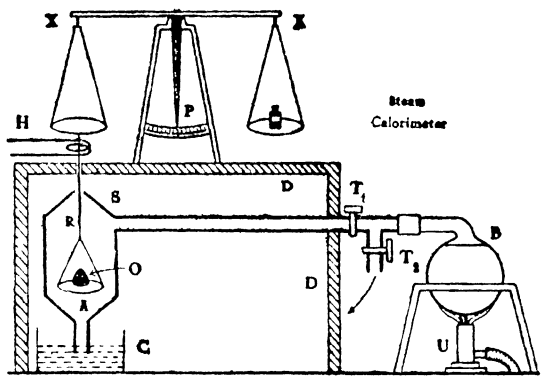
5. भाप, बॉयलर से, तेज़ी से सीधी नही आनी चाहिए। यह फैलती हुई आवे तो अच्छा है। वाहक-नली की लम्बाई कम से कम होनी चाहिए।

6. कैलोरीमीटर के पानी में इतनी भाप मिलानी चाहिए कि मिश्रित पानी का तापमान, कमरे के तापमान से, 30° सें० ग्रे० से अधिक न हो। नही तो इस गर्म पानी से भाप के रूप में काफी ताप-क्षय हो जावेगा।

57. जौली का भापीय कैलोरीमीटर (Jolys Steam Calorimeter)— इस यंत्र द्वारा 'विशिष्ट-ताप' का मान पदार्थ पर ही भाप को द्रवित कराकर, काफी ठीक-ठीक निकाल लिया जाता है। धातु का एक भाप-कोष्ठ (steam-chest) (S) (चित्र 42) जैसा बना होता है जिसमें दो छेद तो ऊपर-नीचे और तीसरा बग़ल (side) में होता है जिसमें लगी नली को, बॉयलर वाली नली को रबड़ की नली से

जोड़ा जा सकता है। अन्दर आने वाली भाप का नियंत्रण टोंटी (T_1) और (T_2) से होता है। भाप-कोष्ठ (S) को काठ के एक खोखले बक्स में रखा जाता है। इस बक्स के ऊपरी ढक्कन पर एक सुग्राहक भौतिक-तुला (X, X) रखी रहती है। इस तुला के एक पलडे से एक बारीक तार (R) लटकता है, जो कि भाप-कोष्ठ के ऊपर वाले छेद में से होकर, उसके भीतर एक पलडे (A) को लटकाता है। प्रायोगिक पदार्थ को इसी पलड़े मे रखा जाता है।

सबसे पहले, खाली पलडे (pan) और तार को, तुला के दूसरे पलडे पर बाट रखकर, सतुलन (balance) कर लेते है। फिर पलडे पर प्रायोगिक (experimental) ठोस को रखकर दुबारा सतुलित करते हैं। इन दोनो तौलो का अन्तर, ठोस की हवा मे मात्रा (M_1) होती है। अब भाप-कोष्ठ मे बॉयलर से भाप भेजी जाती है। जब इसका तापमान, कुछ देर तक स्थिर रहे तो इसको माप लेते हैं। साथ ही दूसरे पलडे पर कुछ अतिरिक्त बाट रखकर फिर से सतुलित कर लेते हैं (M_2)। यह ठोस व उस पर और तार व पलडे पर जमी हुई भाप की सम्मिलित मात्रा होगी। ठोस को कोष्ठ (S) मे से निकालकर, तार (D) व पलडे (A) को सुखा करके फिर से भाप भेजकर, तौल ले ली जाती है। मानलो यह तौल M_2 ग्राम है तो सिर्फ ठोस (B) पर जमने वाली भाप की मात्रा ($M_1 - M_2$) ग्राम होगी। अगर कमरे का तापमान $t°$, भाप का $T°$ सें० ग्रे०, ठोस का वि० ताप (s) हो तो ठोस द्वारा, t से $T°$ तक गर्म होने के लिए ज़रूरी ताप की मात्रा $m.\ s\ (T - t_1)$ कैलोरी होगी। भाप द्वारा द्रवित होने मे छोड़ा गया ताप, ($M_1 - M_2$) कैलोरी होगा तो—



चित्र 42

$$m.\ s\ (T - t) = (M_1 - M_2)L$$

अतः विशिष्ट-ताप $(s) = \dfrac{(M_1 - M_2)}{m\ (T - t)}$

जिस पलड़े से तार (R) लटकता रहता है, उस पर भाप जमने से रोकने के लिये एक वैद्युतिक-तापक (electric-heater) की वेष्टन (coil), कोष्ठ के ऊपरी छेद के ऊपर, तार (R) के चारों ओर लगी रहती है।

आंकिक उदाहरण

1. काँच के एक बीकर में 1 पौंड पानी और थोड़ा सा बर्फ पड़ा है। 'बीकर' की ताप-ग्राह्यिता नगण्य है। जब 100° सें० ग्रे० पर 1 औंस भाप, इस 'बीकर' में

मिलाई जाती है, तो पानी का तापमान बढ़कर 3° सें० ग्रे० हो जाता है। तो शुरू में 'बीकर' में कितना बर्फ पड़ा था ? (बर्फ का गलन-गुप्त-ताप=79 कैलोरी प्रतिग्राम, और भापका गुप्त-ताप=537 कैलोरी प्रतिग्राम) (उत्कल *1951*)

(A glass beaker of negligible thermal capacity contains 1 lb. of water and some ice. When 1 oz. of steam at 100° C. has been supplied to the vessel, the contents are at a temperature of 3°C ; how much ice was there to begin with ? Latent heat of ice=79 cal./gm. ; Latent heat of steam=537 cal./gm.)

[*Utkal, U. 1952*]

उत्तर—मान लो शुरू मे बीकर मे x ग्राम बर्फ पडा था

क्योकि 1 पौड=453·6 ग्राम; 1 औस=28·35 ग्राम

∴ 28·35 ग्राम भाप द्वारा द्रवित होने मे (100° सें० ग्रे० पर) छोडा गया ताप=$(28{\cdot}35 \times 537)$ कैलोरी

और 28·35 ग्राम पानी द्वारा, 100° सें० ग्रे० से 3° सें० ग्रे० तक ठडा होने में छोड़ा गया ताप=$28{\cdot}35\ (130-3)$ कैलोरी

इस ताप को लेकर, बर्फ का टुकडा पिघलेगा।

∴ 0° सें० ग्रे० पर x ग्राम बर्फ द्वारा पिघलने मे लिया गया ताप=$(x.79)$ कैलोरी। और पिघले हुए बर्फ के पानी द्वारा, 0° सें० ग्रे० से 3° सें० ग्रे० तक गर्म होने मे लगने वाला ताप=$(x.\ 3)$ कैलोरी

अतः ताप-समीकरण से—

$(28{\cdot}35 \times 537 + 28{\cdot}35 \times 97) = 453{\cdot}6(3-0) + x\ (79+3)$

यानी x=**202·6 ग्राम=7·15 औंस** (लगभग)

2. 100 ग्राम बर्फ में भाप मिलाई जाती है। बर्फ का तापमान (−10°) सें० ग्रे० और भाप का 100° सें० ग्रे० है। मिलने से तापमान 35° सें० ग्रे० और मात्रा 120 ग्राम हो जाती है। बर्फ का वि० ताप मालूम करो, जबकि उसका गलन-गुप्त-ताप 80 कैलोरी प्रति ग्राम और भाप का गुप्त-ताप 535 कैलोरी प्रति ग्राम है।

(Steam at 100°C. is passed into 100 gm. of ice at (−10°)C. The temperature rises to 35°C. and the mixture is found to weigh 120 gm. Find the specific heat of ice. The latent-heat of water and steam are 80 and 535 respectively.)

उत्तर—मान लो बर्फ का विशिष्ट-ताप $=s$

जमने वाली भाप की मात्रा $=(120-100)=20$ ग्राम

भाप द्वारा द्रवित होने में (100° सें० ग्रे० पर) छोड़ा गया ताप

$=(20 \times 535)$ कैलोरी

इस द्रवित भाप द्वारा 100° से 35° सैं० ग्रे० तक ठंडे होने में छोड़ा गया ताप
$=(100-35)$ 20 कैलोरी

बर्फ द्वारा $(-10)°$ से $(0°)$ सैं० ग्रे० तक गर्म होने में लगने वाला ताप
$=100\ s\ [0-(10)]$ कैलोरी

0° सैं० ग्रे० पर, बर्फ का पानी बनने में लगने वाला ताप $=(100\times80)$ कैलोरी

इसी पानी द्वारा, 0° से 35° सैं० ग्रे० तक गर्म होने में लिया गया ताप
$=(100\times35)$ कैलोरी

अतः ताप-समीकरण से—

$\{20\times535+20\ (100-35)\}=(100\times S\times10+100\times80$
$+100\times35)$ या $1000(s)=500$

अर्थात् बर्फ का विशिष्ट-ताप $(s)=0{\cdot}5$

3. 55 ग्राम वाले कैलोरीमीटर मे, बर्फ और पानी की कुल 150 ग्राम मात्रा रखी हुई है। इस मिश्रण मे 100° सैं० ग्रे० तापमान वाली इतनी भाप मिलाई जाती है कि उससे सारा बर्फ पिघल जाता है। तब कुल तौल 217·5 ग्राम हो जाती है। अगर बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 कै०/ग्राम और भाप का गुप्त-ताप 540 कै०/ हो तो मिश्रण में कितना बर्फ मिला हुआ था ?

(Steam at 100°C is passed into a calorimeter of mass 55 gm. containing 150 gm. of mixture of ice and water, until all ice melts. The final mass of the calorimeter and its contents is 217·5 gm. If the latent heat of fusion of ice is 80 cal./gm., find how much ice was present in the mixture.) (Latent heat of steam= 540 cal./gm. ?) [Del. H. S.—1953]

उत्तर—मान लो मिश्रित पानी में शुरू में m ग्राम बर्फ पड़ी थी। इसलिये इसमे पानी की मात्रा $(150-m)$ ग्राम हुई।

प्रश्न के अनुसार, घोल में द्रवित भाप की मात्रा $=217{\cdot}5-(150+55)$
$=12{\cdot}5$ ग्राम

क्योंकि बर्फ के पिघलते हुए सारे समय पूरे मिश्रण का तापमान 0° सैं० ग्रे० पर स्थिर रहता है, इसलिये इतने समय में कैलोरीमीटर न कुछ ताप छोड़ता है और न ही पाता है। इसलिये भाप के 100° सैं० ग्रे० पर द्रवित होने और फिर इस द्रवित भाप के 100° सैं० ग्रे० से 0 सैं० ग्रे० तक ठंडा होने में छोड़े गये तापों का जोड़, m ग्राम बर्फ द्वारा 0° सैं० ग्रे० पर ही पानी बनने के लिए आवश्यक ताप के बराबर होना चाहिये। इस तरह—

100° सैं० ग्रे० पर भाप द्वारा, द्रवित होने में छोडा गया ताप
$(=12{\cdot}5\times540)$ कैलोरी

12·5 ग्राम पानी द्वारा, 100° से 0° सें० ग्रे० तक ठंडा होने मे छोड़ा गया ताप
$= (12{\cdot}5 \times 100)$ कैलोरी

$\therefore$ छोड़े गये ताप की कुल मात्रा $= 12{\cdot}5\ (540 + 100) = 8000$ कैलोरी

परन्तु (m) गाम बर्फ द्वारा, 0° सें० ग्रे० पर पानी बनने के लिये आवश्यक
ताप $= (m.\ 80)$ कैलोरी

अतः ताप-मापन के सिद्धान्त से—

$m.\ 80 = 8000$; या $m = \mathbf{100}$ ग्राम

जोजेफ ब्लैक (1728—1799)

ब्लैक का जन्म, फ्रास के 'बोर्डो' (Bordeaux) नामक नगर मे 1728 ई० मे हुआ। 1740 ई० मे आपको फ्रांस छोडकर आयरलैड चला जाना पडा। 1746 ई० मे आपने ग्लासगो-विश्वविद्यालय मे प्रवेश पाया। वहाँ आपने डाक्टरी चिकित्सा और रसायन-शास्त्र के अध्ययन के साथ-साथ, कास्टिक-पोटाश और चूने के मानव-शरीर पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पर खोज-कार्य किया, जिसके फलस्वरूप आपको 'डाक्टर-ऑफ मैडिसन' की उपाधि मिली।

1756 ई० मे आपको 'प्रोफेसर ऑफ अनेटॉमी एण्ड एनैलिटिकल-कैमिस्ट्री'' नियुक्त किया गया। यहाँ आप एक सफल शिक्षक सिद्ध हुए। जेम्स वॉट, डेविड ह्यूम और ऐडम स्मिथ, आपके ही योग्य शिष्य थे। आपकी प्रसिद्ध खोज 'गुप्त-ताप' का पता लगाना था, जिस पर आपने 5 वर्ष कार्य किया। आपने प्रयोग करके सिद्ध कर दिया कि जब बर्फ पिघलती है तो इसके प्रत्येक ग्राम को पिघलाने के लिये निश्चित मात्रा में अतिरिक्त ताप की ज़रूरत पडती है। साथ ही इस परिवर्त्तन में वस्तु का तापमान स्थिर रहता है। ताप के इस अवशोषण को थर्मामीटर से नही मापा जा सकता इसीलिये इस तरह के ताप को 'गुप्त-ताप' कहा गया। 1766 मे आपको 'ईडनवर्ग-विश्वविद्यालय' मे 'रसायन-विज्ञान' का अध्यक्ष बना दिया गया। अपनी मृत्यु (6 सितम्बर 1799) तक आप इसी पद पर कार्य करते रहे।

सार

ताप की इकाई—**शुद्ध पानी की 1 ग्राम मात्रा का तापमान 1° सें० ग्रे० और अधिक बढ़ाने के लिये आवश्यक ताप "कैलोरी" कहलाता है। यही ताप की इकाई है।**

ब्रिटिश-ताप-इकाई (B. Th. U.)—**यह 1 पौंड पानी का तापमान, 1° फैरेनहाइट अधिक बढ़ाने के लिये आवश्यक ताप होती है।**

विशिष्ट-ताप—**पदार्थ की 1 *ग्राम मात्रा का तापमान*, 1° सें० ग्रे० अधिक बढ़ाने के लिये आवश्यक ताप की इकाइयों को वस्तु-विशेष का 'विशिष्ट-ताप' कहते हैं।**

ताप-ग्राहिता—**पदार्थ की कुल मात्रा का तापमान 1° सें० ग्रे० अधिक बढ़ाने के लिये आवश्यक ताप की इकाइयों को कहते हैं।**

तुल्य जल-भार—**वस्तु का तुल्य-जल-भार, ग्रामों में पानी की उतनी मात्रा होती है कि जिसका तापमान, 1° सें० ग्रे० अधिक बढ़ाने में लगने वाला ताप, उस वस्तु का तापमान भी 1° सें० ग्रे० बढ़ा सकता है।**

विशिष्ट-ताप मालूम करने की विधियां (i) **मिश्रण-विधि,** (ii) **शीतली-भवन विधि** (**सिर्फ द्रवों के लिये ही**), (iii) **बर्फीय कैलोरीमीटर**

गलन-गुप्त-ताप—**यह पदार्थ की इकाई मात्रा को, उसके गलनांक पर, ठोस से द्रव बनाने के लिये आवश्यक ताप होता है।**

भाप का गुप्त ताप—**भाप की इकाई मात्रा को द्रवित करने से प्रकट होने वाला ताप होता है। यह क्रिया पदार्थ के 'वाष्पांक' पर होती है।**

अभ्यास के लिये प्रश्न

1. ताप की इकाई की परिभाषा दो। वस्तु की ताप-ग्राहिता से क्या तात्पर्य है? प्रयोग द्वारा किसी वस्तु की ताप-ग्राहिता किस तरह मालूम करोगे? (कलकत्ता 1952)

2. 'ब्रिटिश-ताप-इकाई' और 'कैलोरी' की परिभाषायें देकर इनके बीच सम्बन्ध बतलाओ। कैलोरीमीटर के 'तुल्य-जल-भार' का क्या अर्थ है? इसको प्रयोग द्वारा कैसे ज्ञात करोगे।
(मद्रास, 1947; दिल्ली, 1952, कलकत्ता, 1953; गोहाटी, 1952; उत्कल, 1949)

3. किसी ठोस का 'विशिष्ट-ताप' प्रयोग द्वारा किस तरह मालूम करोगे? इस प्रयोग में ली जाने वाली सावधानियाँ, संभावित अशुद्धियों और उनके दूर करने की विधि भी समझाओ।
(मद्रास, 1947, उत्कल, 1953)

4. एक कैलोरीमीटर मे 129·4 ग्राम पानी, 12·2° सें० ग्रे० पर भरा हुआ है। इसमें 38·6° सें० ग्रे० वाला, 65·7 ग्राम पानी मिला देने से तापमान 21° सें० ग्रे० होगया। कैलोरीमीटर का 'तुल्य-जल-भार' मालूम करो।
उत्तर—2 ग्राम

5. दिए हुए कैलोरीमीटर की ताप-ग्राहिता और तुल्य-जल-भार प्रयोग द्वारा किस तरह मालूम करोगे? (विश्व-भारती 1954; मद्रास 1947; कलकत्ता 1943)

6. आपको केवल 50° सें० ग्रे० से 100 सें० ग्रे० तक तापमान मापने वाला थर्मामीटर दिया गया है। एक दूसरे बर्त्तन में कुछ पानी भरा है जिसका तापमान 20° सें० ग्रे० से कम ही है। बिना किसी दूसरे थर्मामीटर की सहायता के, इस पानी का तापमान किस तरह मालूम करोगे?
(कलकत्ता 1953)

7. संगमरमर का एक टुकड़ा जिसका भार 25 ग्राम है, 100° सें० ग्रे० तक गर्म करके फौरन ही, ताबे के कैलोरीमीटर में भरे 61 ग्राम पानी में डाल दिया जाता है। कैलोरीमीटर, और मंथक का भार 100 ग्राम है और इसमें भरे हुए पानी का शुरू में तापमान 25° सें० ग्रे० था। अगर दूसरे कारणों से होने वाले ताप-क्षय को नगण्य मान लें, तो मिश्रण का उच्चतम तापमान कितना होगा, जब कि संगमरमर का वि० ताप 0·2 और ताबे का 0·09 हो?
उत्तर—30° सें० ग्रे० (विश्व-भारती 1954)

8. तीन अलग-अलग द्रवों (A, B और C) के तापमान क्रमशः 14°, 24° और 34° सें०

है। B और C की बराबर मात्रायें मिलाने से तापमान 31 सैं० ग्रे० हो जाता है, तो A और C की बराबर-बराबर मात्रायें मिलाने से घोल का कितना तापमान हो जावेगा ?

उत्तर—2·96 सैं० ग्रे० (पटना 1955)

9. 5 ग्राम तुल्य-जल-भार वाले कैलोरीमीटर में 25 ग्राम पानी भरा है। 25° से 17° सैं० ग्रे० तक ठंडा होने में इसको 4 मिनिट लगते हैं। जब इसी कैलोरीमीटर में एक द्रव की उतनी ही मात्रा भरकर ठंडा करते हैं तो इतना ही तापमान गिरने में 180 सैकिंड लगते हैं। द्रव का वि० ताप ज्ञात करो।

उत्तर—0·58 (राजपूताना 1953).

10. शीतली-भवन विधि से किसी द्रव का विशिष्ट-ताप किस तरह निकाला जाता है ? इस विधि का सिद्धान्त और काम में आने वाला सूत्र भी उद्धृत कीजिए।

(राजपूताना 1953; दिल्ली 1942; मद्रास 1949).

11. गैस के विशिष्ट-ताप से क्या समझते हो ? इसका मान, प्रयोग के समय इसके दबाव और आयतन पर क्यों निर्भर करता है ? (यू० पी० बोर्ड 1944).

12. गैसों के दो प्रकार के विशिष्ट-तापों में अन्तर होने का क्या कारण है ?

(नागपुर 1955; दिल्ली 1951, राजपूताना 1944)

13. गैस का विशिष्ट-ताप, स्थिर-दबाव पर (C_p), उसके स्थिर आयतन वाले विशिष्ट-ताप (C_v) से अधिक क्यों होता है ? इन दोनों के मान से, आयतन का पता कैसे लगाया जाता है ? गणना में काम करने वाले सूत्र को भी समझाओ। (यू० पी० बोर्ड 1954, 50, 49)

14. भट्टी का तापमान, कैलोरीमीटर-विधि से किस तरह मालूम करोगे ? इसके गणन में काम आने वाले सूत्र को समझाओ। प्रयोग में क्या-क्या अशुद्धिया संभव है ? (उत्कल 1951).

15. बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 है—इस कथन का स्पष्टीकरण कीजिये।

(कलकत्ता 1950; प्रयाग 1935).

16. बर्फ का तलन-गुप्त-ताप प्रयोग द्वारा किस तरह निकालोगे ? प्रयोग में ली जाने वाली सावधानियाँ भी बतलाओ। (आन्ध्र 1951; कलकत्ता 1956; मद्रास 1949, 50, पटना 1938)

17. ब्लैक के बर्फीय कैलोरीमीटर का प्रयोग समझाओ। (कलकत्ता 1940).

18. (i) बुन्सन-कैलोरीमीटर का वर्णन करो। इस विधि के क्या-क्या विशेष लाभ हैं ?

(ii) बुन्सन-कैलोरीमीटर की केश-नली के खुले सिरे को पारे में डुबो दिया गया है। जब 25 ग्राम पानी, 15° सैं० ग्रे० पर इस यंत्र की परख-नली में डाला जाता है, तो नली में पारे की 68 ग्राम मात्रा अन्दर चढ़ जाती है। बर्फ का घनत्व बतलाओ, जबकि उसका गलन-गुप्त-ताप = 79 कैलोरी प्रतिग्राम और पारे का घनत्व = 13·6 ग्राम प्रतिघन सैं० मी०)।

उत्तर—0·909 ग्राम प्रतिघन सैं० मी० (नागपुर 1955; यू० पी० बोर्ड 1955; उत्कल 1942; राजपूताना 1952)

19. कैलोरीमीटर की मात्रा 55 ग्राम, और उसमें भरे हुए पानी और बर्फ के घोल की मात्रा 150 ग्राम है। इस घोल में 100° सैं० ग्रे० तापमान पर इतनी भाप मिलाई जाती है कि घोल में पड़ा हुआ बर्फ पूरी तरह पिघल जाता है। तब घोल की मात्रा 217 ग्राम हो जाती है। घोल में शुरू में बर्फ की कितनी मात्रा पड़ी थी ?

उत्तर—96 ग्राम (उत्कल 1947).

20. (i) गंधक जो कि 113° सैं० ग्रे० पर पिघलती है, उसका गलन गुप्त-ताप 9 कैलोरी प्रतिग्राम है। (ii) गंधक का विशिष्ट-ताप 0·17 कैलोरी प्रतिग्राम होता है। इन कथनों को समझाइए।

(गोहाटी 1955).

21. एक बर्त्तन में पानी गर्म किया जाता है। पानी में एक थर्मामीटर की घुंडी डूबी हुई है। जैसे-जैसे पानी को ताप मिलता है, उसका तापमान बढता जाता है। 100° सैं० ग्रे० तापमान हो जाने पर पानी उबलने लगता है। लेकिन अब थर्मामीटर की माप स्थिर हो जाती है जब तक कि सारे पानी की भाप नही बन जाती।" इस घटना का स्पष्टीकरण दीजिए। (विश्व-भारती 1954)

22. (−10)° सैं० ग्रे० तापमान वाले बर्फ के टुकड़े को पानी की 20 ग्राम मात्रा (30° सैं० ग्रे० पर) में मिलाया गया है। बर्फ के टुकड़े की मात्रा 5 ग्राम है और वि० ताप 0·5 है। मिलाने पर पानी का तापमान कितना हो जावेगा ?

उत्तर—7° सैं० ग्रे०

23. तांबे के एक बर्त्तन का तुल्य-जल-भार 60 ग्राम है, और इसमें 600 ग्राम पानी 30° सैं० ग्रे० पर भरा हुआ है। एक बुन्सन-ज्वालक द्वारा 100 कैलोरी प्रति सैकिंड के ताप से इस बर्त्तन को गर्म किया जाता है। तो (i) वाष्पांक तक तापमान पहुचने में कितना समय लगेगा ? (ii) 50 ग्राम पानी की भाप बनने में कितना समय लगेगा ? (कलकत्ता 1952)

24. जौली के भापीय कैलोरीमीटर की बनावट बतलाकर, उसके द्वारा स्थिर आयतन पर गैस का विशिष्ट-ताप निकालने की विधि समझाओ। (राजपूताना 1954; यू० पी० बोर्ड 1952)

———

अध्याय 6

अवस्था-परिवर्तन

(Change of State)

58. 'गलन और घनीभवन' (Fusion and Solidification)— गलने या पिघलने (melting) की क्रिया मे पदार्थ, अपनी ठोस अवस्था से द्रव मे बदल जाता है। इसके विपरीत, 'घनीभवन' की क्रिया मे वह द्रव से ठोस बनता है। अगर किसी ठोस को लगातार गर्म किया जावे, तो साथ-साथ उसका तापमान भी बढता जाता है। एक खास (particular) तापमान तक गर्म हो जाने पर भी उस चीज को गर्म करते रहने पर उसका तापमान नही बढ पाता और वह वस्तु पिघलने लगती है। जब तक कि सारी चीज़ नही पिघल जाती, ताप पाते हुए भी उसका तापमान स्थिर रहता है। इस खास तापमान को वस्तु का 'गलनाक' कहते है। पूरी तरह से पिघलकर द्रव बन जाने पर भी अगर उसको गर्म करते रहते है, तो फिर से उसका तापमान पहले की तरह ही बढने लगता है। पिघलते हुए बर्फ को बर्तन मे भरकर गर्म करने से इस तथ्य को देखा जा सकता है। आप देखोगे कि बर्फ के पिघलते हुए, थर्मामीटर की माप स्थिर रहती है। जब सारा बर्फ पिघल जाता है, तभी यह माप घटती है, उससे पहले नही।

इसी तरह जब किसी द्रव को लगातार ठंडा किया जाता है, तो धीरे-धीरे उसका तापमान कम होता जाता है, और एक खास तापमान तक गिरकर स्थिर हो जाता है। इस खास तापमान पर ही वह द्रव जमना (freeze) शुरू हो जाता है। जब तक सारा द्रव जमकर ठोस नही बन जाता, खास तापमान स्थिर रहता है। इस खास तापमान को उस वस्तु का 'हिमाक' (freezing point) कहते है। कभी-कभी इसको 'घनीभवन तापमान' (solidification temperature) भी कह देते है। इसके बाद भी वस्तु को ठडा करते रहने पर पहले की तरह इसका तापमान फिर से गिरने लगता है।

अति-शीतलन (Super-Cooling)—जब कुछ द्रवो को बिना हिलाये ठंडा करते हैं तो उनको हिमाक से भी कम तापमान तक ठडा किया जा सकता है और फिर भी द्रव जमता नही। **डॅस्पर्टज़** (Despertz) ने इस तरह शुद्ध पानी को (—10°) से० ग्रे० तक ठडा किया। इस क्रिया को "अति-शीतलन" कहते है। लेकिन द्रव की यह अवस्था स्थायी (permanent) नही होती। थोडा सा भी हिलने पर, उसी पदार्थ के ठोस के कुछ और कण मिल जाने पर, वह द्रव तुरन्त ही जम जाता है।

उद्धमन (Sublimation)—कुछ ऐसे भी द्रव हैं (जैसे कर्पूर—Camphor), गंधक (Sulphur), संखिया (arsenic), बैनजोइक-ऐसिड, नैपथलीन वगैरह) जोकि गर्म करने पर, बिना द्रवित हुए ही सीधे गैस बन जाते है। इसी तरह ठंडा होते हुए भी

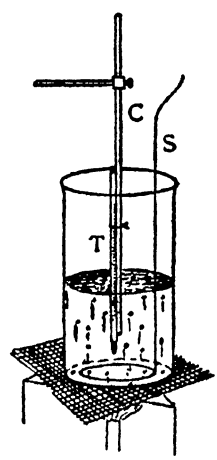
वे भाप से सीधे ही ठोस में बदल जाते हैं, बीच वाली द्रव-अवस्था मे नहीं आते। इस क्रिया को 'उद्धमन' कहते हैं। बर्फ भी कुछ-कुछ इसी तरह का पदार्थ है।

59. पिघाल-बिन्दु मालूम करना (चित्र 43)

(1) केश-नली वाली विधि—केश-नली के एक सिरे को मुँह में और दूसरे को प्रायोगिक द्रव में डालकर, थोड़ा सा द्रव, साँस खीचने से नली मे चढ़ जावेगा। इस नली का निचला सिरा, ज्वाला की लौ (flame) से बन्द (seal) कर दो। अब इस केश नली को थर्मामीटर (T) के साथ धागे से बाँधकर, एक स्टैंड से लटका दो। फिर इन दोनों (थर्मामीटर व केश-नली) को काँच के एक बीकर (B) मे डालकर, बीकर मे पानी भर दो। बीकर, एक तिपाई पर रखी हुई तार की जाली (Wire-gauge) के ऊपर रखा होना चाहिए। बुन्सन-ज्वालक (J) को जलाकर, बीकर का पानी धीरे-धीरे गर्म करो। मंथक (S) से पानी को चलाते रहो, इससे सारे पानी का तापमान एकसार रहेगा। ध्यान रहे कि सारे प्रयोग मे, केश-नली का खुले वाला सिरा, ऊपर रहेगा। बीकर का पानी, गर्मी पाकर गर्म होता है। अन्त मे एक ऐसा तापमान आवेगा जब कि केश-नली मे भरा हुआ ठोस पिघलने लगेगा। उसी समय, थर्मामीटर (T) से तापमान की माप ले लो। अब ज्वालक को बुझा दो। बीकर के पानी को मथक से चलाते रहो। धीरे-धीरे पानी ठण्डा होता जावेगा। जैसे ही केश-नली वाला द्रव, ठोस बनने लगे, तापमान की एक दूसरी माप ले लो। सिद्धान्ततः दोनों मापे बराबर होनी चाहिये। नही तो दोनो का औसत, 'पिघाल बिंदु' (गलनाक) होगा।

(अधिक विस्तार के लिये 'माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिये।)

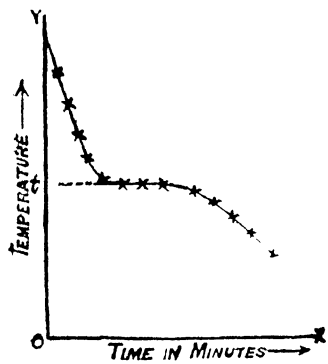
(2) शीतलीभवन विधि (Cooling Curve Method)—एक कैलोरीमीटर मे ठोस की कुछ मात्रा भरकर उसको जल या तेल वाले उष्मक (bath) में रख कर, गर्म करो। जब तक ठोस का तापमान, उसके 'पिघाल-बिन्दु' (द्रवणाक) से 2° से 3° तक अधिक न हो जावे, उसको गर्म करते रहो। तब सारा ठोस, द्रव बन जावेगा। थर्मामीटर की घुण्डी (bulb) को इस द्रव में अच्छी तरह से डुबो दो। द्रव को मथक से चलाते रहो। अब कैलोरीमीटर को कार्क की एक चकती (disc) पर रख कर, दोनो को एक दूसरे बडे और खुले बर्तन मे रखकर ठण्डा होने दो। ठडा होते हुए निश्चित समयान्तरो (regular intervals) (जैसे आधे-आधे मिनिट बाद) पर द्रव के तापमान की माप लेते रहो। एक खास तापमान पर, द्रव का ठोस बनना शुरू हो जावेगा, और जब तक पूरा द्रव, ठोस नही बन जाता, तापमान नही बदलेगा। इस स्थिति के बाद भी ठोस को ठंडा करते रहने पर, तापमान पहले की तरह ही घटने लगेगा।



ऊपर बतलाये ढग से प्रयोग करने पर ली गई मापों चित्र 43

से एक ग्राफ, 'तापमान' और 'समय' के बीच खीचो ('x'-अक्ष पर 'समय' और y-अक्ष पर 'तापमान')। इस ग्राफ का रूप चित्र 44 जैसा आवेगा। ग्राफ से स्पष्ट है कि ठोस बनते हुए, तापमान स्थिर रहने से ग्राफ की रेखा, 'x-अक्ष' (समय वाली) के समानान्तर हो जाती है। ठोस के जमने वाली क्रिया में भी ऐसा ही ग्राफ आवेगा। अर्थात् 'जमने' और 'गलने' के तापमान एक ही होते हैं। और यही द्रव का 'पिघाल-बिंदु' होता है (चित्र 44 में t)।

कुछ ऐसे भी पदार्थ हैं जोकि साधारण (कमरे के) तापमान पर तो ठोस के रूप में रहते हैं, लेकिन गर्म करने पर, द्रव बनने से पहले ही ठोस और द्रव के बीच वाली दूसरी ही अवस्था में आ जाते है। इस अवस्था को 'लसलसी' (viscous) या 'प्लास्टिक' (plastic) कहते है। काँच, राल, मोम (wax) चरबी (fat) इनके उदाहरण है।



चित्र 44

इसी तरह कुछ ऐसे भी पदार्थ है जो कि ठोस बनने से पहले, ही 'प्लास्टिक' वाली अवस्था मे आजाते हैं। इसलिये इनका कोई निश्चित हिमांक नही होता। ग्लिसरीन, ऐसिटिक ऐसिड, कुछ तेल इत्यादि इनके उदाहरण है।

60. 'गलन' या घनीभवन होते हुए आयतन में बदल—ज्यादातर चीज़ो का आयतन (volume), गर्म करने से बढ जाता है और जमने पर घट जाता है। फिर भी कुछ पदार्थ ऐसे है (जैसे कि बर्फ, कच्चा लोहा, बिसमथ, ऐंटीमनी वगैरह) जिनका आयतन, गर्म करने से कम हो जाता है, और ठोस बनने पर बढ जाता है। ऐसे पदार्थों मे ठोस, अपने द्रव मे डालने पर, ऊपर तैरता है।

प्रयोगों से पता चलता है कि जमने पर, पानी के आयतन मे 9% फैलाव (प्रसार) होता है। यानी 0° सैं० ग्रे० पर, पानी के 11 भाग, जमने पर 12 भाग बन जाते हैं। इसका यह मतलब हुआ कि 1 घन सैं० मी० पानी (3° सैं० ग्रे० पर) जमने पर, बर्फ बन जाने पर, आयतन में 1·09 घन सैं० मी० हो जाता है।

एक गिलास मे पानी भरकर उस पर थोड़ा सा बर्फ तैरा दो। धीरे-धीरे बर्फ पिघलता जावेगा। पिघलते हुए बर्फ के पानी का आयतन, ठोस (बर्फ) अवस्था वाले आयतन से प्रति भाग 1/11 कम होता जावेगा। लेकिन पानी के स्वतन्त्र-तल से ऊपर, पूरे ठोस का 1/11वाँ भाग ही बाहर रहता है। इस तरह जितना पानी, बर्फ के पिघलने से बनेगा, वह, पिघलने से पहले, बर्फ के उतने ही डूबे हुए भाग द्वारा भरे हुए आयतन को ठीक से भर लेगा अर्थात् बर्फ के पिघलने से, पानी के स्वतन्त्र-तल की [illegible]

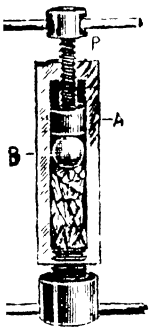
जब पानी को किसी बर्त्तन में ठीक से बद करके ठंडा किया जाता है, तो जमते हुए उसका आयतन बढ़ता जाता है। इसलिये बर्त्तन की दीवारों पर तनाव-बल (tension) लगने लगता है। यही कारण है कि पानी से पूरी तरह भरी हुई बद बोतल, ठडी की जाने पर या ठंडी रातों को फट (burst) जाती है। पहाडी स्थानों पर जाड़े के मौसम मे नलों के जमने और फटने का कारण, यही आयतनिक प्रसार है। अगर जमने पर बर्फ, आयतन में बढने की जगह पर घटता, तो बर्फ पानी पर न तैर कर, उसकी तलहटी (bottom) में चला जाता और नीचे से ताजे पानी की दूसरी पर्त, ऊपर आकर वर्फ बनती जाती। इस तरह ठडे प्रदेशों मे नदियाँ, झील वगैरह मे सारा पानी, ऊपर से नीचे तक, बर्फ बनकर कडा हो जाता और इससे जीवधारी मर जाते। व्यवहारत: बर्फ पानी से हल्का होने के कारण, उस पर तैरता है। साथ ही बर्फ के, ताप का कुचालक होने से, उसके जमे हुए टुकडो के नीचे वाले पानी का ताप, बाहर हवा मे नही जाने पाता, और पानी ज्यादा गहराई तक नही जमने पाता, चाहे बाहर चारों ओर तापमान कितना ही कम क्यो न हो। इसी तरह लोहे का टुकडा अपनी ही द्रवित धातु मे तैरता है। साँचों (casts) मे द्रवित लोहे को डालने पर ठडा होते हुए उनका प्रसार होता है। इसलिये धातु, साँचे के प्रत्येक भाग को पूरी तरह से भर लेती है। यही कारण है कि साँचे मे ढली हुई चीजो की शक्ल काफी नुकीली और स्पष्ट (sharp and well-defined) होती है।

61. पिघाल-बिंदु (द्रवणांक) पर दबाव का प्रभाव (Effect of Pressure on Melting Point)—प्रयोगो से पता चला है कि "जो पदार्थ पिघलने पर आयतन में सिकुड जाते है, जैसे कि बर्फ, उनका द्रवणाक (गलनाक) दबाव बढाने से, कम हो जाता है। इसके विपरीत, जो पदार्थ पिघलने पर आयतन में बढ जावे, जैसे पैराफिन मोम, उनका द्रवणांक, दबाव बढाने से, बढ जाता है। उदाहरण के लिये बर्फ के टुकडे पर एक ऐटमोस दबाव बढ़ा देने पर, उसका द्रवणांक 0·0073° से० ग्रे० कम हो जाता है। इस हिसाब से दबाव का मान 137 एटमोस हो जाने पर द्रवणांक सिर्फ (−1)° से० ग्रे० रह जावेगा।

पुनर्सिलीभवन (Regelation)—अगर बर्फ के दो टुकडो को मिलाकर कुछ देर तक दबाया जावे, ता बाद मे दबाव हटा लेने पर, दोनो टुकडे, मिलने वाली जगह पर जुड़ाकर एक हो जाते है। दबाव बढाने से, उस जगह के बर्फ का 'द्रवणांक' (गलनांक) कम हो जाता है। इससे उस जगह का बर्फ पिघल जाता है। दबाव हटा लेने पर द्रवणांक, अपने पूर्व मान पर आ जाता है, पिघला हुआ पानी, फिर से बर्फ बन जाता है और बर्फ के दोनो टुकड़े जुडकर एक हो जाते है। इस क्रिया को ही 'पुनर्सिलीभवन' कहते हैं। इसका पता सबसे पहले **फैरेडे** को लगा। नीचे के दोनों प्रयोग इसकी सत्यता सिद्ध करते हैं।

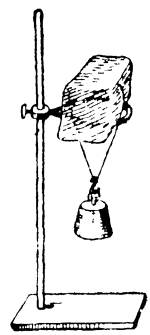
1. मौसन-प्रयोग (Mousson's Experiment) (चित्र 45)—लोहे का एक ऐसा मजबूत नलका (A) लो कि जिसके एक सिरे पर तो चूड़ीदार डाट लगी हो, और दूसरे सिरे पर चूडीदार पिस्टन (P) लगा हो। इन दोनों के बीच वाले खाली

भाग में नलके के भीतर थोड़ा सा बर्फ भरकर, बाकी हिस्से मे पानी भर दो। अब इस नलके को हिम-मिश्रण (fusion mixture) मे रख दो। नलके के भीतर, धातु की एक छोटी गेद (S), पिस्टन के डडे और बर्फ के बीच डाल दो। अब अगर पिस्टन को दबाया जावेगा तो नलके की दूसरी ओर से ढक्कन खोलने पर, सबसे पहले धातु की गेद बाहर निकलेगी। ऐसा क्यों हुआ ? दबाव पडने से, नलके में भरा हुआ बर्फ पिघला और गेंद ऊपर से नीचे चली गई। दबाव हटने पर, पानी फिर मे जम जाता है। और गेद, तलैटी मे ही पडी रह गई है।



चित्र 45

2. बोटोमर्ला-प्रयोग (Bottomley's Experiment) (चित्र 46)—एक रिटार्ट-स्टैड (Retort-Stand) के छल्ले (ring) पर बर्फ का एक टुकडा रख दो। एक तार के दोनों सिरो पर भारी बाट बाँध दो। अब इस तार को बर्फ के टुकडे के तल (surface) पर, बीच में रख दो। धीरे-धीरे तार, बर्फ मे घुसता जावेगा और आखिर मे सारे टुकड़े को पार करके छल्ले पर लटक जावेगा। लेकिन बर्फ का टुकडा फिर भी कटता नही। जिस-जिस स्थान को तार काटता जाता है, उस-उस स्थान पर बर्फ जमता चला जाता है।


चित्र 46

तार के ठीक नीचे वाले बर्फ पर, ज्यादा दबाव (सिरो पर बँधे हुए बाटों के कारण) पडने से, उसका द्रवणाक कम हो जाता है और उस जगह का बर्फ पिघलता जाता है। इससे तार, उस जगह को काटकर पार कर जाता है। इसके हटते ही अतिरिक्त दबाव हट जाने से, द्रवणाक फिर से अपने पूर्व मान पर आ जाता है और पिघला हुआ पानी, फिर से बर्फ बन जाता है। इस क्रिया के लिये आवश्यक गुप्त-ताप तार के ठीक नीचे वाले बर्फ से मिलता है और तापमान 0° से० ग्रे० पर स्थिर रहता है।

अगर तार की धातु ताप की सुचालक है, तो ताप का सचार आसानी से होता है। यही कारण है कि उतने ही व्यास वाले ताँबे, लोहे और धागे को लेकर ऊपर वाला प्रयोग करने पर ताँबे वाला तार सबसे पहले बर्फ के आर-पार जाता है और धागा सबसे बाद मे। स्लेट या बर्फ पर भारी गाडियो के निशानो को भी इसी तरह समझा जा सकता है। बर्फ के ग्लेशियरो की गति भी इसका उदाहरण है। ग्लेशियर की तलेटी वाली बर्फ की तह पर, ऊपर वाली सारी पर्तों का बोझ पडता रहता है। इससे वह पिघल-पिघलकर बाहर की ओर आती रहती है। लेकिन बाहर आते ही, अतिरिक्त-भार हट जाने से, फिर से बर्फ बन जाती है। इस बीच पिघले हुए तल पर ग्लेशियर आगे बढता रहता है।

62. हिम (जमाने वाला) मिश्रण (Freezing Mixture)—जब पानी में चीनी मिलाते हैं तो घोल ठडा हो जाता है। क्यों ? घुलने की क्रिया के लिये

आवश्यक गुप्त-ताप पानी से मिलता है। इसी तरह बर्फ में नमक मिलाने पर, नमक, घुलकर, बर्फ के पानी में मिल जाता है और इस क्रिया के आवश्यक ताप, बर्फ से लेता है। इससे दोनों के घाल का तापमान, 0° सें० ग्रे० से भी कम हो जाता है। ऐसे घोल ही 'हिम-मिश्रण' कहलाते है। ठडे पानी मे सोडियम-सल्फेट (Na_2SO_4) या अमोनियम-नाइट्रेट के रवे (crystals) डालने पर, घोल का तापमान, (—15°) सें० ग्रे० तक कम हो जाता है।

हिम-मिश्रण में जब उसका ठोस अश (जैसे नमक) घुल जाता है तो वह अतिरिक्त दबाव डालता है जिसको 'घोल का दबाव' (Solution Pressure) कहते हैं, जिसके कारण बर्फ के पिघलने मे आसानी हो जाती है और अधिकाधिक नमक घोल में घुलता जाता है और आवश्यक गुप्त-ताप घोल से ही लेता जाता है। अतः घोल का तापमान लगातार गिरता जाता है। आखिर मे एक ऐसा तापमान आ जाता है कि बाहर वाली हवा से मिलने वाले ताप की दर, घोल द्वारा सोखे गये ताप की दर के बराबर हो जाती है। यही उस हिम-मिश्रण का निम्नतम (lowest) तापमान होता है।

जब बर्फ पिघलता है तो वह अपने चारो ओर वाली हवा में से, पिघलने के लिये आवश्यक ताप सोख लेता है। इससे हवा का तापमान कम हो जाता है और बर्फ के ढेर के चारों ओर धुंध-सी छा जाती है। इसके विपरीत जब द्रव, ठोस बनता है, तो उससे गुप्त-ताप प्रकट हो जाता है। यही कारण है कि जब पहाडों पर बर्फ पडती है तो हवा मे जल-वाष्प-कण, ऊपर ही ठडे होकर बर्फ बन जाते है और अपने गुप्त-ताप को हवा मे फैलाकर उसको थोडा सा गर्म कर देते है। इसके विपरीत जब यही बर्फ पिघलती है तो हवा बहुत ठडी हो जाती है।

कुछ हिम-मिश्रण

क्रमांक	घोल में मिलने वाले पदार्थ	भार का अश	घोल का निम्नतम तापमान (सें० ग्रे०)
1	(i) अमोनियम-नाइट्रेट (ii) बर्फ	10 10	—17°
2	(i) कुटा हुआ बर्फ (ii) नमक	10 1	—22°C
3	(i) कैलशियम क्लोराइड ($CaCl_2$) (ii) बर्फ	10 2	—35°C
4	(i) कार्बन डाइ-आक्साइड (CO_2) (ii) ईथर	4 1	—77°C

63. गलन के नियम (Laws of Fusion)—1. हरएक ठोस चीज, एक खास तापमान पर ही पिघलती है। अलग-अलग चीजों के लिये इस खास तापमान का मान भी अलग-अलग ही होता है, और इसको 'गलनाक', 'द्रवणाक' या 'पिघाल-बिंदु' (Melting Point) कहते है (दबाव विशेष पर)। जिस चीज का ठोस बना है उसी के द्रव का 'हिमांक' (Freezing Point) उसके 'गलनाक' के बराबर होता है।

2. ठोस के गलने की दर, उसको मिलने वाले ताप की दर के समानुपाती होती है। जब तक सारा ठोस नही पिघल जाता, उसका तापमान 'गलनाक' पर स्थिर रहता है।

3. जो चीजे पिघलने से फैलती है, (जैसे पैराफिन मोम), उनका 'गलनांक' उन पर दबाव बढाने से बढ जाता है। लेकिन जो चीजे पिघलने पर सिकुड़ जाती हैं, (जैसे बर्फ) उनका गलनाक दबाव बढ़ाने से घट जाता है।

4. गलते हुए, पदार्थ की इकाई मात्रा, निश्चित परिमाण (definite quantity) मे ताप सोख लेती है, जिसको कि 'गलन-गुप्त-ताप' कहते हैं। अलग-अलग चीजों के लिये इसका मान भी अलग-अलग, लेकिन वैसे स्थिर रहता है।

64. वाष्पीकरण और द्रवण (Vapourisation and Liquefaction)—द्रव के भाप बनने को 'वाष्पीकरण' और भाप से द्रव बनने को 'द्रवण' कहते हैं।

वाष्पीकरण—एक उथली तश्तरी (shallow dish) में थोडा सा पानी भर कर, खुली हवा मे रख दो। धीरे-धीरे तश्तरी का पानी कम होता जावेगा। यहाँ तक कि कुछ देर बाद सारा पानी गायब हो जावेगा। यह पानी कहाँ गया? मिथैलिटेड-स्प्रिट, ईथर, तारपीन का तेल वगैरह भी खुला छोड देने पर इसी तरह गायब होते रहते हैं। कारण यह है कि द्रव की लगातार धीरे-धीरे भाप बनती रहती है। इस क्रिया को ही 'वाष्पीकरण' कहते हैं। यह क्रिया द्रव के स्वतन्त्र-तल पर बाहर की ओर ही होती है। बन्द स्थान मे ऊपर वाला प्रयोग करने पर शुरू मे तो भाप बनती है लेकिन कुछ देर बाद वह क्रिया बन्द हो जाती है। इससे पता चलता है निश्चित ताप-मान, स्थान इत्यादि पर, प्रत्येक स्थान मे निश्चित मात्रा तक ही भाप के कण रह सकते हैं।

उबाल (Evolution or Boiling)—काँच की एक फ्लास्क मे पानी भर-कर उसकी डाट मे से एक नली और एक थर्मामीटर पिरो लो। ध्यान रहे कि थर्मामीटर की घुंडी, फ्लास्क के पानी मे डूबी रहे। फ्लास्क को बुन्सन-ज्वालक द्वारा गर्म करो। पानी गर्म होने लगेगा। आप देखोगे कि फ्लास्क की तलेटी (bottom) पर से बुलबुले उठने लगते है। जैसे-जैसे पानी का तापमान बढता जाता है, इन बुलबुलों का आकार भी बढता जाता है और अन्त मे यह तल को छोड़कर; पानी के ऊपरी स्वतन्त्र-तल की ओर जाने लगते है। इन बुलबुलों के भीतर हवा भरी हुई रहती है। जब यह बुलबुले, बर्त्तन की तलेटी से ऊपर की ओर जाने लगते हैं, तो एक 'क्लिक' (click) की आवाज से द्रवित हो जाते हैं। इसी से गर्म होते हुए, पानी में सुनसुनाहट (simmering) की आवाज आती रहती है। लेकिन जब बुलबुले इतने बडे बनने लगते हैं कि पानी के ऊपरी तल तक पहुँच जावें, तो यह सुनसुनाहट बन्द हो जाती है, और पानी का तापमान स्थिर हो जाता है। इस अवस्था को पानी का 'खौलना' या 'उबलना' कहते है। यह स्थिर तापमान ही उस द्रव का 'वाष्पांक' कहलाता है।

अगर पानी को उबालकर, उसमें घुली हुई हवा को बाहर निकाल दिया जावे, और इस पानी को फिर से दुबारा उबालें, तो कभी-कभी उसमें लगातार बुलबुले नहीं

उठते। बस बीच-बीच में कोई-कोई बुलबुला उठता है, और जोर के साथ फट जाता है। उसके फटने से पानी भी ऊपर तक उछल जाता है। इस क्रिया को विस्फोट के साथ खौलना (boiling by bumping) कहते हैं। इस हालत में पानी में रूई या काँच का टुकड़ा डाल देने से यह क्रिया बन्द हो जाती है।

'वाष्पीकरण' और 'उबाल' में भेद—

(i) 'वाष्पीकरण' एक धीमी (slow), लेकिन 'उबाल' एक तेज़ क्रिया है।

(ii) 'वाष्पीकरण' द्रव की ऊपरी सतह पर होता है, जबकि 'उबाल' पूरे द्रव में होता है।

(iii) 'वाष्पीकरण' सभी तापमानों पर, लेकिन, 'उबाल' केवल 'वाष्पाक' पर ही होता है। वाष्पाक का मान, विभिन्न द्रवो और अवस्थाओं में अलग-अलग होता है।

'गलन' और 'उबाल' में समानता—

(i) दोनों ही क्रियाएँ होते हुए, द्रव का तापमान स्थिर रहता है।

(ii) दोनों ही परिवर्त्तनों मे, आवश्यक गुप्त-ताप, बाहरी स्रोत मे से सोखा जाता है।

(iii) दोनों क्रियाओं मे साधारणतः आयतन बढ जाता है।

(iv) जिस तरह कुछ द्रवो को उनके हिमांक से नीचे तक ठडा कर सकते हैं और फिर भी वह द्रव ही बने रहते है, उसी तरह इनको वाष्पाक से भी अधिक तापमान तक गरम किया जा सकता है। फिर भी इनकी भाप नही बनती।

(v) 'हिमाक' और 'वाष्पाक' दोनो पर ही दबाव की बदल का असर पड़ता है।

(vi) घुलने वाले पदार्थ का हिमाक, उसके घोल के हिमाक से अधिक होता है। इसी तरह घोल का वाष्पाक, उस घोल मे घुले हुए पदार्थों के वाष्पांक से अधिक होता है। जैसे कि नमक के सतृप्त (saturated) घोल का हिमांक, करीब-करीब, (-22°) सें० ग्रे० और वाष्पाक 108° सें० ग्रे० होते है।

65. वाष्पीकरण पर प्रभाव डालने वाली बातें—

(क) द्रव का स्वभाव (nature)—जितना ही द्रव का वाष्पांक कम होगा, उतनी ही तेजी से उसकी भाप बनेगी।

(ख) द्रव का तापमान—अधिक तापमान वाले द्रव का वाष्पीकरण ज्यादा तेजी से होता है। यही कारण है कि जिन दवाइयों मे उडने वाले (volatile) द्रव मिले रहते हैं, उन पर 'ठडे स्थान पर रखो' (to be kept in a cool place) लिखा रहता है। तब उनका वाष्पीकरण तेजी से नही हो पाता।

(ग) द्रव के खुले हुए स्वतन्त्र-तल का क्षेत्रफल—द्रव का तल जितना ही ज्यादा और खुला हुआ होगा, वाष्पीकरण भी उतनी ही तेजी से होगा। जैसे किसी उड़ने वाले द्रव को, तश्तरी और गिलास में बराबर-बराबर मात्राओं मे भरकर रख देने पर, तश्तरी वाला द्रव पहले उड़ जावेगा।

(घ) तल पर दबाव—जितना ही द्रव के तल पर पडने वाला दबाव कम होगा, उतना ही वाष्पीकरण का वेग भी अधिक होगा। इसलिए दवा बनाने वाले कारखानों मे द्रवों को ठोस बनाने के लिए, उनकी घनता (concentration) को तेजी से बढाकर, शून्य-स्थान (vacuom) मे वाष्पीकरण किया जाता है।

(च) द्रव के तल के पास वाष्प-दबाव—द्रव के तल के ऊपर वाली हवा में जितने ही कम वाष्प-कण होगे, उतनी ही तेजी से वाष्पीकरण होगा। यही कारण है कि सूखी हवा मे, नम हवा की अपेक्षा, अधिक वेग से वाष्पीकरण होता है। गीले सूती कपडे और कीचड से भरी सड़के, जाडो मे, बरसात की बनिस्बत जल्दी सूख जाती हैं।

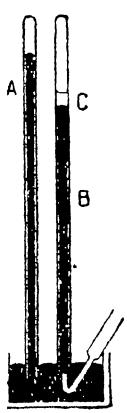
(छ) तल के पास वाली हवा का ताजी होते रहना—जब द्रव के ऊपर वाली हवा को हवा के झोंको या पखा चलाकर, बदलते रहते है तो वाष्पीकरण तेजी से होने लगता है। यही कारण है कि सूती गीले कपडे, शात दिन की अपेक्षा, हवा वाले दिन जल्दी सूख जाते है।

'वाष्पांक' पर प्रभाव डालने वाली बातें—

1. द्रव के तल पर वाष्प-दबाव
2. द्रव मे किसी ठोस का घुला रहना, और
3. द्रव को भरने वाले बर्तन का प्रकार।

66. वाष्प-दबाव (Vapour Pressure)—दूसरी गैसों की तरह, द्रव के वाष्प-कण भी अपना दबाव डालते हैं। इस दबाव को ही 'वाष्प-दबाव' कहते हैं। द्रव के तापमान का इस 'वाष्प-दबाव' के मान पर काफी प्रभाव पड़ता है।

चित्र 47 मे बैरोमीटर की दो नलियों को, करीब एक-एक मीटर लम्बी, पारे से भरी हुई और पारे के बडे बर्त्तन मे उलटा करके खडा हुआ दिखलाया गया है। शुरू मे दोनो नलियो मे पारे के स्तम्भ की माप बराबर होगी (वायु-दवाव के बराबर)। 'टॉरीसैली-शून्य-स्थान' (नली के बद सिरे और पारे के ऊपरी तल के बीच वाला खाली स्थान) मे साधारणत पारे के वाष्प-कण ही रखते हैं, और इनका दबाव बहुत ही थोडा होता है।



चित्र 48

अब इनमे से एक नली (मानलो 'B') मे 'पिपेट' से थोडा सा पानी, पारे के ऊपर वाले खाली स्थान मे चढा दो। पारे से हल्का होने से, यह पानी सीधा ऊपर चला जावेगा। तुरन्त ही इसकी भाप बन जावेगी। लेकिन 'जल-वाष्प-कण' (water vapours) अपना दबाव डालते है। इसलिए इस नली (B) मे पारे का ऊपरी तल (level) थोडा नीचे गिर जावेगा। दोनों नलियो में पारे के ऊपरी तलो की मापो मे अन्तर, 'जल-वाष्प-कणों' के दबाव के बराबर होगा।

'B' नली में पारे के ऊपर पानी चढाने की क्रिया को लगातार करते-करते, आखिर में पारे के तल के ऊपर पानी की पतली सी पर्त्त झलकने लगेगी। तब पानी का वाष्पीकरण बंद हो जावेगा। इस अवस्था

वाले जल-वाष्प-कणों को 'संतृप्त' (saturated) कहते है। इस समय (तापमान-विशेष पर) इनका दबाव अधिकतम होता है।

ऊपर वाले प्रयोग से स्पष्ट हो जाता है कि बद स्थान मे सीमित परिमाण (limited number) मे ही जल-वाष्प-कण समा सकते हैं। साथ ही जब द्रव, अपने वाष्प-कण के सपर्क (contact) मे होता है, तो इसको सतृप्त कहते है, और इस दशा मे पडने वाले 'वाष्प-दबाव' को 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' कहते है। अगर किसी समय हवा मे वाष्पकणो की सख्या, इस अधिकतम सख्या से कम है तो उसको असतृप्त (unsaturated) कहते है, और इसके कारण पडने वाले दबाव को 'असतृप्त-वाष्प-दबाव'। विभिन्न द्रवो के 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' का मान, तापमान-विशेष पर अलग-अलग होता है।

67. 'सतृप्त-वाष्प-और-असंतृप्त-वाष्प पर दबाव का प्रभाव (Effect of change of Pressure on Saturated and Unsaturated Vapours)—

1. एक साफ और करीब 1 मीटर लम्बी, बैरोमीटर बनाने के काम मे आने वाली नली लेकर, उसको पारे से पूरा भरलो। अब नली को अँगूठे मे बद रखकर उल्टा करदो। इस खुले सिरे को पारे मे भरे बर्त्तन मे डुबो दो। चित्र 49 मे यह बर्त्तन, काँच की एक लम्बी नली के ऊपरी सिरे पर लगा हुआ दिखलाया गया है। पिपेट द्वारा, बैरोमीटर वाली नली मे इतना पानी चढाओ कि टौरीसैली-शून्य-स्थान वाली हवा, सतृप्त हो जावे। ऐसा हो जाने पर, नली मे पारे के ऊपरी तल पर, पानी की पतली पर्त्त जम जावेगी। तब यह हवा, सतृप्त कहलावेगी और इसका दबाव अधिकतम होगा। नली के छेद (bore) को एक सार मान लेने पर, इस वाष्प का आयतन, उसके स्तम्भ की लम्बाई (नली के उपरी सिरे और पारे के ऊपरी तल की मापो का अन्तर) के समानुपाती होगा।


चित्र 48

अब बैरोमीटर वाली नली को धीरे-धीरे बर्त्तन के पारे मे डुबाओ और पारे के स्तम्भ की माप लेते जावो। प्रयोग करने पर पता चलेगा कि जैसे-जैसे वाष्प का आयतन कम होता जाता है, वैसे-वैसे अधिकाधिक मात्रा मे वाष्प द्रवित होकर पानी बनती जाती है। लेकिन बडे बर्त्तन और नली मे पारे के ऊपरी तल दोनो की मापो का अन्तर (=वायु-दबाव) मे कोई अन्तर नही पडता। नली को बर्त्तन मे थोडा-थोडा ऊपर उठाने पर भी यही बात होती है यानी स्थिर तापमान पर 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' पर आयतन के बदलने का कोई प्रभाव नहीं पडता। किसी भी निश्चित आयतन वाले स्थान को सतृप्त करने के लिए आवश्यक वाष्प-कणों की मात्रा, उस स्थान के आयतन पर निर्भर करती है। इसलिए, संतृप्त-वाष्प' पर 'बायल-नियम' लागू नहीं होता।

2. असतृप्त-वाष्प पर आयतन की बदल का प्रभाव देखने के लिए भी ऊपर जैसा ही प्रयोग करना पडता है। अन्तर केवल इतना है कि अब बैरोमीटर वाली नली के टौरीसैली-शून्य-स्थान मे इतना पानी चढ़ाते हैं कि उस स्थान की हवा सतृप्त न होने पावे। इसकी पहचान यही है कि नली मे पारे के ऊपरी तल पर पानी की पतली

सी पर्त्त न झलकने पावे। आप देखोगे कि नली को, धीरे-धीरे ऊपर उठाने (यानी वाष्प का आयतन बढ़ाने) पर, पारे के स्तम्भ की माप बढती जाती है। अर्थात् नली वाली असंतृप्त-वाष्प का दबाव घटता जाता है। साथ ही प्रत्येक नाप के लिए, वाष्प के आयतन (या स्तम्भ की लम्बाई) और दबाव (वायु-दबाव और पारे के स्तम्भ की मापों मे अन्तर) का गुणनफल (product) करीब-करीब एकसार रहता है।

नली को पारे के बर्त्तन में धीरे-धीरे डुबोने (यानी वाष्प का आयतन कम करते हुए) पर भी यही फल प्राप्त होता है। हाँ, नली को ऊपर (या नीचे) करते हुए ध्यान जरूर रखा जाता है कि नली के ऊपरी सिरे, और उसमे भरे हुए पारे के ऊपरी तल के बीच वाली वाष्प, जिस पर कि प्रयोग किया जाता है, असतृप्त रहे। साथ ही नली का निचला (खुला) सिरा, बर्तन वाले पारे मे डूबा हुआ रहे। पानी की जगह पर कोई भी दूसरा द्रव लेने पर भी फल पर कोई प्रभाव नही पडता।

इस प्रकार सिद्ध हो जाता है कि असंतृप्त-वाष्पों पर बायल-नियम लागू होता है, संतृप्त-वाष्पों पर नहीं।

तापमान की बदल का 'वाष्प-दबाव' पर प्रभाव—

(1) सतृप्त-वाष्प पर प्रयोग (चित्र 49)—बैरोमीटर वाली काँच की दो नलियाँ (A, B) लेकर उनको पारे से भर दो। फिर इनको, पारे से भरे बर्तन (C) पर उल्टा करके खडा कर दो। ध्यान रहे कि इनके खुले सिरे पारे मे डूबे हुए रहेंगे। साधारणतः यह दोनो, कमरे के तापमान पर, वायु-दबाव की माप बतलावेंगी। अब इन दोनों नलियो (A, B) के ऊपरी भाग को एक 'जैकेट' (J) मे बन्द कर लो। यह जैकेट, काँच की मोटी नली (J) से बनता है। नली (S) का निचला सिरा डाट से बद रहता है, और डाट मे से नलियाँ (A, B) बाहर नीचे की ओर निकली हुई रहती है। जैकेट (J) के भीतर एक तीसरी नली करीब-करीब उसके निचले सिरे तक घुसी रहती है। जैकेट का तापमान, मापने के लिए एक थर्मामीटर (T) भी लगा रहता है। जैकेट मे भरे पानी का तापमान, सारे में एकसार रखने के लिये, उसमे एक मंथक पड़ा रहता है। तीसरी नली से ही जैकेट के भीतर भाप आती है और उसमे भरे हुए पानी को गर्म करती है।



चित्र 49

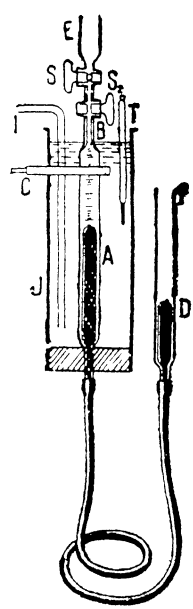
अब एक छोटी सी, मुडी हुई पिपेट द्वारा, पानी की कुछ बूंदें, नली (B) में पारे के तल के ऊपर चढ़ा दो। इन बूंदों की भाप बन जावेगी। इस भाप के कणों का अपना दबाव पडेगा, जिससे इस नली (B) में पारे का तल, दूसरी नली (A) मे पारे के ऊपरी तल से थोड़ा नीचे गिर जावेगा। नली के भीतर, पारे के ऊपर वाली हवा में जल-वाष्प-कण मिलाने की इस क्रिया को लगातार करते रहने पर, वाष्प-दाब बढता जाता है, पारे का तल नीचे गिरता जाता है। लेकिन एक निश्चित मान के बाद तल का गिरना बन्द हो जाता है और

पारे के तल के ऊपर, पानी की पतली सी पर्त्त झलकने लगती है। तब, नली वाली वाष्प, इस तापमान पर, सतृप्त कहलाती है और इसका दबाव भी अधिकतम होता है।

तापमान की बदल का प्रभाव देखने के लिये, जैकेट के पानी में बर्फ के कुछ टुकडे डालकर, तापमान धीरे-धीरे 0° सै० ग्रे० कर लो। आप देखोगे कि जैसे-जैसे जैकेट का तापमान कम होता जाता है, वैसे-वैसे और भी अधिक वाष्प-कण, द्रवित होकर पानी बनते जाते हैं और नली मे पारे का तल ऊपर उठता जाता है। यानी दूसरे शब्दों में, तापमान के साथ-साथ वाष्प-दाब कम होता जाता है। (नली A,B मे पारे के ऊपरी तलो की मापों का अन्तर, सतृप्त-वाष्प के दबाव की सीधी माप होगी।)

जैकेट की तीसरी नली मे से भाप घुसाकर उसके पानी का तापमान बढाकर, 10° - 10° के अन्तर पर वाष्प-दाब की मापे लेते जाओ। आप देखोगे कि इस बार तापमान बढने पर सतृप्त-वाष्प का दबाव भी बढने लगता है। 100° सै० ग्रे० पर पानी का सतृप्त-वाष्प-दबाव, 'वायु-दबाव' के बराबर हो जाता है। उस समय, नली (B) मे पारे का तल, बाहरी बर्तन मे पारे के तल के ही बराबर आ जाता है। ध्यान रहे कि 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' की यह बदल, 'चार्ल्स नियम' के अनुसार नही होती।

(ii) 'असंतृप्त-वाष्प' पर प्रयोग—चित्र 50 मे (A), काँच की एक चौडी और लम्बी नली है, जिस पर आयतन का मान, घन सै० मी० (c c) मे अशांकित होता है। इस नली के ऊपरी सिरे पर, बारीक छेद वाली दो टोटियाँ (taps) (s_1, s_2) लगी रहती है, जिनका काम, नली (A) का सबन्ध, फनल (कीप) (E) से जोडना होता है। फनल (E) मे ही प्रायोगिक द्रव भरा जाता है। नली (A) को, रबड की मोटी और मजबूत नली द्वारा, दूसरी चौडी, काँच की नली (D) से जुडा हुआ रखते है। इस नली (D) का ऊपरी सिरा खुला हुआ (open) रहता है, और इसमे से ही, नली (A, D) मे पारा भरा जाता है। नली (A) को एक अधिक चौडी, काँच की जैकेट(J)मे बन्द रखा जाता है। नली (I) से इस जैकेट के भीतर, भाप लाई जा सकती है। जैकेट (J) मे पानी भर लेते है, जिसके तापमान की माप, थर्मामीटर (T) देता है। जैकेट (J) को स्टैड मे क्लैप लगाकर सीधा खडा (vertical) रखा जाता है। नली (D) को एक सीधे खडे छड के सहारे ऊपर नीचे किया जा सकता है। साथ ही इसको किसी भी स्थान पर पैच से कसा भी जा सकता है। नली (D) मे पारे के तल की माप, उसके छड़ के साथ लगे हुए मीटर-पैमाने पर पढ ली जाती है।



चित्र 50

प्रयोग के लिये नली D मे पारा भर लो। इस बीच, टोंटी (s_1, s_2) खुली रहेगी, जिससे नली (A) की हवा, फनल (E) मे से होकर

बाहर निकल जावेगी और पारा, नली (A) में भर जावेगा। जब नली (A,D) में पारे के तल बराबर हो जावें, तो (D) को इतना ऊपर उठाओ कि नली (A) में पारे का तल, टोंटी (S_2) के छेद तक पहुँच जावे। इससे, नली (A) की हवा, पूरी तरह (E) से बाहर निकल जावेगी। अब नली (D) को काफी नीचे उतार लो। इस बीच, दोनों टोटियाँ (s_1, s_2) बद रहेगी। नली (D) के नीचे होने पर, (A) में भी पारे का तल नीचे उतर आवेगा। और टोटी व नली (A) में पारे के तल के बीच, शून्य-स्थान बन जावेगा। नली (A) और (D) मे पारे के तलों का अन्तर तब, वायु-दबाव (atmospheric pressure) के बराबर हो जावेगा।

ऊपर की फनल (E) मे थोडा सा द्रव (जैसे पानी) भर लो। टोंटी (s_1) को खोलकर, द्रव की कुछ बूंदे, दोनो टोंटियो के बीच वाले छेद मे ले आवो। टोंटी (s_1) को बद कर दो और (s_2) को खोल दो। इससे द्रव की कुछ बूंदे, नली (A) के शून्य-स्थान मे गिर जावेगी। फौरन ही उनकी भाप बन जावेगी और पारे का तल थोडा नीचे गिर जावेगा। नली (A) और (D) मे पारे के तलो का अन्तर, वायु-दबाव में से घटाकर, वाष्प-दाब मालूम हो जावेगा।

अब उष्मक (जैकेट) का तापमान, नली (I) से भाप लाकर, बढाओ। $10°—10°$ सै० ग्रे० के अन्तर से, असतृप्त-वाष्प का दबाव मालूम करते जाओ। आप देखोगे कि जैसे-जैसे तापमान बढता जाता है, वैसे-वैसे नली (A) मे पारे का तल नीचा होता जाता है। ध्यान रहे कि हरएक माप के लिये, नली (D) को इतना ऊपर नीचे करना है कि नली (A) मे पारे का तल नही बदले। तभी पारे के ऊपर वाली वाष्प का आयतन स्थिर रह पावेगा। नली (A) और (D) मे पारे के तलो का अन्तर, तापमान बढने से कम होता है। यानी दूसरे शब्दों मे तापमान बढ़ने से वाष्प-दबाव बढ़ता जाता है। यह बदल चार्ल्स-नियमानुसार होती है।

सतृप्त और अ-संतृप्त वाष्पों में भेद (i) जब किसी जगह के निश्चित आयतन मे, तापमान विशेष पर, वाष्प-कणो की सख्या अधिकतम हो जाती है, तब उस स्थान की हवा को, तापमान-विशेष पर संतृप्त कहते हैं। उस समय वाष्प-दबाव का मान अधिकतम होता है। बद स्थान की हवा के सतृप्त हो जाने पर, तल पर, द्रव की पतली पर्त्त-सी झलकने लगती है। यही उसके सतृप्त होने की पहचान है।

(ii) स्थिर तापमान पर, सतृप्त-वाष्प-दबाव, आयतन की बदल पर निर्भर नही करता। आयतन के कम हो जाने पर, थोडे से वाष्प-कण, जमकर, द्रव बन जाते है, लेकिन दबाव उतना ही रहता है। इसी तरह आयतन बढने पर, थोडे से द्रव की भाप बन जाती है और उससे वह स्थान फिर से सतृप्त हो जाता है। दबाव फिर भी नही बदलता।

इसके विपरीत, अ-सतृप्त वाष्प का दबाव, स्थिर तापमान पर, उसके आयतन के साथ-साथ, बॉयल-नियम के अनुसार घटता-बढ़ता है। यानी आयतन बढाने पर दबाव घटता है और आयतन घटाने पर दबाव बढ जाता है। जब तक वह स्थान, वाष्प-कणो से संतृप्त नही हो जाता, यह क्रम लगातार चलता रहता है।

अर्थात् संतृप्त-वाष्प, बॉयल-नियम को नहीं मानते, जबकि अ-संतृप्त-वाष्प इस नियम के अनुकूल चलते हैं।

(iii) आयतन को स्थिर रखते हुए, संतृप्त-वाष्प का तापमान बढाने पर, उसका दबाव बढ जाता है और तापमान घटाने पर, दबाव भी घट जाता है। परन्तु यह परिवर्तन, चार्ल्स-नियम के अनुसार नही होता; जबकि 'असतृप्त-वाष्प' मे यह बदल इस नियम को मानकर होता है।

नीचे वाली तालिका में जल-वाष्प-कणों के दबाव, विभिन्न तापमानो पर दिये गये है।

जल-वाष्प-कणों का विभिन्न तापमानों पर दबाव

तापमान (°सैं. ग्रे.)	दबाव (मि. मी.)	तापमान (°सैं. ग्रे.)	दबाव (मि. मी.)	तापमान (°सैं. ग्रे.)	दबाव (मि. मी.)
4	6 54	16	14·52	28	29 94
6	7 51	18	16·46	30	33 57
8	8·61	20	18 62	32	37 59
10	9 84	22	21 02	34	42 02
12	11 23	24	23 69	36	47·90
14	12 73	26	26 65	38	52 26

68. गैस और वाष्प का मिश्रित दबाव—चित्र 50 वाले उपकरण मे वाष्प पर तापमान का प्रभाव देखने के लिये, हमने नली (D) को इतना ऊपर उठाया था कि नली (A) मे पारे का तल, टोटी (S_1) तक आ जावे। ऐसा इसलिये किया गया था कि नली (A) मे से सारी हवा पूरी तरह से बाहर निकल जावे। अब अगर वही प्रयोग, इस हवा को बिना निकाले हुए ही किया जावे तो 'टॉरीसैली-शून्य-स्थान' मे वाष्प के साथ-साथ, हवा भी रहेगी, और पारे के तल पर दोनो का मिश्रित (combined) दबाव पडेगा। प्रयोग करने पर पता चलेगा कि द्रव के सतृप्त-दबाव के मान पर, हवा के रहने या न रहने का कोई असर नही होता। यह दोनो दशाओ मे बराबर रहता है। तापमान को स्थिर रखते हुए, मिश्रित वाष्प का आयतन बदलने पर, असतृप्त होने पर, मिश्रित दबाव, बॉयल-नियम के अनुसार बदलता है। अगर दो द्रवो का सतृप्त-वाष्प-दबाव, अलग-अलग, एक ही यत्र द्वारा, निकाला जावे, और फिर इन दोनो द्रवो को मिलाकर, सतृप्त-वाष्प-दबाव निकाला जावे, तो यह मिश्रित-दबाव, दोनो द्रवो के अपने-अपने सतृप्त-वाष्प-दबावों के जोड के बराबर होता है। लेकिन इसके लिये यह ज़रूरी है कि द्रवो को मिलाने पर कोई रासायनिक-प्रतिक्रिया (chemical reaction) न होती हो। इन सारे तथ्यो (results) को 'डाल्टन-नियमो' मे शामिल कर लिया गया है।

मिश्रित-दबाव के डाल्टन-नियम—1. अगर किसी बंद जगह में दो या उससे

ज्यादा 'संतृप्त' वाष्प हों, और उनमें आपस में कोई रासायनिक प्रतिक्रिया नही होती, तो संयुक्त-वाष्प-दबाव' (total pressure), हर एक वाष्प के अपने-अपने दबाव के जोड़ के बराबर होता है।

2. बद जगह मे, सिर्फ एक ही वाष्प का उच्चतम दबाव, उसके तापमान पर निर्भर करता है। इस दबाव पर उसके आयतन या किसी दूसरी वाष्प या गैस के दबाव का कोई असर नही पडता।

69. वाष्प और गैस—इन दोनो शब्दो के प्रयोग मे वैसे कोई खास फर्क नही है। पदार्थ को हम 'वाष्प' (vapour) तब तक कहते है, जब तक कि वह साधारण (ordinary) तापमान और दबाव पर, द्रव या ठोस के रूप मे बदला जा सके, जैसे कि जल-वाष्प, ईथर-वाष्प, अलकोहल-वाष्प, आयोडीन-वाष्प या कर्पूर-वाष्प। लेकिन जब हम उस पदार्थ को साधारण तापमान और दबाव पर दूसरी अवस्था मे नही बदल सकते तो उसको 'गैस' कहते है। जैसे कि ओषजन (oxygen), नत्रजन (nitrogen), उद्जन (hydrogen) इत्यादि। वाष्पो को, साधारण तापमान पर, केवल थोडा सा ही दबाव बढाकर आसानी से द्रवित (liquefy) किया जा सकता है, जबकि गैस को द्रवित करने के लिये बहुत अधिक दबाव लगाना पडता है।

दबाव बढाकर वाष्प को द्रवित करना, एक विशेष तापमान तक ही सभव (possible) है। यह तापमान-विशेष, वाष्प के स्वभाव (nature) पर निर्भर करता है। इस तापमान को '**चरम-तापमान**' (critical temperature) कहते है। चरम-तापमान से ऊपर, वाष्प, गैस की तरह ही गैस-नियमो को मानती है। इससे कम तापमान होने पर ही वाष्प को थोडा सा दबाव बढाकर द्रवित किया जा सकता है। यानी पदार्थ का तापमान, उसके चरम-तापमान से अधिक होने पर वह 'गैस' की तरह कार्य करता है, और उससे कम होने पर 'वाष्प' की तरह। ओषजन, नत्रजन, और उद्जन के चरम-तापमान, क्रमशः $(-118)^\circ$, $(-147{\cdot}1)^\circ$ और $(-239)^\circ$ सें० ग्रे० होते हैं। इसलिये इन गैसो को द्रवित करने के लिये, पहले इन गैसो को इनके अपने-अपने चरम-तापमानो से कम तापमानो तक ठंडा करना पडता है। तभी दबाव बढ़ाकर इनको द्रवित करना सभव हो पाता है।

चरम-दबाव—किसी गैस को, उसके चरम-तापमान से कम तापमान पर, द्रवित करने के लिये आवश्यक दबाव का मान होता है।

चरम-आयतन—चरम-तापमान और चरम-दबाव पर, पदार्थ के 1 ग्राम का आयतन, उसका 'चरम-आयतन' कहलाता है।

आंकिक उदाहरण

1. दो गोलको में हवा भरी हुई है। इनकी ग्राहिताये क्रमशः 1 और 2 लिटर हैं। शुद्ध हवा का तापमान 0° सें० ग्रे० और दबाव 76 सें० मी० (पारा) है। अगर छोटे गोलक की गैस को 100° सें० ग्रे० तक गर्म करके गोलको को आपस मे पतली नली से जोड़ दिया जावे, तो मिश्रण का कितना दबाव हो जावेगा ? (आन्ध्र *1952*)

(Two bulbs of volumes 1 litre and 2 litres are connected by a tube of narrow bore-Initially the air inside the two bulbs is at 0°C

and 76 cm. pressure. The smaller bulb is alone raised to the temperature of 100°C. What is the pressure inside the system ?

(*Andhra 1952*)

उत्तर—छोटे गोलक के भीतर वाली हवा का, 100° सें० ग्रे० तापमान पर दबाव, 76 $(1+100\times 0\,00366)$ सें० मी० (पारा) हो जावेगा। अगर बडे गोलक को खाली मान लें, और तब इस दबाव वाली गैस को उसमे जाने देवें, तो मिश्रण का दबाव P_1 मान लेने पर—

$$76\ (1+100\times \cdot 00366)\times 1 = P_1\times 3$$

$$\text{अत:}\quad P=\frac{76\times 1\cdot 366}{3}\ \text{सें० मी०}$$

दूसरी बार बडे गोलक को लीजिये। इसके भीतर वाली हवा का दबाव 76 सें० मी० है। छोटे गोलक को खाली मानकर, बडे गोलक वाली हवा को इसमे भेजने से अगर मिश्रण का दबाव P_2 हो जाता है तो—

$$76\times 2 = P_2.\ 3.$$

$$\therefore\quad P_2=\frac{76\times 2}{3}\ \text{सें० मी०}$$

डाल्टन के आंशिक दबाव वाले नियमो के अनुसार,

$$\text{कुल दबाव}=(P_1+P_2)=\left(\frac{76\times 1\cdot 366}{3}+\frac{76\times 2}{3}\right)$$

$$=76(1\cdot 122)=\mathbf{85\cdot 272\ सें० मी०}$$

2. पानी के ऊपर, 500 घन सें० मी० हाइड्रोजन को, 250° सें० ग्रे० ता॰ मान पर इकट्ठा किया गया है। हवा का दबाव 762 मि० मी० है। सूख जाने पर गैस का भार कितना रह जावेगा, जबकि वैधिक दबाव और तापमान पर गैस का घनत्व 0 09 ग्राम प्रति लिटर, और जल-वाष्प-कणो का अधिकतम दबाव, 25° सें०ग्रे० पर, 23 55 मि० मी० होता है। (मद्रास *1950*)

(500 c.c. hydrogen is collected on water at 25°C, when the barometric height is 762 m m. Calculate the weight of hydrogen when dried. Density of hydrogen at N. T. P.=0·09 gm. per litre ; saturated vapour pressure at 25°C=23·55 m.m.) (*Madras 1950*)

उत्तर—पानी के ऊपर इकट्ठा होने से, गैस जल-वाष्प-कणों से संतृप्त होगी। गैस और जल-वाष्प, दोनो का सयुक्त दबाव, इनके अपने-अपने दबावों के जोड़ के बराबर होगा।

मान लो 25° सें० ग्रे० तापमान और 500 घन सें० मी० आयतन होने पर सिर्फ हाइड्रोजन (उद्जन) का दबाव (p) है। तो डाल्टन-नियम से—

$$p+23\cdot 55=762$$

$\therefore \quad p = 762 - 23{\cdot}55 = 738{\cdot}45$ मि० मी०

बॉयल-नियम से, $\frac{P.V}{T}$ = स्थिर,

अर्थात् $\frac{738{\cdot}45 \times 500}{(273+25)} = \frac{760 \times V}{273}$

अतः आयतन $(V) = 445{\cdot}1$ घन सें० मी० (वैधिक दबाव और तापमान अर्थात् N. T. P. पर)।

इस आयतन वाली गैस की मात्रा $= 445{\cdot}1 \times 0{\cdot}00009 =$ **0·04** ग्राम

3. बैरोमीटर की नली मे, पारे के ऊपरी भाग मे थोडी सी हवा घुस गई है। इस खाली जगह मे थोडा सा पानी चढा देने पर, उसका कुछ हिस्सा तो भाप बन जाता है और बाकी पारे के तल पर पडा रह जाता है। इससे पारे के स्तम्भ की माप 70 सें० मी० हो जाती है। अगर नली को बाहरी बर्तन मे नीचे की ओर दबाकर, उसके भीतर वाली हवा का आयतन पहले से आधा करना चाहे तो इसके लिए उसको कितना दबाना पडेगा ? (प्रयोग के समय हवा का दबाव = 76 सें० मी०, तापमान = 20° सें० ग्रे० और इस तापमान पर सतृप्त वाष्प-दाब = 17·5 मी० मी०)

(A barometer tube dipping into mercury contains some air. A quantity of water is introduced, a part of which remains un-evaporated and the height of mercury column is now found to be 70 cm. What is the height of the column when the tube is depressed so as to reduce the volume occupied by the air to half its original value ? Atmospheric pressure and temperature at the time = 76 cm. and 20°C respectively; saturated vapour pressure of water at 20°C = 17·5 m. m.)

उत्तर— संसृप्त-जल-वाष्प + हवा का मिश्रित दबाव $= (76 - 70)$

$= 60$ मि० मी०

$\therefore$ शुरू मे सिर्फ हवा का ही दबाव $= (60 - 17{\cdot}5) = 42{\cdot}5$ मि० मी०

नली को नीचे की ओर दबाकर, इस हवा का आयतन आधा कर लेने पर, सतृप्त-वाष्प-दबाव का मान तो बदलेगा नही (तापमान-विशेष पर अधिकतम होने से)। लेकिन हवा का बदला हुआ दबाव, $(4{\cdot}25 \times 2) = 8{\cdot}5$ सें० मी० हो जावेगा।

मानलो कि आयतन कम हो जाने से, स्तम्भ की ऊँचाई (h) सें० मी० हो जाती है तो $(h + 8{\cdot}5 + 1{\cdot}75) = 76$ या $h =$ **65.75** सें० मी०

4. 100° सें० ग्रे० तापमान पर, हवा की कुछ मात्रा, जल-वाष्प से सतृप्त है। तापमान को 200° सें० ग्रे० तक बढा लेने पर, (आयतन को स्थिर रखते हुए), इस हवा का दबाव 2 एटमॉस हो जाता है। 0° सें० ग्रे० पर इतने ही आयतन वाली सूखी गैस का कितना दबाव होगा ? (पटना *1926*)

OSMANIA UNIVERSITY

(A mass of air is saturated with water vapour at a temperature of 100°C ; on raising the temperature to 200°C, without change of volume, the pressure is raised to two atmospheres. Find the pressure at 0°C of this volume of the dry air alone.) (*Patna 1926*)

उत्तर—मानलो कि 0° सै० ग्रे० पर सूखी हवा का दबाव P° और 100° सै० ग्रे० पर यही मान P सै० मी० हो जाता है। तो

100° सै० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव = 76 सै० मी०

∴ सतृप्त-हवा का पूरा दबाव (100° सै० ग्रे० पर) = (P + 76) सै० मी०

क्योकि 200° सै० ग्र० पर वाष्प असतृप्त होगी,

$$\therefore \frac{PV}{T} = \text{स्थिर} ; \text{अर्थात्} \quad \frac{P \times 76}{(273+100)} = \frac{2 \times 76}{(273+200)}$$

अतः P = 43 734 सै० मी०। साथ ही—

$$\frac{P}{T} = \text{स्थिर} ; \text{यानी} \quad \frac{P_0}{273} = \frac{43\,734}{(273+100)}$$

$$\text{अथवा} \quad P = \left(\frac{43\,743 \times 273}{373}\right) = 32{\cdot}01 \text{ सै० मी०}$$

70. वाष्पीकरण से ठंड लगना (Cold produced by Evaporation)—द्रव की वाष्प बनाते हुए ठडक पैदा होती है। वाष्पीकरण की क्रिया मे अधिक वेग वाले अणु, द्रव को छोडकर बाहर निकलते रहते है। इस तरह द्रव की औसत तापिक-ऊर्जा, लगातार कम होती रहती है। इसी से द्रव ठडा-सा लगने लगता है। वाष्पीकरण की क्रिया के लिए आवश्यक ताप, द्रव, अपने गुप्त-ताप के बराबर, चारो ओर के वातावरण या तल (surface) से लेता है। यही कारण है कि जितनी ही तेज़ी से वाष्पीकरण होता है उतनी ही ज्यादा ठड भी लगती है।

उदाहरण के लिए, हथेली पर ईथर या अलकोहल की कुछ बूंदे डाल लो। जैसे-जैसे यह द्रव, वाष्प बनकर उडता जावेगा, वैसे-वैसे हथेली की वही जगह ठडी लगने लगेगी। चीड-फाड के कामो में कभी-कभी ईथर की फुआर (spray) छोड़कर, शरीर के किसी भी हिस्से को सुन्न (in-sensitive) कर लेते है। अगर किसी थर्मामीटर की घुडी पर मलमल का पतला कपड़ा लगाकर, उसको पानी से भिगो दे, तो धीरे-धीरे थर्मामीटर में तापमान की माप घटती जावेगी। इसी तरह गर्म चाय चीनी मिट्टी के प्याले मे भरकर पी जाती है। अगर हम गीले कपड़े पहनकर, हवा मे काफी देर तक बैठे रहे, तो वाष्पीकरण के कारण, हमारी खाल ठडी लगने लगेगी और ठंड लगने का डर रहेगा।

गर्मी के दिनों मे पानी को मिट्टी की सुराहियों में भरकर रखा जाता है। इनका पानी, धातु या कॉच के बर्त्तन मे रखे हुए पानी की अपेक्षा ठंडा होता है। सुराही की दीवारें, बलुही मिट्टी की बनी होने से सुषिर (porous) होती हैं। इन बारीक

छेदों में से, पानी की थोडी-थोडी मात्रा, बाहरी तल पर आती रहती है जहाँ पर इनका वाष्पीकरण होता रहता है। इस क्रिया के लिए आवश्यक गुप्त-ताप, मिट्टी के तल से लिया जाता है। इसलिए उसके भीतर रखा हुआ पानी भी ठंडा हो जाता है। लेकिन बरसात के दिनो मे हवा, सूखी न होकर, जल-वाष्प-कणो से सतृप्त रहती है। अतः वाष्पीकरण उतनी तेज़ी से नही हो पाता इसलिए बरसात मे, सुराही या घडे का पानी, धातु या काँच वाले बर्त्तन जितना ही ठडा हो पाता है। गर्मी के दिनो मे सडकों पर छिडकाव करने से वह वाष्पीकरण द्वारा ठंडी हो जाती है।

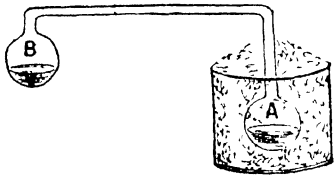
हमारे शरीर का पसीना, खाल के छोटे-छोटे छेदो मे से होकर, भीतर से बाहर आता रहता है। बाहर आने पर इसका धीरे-धीरे वाष्पीकरण होता है। साधारणतः पसीने के पानी से हमारी खाल पर एक पतली तह-सी जम जाती है। इसलिए जब हम पखे के नीचे बैठते है तो उसकी हवा से यह तह हट जाती है। इस तह की जगह, फौरन ही दूसरी ताजी तह ले लेती है। इस तरह वाष्पीकरण की गति बढ जाती है, जिससे हमारे शरीर से भी अधिकाधिक ताप लेना शुरू हो जाता है और हमको ठड लगने लगती है। किसी आदमी के माथे (forehead) पर यू० डी० कोलोन या अमृतधारा मल दी जावे तो उसको अच्छा लगता है, और ताजगी (freshness) आ जाती है। यू० डी० कोलोन मे अलकोहल की काफी मात्रा मिली होती है। इसका वाष्पीकरण होने पर माथा ठडा लगने लगता है। गीले कपडे को माथे पर रखकर तेज हवा करने पर भी यही बात होती है।

गर्मी से बचने के लिए, कमरो और खिडकियो से सामने खस-खस की टट्टियाँ (screens) लगायी जाती हैं। इन पर पानी छिडककर तर (wet) रखा जाता है। जैसे-जैसे इस पानी का वाष्पीकरण होता है, इस क्रिया के लि आवश्यक गुप्त ताप, कमरे की हवा से मिलता है। इसलिए कमरे के भीतर वाली हवा धीरे-धीरे ठडी होने लगती है। स्प्रिट या ईथर को तेजी से भाप बनाकर पानी को जमाया जा सकता है।

लेज़्ली प्रयोग (Leslie Experiment) —

एक चौडी तश्तरी मे पानी और दूसरी तश्तरी मे गधक का तेज तेजाब (H_2SO_4-conc.) लेकर दोनों को वायु-पप के ग्राहक (वायु-कोष्ठ) मे रख दो। पप को चलाकर, वायु-कोष्ठ मे से धीरे-धीरे हवा निकालो। आप देखोगे कि, तश्तरी वाले पानी का तापमान गिरता जाता है, और बाद मे वह जमकर बर्फ बन जाता है।

वोलैस्टन का क्रौफोरस (Wollaston's Crophorus)—इस यत्र मे काँच की एक पतली और लम्बी नली, दो बार, समकोण पर चित्र 51 की तरह मुडी रहती है। नली के दोनो सिरो पर एक-एक गोलक (bulb) लगे रहते है। इन गोलकों और नली मे से हवा निकालकर, थोडा सा साफ पानी भरकर बंद कर देते हैं। इस तरह हवा-रहित गोलक और नली में सिर्फ पानी और उसके वाष्प-कण ही रहते हैं। टेढा करके, पहले सारा



चित्र 51

पानी, गोलक (B) मे कर लेते हैं। दूसरे गोलक (A) को, गहरे बर्त्तन में रखे हुए हिम-मिश्रण के भीतर रखकर, बर्फ से अच्छी तरह से ढँक देते हैं। गोलक (A) मे जल-वाष्प जितनी तेजी से द्रवित होते है, उतनी ही तेजी से गोलक (B) से पानी का वाष्पीकरण होता है। इस क्रिया के लिए आवश्यक गुप्त ताप, गोलक (B) से मिलता है। इसलिए गोलक (B) धीरे-धीरे ठडा होता जाता है। अब दोनों गोलको मे से किसी एक को भी हाथ में पकड़ने से, तापमान थोडा सा बढ जाता है, और उसके भीतर वाला द्रव, कम दबाव पर, कमरे के तापमान पर ही खौलने लगता है।

अमोनिया को शीघ्र वाष्पीकरण द्वारा, तापमान कम करने के सिद्धान्त को, बर्फ-घरो (Cold Storages) को बनाने मे काम लाते है। इन बर्फ-घरो मे मास, फल वगैरह (गर्म देशो मे) रखकर, उनको खराब होने से बचाया जाता है। ठडा करने वाली दूसरी मशीने भी इसी सिद्धान्त पर काम करती है।

71. बर्फ जमाने की मशीन (Ice Machine)—इसके खास-खास हिस्से इस तरह होते है (चित्र 52)

(i) टकी या हौज—इसमे पानी का गाढा नमकीन घोल (brine) या कैल्शियम-क्लोराइड ($CaCl_2$) भरा रहता है।

(ii) सर्पिलाकार नलिया (Spiral coils)—इन नलियो के सर्पिलाकार होने से उनकी लम्बाई तो बढ जाती है, लेकिन उनके द्वारा घेरी हुई जगह काफी कम हो जाती है। इससे मशीन का आकार तो छोटा होता ही है। साथ-साथ, नलियो का तापमान भी मथको को चलाकर आसानी से स्थिर रखा जा सकता है। ज्यादातर इन नलियो मे द्रवित अमोनिया, (NH_3), या कार्बन-डाइ-आक्साइड (CO_2) भरी रहती है। यह नलियाँ ज्यादातर क्षैतिजिक (horizontal) रखी जाती है।

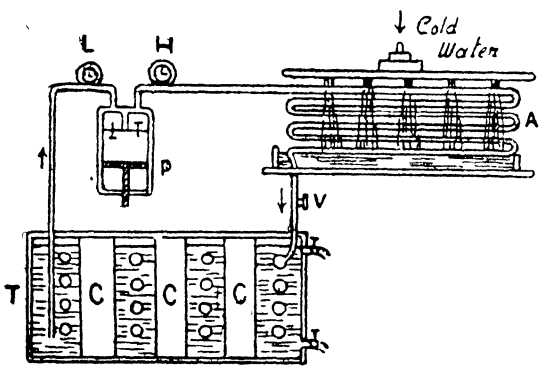
(iii) बर्फ के पीपे (Ice-Pans) (C, C)—इन पीपो मे जमाया जाने वाला पानी भरा रहता है।

(iv) दाब-पप (Force Pump) (P) —यह पंप बिजली से चलता है। यह शोषण (exhaust) और सकुचन (compression) दोनों ही काम करता है, इसका एक सिरा, सर्पिलाकार नलियो से जुडा रहता है।

(v) शीतक-नलियां (Condensing Coils) (A,A)—पप की दूसरी ओर शीतक नलियाँ जुडी रहती है। यह नलियाँ भी सर्पिलाकार और सीधी पडी हुई होती हैं। वाल्व (V) से, द्रव की गति को नियंत्रित किया जाता है।

(vi) दबाव-मापक (Pressure Gauge) (L, M)—इससे सर्पिलाकार नलियों में प्रवाहित होने वाली गैस या द्रव का दबाव मापते हैं। (L) की ओर दबाव कम, और (M) की ओर अधिक होता है।

कार्य (Action)—जब पंप का पिस्टन (P) नीचे जाता है तो वह संकुचक की भाँति कार्य करता है, जिसके कारण अमोनिया गैस (शीतक-नलियों में भरी हुई) पर दबाव, बढ़कर करीब 155 पौंड प्रति वर्ग इंच हो जाता है। इन सर्पिलाकार नलियों (A, A) को ऊपर से पानी के फुआरो से ठडा रखा जाता है। इस तरह अमोनिया गैस द्रवित हो जाती है। द्रव बन जाने पर, यह वाल्व (V) मे से होकर वाष्प-कारक सर्पिलाकार नलियों मे पहुँचता है। अब पप का पिस्टन ऊपर की ओर जाने लगता है और तब यह शोषक की तरह काम करने लगता है। इसलिए वाष्पकारक नलियो मे भरे द्रवित अमोनिया की जल्दी से भाप बनने लगती है। इस वाष्पीकरण के लिए आवश्यक ताप, पानी के नमकीन घोल से प्राप्त होता है। वाष्प बनी हुई अमोनिया को फिर से दबाव बढाकर, शीतक-नलियो मे भेज देते हैं। ठडे पानी से यह द्रवित हो जाता है। द्रवित अमोनिया को वाष्पकारक नलियो मे से पहले की तरह ही ले जाते है। यहाँ द्रवित अमोनिया की फिर से वाष्प बनती है। इन नलियो मे से वाष्प को इतनी तेजी से बाहर निकालते हैं कि इनके भीतर का दबाव, 33 पौंड प्रतिवर्ग इच से अधिक नही होता। इस तरह नमकीन पानी का घोल, लगातार ठडा होता रहता है। जब इसका तापमान 16° फैरेनहाइट हो जाता है, तो पीपों (C,C,C) मे भरा हुआ पानी जम जाता है। यही बर्फ की सिल्लियाँ होती है।



चित्र 52

इस तरह इन मशीनो मे अमोनिया गैस का दबाव बढ़ाकर, उसको ठडा करके द्रवित करते है। फिर द्रवित अमोनिया का वाष्पीकरण करवाते है, जिसके लिए आवश्यक गुप्त-ताप पानी के नमकीन घोल से मिलता है। इसलिये यह घोल ठडा होने लगता है। काफी ठडा हो जाने पर, इस घोल मे रखे हुए पीपो का पानी भी जम जाता है।

72. गैस के प्रसार से ठड पैदा होना (Cold produced by the expansion of Gases)—जब अधिक दबाव वाली गैस को, बारीक छेद मे से बाहर छोडते हैं, तो गैस को अणु-आकर्षण (molecular attraction) के खिलाफ काम करना पडता है। इस काम के लिए जरूरी ऊर्जा गैस मे से ही मिलती है। इसलिए गैस ठंडी हो जाती है। इस प्रभाव को 'जूल-टॉमसन-प्रभाव' (Joule-Thomson Effect) कहते हैं। आजकल कार्बोनिक-एसिड वगैरह गैसों को द्रवित करके ठोस रूप में बदलने के लिए यही सिद्धान्त काम में लाया जाता है।

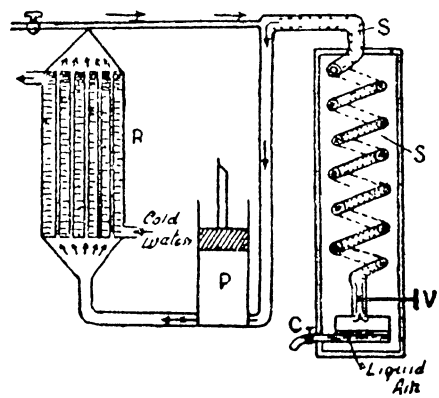
गैसों का द्रवीकरण (Liquefaction of Gases)—इस यंत्र के मुख्य भाग इस तरह होते हैं—

(i) एक मजबूत पंप (P)—यह संचक की तरह काम करता है।

(ii) शीतक (Cooler) (R)—यह नलके की शक्ल का बना हुआ बडा बर्तन होता है जिसमें नलियाँ पडी रहती हैं। इन नलियों मे से अधिक दबाव पर हवा प्रवाहित होती रहती है।

(iii) दोहरी दीवार वाली नलिया (Double walled coils) (S S)—यह नलियाँ एक बक्स मे पडी रहती है, और इनके ऊपर ताप-अचालक वस्तु जैसे ऊन, नमदा या रूई, लिपटी रहती है। इसके निचले सिरे पर वाल्व (V) लगा रहता है।

क्रिया (Action)—पहले हवा को, चूने से भरी मीनारो (Lime Towers) मे से निकालकर, कार्बन-डाई-आक्साइड को दूर कर लेते है। फिर शक्तिशाली पंप (P) की सहायता से इसका दबाव करीब 200 एटमोस कर लेते हैं। लेकिन इतना ज्यादा दबाव बढ जाने से यह हवा गर्म हो जाती है। इसलिए इसको शीतक (R) की नलियो मे से होकर ले जाते है। शीतक की नलियो के चारो ओर ठण्डा पानी भरा रहता है। ठण्डा करने वाली मशीन से, इस गैस का तापमान, (—4) सैं० ग्रे० तक कम किया जा सकता है। यह ठण्डी और अधिक दबाव

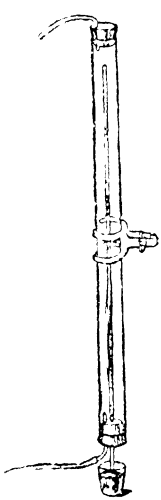


चित्र 53

वाली हवा, दोहरी दीवार वाली सर्पिलाकार नली (S S) के भीतरी भाग मे से होती हुई, वाल्व (V) पर आती है। वाल्व खुलने पर, हवा एक साथ ही फैलती है, इसलिये दबाव 200 से घटकर सिर्फ लगभग 16 एटमोस रह जाता है। इससे हवा का तापमान घट जाता है। पम्प को चलाने पर, यह ठण्डी हवा, दोहरी नली के बाहरी भाग मे से होकर ऊपर की ओर जाती है, और ऊपर से नीचे आने वाली (दोहरी दीवार वाली नली के भीतरी भाग मे से) हवा को ठण्डा कर देती है। यही अन्दर वाली हवा, वाल्व (V) के छोटे से छेद पर पहुँचते-पहुँचते और भी ठण्डी हो जाती है। पम्प द्वारा खीची गई हवा, फिर से शीतक की पतली नलियो मे ठण्डी होती हुई, सर्पिलाकार नली के भीतरी भाग से फिर वाल्व (V) के छेद पर आती है। यही क्रम लगातार चलता रहता है और तापमान इतना घट जाता है कि हवा, द्रवित होकर, नीचे वाले बर्तन में इकट्ठी हो जाती है। इस बर्तन की टोटी (C) को खोलकर द्रवित हवा को देवार-फ्लास्क में भर लेते है। आक्सीजन का चरम-तापमान (—118-82) सैं० ग्रे० है, द्रवित हवा का वाष्पाक (—183°) सैं० ग्रे० होता है (साधारण दबाव पर)। दबाव को कम करके (—217°) सैं० ग्रे० (या 56° k) तक का निचला तापमान प्राप्त किया जा चुका है।

73. निचले तापमानों को प्राप्त करना (Production of Low Temperatures)—पिछली धारा के सिद्धान्त द्वारा ही थोडा सा सुधारा हुआ यंत्र लेकर, **प्रो० देवार** ने 1891 ई० मे, और बाद में **प्रो० ट्रेवर्स** ने हाइड्रोजन गैस को द्रवित किया। इसके लिये गैस को पहले (—200°) सैं० ग्रे० तक ठण्डा किया गया। फिर इस पर 290 एटमोस का दबाव डाला गया। हाइड्रोजन का चरम-तापमान (—239° सैं० ग्रे०) है। द्रवित हाइड्रोजन का वाष्पाक (—262 7°) सैं० ग्रे० एक एटमोस दबाव पर है। दबाव को कम करके, इसको उबालने से, इसको सफेद ठोस के रूप मे बदला जा सकता है।

कैमर लिंघ ओन्स ने 1908 ई० मे हीलियम-गैस को द्रवित किया। इसके लिये पहले गैस को (—269)° सैं० ग्रे० (या 4°K) तक ठंडा किया गया। हीलियम गैस का चरम-तापमान 5 26°K है। हालाँकि **ओन्स**, द्रवित हीलियम को ठोस रूप मे नही बदल सके, फिर भी उन्होने 0·013 मि० मी० दबाव पर, 1912 ई० मे 0·99°K का निचला तापमान प्राप्त कर लिया। 1926 ई० मे **डा० कीसम** (Keesom) द्रवित हीलियम को ठोस बनाने मे अशत सफल हुए। इसके लिए उन्होने 130 एटमोस का दबाव लगाया। बाद मे 1932 ई० मे 0·17°K तक का निचला तापमान, प्राप्त हुआ। 1905 मे **लैंगविन** ने और 1927 ई० मे **गियूक** ने बतलाया था कि चुम्बकित (magnetised) आक्सीजन को अचुम्बकित (demagnetise) करके काफी निचले तापमान प्राप्त हो सकते है। 1926 मे **प्रो० डी-बाई** (De-bye) ने अपने आप ही गणन करके इस तापमान का मान मालूम किया। उन्होने प्रयोग के लिये "गेडोलिनियम-सल्फेट" को लिया। **गियूक** ने (—325°) सैं० ग्रे० का तापमान प्राप्त किया। बाद मे **डी-हास, क्रैमरस** और कुछ दूसरे वैज्ञानिको ने मिलकर (0 05°K) का कम से कम तापमान प्राप्त किया।

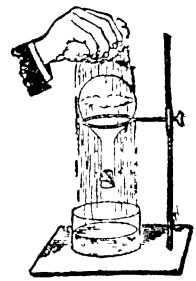


चित्र 54

74. द्रव का 'वाष्पांक' (Boiling point of a liquid) वह तापमान, जिस पर कि द्रव की सतृप्त-वाष्प का दबाव, हवा के दबाव के बराबर हो जावे उस द्रव का 'वाष्पाक' कहलाता है—जब तक सतृप्त वाष्प-दबाव (saturated—vapour pressure), तल (surface) पर के वायु-दबाव (atmospheric pressure) से कम रहता है, वाष्पीकरण (vapourisation) होता रहता है। दोनो दबाव बराबर होते ही द्रव उबलने लगता है।

75. 'वाष्पांक' पर दबाव की बदल का प्रभाव (Effect of change of pressure on boiling point)—वाष्पांक की परिभाषा से ही पता चलता है कि अगर द्रव के तल पर दबाव कम कर लिया जावे, तो उसका वाष्पाक भी कम हो जावेगा, और दबाव बढाने से वाष्पांक बढ़ जावेगा।

(क) कम दबाव पर वाष्पांक (फ्रैंकलिन-प्रयोग) (चित्र 55)—फ्लास्क को पानी से आधा भरकर, तिपाई पर रखो और ज्वालक (blower) जलाकर, इसको खौला (boil) लो। खौलते हुए, जब फ्लास्क में से सारी हवा बाहर निकल जावे, और थोडी-थोडी भाप भी बाहर निकलने लगे, तो बर्नर को बुझा दो, फलास्क का मुँह कार्क से बन्द करके, उसको उल्टा करके, चित्र 55 की तरह तिपाई पर रख दो। फ्लास्क की पैंदी पर, ऊपर से, स्पंज द्वारा ठडा पानी थोडा-थोडा करके डालो। आप देखोगे कि फ्लास्क के भीतर वाला पानी फिर से उबलने लगेगा।



चित्र 55

साधारण दबाव पर पानी का वाष्पाक 100° सें० ग्रे० होता है। ठडा होने पर यह तापमान कम हो जाता है। ठडा पानी डालने से अधिक वाष्प द्रवित होती है और वाष्प-दबाव घट जाता है, और उसके साथ ही उसका वाष्पाक भी। इसलिए पानी कम तापमान पर ही दुबारा खौलने लगता है, जब तक कि फ्लास्क के भीतर वाला खाली स्थान, जल-वाष्प से सतृप्त नही हो जाता।

(ख) अधिक दबाव पर वाष्पाक : **पेपिन की पतीली** (Papins Digestor)—प्रयोगों से पता चलता है कि तल (surface) पर 2 एटमोस का दबाव हो जाने पर पानी 120° सें० ग्रे० पर, और 15 एटमोस दबाव पर, 200° सें० ग्रे० पर उबलता है। प्रा० रेनूं (Regnault) ने अपने यत्र से 27 5 एटमोस दबाव पर, पानी का वाष्पाक 230 सें० ग्रे० मापा। देखा गया है कि लगभग 26 मि० मी० दबाव कम होने से वाष्पाक 1° सें० ग्रे० कम हो जाता है।

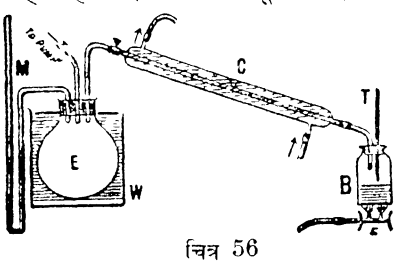
समुद्र-तल पर हवा का दबाव सबसे ज्यादा होता है। इसलिये 'वाष्पाक' का मान, समुद्र-तल पर सबसे अधिक होता है। जैसे-जैसे हम समुद्र-तल से ऊँचा उठते जाते हैं, वायु-दबाव कम होता जाता है। इसलिये पानी का वाष्पाक भी घटता जाता है। अतः पहाड की चोटी पर पानी का 'वाष्पाक' 100° सें० ग्रे० नही होता। दार्जिलिंग (ऊँचाई=6800 फुट) पर इसका मान 94° सें० ग्रे० पाया गया। क्यूटो (quito) जो कि संसार का सबसे ऊँचा नगर है, वहाँ पर पानी का वाष्पाक सिर्फ 90° सें०ग्रे० ही है।

अधिक ऊँचाई पर खुले बर्तनोमे (अर्थात् साधारण वायु-दबाव पर) खाना पकाना मुश्किल होता है। इसलिये इनके ऊपर ढकना (lid) लगा होता है। जब इनको ढकने से बन्द करके पानी उबालते है तो भीतर वाली भाप का दबाव, पानी के तल पर बढ़ जाता है। इससे पानी का 'वाष्पाक' बढ जाता है और वह उबलने लगता है। पेपिन की पतीली (Papin's Digestor) इसी तरह का एक बर्तन है। यह पहाड़ो पर चीजे पकाने के काम मे आता है। इसके ऊपरी ढक्कन मे एक दाब-प्रमापक (pressure gauge) और एक वाल्व (valve) लगा रहता है। वाल्व लीवर से जुडा रहता है। जब पतीली के भीतर पानी भरकर गर्म किया जा जाता है, तो ढके होने से, अन्दर का दबाव बढता है। इस दबाव की माप, दाब-प्रमापक बतलाता है। वाल्व के लीवर का आलम्ब

(fulcrum) पतीली के किनारे (rim) पर होता है। इसके एक ओर वाल्व और दूसरी ओर छोटा सा बाट लटकता रहता है। बर्तन मे भाप का दबाव ऊँचाई के अनुसार जितना रखना होता है, उसी हिसाब से, इस बाट को आलम्ब के पास या दूर रख लेते हैं। जैसे ही भीतर वाली भाप का दबाव, इस निश्चित मान से अधिक हो जाता है वैसे ही वाल्व खुल जाता है और थोडी सी भाप, बर्तन से बाहर निकल जाती है। इससे भीतर वाली भाप का दबाव कम हो जाता है, और वाल्व फिर से अपनी पहली जगह पर लौट आता है।

76. रैनूँ का प्रयोग (Regnault's Experiment)—प्रो० रैनूं ने एक ऐसा यन्त्र बनाया कि उससे, साधारण वायु-दबाव से कम या ज्यादा, दोनो तरह के दबावों पर किसी भी द्रव का 'वाष्पाक' मापा जा सकता है। साथ ही इस यन्त्र से, सतृप्त-वाष्प-दबाव का तापमान के साथ परिवर्तन देखकर, द्रव के 'वाष्पाक' पर दबाव का प्रभाव देखा जा सकता है।

इस यन्त्र (चित्र 56) मे ताँबे का बना एक बॉयलर (B) होता है, जिसमे प्रायोगिक द्रव भरा रहता है। बॉयलर के भीतर वाले खाली स्थान के तापमान की माप लेने के लिये एक थर्मामीटर (T), बॉयलर की डाट मे से पिरोया हुआ लगा रहता है। इसी डाट के दूसरी छेद मे से एक नली, 'लीबिग-शीतक' (Leibig-condensor) (C) से जुडी रहती है। इस शीतक (C) का दूसरा सिरा, एक बडे बर्तन (E) से जुडा रहता है। बर्तन (E), स्वय एक जल-उष्मक (water-bath) मे रखा रहता है। इसमे इसका तापमान, निश्चित मान पर स्थिर रखा जा सकता है। बर्तन (E) मे हवा, विभिन्न दबावो पर ऊपर की नली से, काग खोलकर भरी जा सकती है। जब इस हवा का दबाव, वायु-दबाव से अधिक रखना होता है तो इस नली को वायु-दाबक पप (air-compression-pump) और हवा के दबाव से कम दबाव के लिये, वायु-शोषक-पंप (air-exhaust-pump) से जोड देते हैं। बर्तन (E) वाली हवा का दबाव मापने के लिये, इसी बर्तन मे, 'यू' के आकार वाला, पारे का दाब-प्रमापक (mercury manometer) (M) लगा होता है।



चित्र 56

प्रयोग करने के लिये, पहले पंप द्वारा, हवा का दबाव, एक निश्चित मान तक स्थिर करते है। साथ ही बर्तन (B) के द्रव को भी गर्म करते हैं। द्रव की वाष्प शीतक (C) में से होकर, बाहर निकलना चाहती है। लेकिन शीतक (C) की ठडी दीवारों से छूकर, यह द्रव होकर, वापस, बर्तन (B) में गिर जाती है। कुछ देर बाद जब द्रव खौलने लगता है, तब थर्मामीटर की माप ले लेते हैं। यही उस निश्चित दबाव पर, द्रव के वाष्पाक की माप होती है। इस तरह बर्तन (E) वाली हवा का दबाव, थोड़ा-थोड़ा निश्चित और उचित मात्रा मे बढ़ाकर, हर एक दबाव पर, द्रव के

सगत (corresponding) वाष्पांक की माप लेते जाते हैं। बाद मे इन मापो से, 'वाष्पांक' व 'दबाव' के बीच एक ग्राफ भी खीचा जा सकता है।

पानी के 'वाष्पांक' पर 'दबाव' के प्रभाव वाले प्रयोग मे रैनूं द्वारा प्राप्त मापे, नीचे दी गई तालिका मे दी गई है।

क्रमांक	वाष्पांक (सैं० ग्रे०)	दबाव (मि० मी०)	क्रमांक	वाष्पाक (सैं० ग्रे०)	दबाव (मि० मी०)
1	0	4·6	11	...	.
2	10	9 2	12	.	...
3	20	17 4	13	.	...
4	30	31·5	14	...	...
5	50	92 0	15	.	..
6	70	233·1	16	110	1074 5
7	90	525 5	17	120	148 89
8	...	.	18	150	3568 .7
9			19	200	11647 0
10	100	760 0	20	230	18900 ·0

77. पानी का संतृप्त-वाष्प-दबाव मापना (डाल्टन विधि)—

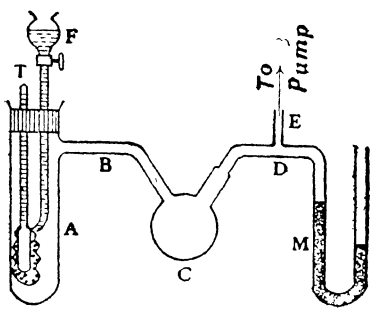
(i) 0° सैं० ग्रे० से 100° सैं० ग्रे० तक—बैरोमीटर की दो नलियाँ, पारे से पूरी तरह भरकर, पारे से भरे बर्तन मे उल्टा करके सीधा खडा कर दो। दोनो को एक जैकेट मे बन्द कर लो (चित्र 49 की तरह)। दोनों मे से एक नली मे पानी, पारे के ऊपर वाली खाली जगह मे, ऊपर चढा दो। जब पानी की पतली पर्त, पारे के तल पर दीखने लगे, तो इस नली मे खाली स्थान में भरी हुई जल-वाष्प सतृप्त होगी। दूसरी नली वायु-दबाव की माप बतलावेगी। क्योंकि दोनो नलियाँ एक ही बर्तन मे साधी हुई है, इसलिये पारे के तल की निचली मापे एक ही होगी। अत दोनो नलियो मे पारे के ऊपरी तलों की मापो का अन्तर, जैकेट के तापमान पर, 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' होगा। जैकेट मे पानी भरकर, उसमे भाप मिलाकर गर्म करो। थर्मामीटर से तापमान की माप लेकर, प्रत्येक तापमान पर 'सतृप्त-वाष्प-दबाव' की माप लेते रहो।

(ii) 0° सैं० ग्रे० से निचले तापमानों पर : **(गै-लुर्जक्स-विधि)**—जिस नली मे पानी चढाना होता है, उसको ऊपर से थोडा मुडा हुआ रखते है। मुडे हुए सिरे पर एक गोलक (bulb) लगा रहता है। गोलक मे प्रायोगिक द्रव (पानी) भरा रहता है। गोलक को 'हिम-मिश्रण' से ढककर, स्थिर तापमान पर रखा जाता है। दूसरी नली वायु-दबाव की माप बतलाती है। ऊपर (i) वाली विधि की तरह ही, दोनो नलियों मे पारे के ऊपरी तलो का अन्तर, वाष्प-दबाव की माप होती है।

(iii) 100° सैं० ग्रे० से ऊपर वाले तापमान पर—इसके लिये रैनूं-विधि (धारा 76) काम मे लाई जाती है।

रैम्ज़े और यंग के प्रयोग (Ramsay and Young's Experiments)—कम मान वाले वाष्प-दबावों को मापने के लिये, रैम्ज़े और यग ने रैनूं-यन्त्र को थोड़ा

सुधारा। इसमें काँच की एक चौड़ी नली (A) होती है, जिसकी बगल (side) में एव दूसरी पतली नली (B) जुडी रहती है। नली (B) का दूसरा सिरा, काँच के बर गोलक (C) (चित्र 57) से जुडा रहता है। इस गोलक (C) को हिम-मिश्रण से ढँक जा सकता है और इसमे हवा को इकट्ठा करके रखा जाता है। गोलक (C) का दूसर सिरा, T के आकार वाली नली (D) से जुडा रहता है, जिसका एक सिरा (E) तो पप से जुड़ा रहता है और दूसर 'मैनामीटर' (M) से। प्रमुख नली (A) मे एक "टैप-फनल" (F) और थर्मामीटर (T) वायु-रुद्ध लगे होते है। फनल (F) मे प्रायोगिक द्रव भरा जाता है। साथ ही थर्मामीटर की घुँडी के चारो ओर थोडी सी रूई भी लपेट दी जाती है।



चित्र 57

नली (A) को जल-उष्मक मे रखकर, उसका तापमान काफी अधिक बढा लिया जाता है। टैप-फनल (F) से टोटी खोलकर, नली (A) मे द्रव डालने पर, वह थर्मामीटर की घुँडी पर लिपटी हुई रूई को गीला कर देता है। लेकिन उष्मक का तापमान अधिक होने से, इसकी भाप बन जाती है और जल्दी ही, थर्मामीटर की घुँडी के चारो ओर वाली जगह, द्रव-वाष्प से सतृप्त हो जाती है। इस समय थर्मामीटर की माप स्थिर हो जाती है। यही द्रव के वाष्प-दबाव की माप (मैनोमीटर M द्वारा बतलाये गये दबाव पर) होती है। पप द्वारा दबाव को घटा-बढाकर, विभिन्न दबावो पर सगत वाष्पाक के मान मालूम किये जा सकते है।

78. उबलने के नियम (Laws of Ebulition)—

(i) द्रव का वाष्पाक वह तापमान होता है जिस पर कि उसका सतृप्त वाष्प-दबाव, द्रव के तल पर के दबाव बराबर होता है।

(ii) दबाव-विशेष पर, द्रव का एक ही वाष्पाक होता है। यह मान, द्रव के तल पर के दबाव के अनुसार घटता-बढ़ता रहता है।

(iii) अगर द्रव के तल पर का दबाव स्थिर रखा जावे, तो द्रव का वाष्पाक भी उतने समय तक स्थिर रहता है, जब तक कि सारे द्रव की वाष्प न बन जावे।

(iv) तापमान को स्थिर रखते हुए, द्रव की इकाई मात्रा को वाष्प बनाने के लिये, ताप की निश्चित मात्रा की जरूरत होती है। यही द्रव की 'गुप्त-ताप' (Latent heat) कहलाती है।

79. वाष्पांक से स्थान की ऊँचाई मालूम करना—'वायु-दबाव' और 'वाष्पाक' के सम्बन्ध से किसी स्थान की ऊँचाई मालूम की जा सकती है। किसी भी स्थान पर पानी का 'वाष्पाक', 'हिप्सोमीटर' से बडी आसानी से मापा जा सकता है। फिर रैनूँ तालिका से इस वाष्पाक पर सगत सतृप्त-वाष्प-दबाव पढते हैं। यही उस स्थान की ऊँचाई पर वायु-दबाव की माप होती है। दो स्थानों पर वायु-दबावों का अन्तर, इस प्रकार जानकर, इन दोनों स्थानों की ऊँचाइयों के अन्तर का गणन किया जा सकता

है। यह अन्तर इकाई क्षेत्र वाले सीधे खडे, इतनी ही ऊँचाई वाले वायु-स्तम्भ के भार के बराबर होता है। लेकिन इस वायु-स्तम्भ के अलग-अलग ऊँचाइयो पर, दबाव और तापमान एक समान नही होते। इसलिये इनका औसत मान ही लेना पड़ता है।

मान लो दोनो स्थानो की ऊँचाइयों मे अन्तर $=H$ सें० मी०

इनमे से निचले स्थान पर वायु-दबाव $=P_1$ सें० मी० (पारा)

,, ,, ऊँचे वाले ,, ,, $=P_2$ सें० मी० (पारा)

दोनो स्थानो पर हवा के तापमान—क्रमशः $=t_1,\ t_2°$ सें० ग्रे०

$\therefore$ दोनो स्थानो पर वायु-दबावो मे अन्तर $=(P_1-P_2)$ सें० मी०

और औसत वायु-दबाव $=\left(\frac{P_1+P_2}{2}\right)$ सें० मी० $=P$ (मान लो)

साथ ही ,, तापमान $=\left(\frac{t_1+t_2}{2}\right)°$ सें० ग्रे० $=t°$ (मान लो)

हवा का घनत्व, वैधिक दबाव और तापमान (N.T.P.) पर $=0{\cdot}001293$ ग्राम

मान लो औसत दबाव और तापमान पर हवा का घनत्व $=\rho$

$$\therefore \left(\frac{76}{0{\cdot}001293\times 273}\right)=\frac{P}{\rho\times(273+t)}$$

अत. $\rho=\dfrac{P\times 0{\cdot}001293\times 273}{76\ (273+t)}$

और (H) घन सें० मी० हवा (औसत घनत्व $=\rho$) का भार

$$=\frac{H\times P\ (0{\cdot}001293)\ (273\times 981)}{76\ (273+t)}$$

यह भार, एक इकाई वर्ग पर, (P_1-P_2) सें० मी० ऊँचे पारे के स्तम्भ के भार के बराबर होगा। अर्थात्

$$(P_1-P_2)\ (13{\cdot}6\times 981)=\frac{H\times P\ (0{\cdot}001293)\ (273\times 981)}{76\ (273+t)}$$

इसलिए ऊँचाई $(H)=\dfrac{(P_1-P_2)\ 13{\cdot}6\times 76\ (273+t)}{P\times 273\times 0{\cdot}001293}$ सें० मी०

80. पदार्थ की अणुक अवस्थाये (Molecular States)—पदार्थ के अणुक सिद्धान्त से, वाष्प, (vapours) अणुओ के छोटे-छोटे समूहो (aggregations) से मिल कर बनती है। यह छोटे-छोटे समूह, अणुओ की तरह ही गति करते है। लेकिन इनका वेग, अणुओ के वेग से काफी कम होता है। जैसे-जैसे तापमान घटता जाता है, प्रति इकाई आयतन मे अणुक-समूहो की सख्या बढती जाती है, और आखिर मे वाष्प जमकर, द्रव की बूंद बन जाती है।

द्रव मे, इन समूहो को बनाने वाले अणुओ की संख्या काफी अधिक होती है। इसलिए द्रव मे अणुओ की अपनी-अपनी गति वाष्प की अपेक्षा काफी कम होती है

(स्थिर तापमान पर)। ठोस चीज़ों में, अणुओं का वेग द्रव की अपेक्षा और भी कम हो जाता है, और समूहों के बीच की दूरी स्थिर (constant) हो जाती है। तब यह अणु, थोडी सी ही जगह मे गति कर पाते है। रवेदार (crystalline) ठोसो मे यह समूह श्रेणीबद्ध लगे होते है। बिखरे होने पर ठोस असम (amorphous) कहलाता है।

81. अणुक अवस्था पर ताप का प्रभाव—ठोस चीज़ को गर्म करने पर, दिया गया ताप, अणु-समूहो की गतिज-ऊर्जा (यानी वेग) को बढाने के काम मे आता है। जैसे-जैसे तापमान बढता जाता है, वैसे-वैसे, अणु-समूहो की गतिज-ऊर्जा (अत वेग) बढती जाती है। आखिर मे एक ऐसा तापमान आता है कि जब वे आसपास के समूहो के प्रभाव-क्षेत्र (region of influence) से बाहर निकलकर, स्वतत्र हो, द्रव के अणु-समूह बन जाते है। यही 'गलन' की अवस्था का प्रारम्भ है। इससे अधिक ताप मिलने पर, ठीस का तापमान (=गलनाक) तो स्थिर रहता है, लेकिन पदार्थ को मिलने वाला ताप, उसको ठोस से द्रव मे बदलता जाता है।

कुछ अणु-समूहो की गतिज-ऊर्जा, कभी-कभी इतनी बढ जाती है कि वे हवा के साधारण तापमान पर ही, दूसरे समूहो के आकर्षण-क्षेत्र से बाहर निकलकर, द्रव के तल से बाहर जाने लगते है। यही 'वाष्पीकरण' है। इस क्रिया मे द्रव की औसत गतिज-ऊर्जा कम होती रहती है, जिससे उसका तापमान कुछ कम हो जाता है। वाष्पीकरण द्वारा ठड लगने की क्रिया इसी कारण होती है।

तापमान बढने पर, वाष्पीकरण की गति बढती जाती है। और भी अधिक ताप देने पर, द्रव मे बुलबुले (bubbles) उठने लगते है। जिस तापमान पर सारे द्रव मे बुलबुले उठने लगे, वह उस द्रव का 'वाष्पाक' कहलाता है। और भी अधिक ताप मिलने पर पदार्थ का तापमान तो 'वाष्पाक' पर स्थिर रहता है। लेकिन मिला हुआ ताप, उसको द्रव से वाष्प बनाता रहता है। जब तक कि सारे द्रव की वाष्प नही बन जाती, तापमान, वाष्पाक पर स्थिर रहता है। द्रव की 1 ग्राम मात्रा को, वाष्पाक पर, वाष्प बनाने के लिए आवश्यक ताप की मात्रा, उस द्रव का '**वाष्पीकरण का गुप्त-ताप**' कहलाती है।

शुरू मे, खाली जगह मे बहुत ही थोडे (प्राय. नही के बराबर) वाष्प-अणु होते हैं। इसलिए द्रव के तल को छोडकर बाहर निकलने वाले अणुओ की सख्या, उतने ही समय मे वाष्प से द्रव मे आकर मिलने वाले अणुओ की सख्या से अधिक होती है। लेकिन धीरे-धीरे, द्रव के तल से बाहर निकलने वाले अणुओं की सख्या बढती जाती है। जब द्रव के तल मे बाहर निकलने वाले और वाष्प से वापिस द्रव मे मिलने वाले अणुओ की सख्या बराबर हो जाती है, तो उस स्थान को द्रव की वाष्प से 'सतृप्त' कहने लगते है। सतृप्त-वाष्प का अपना दबाव होता है, जिस पर तापमान की बदल का काफी प्रभाव पडता है। आयतन की बदल से, अणु-सख्या बदल जाती है। लेकिन इस क्रिया मे दबाव स्थिर रहता है। द्रव के तल पर दबाव बढने से, वाष्पीकरण का वेग घट जाता है, क्योकि दबाव बढने से, तल पर से बाहर [illegible] अणुओं को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होने लगती है।

हेनरी विक्टर रैनूं (1810–1878)
(Henry Victor Regnault)

रैनूं का जन्म 9 जौलाई, 1810 ई० को फ्रास मे, एक्स-ला-चैपेल नामक स्थान पर हुआ था। आपके पिता काफी गरीब थे। इससे आपको बचपन मे उचित शिक्षा नही मिल सकी। लाचार होकर आपको एक दवाई बेचने वाले की दुकान पर क्लर्क की नौकरी करनी पडी। वहाँ पर आप दिन भर तो दुकान का काम करते रहते थे और रात को 'रसायनशास्त्र' और 'औषध-विज्ञान' पर शुरू की किताबे पढा करते थे। 1832 मे आप पेरिस चले गए, और बडी मेहनत के बाद, 'इकोले-पौलीटैक्निक' मे शाखिल हो गए। 1836 मे आपने विशेष योग्यता से वहाँ की आखिरी परीक्षा पास कर ली और 'लियोन्स' मे प्रोफेसर बन गए।

1840 ई० तक आते-आते आप एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक के रूप मे प्रसिद्ध हो गए और उसी वर्ष अपने शुरू वाले पौलीटैक्निक मे "प्राकृतिक दर्शनशास्त्र" के प्रोफेसर नियुक्त हो गए। अब तक आपने अधिकतर रसायनशास्त्र पर ही खोज-कार्य किया था। आगे से आपकी सारी खोजे भौतिक-विज्ञान के क्षेत्र मे ही हुई। आपने एक खास तरह का कैलोरीमीटर, विभिन्न पदार्थों के वि० ताप मापने के लिए बनाया। जल-वाष्प का घनत्व, गैसो के बॉयल-नियम के अपवाद (exceptions), द्रवो का प्रसार, गैस और वाष्प के विशिष्ट-ताप, ध्वनि का वेग, इन सभी विषयो मे आपने योग दिया। आपकी मृत्यु, 1878 ई० मे हुई।

सार (Summary)

'गलन' और 'घनीभवन'—**जब पदार्थ ठोस अवस्था से द्रव बनने लगता है तो इस परिवर्तन को 'गलन'** (fusion) **कहते है। इसके विपरीत जब पदार्थ द्रव से ठोस अवस्था में बदलने लगना है, तो इस क्रिया को 'घनीभवन'** (solidification) **कहते है।**

गलनांक—**वह तापमान है, जिस पर ठोस वस्तु, पिघलना शुरू कर देती है। जब तक सारा ठोस नही पिघल जाता, तब तक यह तापमान स्थिर रहता है।**

'गलनांक' पर दबाव का प्रभाव—**जो पदार्थ पिघलने पर आयतन में बढ़ जाते है, उनका दबाव बढ़ाने से, संगत 'गलनांक' बढ़ जाता है। पिघलकर सिकुड़ने वाले पदार्थों पर दबाव बढ़ाने से गलनांक घट जाता है।**

'वाष्पीकरण' और 'उबलना'—**द्रव के तल पर ही, चारों ओर के ताप-मान पर उसकी वाष्प बनने की क्रिया को वाष्पीकरण कहते हैं। इसके विपरीत, द्रव का उबलना, सिर्फ एक ही तापमान (वाष्पांक) पर, तेजी से, और द्रव की सारी मात्रा में होने वाली क्रिया है।**

वाष्प-दबाव—**द्रव की वाष्प, दूसरी गैसों की तरह अपना दबाव डालती है। इस दबाव पर तापमान की बदल का प्रभाव पड़ता है।**

संतृप्त और असंतृप्त वाष्प—**अगर किसी जगह पर, वाष्प-कणों की संख्या, स्थान के अपने स्वभाव, आकार इत्यादि के अनुसार अधिकतम है, तो उस स्थान को वाष्प से संतृप्त** (saturated) **कहते है, नहीं तो असंतृप्त। किसी भी तापमान विशेष पर संतृप्त-वाष्प का दबाव अधिकतम होता है।**

वाष्प और गैस—**अपने चरम-तापमान से कम तापमान पर पदार्थ, वाष्प की तरह काम करते हैं और इससे ज्यादा तापमान पर गैस की तरह।**

शीत (ठंडा) **पैदा करने के लिए, वाष्पीकरण का वेग बढ़ाते है या पदार्थ को एक साथ ही प्रसारित** (sudden expansion) **करते है।**

वाष्पांक—**वह तापमान है जिस पर द्रव का संतृप्त-वाष्प-दबाव, द्रव के तल पर के दबाव के बराबर हो जाता है।**

अभ्यास के लिए प्रश्नावली

1. बर्फ के दो टुकड़ों को दबाने से, वह मिलकर एक हो जाते है। क्यों ?
(पंजाब 1953 ; विश्वभारती 1954, 55; कलकत्ता 1950)

2. प्रयोग द्वारा किस तरह सिद्ध करोगे कि—

(i) दबाव बदलने से, पदार्थ का 'गलनांक' बदल जाता है।

(ii) वाष्पीकरण से ठंड पैदा होती है। (उत्कल 1952)

(iii) वाष्पाक पर द्रव का संतृप्त-वाष्प-दबाव, उसके तल पर के दबाव के बराबर होता है। (गोहाटी 1955 , कलकत्ता 1915 ; पंजाब 1931 ; प्रयाग 1916 ;)

3. उबलने और वाष्पीकरण की क्रियाओं में भेद स्पष्ट करो। किस तरह मालूम करोगे कि अमुक द्रव, किन-किन हालतों में उबलेगा या उसकी वाष्प बनेगी ? (गोहाटी 1955 ; कलकत्ता 1941, 44, 52 , ढाका 1937)

4. द्रव के वाष्पांक की परिभाषा दो। संतृप्त-जल-वाष्प-दबाव का मान, वैधिक (normal) वाष्पांक से कम या अधिक तापमानों पर किस तरह मापोगे ? (दिल्ली 1938 ; कलकत्ता 1947)

5. पानी के वाष्पीकरण पर प्रभाव डालने वाली सभी बातों को बतलाकर, उनके प्रभाव की व्याख्या कीजिए। (मद्रास 1950)

6. द्रव के संतृप्त-वाष्प-दबाव का अर्थ स्पष्ट करो। (गोहाटी 1952 ; मद्रास 1949)

7. संतृप्त और असंतृप्त वाष्पों के भेद को स्पष्ट करो। किस तरह मालूम करोगे कि कोई स्थान संतृप्त हो गया है या नहीं ? (पटना 1941, 54 , कलकत्ता 1941, 47 , गोहाटी 1952 ढाका 1931 , दिल्ली 1954 , उत्कल 1954 , नागपुर 1954 ; पंजाब 1950, 52)

8. निम्न घटनाओं का स्पष्टीकरण कीजिए—

(i) गीले कपड़े पहनकर, तेज हवा में बैठना हानिकर होता है। (कलकत्ता 1947, 50)

(ii) थर्मामीटर की घुंडी पर गीला कपड़ा लपेटने से, उसकी माप बदल जाती है। (कलकत्ता 1948)

(iii) पहाड़ों पर चीजें पकाने के लिए ढक्कनदार बर्त्तन काम में लाए जाते है। (दिल्ली 1943)

(iv) धातु के बर्त्तन की अपेक्षा मिट्टी के बर्त्तन में पानी अधिक ठंडा रहता है। (विश्वभारती 1955)

9. निम्नलिखित पर सक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(i) बर्फ जमाने की मशीन। (मद्रास 1950; राजपूताना 1953)

(ii) हिम-मिश्रण (मद्रास 1950)

(iii) पैपिन की पर्तीला। (पजाब 1953, पटना 1955)

(iv) चरम-तापमान

10. बैरोमीटर की नली में पारे के ऊपर वाले खाली स्थान में पानी की कुछ बूँदें चढा दी जाती है। इनकी सख्या इतनी अधिक है कि पारे के तल के ऊपर कुछ बूँदे बाकी रह जाती है। पारे के तल के नीचे गिरने से, कमरे का तापमान किस तरह मालूम करोगे? (कलकत्ता 1931, 32)

11. (i) उबलने के नियम क्या-क्या है?

(ii) पानी का वाष्पाक जानकर, हवा का दबाव किस तरह जाना जा सकता है?

(iii) "50° सैं० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव 9·2 मि० मी० (पारा) है। इतने ही दबाव पर, पानी का वाष्पाक 50° सैं० ग्रे० होगा" इस कथन की व्याख्या करो। (उत्कल 1952)

12. द्रव के वाष्पाक का अर्थ स्पष्ट कीजिए। प्रयोग द्वारा किस तरह सिद्ध करोगे कि पानी को 100° सैं० ग्रे० से कम या अधिक, किसी भी तापमान पर उबाला जा सकता है? (पजाब 1932; कलकत्ता 1941, पटना 1952)

13. अपने हाथ को गुनगुने पानी मे डुबोकर, बाहर हवा में खुला छोड दें तो वह ठडा लगने लगता है। यही क्रिया, पानी की जगह पर, ईथर-द्रव मे करने पर, पानी की अपेक्षा, हाथ, हवा में अधिक ठडा लगता है। क्यों? (कलकत्ता 1938)

14. आंशिक दबाव के डाल्टनीय नियमों का उल्लेख करके, उनका स्पष्टीकरण कीजिए। (पटना 1940)

15. बैरोमीटर की दो नलिया पास-पास ही खडी है। इनमें से एक में, पारे के ऊपर वाली खाली जगह में, पानी की कुछ बूँदे चटा दी जाती है, और दूसरी में थोडी सी हवा। इन दोनों नलियों से प्राप्त, वायु-दबाव की मापों मे अशुद्धियों पर क्या प्रभाव पडेगा, जबकि—

(i) वायु-दबाव ही बदल जावे, या (ii) तापमान बदल जावे। (कलकत्ता 1929)

16 नैफ्थलीन का गलनाक किस तरह निकालोगे? (यू० पी० बोर्ड 1934)

17. दार्जिलिंग मे वायु-दबाव की माप 23 इच है। दबाव में 1 मि० मा० (पारा) की बदल से अगर पानी का वाष्पाक 0·04° सैं० ग्रे० बदल जाता है, तो इस स्थान पर पानी कितने तापमान पर उबलेगा? (पटना 1913, ढाका 1942)

उत्तर—92·97° सैं० ग्रे०।

18. अणु-सिद्धान्त से व्याख्या करो—

(i) वाष्पीभवन से ठडक पैदा होती है।

(ii) दबाव से द्रव का वाष्पाक बदल जाता है।

(iii) द्रव और ठोस में भेद। (उत्कल 1952; बनारस 1929 34, गोहाटी 1958)

19. "निचले तापमानों को प्राप्त करना" और "गैसों का द्रवीकरण" विषयों पर संक्षिप्त नोट लिखो।

20. द्रव के वाष्पांक पर ऊँचाई का क्या प्रभाव पडता है? किसी पहाड की तलेटी और उसकी चोटी पर पानी का वाष्पांक मापकर, पहाड़ की ऊँचाई किस तरह मालूम करोगे?

(कलकत्ता 1938, 45; पटना 1943)

21. द्रव के वाष्प, बॉयल और चार्ल्स नियमों का किस तरह पालन करते है ?
(राजपूताना 1953)

22. काच के फ्लास्क को पानी से आधा भरकर, इतना गर्म करते है कि पानी खौलने लगे। कुछ देर बाद, जब फ्लास्क में से पानी की भाप निकलने लगती है तो इसको डाट लगाकर बद कर देते है। फिर इसको उलटा करके इसकी पैंदी पर ऊपर से ठडा पानी डालते है। इसका क्या प्रभाव होगा और ऐसा क्यों होगा ? (विश्व-भारती 1954, कलकत्ता 1938)

23. रैम्जे-यग-यत्र से विभिन्न तापमानों पर संतृप्त-वाष्प-दबाव किस तरह मापा जाता है ?
(नागपुर 1954)

अध्याय 7

आर्द्रता-मापन

(Hygrometry)

82. हवा में जल-वाष्प—हवा में साधारणतः थोडे से 'जल-वाष्प-कण' (water-vapours), ज़रूर रहते है। नदी, झील, तालाब और समुद्र-तल जैसे खुले और फैले हुए द्रव-तलो पर, पानी, भाप बनकर, हवा मे गायब होता रहता है। अगर काँच के एक गिलास मे, थोडा सा बर्फ रख दे, तो खुला छोड़ देने पर, गिलास के बाहरी तल पर छोटी-छोटी सी बूँदे बनती दिखलाई पडती है। बाहर की हवा, गिलास मे रखे हुए बर्फ से ठण्डी होकर, द्रव की बूँद बन जाती है। ज्यादातर, बरसात मे नमक पसीज जाता है। ओस, धुन्ध (कोहरा), बादल, वर्षा वगैरह सभी से पता लगता है कि हवा मे जल-वाष्प-कण मौजूद रहते है। हाँ, इनकी मात्रा, कभी कम और कभी ज्यादा जरूर होती रहती है। इस मात्रा को मापने की क्रिया ही "आर्द्रता-मापन" कहलाती है।

83. ओसांक (Dew Point)—साधारणतः हवा मे जल-वाष्प-कण इतने अधिक नही होते कि वह उनसे सतृप्त हो सके। अगर किसी खुली जगह की नम (moist) हवा को धीरे-धीरे ठडा किया जावे, तो ठीक उसी जगह मे मौजूद वाष्प-कणो का दबाव, आस-पास की जगह पर के दबाव से कम होता जाता है। इस तरह ठडा करने से इस खास जगह वाली हवा का तापमान और दबाव गिरता जाता है, जबकि आस-पास वाली हवा का तापमान और दबाव, दोनो ही स्थिर रहते हैं। हवा का प्रवाह, हमेशा गर्म और अधिक दबाव वाले क्षेत्र से कम तापमान और दबाव वाले क्षेत्र की ओर हुआ करता है। इसलिये इस हालत मे भी, कमरे के दूसरे हिस्सो से हवा के वाष्प-कण, इस ठडे स्थान की ओर आने लगेगे। जैसे-जैसे यह जगह ठडी होती जावेगी, जल-वाष्प-कणो की सख्या बढती जावेगी। अन्त मे एक ऐसा तापमान आवेगा कि इस जगह की हवा, वाष्प-कणो से सतृप्त हो जावेगी। यही 'ओसाक' है। इससे कम तापमान पर जल-वाष्प-कण, जमकर, ओस की बूँद बन जाते है। इसलिये—

"ओसांक, यह तापमान है, जिस पर दी हुई मात्रा की हवा, उसमें मौजूद जल-वाष्प-कणों से सतृप्त हो जाती है। ओसाक पर वाष्प-कणों का जो उच्चतम दबाव होता है, वही कमरे के तापमान पर, वाष्प-कणों का भी दबाव होता है।"

जब हम कहते है कि किसी स्थान पर हवा का ओसाक, किसी समय और तापमान-विशेष पर 23° सें० ग्रे० है, तो इसका यही मतलब है कि उस समय हवा मे जितने-वाष्प-कण हैं, वे 23° सें० ग्रे० पर हवा को संतृप्त कर देगे।

84. आपेक्षिक-आर्द्रता (Relative Humidity)—पूर्ण आर्द्रता को, आर्द्रता मापने की इकाई मान लिया गया है। इसलिये किसी भी समय की हवा की आर्द्रता की पूर्ण आर्द्रता से तुलना की जाती है। यानी यह देखा जाता है कि उस समय और स्थान-विशेष की वायु की आर्द्रता, पूर्ण आर्द्रता का कौनसा अश है, और फल को प्रतिशत रूप मे लिखा जाता है। यही फल, 'आपेक्षिक-आर्द्रता' का मान होता है। अर्थात्—

आपेक्षिक-आर्द्रता

$$= \left(\frac{\text{स्थान और समय-विशेष की हवा मे मौजूद वाष्प-कणो की सख्या} \times 100}{\text{स्थान और समय विशेष की हवा के सतृप्त हो जान पर वाष्प-कणो की सख्या}} \right)$$

परन्तु वाष्प-कणो की सख्या बदलने मे, उनकी मात्रा भी घटती-बढती रहती है। साथ ही हवा, 'बॉयल-नियम' को मानती है। इसलिये जल-वाष्प का दबाव, उनकी मात्रा के समानुपाती होगा। अत: ऊपर वाले सूत्र मे, वाष्प-कणो की सख्या की जगह पर, उसका दबाव लिया जा सकता है। यानी—

आपेक्षिक-आर्द्रता =

$$= \frac{\text{स्थान और समय-विशेष की हवा मे, मौजूद वाष्प-कणो का दबाव (क्षेत्र के तापमान पर) } (=f)}{\text{स्थान और समय विशेष की हवा के सतृप्त हो जाने पर दबाव } (=F)}$$

$$= \frac{\text{ओसाक पर जल-वाष्प का उच्चतम दबाव } (=f)}{\text{कमरे के तापमान पर, जल वाष्प का उच्चतम दबाव } (F)} \times 100 \%$$

आपेक्षिक-आर्द्रता के मान से ही, वायु के नम या सूखे होने का पता लगता है। बरसात के दिनो मे इसका मान, काफी बढ जाता है। आपेक्षिक-आर्द्रता जितना ही ज्यादा होती है, वाष्पीकरण भी उतना ही धीमा होता है। गर्मी के दिनों मे, जिस समय हवा नम हो जाती है तो साफ और खुले हुए आकाश वाले दिन की अपेक्षा, अधिक बेचैनी होती है, इसका यही कारण है कि नमी वाले दिन, हवा, जल-वाष्प-कणो से लगभग सतृप्त रहती है, और वाष्पीकरण बहुत ही धीरे-धीरे होता है। इससे बदन मे चिपचिपापन आ जाता है। जाडे और बरसात मे, गर्मी की अपेक्षा, कपडो का देर से सूखना भी इसी कारण से होता है।

आपेक्षिक-आर्द्रता का मान, रोजाना, ऋतु-परीक्षण-केन्द्रों (Meteorological Stations) पर मालूम किया जाता है। इससे आगे आने वाले मौसम का अनुमान लगाने मे सहायता मिलती है। इसका मान अधिक होने पर, वर्षा की आशा की जा सकती है। इस प्रकार की सूचना विमान-सचालन के लिये भी बडी जरूरी है। 'जन-स्वास्थ्य-विभाग' (Public Health Department) भी इन मापो से लाभ उठाता है, क्योकि नम हवा मे ही बीमारियो के कीडे पनपकर बढते है। गर्म मकानो मे, पौधो को अच्छी तरह से बढाने के लिए आवश्यक नमी का नियत्रण करना पडता है। पुतली-घरों (textile mills) मे भी सूत को ठीक तरह से कातने-बुनने के लिये नमी का नियत्रण करते है। बर्फ-घरो (Cold Storages) मे गोश्त (मास) व फलों वगैरह को ठडा रखकर खराब होने से बचाते है। यहाँ पर भी हवा की नमी का आवश्यक मान

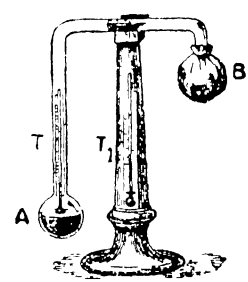
रखा जाता है। वायुयानो के बनाने मे काम आने वाली लकडी को नमी से ही 'मीज़न' (season) किया जाता है।

85. आर्द्रता-मापक (Hygrometer)—किसी भी समय और स्थान पर हवा की आपेक्षिक-आर्द्रता मापने के यत्र को 'आर्द्रता-मापक' (हाइग्रोमीटर) कहते है। यह तीन तरह के होते है—

(1) ओसाक आर्द्रता-मापक (Dew-Point Hygrometers)—इनमे ओसाक निकालकर, उस पर और साथ ही कमरे के तापमान पर, उच्चतम वाष्प-दबाव का मान रैनॅू-तालिका मे मालूम किया जाता है। इन दोनो मानो के अनुपात को प्रतिशत मे व्यक्त करने से 'आपेक्षिक आर्द्रता' मालूम हो जाती है।

ओसाक निकालने के लिए अधिकतर तीन यत्र काम मे लाये जाते है—(i) डेनियल-यत्र, (ii) रैनॅू-यत्र और (iii) गीली-सूखी घुण्डी वाला थर्मामीटर। इन सब का सक्षिप्त विवरण यहाँ पर दिया जा रहा है।

86. डेनियल-आर्द्रता मापक (Daniel's Hygrometer) (चित्र 58)—इस यत्र मे दो गोलक (bulbs) (A,B) एक पतली और लम्बी नली, जो कि बीच मे दो बार समकोण पर मुडी रहती है, द्वारा, आपस मे जुडे रहते है। इस सारे प्रबन्ध को एक स्टैड पर लगाकर सीधा खडा रखा जाता है। गोलक (A) की नली मे, भीतर एक थर्मामीटर (T) लगा रहता है, जो कि इसमे भरे हुए द्रव का तापमान बतलाता है। एक दूसरा थर्मामीटर (T_1), बीच के 'स्टैड' पर, यत्र के चारो ओर वाली हवा के तापमान की माप लेने के लिये लगा रहता है। दोनो गोलको मे से हवा निकालकर, इनमे ईथर-द्रव भर देते है, दूसरा गोलक (B), (A) की अपेक्षा थोडा ऊँचा रखा जाता है, और साथ ही इस पर मलमल (muslin) का टुकडा लिपटा रहता है। गोलक (A) पर ओस की बूँदो को आसानी से देखने के लिये, इसको अन्दर से काला कर देते है, अथवा एक सुनहरी चूडी, गोलक के बीच वाले हिस्से मे लगा देते है।



चित्र 58

प्रयोग करने से पहले यत्र को टेढा करके सारा ईथर-द्रव, गोलक (A) मे कर लेते है। गोलक (B) पर बाहर बंधे हुए मलमल के कपडे पर बूँद-बूँद करके ईथर-द्रव डाला जाता है। कपडे के तल पर इस द्रव का वाष्पीकरण होता है जिससे कपडा (अतः गोलक और उसके भीतर भरी हुई ईथर-वाष्प) ठडा होता जाता है। कुछ देर बाद गोलक (B) के भीतर वाली ईथर-वाष्प द्रवित हो जाती है, और भीतर आशिक शून्य स्थान पैदा हो जाता है। इस खाली जगह को भरने के लिये, गोलक (A) के भीतर वाली ईथर-वाष्प, गोलक (B) की ओर भागती है। दूसरे शब्दो मे मलमल के टुकड़े पर ईथर की बूँद-बूँद टपकाने से, गोलक (A) की ईथर का वाष्पी-

करण और भी तेजी से होने लगता है। इससे गोलक (A) का भी तापमान घटने लगता है। यत्र के चारो ओर वाली हवा, इस ठंडे गोलक (A) के छूने से स्वय भी ठडी होने लगती है। आखिर मे वाष्पीकरण इतना तेजी से होने लगता है कि गोलक (A) के चारो ओर वाली हवा ठंडी होकर सतृप्त हो जाती है और द्रवित होकर, बूँदो के रूप मे, गोलक के बाहरी तल (surface) पर दीखने लग जाती है। उस समय, इस गोलक (A) के भीतर वाले थर्मामीटर की माप, ही 'ओसाक' होती है, और दूसरे थर्मामीटर (T_1) की माप, कमरे का तापमान बतलाती है। 'ओसांक' को काफी ठीक-ठीक जानने के लिये (T_1) की दो मापे ली जाती है, एक तो जब कि बाहरी तल पर बूँदे दिखलाई ही पडती है और दूसरी जब कि बूँदे गायब हो जाती हैं। दोनों मापो का औसत ओसाक की शुद्ध माप होती है। तापमानो को, टेलिस्कोप या बीच से पारदर्शक काँच रखकर पढना चाहिये, नही तो साँस की हवा, गोलक का तापमान बदल देगी और फल अशुद्ध हो जावेगा।

प्रयोग मे समावित अशुद्धिया (Sources of Error)—(i) गोलक (A) मे भरे हुए ईथर-द्रव के ऊपरी तल पर ही वाष्पीकरण होता है। सारे द्रव को मथक द्वारा हिलाकर उसका तापमान एकसार नही किया जाता। इसलिये थर्मामीटर (T) का तापमान, तल पर के तापमान से थोडी भिन्न होता है।

(ii) काँच, ताप का कुचालक है। इसलिये गोलक (A) के भीतर भरे हुए ईथर-द्रव का तापमान, और गोलक के बाहरी तल के तापमान एक ही नही होते। इस कारण थर्मामीटर (T) की माप ओसाक से थोडा भिन्न होगी।

(iii) गोलक के बाहरी तल पर पानी की बूँदे दीखने और गायब होने की क्रिया को ठीक-ठीक नही आँका जा सकता, क्योकि तुलना के लिये पास मे ही कोई दूसरा तल नही होता।

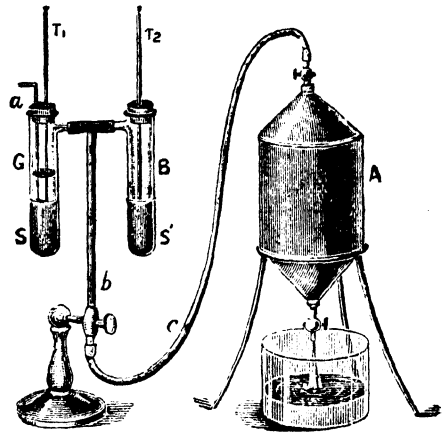
(iv) गोलक (A) मे ईथर के वाष्पीकरण की गति (rate) को मनचाहा नही बदल सकते।

(v) क्योकि प्रयोग करने वाला, हमेशा यत्र के पास ही रहता है, इसलिये उसके साँस और शरीर की गर्मी से, गोलक (A) का तापमान और उसके चारो ओर वाली हवा की आर्द्रता पर असर पड़ता है, और फल अशुद्ध हो जाता है।

(vi) गोलक (B) पर ईथर काफी मात्रा मे धीरे-धीरे डाला जाता है। इसके वाष्प-करण, चारो ओर की हवा मे मिल जाते है। इससे आपेक्षिक-आर्द्रता पर प्रभाव पडता है।

(vii) अगर चारो ओर की हवा सूखी और गर्म हो तो इस यंत्र से 'ओसांक' निकालना मुश्किल हो जाता है।

87. रैनूं-यंत्र (Regnaults Hygrometer) [(चित्र 59)—काँच की दो परख-नलियो (B, C) लेकर, उनकी पैंदियो (bottoms) पर भीतर की ओर से चाँदी का मुलम्मा (बिजली से) (silver-plated) किया होता है। कुछ यत्रो मे तो पैंदी को ही चाँदी का बना देते है। इन दोनो नलियो (B, C) को, काँच की एक पतली नली (b) जोडनी है। साथ ही इन दोनो नलियो का सबध, एक वायु-चूषक (aspirator) (A) से होता है। इस चूषक मे पानी भरा रहता है और निचले भाग मे पानी निकालने के लिये एक टोटी और बर्तन रखा होता है।



चित्र 59

जब टोटी को खोलकर, चूषक (A) मे भरा हुआ पानी, नीचे रखे बर्तन मे गिरता है, तो पानी के निकलने से, चूषक मे आशिक शून्य-स्थान (partial vacuum) पैदा हो जाता है। इस शून्य-स्थान को भरने के लिये, दाबान्तर (pressure-difference) के कारण, हवा, परख-नली (C) से आती है। इस नली मे भी वायु दबाव घट जाता है, और उसकी जगह को पूरा करने के लिये, बाहरी हवा, छोटी व पतली नली (a) से खिच आती है। लेकिन इस बाहरी हवा को, परख-नली (C) मे भरे हुए द्रव मे से बुलबुलाकर जाना पडता है। इससे ईथर का वाष्पीकरण और भी तेजी से होने लगता है, और उसका तापमान जल्दी से गिरने लगता है। बाहर वाली हवा जब इस ठडी नली (C) को छूती है, तो वह भी ठडी हो जाती है। आखिर मे एक ऐसा तापमान आता है कि जब इस नली के चारो ओर वाली, बाहरी हवा, सतृप्त होकर, बूंदो के रूप मे, नली के बाहरी तल पर दीखने लगती है। ओस की बूंदे दूर से ही देखने के लिये टैलिस्कोप काम मे लाते है।

लाभ (Advantages)—(i) नली की पैंदी चाँदी की बनी होने से, ताप की सुचालक होती है। बाहरी तल और भीतर भरे द्रव दोनो के तापमान एक ही होते है। साथ ही इसका तल काफी चमकीला (shining) होता है। इसलिये इस पर बूंदे आसानी से दीख जाती है।

(ii) दूर से माप लेने के कारण, प्रयोग करने वाले के साँस और शरीर की गर्मी का, आर्द्रता पर असर नही पडने पाता।

(iii) बाहरी हवा, नली मे भरे हुए ईथर-द्रव मे से बुलबुलाकर चूषक मे जाती है इसलिये सारे द्रव का तापमान एक सा हो जाता है।

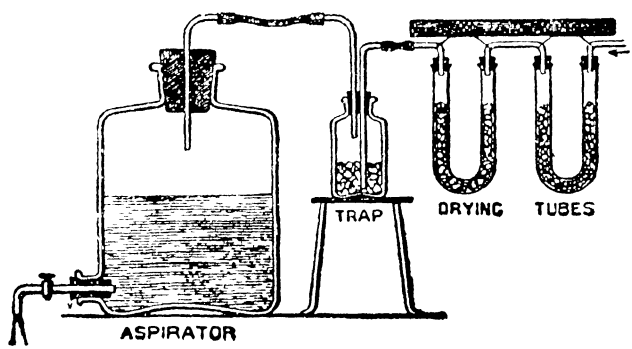
(iv) प्रायोगिक नली के पास ही वैसी ही एक दूसरी नली लगा देने से, पैंदी

(S) के बाहरी चमकीले तल पर ओस की बूँदो से धुँधलापन, अच्छी तरह से देखा जा सकता है, क्योकि दूसरी पैदी (S') का बाहरी तल चमकीला बना रहता है। दोनो की चमक मे थोडा सा भी, फर्क, अच्छी तरह से पता चल जाता है। इसी तरह, बादमे धुन्ध का गायब होना भी, उतनी ही अच्छी तरह से देखा जा सकता है।

(v) वायु-चूषक (A) की टोटी को थोडा या अधिक खोलकर, परख-नली (C) मे आने वाले वायु की गति को नियत्रित किया जा सकता है। यानी वाष्पीकरण की गति, इस यत्र मे मनचाही घटायी-बढायी जा सकती है। इसलिये 'ओसाक' की कई मापे, मनचाहे समयान्तरो पर ली जा सकती है।

(vi) क्योकि वाष्पीकरण की क्रिया मे, इस प्रयोग मे, ईथर-वाष्प, चूषक के खाली स्थान की ओर भागती है, इसलिये ईथर के होने से, आस-पास की हवा की आर्द्रता पर कोई प्रभाव नही पडता।

88 रासायनिक आर्द्रता-मापक (Chemical Hygrometer) (चित्र 60)— इस यत्र मे एक बडा वायु-चूषक लेकर, उसकी ऊपरी डाट से, शोषक-यू-नलियो (absorbing tubes) का एक समूह, जोड दिया जाता है। इन नलियो मे 'कैल्शियम-क्लोराइड' ($CaCl_2$) या 'प्यूमिस-स्टोन' (puimce-stone) गधक के तेज़ तेजाब (H_2SO_4 conc.) भर दिया जाता है। यह दोनो चीजे जल-वाष्प के अच्छे शोषक है। बोतल मे गधक का तेज़ाब भरा रहता है। प्रयोग करने से पहले नलियो और बोतल को तौल लेते है। साथ ही चूषक को पानी से पूरा-पूरा भर लेते है।



चित्र 60

चूषक की टोटी को खोल या बद करके, इसमे से मनचाही गति से पानी निकाला जा सकता है। चूषक मे से पानी निकलने से जगह खाली हो जाती है। दाबान्तर के कारण, बाहर की हवा, शोषक-यू-नलियो और बोतल मे से होती हुई, आती है। शोषक-यू-नलियाँ और बोतल इसमे मौजूद, जल-वाष्प-कणो को सोख लेती है। इस तरह चूषक (एसपिरेटर) मे सिर्फ सूखी हवा ही आती है। इसकी दीवार पर, भीतर भरी हुई हवा का आयतन (V) बतलाने वाला पैमाना (scale) लगा

रहता है। कुछ देर तक चूषक मे से पानी निकलते रहने देने के बाद, टोटी बद कर देते है। नलियो को हटाकर दुबारा तौलते है। दोनो तौलों का अन्तर (=m ग्राम) सोखी गई जल-वाष्प की मात्रा होती है। चूषक के बाहर और भीतर वाली हवा के तापमानो, (=t सै० ग्रे०) की भी माप लेते है। प्रयोग समय के वायु-दबाव की माप (H) 'बैरोमीटर' से ली जाती है।

क्योकि जलवाष्प का आपेक्षिक-घनत्व (हवा की अपेक्षा) 0·625 होता है और वैधिक-दबाव व तापमान पर, हवा का घनत्व 0·001293 ग्राम प्रति घन सै० मी० होता है, अत. जल-वाष्प का, वैधिक दबाव और तापमान (N. T. P.) पर घनत्व $=(0\cdot625\times0\cdot001293)$ ग्राम प्रति घन सै० मी०।

मानलो कि जल-वाष्प का, (f) दबाव और (t) तापमान पर, घनत्व (d) ग्राम प्रति घन सै० मी० है, तो बॉयल-नियम से—

$$\left(\begin{matrix} f \\ d\ (273+t)\end{matrix}\right)=\left(\begin{matrix} 760 \\ 0\cdot001293\times0\cdot625\times273\end{matrix}\right)$$

अत: $$d=\left(\begin{matrix} f\times0\cdot001293\times0\cdot625\times273 \\ 760\ (273+t)\end{matrix}\right) \quad \ldots\ldots\ (88\cdot1)$$

क्योकि $d=\dfrac{m\ (\text{मात्रा})}{\text{V}\ (\text{आयतन})}$, इसलिए इसका मान तो प्रयोग द्वारा मालूम हो जाता है। इस मान को ऊपर वाले सूत्र मे लगाने से, जल-वाष्प-दबाव (f), कमरे के तापमान पर मालूम हो जाता है। अर्थात्—

$$f=\frac{d\ 760\ (273+t)}{0\cdot001293\times0\cdot625\times273}=3640\ (273+t)\ d \text{ मि० मी०}$$

अगर रैनूं-तालिका से, t° सै० ग्रे० पर, सतृप्त-वाष्प-दबाव, F आता है तो—

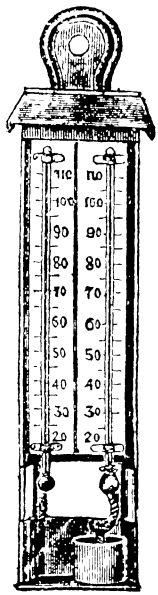
$$\text{आ० आर्द्रता}=\frac{f}{\text{F}}=\frac{m\ 760\ (273+t)}{\text{V.F.}0\ 001293\times\cdot625\times273}$$

$$=\left[\begin{matrix}3460\ m\ (273+t) \\ \text{V F}\end{matrix}\right]\ 100\%\ldots\ \ldots\ldots\ (85\ 2)$$

इस प्रयोग में चूषक के भीतर, पानी के ऊपर वाली वाष्प सतृप्त होती है, जबकि बाहर वाली असतृप्त। इसलिए जल-वाष्प के दबाव, चूषक के बाहर और भीतर भिन्न होते है लेकिन यह अन्तर बहुत ही कम होता है। इसलिए इसको छोड देने से फल पर कोई खास असर नही पडता।

89. गीली-सूखी-घुंडी वाला आर्द्रता-मापक (Wet and Dry Bulb Hygrometer) (चित्र 61)—इस यन्त्र मे दो थर्मामीटर, एक ही तख्ती (plate) पर पास-पास लगे रहते है। इनमे से एक की घुडी (bulb) तो हवा मे खुली रहती है। लेकिन दूसरे की घुडी पर, बाहर से, साफ कपड़ा लिपटा रहता है, जिसका

बाहरी सिरा बटकर, एक बत्ती (wick) के रूप मे कर लेते है। यह सिरा, छोटे से बर्तन मे भरे हुए पानी मे डूबा रहता है। बर्तन का पानी, बत्ती द्वारा ऊपर चढकर, थर्मामीटर की घुडी को तर (wet) रखता है। पूरे यन्त्र को, जहाँ तक हो सके खुली जगह मे, दीवार पर टाँग देते है। सूखी (खुली) घुडी कमरे का तापमान बतलाती है।



चित्र 61

जैसे-जैसे कपडे की बत्ती के पानी की वाष्प बनती जाती है, वैसे-वैसे, इसकी घुडी का तापमान कम होता जाता है। इस लिए दोनो थर्मामीटरो की मापो का अन्तर, उस समय और स्थान पर हवा की आर्द्रता पर निर्भर करता है। जैसे कि जिस दिन हवा सूखी होगी, उस रोज वाष्पीकरण ज्यादा तेजी से होगा। और दोनो थर्मामीटरो की मापो मे अन्तर बढ जावेगा। इसके विपरीत, बरसात के दिनो मे यह अन्तर बहुत कम रह जावेगा। हवा के सतृप्त हो जाने पर तो वाष्पीकरण बिलकुल भी नही हो पावेगा और दोनो थर्मामीटरो की मापे बराबर हो जावेगी।

मानलो सूखी घुडी का तापमान $(t_1)^\circ$ सैं० ग्रे० है और गीली घुडी का $(t_2)^\circ$ सैं० ग्रे० है, तो—

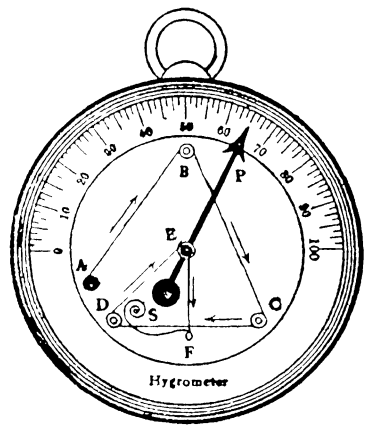
$$\text{ओसाक } (t) = t_1 - F\,(t_1 - t_2) \qquad \ldots\ldots (89{\cdot}1)$$

जबकि F, एक **ग्लेशियर-स्थिरांक** (Glacier's Factor) कहलाता है। इस प्रकार ओसाक (t) मालूम करके, इस पर, और कमरे के तापमान, दोनो पर ही उच्चतम वाष्प-दबावो के मान रैनूं-तालिका से पढकर 'आपेक्षिक-आर्द्रता' का गणन कर लेते है।

नीचे वाली तालिका (table) मे, सूखी घुडी के अलग-अलग तापमानों पर सगत (corresponding) 'ग्लेशियराक' के मान दिये गये है।

सूखी घुडी का तापमान ( )° सैं० ग्रे०	ग्लेशियराक (F)	सूखी हवा का तापमान ( )° सैं० ग्रे०	ग्लेशियराक (F)
4	7·82	14	1·92
5	7·28	16	1·87
6	6·62	18	1·83
7	5·77	20	1·79
8	4·92	24	1·72
9	4·04	28	1·67
10	2·06	32	1·63
12	1·99	36	1·59

90. केशीय आर्द्रता-मापक (Hair Hygrometer) (चित्र 62)—बाल (hair) का यह अपना खास गुण है कि जैसे-जैसे हवा की आर्द्रता बढती जाती है, वैसे-वैसे इसकी लम्बाई भी बढती जाती है। इसी तथ्य का लाभ, इस यन्त्र मे उठाया गया है। एक रूखा और सूखा बाल लेकर, इसके एक सिरे को पिन (या पैच) (A) से बाँध देते है। फिर इस बाल को तीन छोटी-छोटी घिरियो (B, C, D) पर से ले जाकर, एक घूमने वाले (revolving) घुडी (E) (drum) पर, थोडे से लपेट (turns) देकर, अन्त मे हल्के स्प्रिग (S) के खुले सिरे से बाँध देते है। घुडी (E) के साथ-साथ एक निर्देशक (pointer) (P) लगा रहता है, जोकि एक गोल पैमाने पर, घुडी (E) के साथ-साथ घूमता है।



चित्र 62

जब आर्द्रता बढने से, यत्र मे लगे हुए बाल की लम्बाई बढती है, तो इस बढाव से स्प्रिग (s), अन्दर की ओर खिच जाता है, और घुडी (e), दक्षिण-वर्ती घूम जाती है। गोल-पैमाने को प्रतिशत, आपेक्षिक-आर्द्रता के मान मे अशाकित (calibrate) कर लिया होता है। इसलिए इस यत्र से, आपेक्षिक-आर्द्रता की माप सीधे ही बिना किसी गणन के मालूम हो जाती है। प्रयोगो से पता चला है कि जैसे-जैसे यत्र पुराना होता जाता है, इसकी मापे, शुद्धमान से अधिक होती जाती है। हो सकता है कि लगातार तना रहने से, बाल की लम्बाई मे कुछ स्थायी बदल (permanent change) हो जाने से ऐसा होता हो। इसलिए इसकी मापो की बीच-बीच मे शुद्धता जाँचते रहना चाहिए। पानी के हिमाक से कम तापमानो पर, जब गीली सूखी घुंडी वाला यत्र काम नही कर पाता, तब इसी यत्र से माप ली जाती है।

91. नम हवा की मात्रा (Mass of Moist Air)—नम हवा मे सूखी और जल-वाष्प दोनो ही मिली रहती है। इसलिए ऐसी हवा के आयतन की मात्रा इस तरह जानी जाती है—पहले सिर्फ सूखी हवा के उतने ही आयतन, तापमान और दबाव पर, मात्रा का गणन करते है। फिर यही मान सिर्फ जल-वाष्प के लिए मालूम किया जाता है। इन दोनो मानो का जोड हवा मे नमी की मात्रा होती है।

मान लो किसी स्थान और समय पर, हवा का तापमान (t) और दबाव P है। और इस तापमान पर, हवा मे मौजूद जल-वाष्प का दबाव (f) हो, तो डाल्टन-नियम से, सिर्फ सूखी हवा का दबाव (P—f) होगा। लेकिन वैधिक दबाव और तापमान पर, सूखी हवा का घनत्व 0·001293 ग्राम प्रति घन से० मी० होता है, और वायु की अपेक्षा, जल-वाष्प-कणो का घनत्व, 0·625 होता है। तो बॉयल-नियम से—

$$\frac{(P-f)}{\rho.\ (273+t)} = \frac{760}{0\ 001293 \times 273} \quad \text{या} \quad \rho = \left(0\ 001293. \frac{273}{273+t} \times \frac{P-f}{760} \right)$$

जब कि ρ, सूखी हवा का (t) तापमान, और $(\rho - f)$ दबाव पर, घनत्व है।

अत 1 लिटर सूखी हवा की, $(P-f)$ दबाव पर और $(t)^\circ$ सै० ग्रे० तापमान पर मात्रा $= m_1 = 1000. \rho = \left(1{\cdot}293 \frac{273}{273+t} . \frac{P-f}{760} \text{ ग्राम} \right)$

इसी तरह 1 लिटर जल-वाष्प की, (f) दबाव, और $(t)^\circ$ सै० ग्रे० पर मात्रा

$$= m_2 = \left(1{\cdot}293 \times {\cdot}625. \frac{273}{273+t} \frac{t}{760} \right) \text{ ग्राम}$$

$\therefore$ 1 लिटर नम हवा की मात्रा $= (m_1 + m_2)$

$$= \left(1{\cdot}293 \frac{273}{273+t} \frac{P-f}{760} \right) + \left(1{\cdot}293 \times {\cdot}625 \frac{273}{273+t} . \frac{f}{760} \right)$$

$$= \left(1{\cdot}293 \frac{273}{273+t} \frac{1}{760} \left\{ (P-f) + {\cdot}625.\ f \right\} \right)$$

$$= 1{\cdot}293 \frac{273}{273+t} \left(\frac{P - {\cdot}378\ f}{760} \right) \text{ ग्राम} \quad \ldots \quad \ldots \quad (91{\cdot}1)$$

आंकिक उदाहरण

1. रासायनिक-आर्द्रता मापक वाले प्रयोग मे निम्न मापे प्राप्त हुई। इनसे आपेक्षिक आर्द्रता का गणन करो—

सोखे गये जल-वाष्प की मात्रा	= 11·22 ग्राम
चूषक द्वारा खींची गई हवा का आयतन	= 1 घन मीटर
चूषक के बाहर वाली हवा का तापमान	= 25° सै० ग्रे०
जल-वाष्प का, इस तापमान पर दबाव	= 23 52 मि० मी० (पारा)

(पटना, *1955*)

(In an experiment with the chemical hygrometer, the following readings were obtained Calculate the realtive humidity of the air, from this data.

Mass of water-vapours absorbed in tubes = 11·22 gm.
Volume of air sucked by the Aspirator = 1 cubic meter
Temperature of air out-side = 25°C
Water vapour-pressure at this temperature = 23·52 mm)

उत्तर—प्रश्न के अनुसार, सूत्र 85 2 मे, $m = 11{\cdot}22$ ग्राम, $V = 1$ घनमीटर या $(100)^3$ घन सै० मी०, $t = 25^\circ$ सै० ग्रे०, $f = 23{\cdot}52$ मि० मी०।

अत आपेक्षिक-आर्द्रता $= \frac{3460 \times 11{\cdot}22}{23{\cdot}52} \frac{(273+25)}{100} 100 = \mathbf{48\ 9\%}$

2. किसी समय, "गीली सूखी घुंडी वाले आर्द्रता-मापक" के थर्मामीटरों की मापें क्रमशः 52° और 59° फैरेनहाइट आईं। इस समय हवा की आर्द्रता ज्ञात करो।

(At some hour, the reading of a Wet and Dry Bulb Hygrometer are 52°F and 59°F. Find the humidity.)

उत्तर—सूखी घुडी का तापमान $(t_1)=59°$ फैरेनहाइट $=14{\cdot}4°$ सैं० ग्रे०

गीली घुडी का तापमान $(t_2)=52°$ फैरेनहाइट $=11{\cdot}1°$ सैं० ग्रे०

अतः सूत्र (89·1) से—

$$14{\cdot}4-t=F\,(14{\cdot}4-11{\cdot}1)=F\,(3{\cdot}3)$$

14° सैं० ग्रे० पर ग्लेशियरांक का मान, पृष्ठ 422 वाली तालिका से 1·92 मिलता है और 16° सैं० ग्रे० पर 1·87। तो इसी अनुपात से 14·4° सैं० ग्रे० पर इसका मान 1·91 हुआ। यानी—

$$14{\cdot}4-t=(1{\cdot}91)\,(3{\cdot}3)=6{\cdot}3$$

यानी ओसाक (t) $=8{\cdot}1°$ सैं० ग्रे०

रैनूं-तालिका से 8·1° सैं० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव $=8{\cdot}76$ मि० मी०

और रैनूं-तालिका से 14·4° सैं० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव $=13{\cdot}1$ मि० मी०

$$\text{अतः आपेक्षिक-आर्द्रता}=\frac{8{\cdot}76}{13{\cdot}1}100=66{\cdot}1\%$$

3. किसी दिन, एक समय पर ओसाक की माप 7·6° सैं० ग्रे० आई। हवा का तापमान 16·0° सैं० ग्रे० है। आपेक्षिक-आर्द्रता का गणन करो, जबकि 7, 8 और 16° सैं० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव, क्रमशः 7·5, 8·00 और 13·5 मि० मी० होता है। (नागपुर *1955*)

(On a certain day the dew point is 7·6°C, when the room-temperature is 16·0°C. Calculate the relative humidity of air, given that saturated vapour-pressures at 7, 8 and 16° are 7·5, 8·00 and 13·5 mm. respectively.) (*Nagpur 1955*)

उत्तर—1° सैं० ग्रे० तापमान बढ़ने से संतृप्त-वाष्प-दबाव मे बदल

$$=(8{\cdot}00-7{\cdot}5)=0{\cdot}5 \text{ मि० मी०}$$

$\therefore$ 0·6° सैं० ग्रे० तापमान बढ़ने से संतृप्त-वाष्प-दबाव में बदल

$$=\frac{0{\cdot}5\times 6}{10}=0{\cdot}30 \text{ मि० मी०}$$

और 7° सैं० ग्रे० पर संतृप्त-वाष्प-दबाव (प्रश्न के अनुसार) $=7{\cdot}5$ मि० मी०

$\therefore$ 7·6° सैं० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव $=7{\cdot}5+{\cdot}3=7{\cdot}8$ मि० मी०

साथ ही प्रश्न के अनुसार, कमरे के तापमान (=16 सैं० ग्रे० पर संतृप्त-वाष्प-दबाव) = 13·5 मि० मी०

$$\therefore \text{आपेक्षिक-आर्द्रता}=\frac{7{\cdot}8}{13{\cdot}5}100=57{\cdot}7\%$$

4. एक लिटर नम हवा की मात्रा, 30° सै० ग्रे० और 758·6 मि० मी० दबाव पर मालूम करो, जबकि ओसाक की माप 16·1° सै० ग्रे० है, और इस तापमान पर सतृप्त-वाष्प-दबाव 13·6 मि० मी० पारा होता है।

(Find the mass of a litre of moist air at 30°C. when the barometer reads 758·6 mm. and the dew point is 16·1°C, (max. pressure of water vapours at 16·1°C 13·6 is of mercury.)

उत्तर—प्रश्न के अनुसार, सूत्र (91·1) मे

$P = 758\ 6$ मि० मी० (पारा), $t = 30°$ सै० ग्रे० और $f = 13·6$ मि० मी० (पारा)

इन मानों को इस सूत्र मे लगाने पर—

$$\text{नम हवा की मात्रा} = \left(1·293 \frac{273}{273+30}\right)\left(\frac{758\ 6 - ·378 \times 13·6}{760}\right) \text{ ग्राम}$$

$$= 1\ 155 \text{ ग्राम}$$

5. हवा का तापमान, किसी स्थान दिन और समय विशेष पर 23° सै० ग्रे० है। और आपेक्षिक-आर्द्रता 60% है। अगर हवा का तापमान किसी तरह घटकर 10° सै० ग्रे० हो जावे, तो हवा मे विद्यमान जल-वाष्पो की कुल मात्रा का कौनसा अश सतृप्त होकर पानी की बूंदे बन जावेगा ? (23° सै० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव = 21·1 मि० मी० और 10° सै० ग्रे० पर = 9·2 मि० मी०)

(The temperature of air on a certain day is 23°C and the relative humidity is 60%. What fraction of the mass of the water-vapour in the air would condense, if the temeperature decreases to 10°C ? [Saturated pressure of water-vapours at 23°C = 21·1 mm. and at 10°C = 9·2 mm])

उत्तर—मानलो निश्चित आयतन वाली हवा मे विद्यमान जल-वाष्प की मात्रा = m ग्राम प्रश्न के अनुसार, आ० आर्द्रता 60% है। अत. इस हवा को 23° सै० ग्रे० पर सतृप्त करने के लिए आवश्यक जल-वाष्प की मात्रा, $\left(m.\frac{5}{3}\right)$ होगी।

साथ ही प्रश्न के अनुसार, 10° सै० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव = 9·2 मि० मी०

और 23° सै० ग्रे० पर सतृप्त-वाष्प-दबाव = 21·1 मि० मी०

$$\therefore \text{10° सै० ग्रे० पर सतृप्त हो जाने वाली वाष्प की मात्रा} = \frac{9·2}{21·1}\left(\frac{5m}{3}\right)$$

$$= 0·73m$$

$\therefore$ द्रवित होकर बूंद बनने वाले वाष्प की एक मात्रा $= (1 - ·73)m = ·27$

92. हवा में 'जल-वाष्प' का जम जाना (Condensation of Water Vapours in the Atmosphere)—हम पीछे बता आये हैं कि साधारणतः हवा में सूखी

हवा और वाष्प दोनों ही मिले-जुले मौजूद रहते हैं। इस 'मिश्रित-वायु' का घनत्व, शुद्ध वायु से कम होता है। इसलिए यह मिश्रित हवा, हल्की होने से ऊपर उठती है। लेकिन ऊपर जाकर, दबाव में कमी हो जाती है। इससे ऊपर उठने वाली यह 'मिश्रित वायु' फैल जाती है और इसका अपना तापमान और भी कम होता जाता है। धीरे-धीरे ऊपर उठते-उठते तापमान इतना कम हो जाता है कि उस क्षेत्र की हवा, उतने ही वाष्प से सतृप्त हो जाती है, और धूल (dust) धुंआ (smoke) और हवा के कणो पर, द्रवित होकर, पानी के छोटे-छोटे जल-कणो (water-particles) के रूप मे उन पर बैठ जाती है। ओस, धुध, कोहरा, बादल, वर्षा, बर्फ और तुषार-पात, इन सब का कारण यह जल-कण ही हैं।

ओस (Dew)—ज्यादातर दिन का तापमान, रात की अपेक्षा अधिक रहता है। इसलिए दिन मे हवा, उसमे मिले हुए जल-वाष्प (या जल-कणो) से संतृप्त नही हो पाती। दिन छिपते ही जमीन और उसके तल (सतह) पर रखी हुई दूसरी चीजे, ताप का विकिरण (radiation) करके ठडी हो जाती है। जब पृथ्वी के धरातल के पास वाली हवा, इन ठडी चीजो को छूती है तो वह भी खुद ठडी हो जाती है। धीरे-धीरे इस हवा का तापमान इतना कम (ओसाक से भी कम) हो जाता है कि उतने ही जल-वाष्प से, हवा सतृप्त हो जाती है, और द्रवित होकर, इन ठडी चीजो पर, पानी की बूंदो के रूप मे दीखने लगती है। इन बूंदो को ही 'ओस' कहते है।

अच्छी तरह से ओस पडने के लिए यह बाते जरूरी होती है—

(i) साफ और खुला हुआ आकाश ऊपर आकाश मे बादल न रहने पर ताप का विकिरण अच्छी तरह से होता है। इसलिए ऐसे रोज ही धरातल पर की चीजे अधिक तेजी से ठडी होती है।

(ii) हवा का तेजी से न चलना— अगर हवा तेजी से चली तो हवा की पृथ्वी के पास वाली पर्त्त, धरातल के पास अधिक देर तक नही ठहर पावेगी। पर्त्त लगातार बदलती रहेगी इसलिए उनमे से कोई भी इतनी ठडी नही हो पाती कि उस की जल-वाष्प द्रवित होकर ओस बन सके।

(iii) चीजों का ताप-कुचालक और धरातल पर ही रखा होना—अचालक-पदार्थ जैसे पत्ते, घास, लकडी, फूस वगैरह पर ओस की बूंदे जल्दी से और घनी दिखलाई पडती है। लेकिन ताप-सुचालक पदार्थों (जैसे लोहा) के साथ ऐसा नही होता। उनके ऊपरी तल का तापमान कम होते ही, अन्दर से ताप, ऊपर चला आता है। इस तरह उनके बाहरी तल का तापमान, ओसाक से नीचे नहीं गिर पाता और ओस की बूंदें नहीं बन पातीं।

इसी तरह अगर यह चीजें, धरातल पर रखी न होकर, थोड़ी ऊँची जगहों पर रखी होती हैं, तभी भी उन पर ओस नही पडती! इनके चारों ओर वाली हवा, इनको छूने से ठडी हो जाती है। लेकिन भारी होने से उसे नीचे की ओर जाना पड़ता है। इसकी जगह को, ठीक ऊपर वाली पर्त्त भरती है। लेकिन इस नयी पर्त्त

का तापमान पहली पर्त्त से अधिक होता है। इसलिए यह भी पदार्थ से ताप खोकर, नीचे चली जाती है। यही क्रम लगातार चलता रहता है; और पदार्थ पर ओस की बूंदें नहीं बन पाती।

धुध और कोहरा (Fog and Mist)—अगर हवा का तापमान इतना कम हो जावे कि सिर्फ पृथ्वी के धरातल पर की चीजे ही नही, बल्कि वहाँ की सारी हवा ही, जल-वाष्प से सतृप्त हो जावे, तो धुएँ, धूल वगैरह के कणों पर जल-वाष्प द्रवित हो जाने से, सारी हवा ही बादल का सा रूप ले लेती है। इसी को धुध या कोहरा कहते है। गर्म देशो मे, यह हालत, ज्यादातर जाडों के दिनो मे उस रात को होती है जब कि आकाश मे बादल न हो, और दिन थोडा गर्म रहा हो। साथ-साथ हवा भी नही चल रही हो। गहरी धुध को ही कोहरा कहते है। वैसे तो पानी, पारदर्शक (transparent) है। लेकिन कोहरे मे से आर-पार नही देखा जा सकता, क्योकि जमे हुए जल-कणो से, प्रकाश की किरणे, चारो ओर परावर्त्तित (reflected) होकर फैल (diffuse) जाती है।

कोहरा झील, तालाब वगैरह पर भी पडता है। लेकिन उसका कारण कुछ और ही है। जाडो मे, पानी और उसको छूने वाली हवा की पर्त्त का तापमान, उसके ऊपर वाली पर्त्तो से अधिक होता है। इसलिए पानी के तल से वाष्पीकरण होने लगता है। जब हवा इन वाष्प-कणो से सतृप्त हो जाती है, तो ऊपर वाली ठडी पर्त्त से छूकर ठडी हो जाती है और कोहरे का रूप ले लेती है।

धूप निकलने पर हवा का तापमान बढता जाता है। इससे बूंदें, वाष्प बन कर, हवा मे मिलती जाती है और कोहरा धीरे-धीरे गायब हो जाता है।

बादल (Clouds)—हवा मे मिले हुए जल-वाष्पो के द्रवित होकर, धूल, धुंएँ और हवा के कणो पर, बूँदो के रूप मे बने हुए जल-कणो के समूह को ही 'बादल' कहते है। प्रत्येक जल-कण का अर्ध-व्यास, लगभग 0·001 से० मी० होता है। 'बादल' अपने जल-कणो के भार के कारण नीचे गिरना चाहते है। लेकिन जब यह नीचे गिरते है, तो वहाँ की हवा का तापमान, ऊपर वाली पर्त्त से अधिक होता है। इसलिये इन जल-कणो की वाष्प बनने लगती है, जोकि वहाँ की हवा मे मिल जाती है। लेकिन यह वाष्प-मिश्रित हवा सूखी हवा से हल्की होती है। इसलिये यह ऊपर उठना चाहती है लेकिन ऊपर की ओर तो तापमान और दबाव दोनो ही कम होते जाते है। इसलिये यह ऊपर जाते हुए फैलती है। इसका तापमान काफी कम हो जाने से, वाष्प द्रवित होने लगती है, और धूल इत्यादि के कणो पर जमकर बैठ जाती है। फिर से वही क्रम दोबारा चालू हो जाता है। यही क्रम लगातार चलता रहता है। फलस्वरूप 'बादल' न तो नीचे ही गिर पाते है, और न बहुत ऊँचे ही उठ पाते हैं, बल्कि बीच मे लटके रह जाते है। हाँ, जब हवा चलती है तो उसके साथ-साथ, हल्के होने के कारण, सैकड़ो मील इधर-उधर उड़ते चले जाते हैं। ध्यान रहे कि बादल के जल-कण अपने सीमित क्षेत्र में लगातार ऊपर-नीचे गति करते रहते हैं।

बादलों के रूप (Forms of Clouds)—1803 ई० में **ल्यूक हार्वर्ड** नामक लन्दन के वैज्ञानिक ने बादलों के रूपों का वर्गीकरण करके उनके नाम रखे। यह वर्गीकरण इस प्रकार है—

(1) केश-गुच्छाकृति वाले (Cirrus)—यह बादल, पंखों या बालों के गुच्छे जैसी लहरदार शक्ल और सफेद दीखने वाले होते है। आकाश मे यह, दूसरे बादलों की अपेक्षा सबसे अधिक ऊँचे (लगभग 25,000 फुट) पर बनते है। इतनी अधिक ऊँचाई पर बहुत ही कम तापमान होने से, जल-कण, बर्फ के कण बन जाते हैं।

(2) शाल्मली (Cumulus)—यह धुनी हुई रूई की तरह दीखते है और काफी क्षेत्र मे फैले हुए रहते है। इनका ऊपरी भाग उन्नतोदर (Convex) और निचला भाग चपटा होता है। यह 5,000 से 10,000 फुट की ऊँचाई पर पाये जाते है।

(3) बलाहक (Stratus)—इस तरह के बादल, करीब 2,000 फुट की ऊँचाई पर पडे हुए, हल्के भूरे रग के दीखते है। इनकी शक्ल, क्षैतिज-तल मे फैली हुई चादरो की तह जैसी होती है। इनसे अच्छे मौसम की सूचना मिलती है। इनके होने पर, चन्द्रमा और सूर्य के चारो ओर 'प्रभा-मडल' (halo) दिखलाई पडता है।

(4) चपल (Nimbus)—इनका रग गहरा भूरा होता है। इनका कोई आकार (शक्ल) नही होती, और पृथ्वी के धरातल से 1,000 फुट की ऊँचाई पर मिलते है। इनसे जब वर्षा होती है तो बस रुकने का नाम ही नही लेती। बिजली की चमक और दमक के साथ बढती ही जाती है। इससे इनको कभी-कभी 'विद्युत्-मेघ' या 'रुक्ष-मेघ' भी कह देते है।

वर्षा होना (**Rain**)—जब बादल किसी ठडे क्षेत्र मे पहुँचते है तो उसके जल-कण ठडे होते जाते है, और इन पर और भी वाष्प, द्रवित होकर, बैठ जाती है। इससे जल-कणो का आकार (size) बढता जाता है। भार बढ जाने से यह भारी जल-कण (या बूँदे) नीचे गिरते है और वर्षा होने लगती है। गिरते-गिरते भी रास्ते में पास वाले वाष्प-कण द्रवित होकर इनमें मिल जाते है।

वर्षा-मापक-यंत्र (**Rain-Gauge**)—किसी भी क्षेत्र (region) मे होने वाली वर्षा को 'रेन-गेज' से मापा जाता है। आजकल ज्यादातर 'सिमन' का यत्र ही काम मे आता है। इसमे एक फनल (कीप) होती है, जिसके ऊपरी गोल किनारे का व्यास ठीक 5 इच होता है। यह फनल, एक नलके (सिलेंडर) के मुँह पर रखी जाती है, और नलका, नीव (foundation) पर बने हुए ऊँचे चबूतरे पर जडा हुआ (fixed) रहता है। फनल के ऊपरी गोल किनारे की; सिलेंडर नलके की पैंदी से ऊँचाई, ठीक 1 फुट होती है। वर्षा के समय बरसने वाला पानी फनल में भी गिरता है। फनल से यह पानी नलके मे रखी हुई बोतल मे गिरकर इकट्ठा हो जाता है। बाद मे इसको एक दूसरे नपने गिलास मे डालकर इंचो मे माप ले ली जाती है। इस नपने-गिलास पर, इंच के 1/100वे भाग तक की शुद्ध माप ली जा सकती है। इस तरह '1 इच-वर्षा' का यह अर्थ होता है कि इतना पानी बरसा कि

गज क्षेत्र मे 1 इच वर्षा बरसने वाले पानी की मात्रा 4·69 गैलन होती है। बम्बई की औसत वार्षिक वर्षा का मान 45 इंच और चेरापूजी मे 100 इंच है (अधिकतम)।

तुषार-वर्षा (Sleet)—अगर जमीन तक पहुँचने से पहले ही, बरसने वाली बूँदे जमकर ठोस बन जावे, तो इसको तुषार-वर्षा कहते है।

तुषार या पाला (Hoar-Frost)—जब जमीन की सतह और आस-पास की दूसरी चीजो का तापमान, 0° सै० ग्रे० से भी कम हो जाता है, तो ओसाक तक तापमान गिरने से पहले ही, वाष्प-कण इन चीजों कूछूकर जमकर बर्फ के रवे (Ice-crystals) बन जाते है। जैसे-जैसे यह रवे बनते जाते है, वैसे-वैसे, यह आस-पास की चीजो पर बैठते जाते है। इसी को 'पाला' या 'तुषार' कहते है। इसलिये 'पाला' जमी हुई ओस नही होती, बल्कि सीधे ही जल-वाष्प के जम जाने से पडता है। पेड-पौधो को पाले से बडी हानि होती है।

हिम (Snow)—अगर वाष्प के द्रवित होने की क्रिया, 0° सै० ग्रे० से कम तापमान वाले क्षेत्र मे ही हो जावे, तो ऊपर, हल्के और फूले हुए, धुनी रूई के रेशो जैसे सूखे हिम-कण गिरने लगते है। इनकी अपनी कोई शक्ल नही होती।

ओले (Hail)—जाडे के दिनो मे, तूफान चलते हुए, हवा की तेजी से, ऊपरी क्षेत्रों मे जमे हुए जल-कण, बडे वेग से ऊपर-नीचे गति करने लगते है। कभी वे हिम वाले क्षेत्र मे तो कभी वर्षा वाले क्षेत्र मे आ जाते है और छोटे-छोटे टुकडो के रूप मे नीचे गिरने लगते है। अगर ओले को तोडकर देखा जावे तो उसपर एक दूसरे के ऊपर सफेद और पारदर्शक बर्फ की पर्ते मिलेगी।

विलियम हैनरी डाइन्स (1865—1934)

डाइन्स का जन्म, 1865 ई० मे हारशैम नामक स्थान पर हुआ और शिक्षा, विण्डिलशैम और आक्सफोर्ड मे हुई। आपने सबसे पहले एक शिक्षक (tutor) की तरह काम करना शुरू किया। लेकिन अपना खाली समय विज्ञान के अध्ययन मे लगाते रहते थे। आपका प्रिय विषय 'ऋतु-विज्ञान' था। आपने हवा के गुण-दोषो का अध्ययन करने के लिये 30,000 फुट तक की ऊँचाई तक बैलून उड़ाया। इसी सबध मे आपने बक्स जैसी पतगे और छोटे-छोटे बैलून छोडे। इन बैलूनों मे अपने आप ही आर्द्रता वगैरह का लेखा अकित करने वाले यत्र लगे हुए थे। इस प्रकार आप 9 मील तक की ऊँचाई वाली हवा के गुणो की जाँच कर सके। आपने, उडते हुए, रास्ते मे पडने वाली 'एयर-पाकिटे' (air-pockets) पर खोज-कार्य किया। आजकल मौसम का पूर्व अनुमान लगाने मे काम आने वाले ग्राफो और आलेख-चित्रों को इस रूप मे लाने का श्रेय भी आपको ही है। 1934 ई० मे आपकी मृत्यु हो गई।

सार (Summary)

आर्द्रता-मापन—**किसी भी स्थान और समय-विशेष पर, वहाँ की हवा में विद्यमान, जल-वाष्प-कणों की मात्रा को मापना 'आर्द्रता-मापन' कहलाता है।**

ओसांक वह तापमान है जिस पर दी हुई मात्रा वाली हवा, उसमें मिले हुए जल-वाष्प से संतृप्त हो जाती है।

आपेक्षिक-आर्द्रता से हवा की आर्द्रता का पता चलता है। यानी—

$$\text{आ० आर्द्रता} = \frac{\text{ओसांक पर, हवा में मिले जल-वाष्प का उच्चतम दबाव}}{\text{कमरे के तापमान पर, संतृप्त-वाष्प-दबाव}} (100)\,\%$$

आर्द्रता-मापक—(i) डैनियल-यंत्र (ii) रैनूं-यंत्र (iii) गीली-सूखी घुंडी वाला थर्मामीटर (iv) रासायनिक आर्द्रतामापक (v) केशीय आर्द्रता-मापक। इन सबसे आ० आर्द्रता मालूम की जाती है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. 'आपेक्षिक-आर्द्रता' और 'ओसांक' की परिभाषा दीजिये। ओसांक को मालूम करके किसी स्थान की हवा की आपेक्षिक-आर्द्रता किस तरह मालूम की जाती है ?

(कलकत्ता 1953; मद्रास 1950, राजपूताना 1941, पटना 1953, 55; उत्कल 1954; विश्वभारती 1953)

2. एक बंद स्थान की हवा का तापमान 15° सें० ग्रे० है, और ओसांक 8° सें० ग्रे० है अगर इस स्थान का तापमान गिरकर 10° सें० ग्रे० हो जावे तो इस बदल का ओसांक पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? (7° से० ग्रे० पर संतृप्त-जल-वाष्प-दबाव = 7·47 मि० मी०, 8° से० ग्रे० पर यही मान = 8·02 मि० मी०)

उत्तर—ओसांक = 7·75 से० ग्रे० (उत्कल 1954; पटना 1941, गोहाटी 1949)

3. किसी दिन, हवा का तापमान 23° सें० ग्रे० है और आ० आर्द्रता 55% है। अगर तापमान गिरकर 10° सें० ग्रे० हो जावे, तो हवा में मिले हुए जल-वाष्प का कौनसा अंश, द्रवित होकर, बूँदें बन जावेगा ? (23° सें० ग्रे पर संतृप्त-जल-वाष्प दबाव = 21·1 मि० मी० और 10° से० ग्रे० पर यही मान = 9·2 मि० मी०)।

उत्तर—0·21.

4. 'ओसांक' मापकर आपेक्षिक-आर्द्रता मापने वाले किसी यंत्र का वर्णन करो। इस यंत्र की बनावट और कार्य-विधि भी समझाओ। इस माप से, मौसम के पूर्व अनुमान में क्या सहायता मिलती है ? (कलकत्ता 1933, प्रयाग 1930; मद्रास 1933)

5. 'संतृप्त-वाष्प-दबाव' की रैनूं-तालिका का क्या लाभ है ? इसकी सहायता से हवा की आ० आर्द्रता का मान, ओसांक की माप से किस तरह निकालोगे ? (कलकत्ता 1940)

6 'रैनूं-आर्द्रतामापक' का वर्णन करके, उससे आपेक्षिक-आर्द्रता मालूम करने का ढंग भी बतलाओ। (यू० पी० बोर्ड 1942, राजपूताना 1952; नागपुर 1954)

7. गीली-सूखी घुंडी वाले आर्द्रतामापक का वर्णन करके, उससे आपेक्षिक-आर्द्रता निकालने की विधि बतलाओ। इसकी दोनों घुंडियों के तापमान अलग-अलग क्यों होते है ? अगर पानी की जगह पर तेल काम में लाया जावे तो फल पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

(दिल्ली 1943; कलकत्ता 1948; मद्रास 1949)

8. ओस किस तरह बनती है ? कुछ चीजों पर यह ज्यादा पड़ती है और कुछ पर कम, क्यों ? (उत्कल 1954; कलकत्ता 1937; पटना 1945)

9. बादलों के बनने की क्रिया समझाओ। (कलकत्ता 1932, यू० पी०-बोर्ड 1947)

10. बादलों, ओस, और कोहरे के बनने की क्रिया, उनके प्रकार, स्वभाव इत्यादि पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। (उत्कल 1951; विश्व-भारती 1954)

11. निम्न घटनाओं का कारण स्पष्ट समझाओ—

(i) सुबह की धुँध, दोपहर से पहले ही गायब हो जाती है। (कलकत्ता 1930)

(ii) स्वच्छ और निर्मल रात्रि में, बादल वाली रात्रि की अपेक्षा, अधिक मात्रा में ओस पड़ती है। (यू० पी० बोर्ड 1950, ढाका 1929)

(iii) कॉच के गिलास में बर्फ या बर्फ का पानी रखने पर, वह थोड़ी देर में बाहर से धुँधला हो जाता है? (कलकत्ता 1920, 30, ढाका 1929; पंजाब 1923)

12. यद्यपि गर्मी के मौसम में औसत तापमान, जाड़े के औसत दिन के तापमान से कहीं अधिक होता है, फिर भी गीले कपड़े, जाड़ों में, गर्मी की अपेक्षा, जल्दी से सूखते हैं, क्यों?

13. दिल्ली की अपेक्षा पुरी में, गर्मी के दिनों में अधिक परेशानी होती है, यद्यपि उन दिनों दोनों स्थानों का औसत तापमान, लगभग एक ही होता है। क्यों? (कलकत्ता 1948)

14. 'आपेक्षिक-आर्द्रता' शब्द से क्या तात्पर्य है? इसका मान प्रयोग द्वारा किस तरह मालूम करोगे? (नागपुर 1950; यू० पी० बोर्ड 1942; आन्ध्र 1950)

अध्याय 8

ताप-संचरण

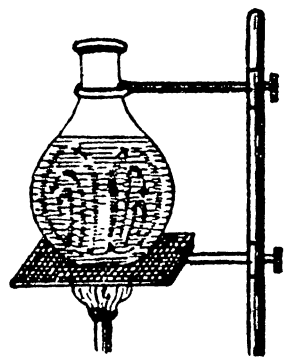
(Transmission of Heat)

93. ताप-संचरण की विधियाँ (Modes of Transmission)—एक जगह से दूसरी जगह तक ताप, तीन ढग से जाता है—सचालन (conduction), सवाहन (convection) और 'विकिरण' (radiation)।

(1) सचालन (Conduction)—इस क्रिया मे ताप का सचार, गर्म भाग की ओर से, अपेक्षाकृत (relatively) ठडे भाग की ओर होता है। पदार्थ के कण अपनी जगह नही बदलते। हाँ, वह एक दूसरे को ताप-ऊर्जा देते जाते है। उदाहरण के लिये जब धातु की लम्बी छड के एक सिरे को आग मे गर्म करते है, तो थोडी देर बाद, दूसरा सिरा भी गर्म होना शुरू हो जाता है, और आखिर मे इतना गर्म हो जाता है कि उसे पकडे रहना मुश्किल हो जाता है। आग के पास वाले कणों को ताप पहले मिलता है। यह कण, इस गर्मी को अपने पास वाले दूसरे (ताप-स्रोत से दूर वाली दिशा मे) कणो को दे देते है। दूसरा कण, तीसरे को और तीसरा चौथे को ताप देता चला जाता है, और अन्त मे पहले वाले कण का ताप, दूसरे सिरे वाले कण तक पहुँच जाता है। धातुओ मे ताप-सचार इसी तरह होता है।

(2) सवाहन (Convection)—इस क्रिया मे, पदार्थ के कण, सचालन की भाँति अपनी जगह पर स्थिर न रहकर, स्वय चलकर, एक जगह से दूसरी जगह तक, ताप ले जाते है। गैस और द्रवो मे ताप का सचार इसी ढग से होता है।

उदाहरण के लिये एक फ्लास्क मे थोडा पानी भर लो। इस पानी मे पोटाशियम-परमैंगनेट (KM_nO_4— लाल दवाई) डाल दो। अब फ्लास्क को तार की जाली (wire-gauge) पर रखकर, जाली के नीचे ज्वालक (बर्नर) से, पानी को गर्म करो। आप देखोगे कि रगीन लाल पानी की पतली सी धारा (रेखा), फ्लास्क के भीतर वाले तल के बीच से, पानी के स्वतत्र-तल की ओर चलने लगती है। लेकिन स्वतत्र-तल तक पहुँचने से थोडा पहले ही दाँये-बाँये, दो रेखाओं मे बँट जाती हैं। यह दोनों रैखिक-धाराये, फ्लास्क के भीतरी तल (surface) के सहारे, ऊपर से नीचे चलकर, अपने चलने वाली जगह, यानी फ्लास्क की पैंदी तक पहुँच जाती हैं, और फिर से वही क्रम दोबारा चालू हो जाता है। यही क्रम लगातार चलता रहता है और कुछ देर बाद सारा पानी ही लाल हो जाता है।



चित्र 63

ज्वालक (बर्नर) से ताप पाकर, सबसे पहले, पैंदी के पास वाला पानी गर्म होता है। यह गर्म पानी, हल्का होने से, बीच मे से ऊपर उठने लगता है, और ऊपर से ठडा पानी, इसकी जगह लेने के लिये, फ्लास्क की भीतरी दीवारो के साथ-साथ, पैंदी की ओर आने लगता है (चित्र 63)। इस तरह फ्लास्क के पानी मे, पानी की दो धारायें चलने लगती है, एक तो ऊपर जाने वाली, गर्म पानी की धारा, और दूसरी ऊपर से नीचे, बर्तन की दीवारों के सहारे-सहारे चलने वाली, ठडे पानी की धारा। इनको ही 'सवाहन-धारायें' (convection currents) कहते है। इसी तरह जब हम अपना हाथ लपट के ऊपर रखते है, तो गर्मी लगती है। आग की गर्मी से सामने वाली हवा गर्म होकर ऊपर उठती है, जिसकी जगह, आस-पास मे आकर ठडी हवा ले लेती है। बार-बार यही क्रिया चलती रहती है और हमारे पास लगातार गर्म हवा पहुँचती रहती है।

(3) परिवाहन (विकिरण) (Radiation)—इस क्रिया मे किसी भौतिक माध्यम (material medium) की आवश्यकता नही होती। सूर्य से मिलने वाली गर्मी, हमको इसी विधि से मिलती है। आग के सामने बैठने से लगने वाली गर्मी भी हम तक इसी ढग से पहुँचती है।

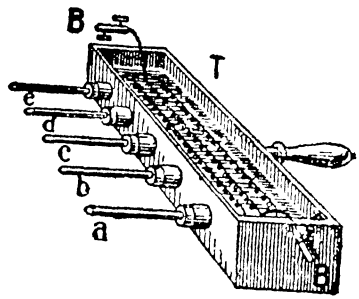
94. 'संचालन', 'संवाहन' और 'परिवाहन' में अन्तर—(i) सचालन और सवाहन मे ताप का सचार, पदार्थ के कणो द्वारा होता है जबकि परिवाहन मे इन कणो की जरूरत नही होती। सचालन मे पदार्थ के कण ताप-सचार करते हुए अपनी जगह नही छोडते, जबकि सवाहन मे वह स्वय ताप को एक जगह से दूसरी जगह तक ले जाते है। ठोसो मे ताप-सचार, सचालन द्वारा होता है, द्रव और गैसो मे सवाहन द्वारा। परिवाहन द्वारा, शून्य स्थान (vacuum) मे से भी ताप-सचार हो सकता है।

(ii) सचालन और सवाहन से ताप-सचार धीरे-धीरे होता है, जबकि परिवाहन से यही क्रिया बडी शीघ्रता से हो जाती है। परिवाहन की तरगो का वेग, प्रकाश की किरणो के वेग के बराबर ही होता है।

(iii) परिवाहन मे ताप-सचार, सीधी रेखाओ मे होता है, जबकि सचालन और सवाहन मे इसका पथ टेढा-मेढा भी हो सकता है। यही कारण है कि, आग के सामने कोई रोक रख देने पर, ताप हमारे पास तक नही आ पाता। गर्मियो मे छाता भी इसीलिये लगाते हैं। भट्टी की आग से भी इसी तरह बचाव किया जा सकता है।

95 चालकताओं की तुलना (Comparison of Conductivities)—'सचालन' से ताप का सचार, एक जगह से दूसरी जगह तक, कर पाने की क्षमता (capacity), वस्तु की 'चालकता' (conductivity) कहलाती है। अलग-अलग पदार्थों की 'चालकताये' भी अलग-अलग होती हैं। जो पदार्थ यह काम आसानी से कर पाते हैं, उनको सुचालक (good conductors) कहते है—जैसे प्राय: सभी धातुएँ। इसी तरह जो पदार्थ ताप का सचालन नही कर पाते उनको 'ताप-कुचालक' (bad conductors of heat) कहते है। जैसे काँच, ऊन, नमदा, गैसे इत्यादि।

'इंजन-हौज' का प्रयोग—(Ingen-Hausz's Experiment)—धातु का एक बर्तन (B, B), (चित्र 64) जैसा ले लो। इसकी दीवार मे बने हुए एक जैसे छेदों मे बराबर-बराबर लम्बाई और मोटाई (व्यास) वाले, लेकिन विभिन्न धातुओ के बने कई छड (a, b, c, d, e) ठीक से फिट किये रहते है। इन सभी छडो का थोडा सा हिस्सा बर्तन मे भीतर की ओर रहता है। बर्तन से बाहर वाले भाग पर, बराबर मोटाई मे एक जैसी मोम की पर्त चढी होती है। बर्तन मे उबलता हुआ पानी डालने से, प्रत्येक छड का एक सिरा, पानी के 'वाष्पाक' तक गर्म हो जाता है। इस सिरे से यह ताप, सचालित होकर, बाहर वाले सिरे तक पहुँचता है। जब वहाँ तक इतना ताप पहुंच जाता है कि तापमान मोम के गलनाक के बराबर हो जावे, तो छडो पर लगा हुआ मोम पिघलने लगता है। आप देखोगे कि निश्चित समयान्तर मे, अलग-अलग छडो पर पिघले हुए मोम की लम्बाई अलग-अलग होती है। ताँबे के छड पर यह लम्बाई सबसे ज्यादा होती है और काँच या लकडी के छड पर सबसे कम। इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न पदार्थों की चालकताये अलग-अलग होती हैं।



चित्र 64

96. ताप-चालकता (Thermal Conductivity)—किसी वस्तु की ताप-चालकता, उसमे से होकर प्रवाहित होने वाले ताप की मात्रा ($=Q$) पर निर्भर करती है। ताप की यह मात्रा—

(i) उस वस्तु के दोनो सिरो के बीच होने वाले तापमानान्तर ($=\theta_1-\theta_2$) के समानुपाती होती है;

(ii) उस वस्तु के दोनो सिरो के बीच की लम्बाई ($=l$) के व्युत्क्रमानुपाती (inversely proportional) होती है;

(iii) उस वस्तु के सिरे के प्रस्थच्छेदीय-क्षेत्रफल (area of cross-section) ($=A$) के समानुपाती होती है; और

(iv) उस वस्तु मे से ताप-सचालन के समय ($=t$) के समानुपाती होती है।

अर्थात् सचालित ताप की मात्रा $(Q)=k\,\frac{A\,t\,(\theta_1-\theta_2)}{l}$ ...(96·1)

जबकि (k) एक स्थिराक है। इस स्थिराक को ही 'ताप-चालकता-गुणक' (Coefficient of thermal conductivity) कहते है।

ऊपर के समीकरण (96·1) मे अगर $A=1$ सै० मी० वर्ग, $(\theta_1-\theta_2)=1°$ सै० ग्रे० $t=1$ सैकिड और $l=1$ सै० मी०, तो $Q=k$। दूसरे शब्दो मे—

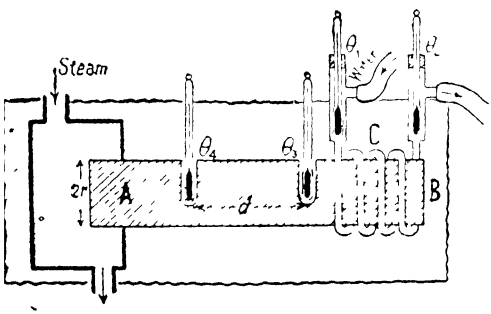
"एक सैकिंड में एक इकाई सिरे के क्षेत्रफल वाले छड़ की एक इकाई मोटाई मे से, दोनों

सिरों के बीच एक इकाई तापमानान्तर होने पर, संचालित होने वाले ताप की मात्रा को, उस छड़ की धातु का संचालकता-गुणक कहते हैं।"

$\left(\frac{\theta_1 - \theta_2}{l}\right)$ को 'तापमान का उतार' (temperature-gradient) कहते हैं। इसका मान इकाई लम्बाई मे होने वाले तापमानान्तर के बराबर होता है।

97. 'ताप-चालकता-गुणक' (K) मालूम करना (सर्ल-विधि से)—प्रायोगिक धातु का एक लम्बा छड (A, B) (चित्र 65) लेकर उसका एक सिरा (A) तो भाप-कोष्ठ (steam-chamber) मे रख देते है। दूसरे सिरे (B) के चारो ओर, तांबे की नली (C) लिपटी रहती है। इस लिपटी हुई नली (C) मे से ठडे पानी की धारा प्रवाहित की जा सकती है। छड (A, B) की लम्बाई मे ज्ञात (known) दूरी (=d) पर दो छेद, करीब-करीब उसके मध्य तक गहरे बने रहते है। इन छेदो में पारा भरा रहता है, और पारे मे थर्मामीटर θ_4, θ_3 लगे रहते है। पानी वाली, लिपटी हुई नली (C) के दोनो सिरो पर भी एक-एक थर्मामीटर (θ_1, θ_2) लगे रहते हैं। सारा उपकरण, नमदे, ऊन या रूई से लिपटा हुआ, बक्स मे बन्द करके रखा जाता है। इससे 'परिवाहन' द्वारा ताप-क्षय नही हो पाता।

इस प्रयोग की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि नली (C) मे से पानी के प्रवाह की गति स्थिर रहे। इसके लिये पानी की एक छोटी टकी मे तीन नलियाँ लगाई जाती है। बीच की नली, बाकी दोनो नलियो से कुछ ज्यादा चौडी और बर्तन के मुख से कुछ ही नीचे तक चली गई होती है। सिरे की एक नली से तो पानी, इस टकी मे आता है और दूसरी सिरे वाली नली से बाहर निकल जाता है। बीच वाली चौडी नली, इस छोटी सी टकी या बर्तन मे पानी के तल को अपनी ऊँचाई से अधिक नही बढने देती। जितना भी फालतू पानी आता है, वह इसमें से होकर बाहर निकल जाता है। पानी को बाहर ले जाने वाली छोटी, पतली नली को तो, सर्ल-यन्त्र की नली (C) से, और दूसरी पतली नली को, पानी की टोंटी (tap) से जोड देते है। बीच वाली चौडी नली के सिरे पर रबड़ की नली जोड़कर 'सिक' (sink) मे डाल देते हैं। टोंटी का अनुकूलन (adjustment) करके, बर्तन मे पानी का तल स्थिर रखकर, बाहर जाने वाले पानी के प्रवाह को स्थिर किया जाता है



चित्र 65

पानी का प्रवाह स्थिर हो जाने पर, छड़ में ताप-सचालन की अवस्था भी स्थिर हो जाती है। तब छड़ के किसी भी भाग मे से सचालित होने वाले ताप की मात्रा, उसकी लम्बाई पर सभी स्थानों पर बराबर होती है। ज्ञात समय में इकटठे

होने वाले पानी की मात्रा और नली (C) के दोनों सिरों पर लग हुए थर्मामीटरों की माप लेकर, ताप-चालकता का गणन इस तरह किया जाता है—

छड़ में से सचालित ताप, लिपटी हुई नली (C) मे से बहने वाले पानी को गर्म करता है। इसलिये थर्मामीटर (θ_1) की माप, (θ_2) से कम होगी। अगर (t) सैकिंड मे (m) ग्राम पानी इकट्ठा होता है, तो इस पानी द्वारा लिया गया ताप—

$$Q = m\,(\theta_2 - \theta_1)$$

यह ताप छड के दूसरे सिरे पर रखे हुए ताप-स्रोत से संचालन विधि से यहाँ तक आता है। मान लो इस छड के सिरे का क्षेत्रफल 'A', थर्मामीटर θ_3, θ_4 के बीच की दूरी (l), तापमानान्तर ($\theta_4 - \theta_3$), और ताप-चालकता गुणक (k) है, तो—

$$Q = m(\theta_2 - \theta_1) = \frac{k.\,A\,(\theta_4 - \theta_3)\,t}{l}$$

या
$$(k) = \frac{m\,(\theta_2 - \theta_1)\,l}{A\,(\theta_4 - \theta_3)\,t} \qquad \ldots(97{\cdot}1)$$

स० ग० स० प्रणाली मे (k) की इकाई, "कैलोरी प्रति सैं० मी० प्रति डिग्री सैं० ग्रे०" होती है।

ताप-चालकता-गुणक (स० ग० स० इकाई) मे

पदार्थ	चालकता	पदार्थ	चालकता	पदार्थ	चालकता
अलमूनियम (Al)	·49	चांदी (Ag)	·97	इबोनाइट (ebonite)	4×10^{-4}
ताँबा (Cu)	·92	पीतल (Brass)	·26	नमदा (felt)	9×10^{-5}
सोना (Au)	·70	काच (Glass)	$2{\cdot}1 \times 10^{-4}$	फलालैन (flannel)	$2{\cdot}3 \times 10^{-4}$
लोहा (Fe)	·14	भट्टी की मिट्टी (fire clay	4×10^{-2}	पोर्सलीन (porcelain)	$2\,5 \times 10^{-3}$
पारा (Hg)	·20	अमबसटस (Asbestes)	6×10^{-4}	रबड (Ruber)	$4{\cdot}5 \times 13^{-4}$
कार्क (Cork)	$1{\cdot}0 \times 10^{-4}$	बर्फ (ice)	5×10^{-3}	कारबन (carbon)	4×10^{-4}

98. तापमान के बढ़ने की दर पर विशिष्ट-ताप का प्रभाव (Influence of Specific Heat rate of Rise of Temperature)—पीछे हम बता आए है कि सचालन की क्रिया में ताप पदार्थ के एक कण से दूसरे को लगातार आगे तक मिलता (pass-on) चला जाता है। लेकिन इस क्रिया मे प्रत्येक कण मिले हुए ताप में से स्वयं कुछ थोडा सा अश सोख लेता है। दूसरे शब्दों मे प्रत्येक कण से पास वाले दूसरे कण को मिलने वाले ताप की मात्रा, उस कण को पहले कण से मिलने वाली मात्रा से कम होती है। ताप का थोड़ा सा क्षय (loss), परिवाहन से भी होता है। जब सभी कण, जितना ताप पिछले कण से पाते हैं, उतना ही अगले कण को देते चले जाते हैं, तो इस दशा को स्थिर दशा (stationary state) कहते है।

'विषम (variable) दशा' मे तापमान बढने की दर, सिर्फ उस पदार्थ की धातु की ताप-चालकता पर ही नही बल्कि उसके विशिष्ट-ताप पर भी निर्भर करती है। जब कि स्थिर-दशा मे, ताप-सचार पर केवल उस वस्तु की चालकता का ही असर पड़ता है।

मान लो छड की धातु का घनत्व (ρ), विशिष्ट-ताप (S) और ताप-चालकता (k) है। अगर प्रति सैकिड, तापमान, t° से० ग्रे० बढ जाता है, तो प्रति सैकिड इकाई आयतन को मिलने वाले ताप की मात्रा ($\rho . st = k$) होगी।

$$\therefore \text{ तापमान बढने की दर } (t) = \frac{K}{s . \rho .} = \frac{\text{ताप-चालकता}}{\text{इकाई आयतन की तापग्राहिता}}$$

दूसरे शब्दो मे वस्तु के इकाई आयतन के तापमान मे बढाव (ı) उसकी ताप-सचालकता के समक्रमानुपाती (ıı) और उसी वस्तु की इकाई आयतन की ताप-ग्राहिता (=विशिष्ट-ताप × घनत्व) के व्युत्क्रमानुपाती होता है। ($K/s\ \rho$) का अनुपात स्थिर रहता है। इस स्थिराक को '**लार्ड कैलविन**' ने 'प्रसरण' (diffusivity) और '**मैक्सवैल**' ने "तापमापक-चालकता" (Thermo-metric-conductivity) कहा है। ऊपर के सूत्र (formula) से स्पष्ट है कि जिस वस्तु की ताप-ग्राहिता अधिक होती है, उसके तापमान बढने की दर कम होती है। यही कारण है कि, विषम परिवर्तनशील (variable) अवस्था मे, कम विशिष्ट ताप वाले पदार्थ का तापमान, जल्दी ही, स्थिर-अवस्था वाले तापमान तक पहुच जाता है, चाहे उसकी ताप-चालकता भले ही कम क्यो न हो। उदाहरण के लिये लोहे की ताप-चालकता, सीसे (lead) से दोगुनी है, और इसका विशिष्ट-ताप, सीसे से चार गुना होता है। अब अगर, एक ही जैसे, लेकिन एक लोहे का और दूसरा सीसे का छड लेकर, उन पर पैराफिन-मोम का एकसार लेप कर दिया जावे, और फिर दोनो का एक सिरा, एक ही तापमान तक गर्म कर दिया जावे, तो सीसे वाले छड पर मोम पहले पिघलेगा। लेकिन अन्त मे स्थिर-अवस्था आ जाने पर, लोहे वाले छड पर, सीसे वाले छड की अपेक्षा अधिक दूरी तक पिघलेगा।

आकिक उदाहरण

1. लोहे की चादरो से बने हुए एक बॉयलर की दीवारे 1·25 से० मी० मोटी है। बॉयलर के भीतर, साधारण वायु-दबाव पर, उबलता हुआ पानी भरा है। इस उबलते हुए पानी से ताप लेकर गर्म होने वाली धातु का क्षेत्रफल 2·5 वर्ग मीटर है। बॉयलर के नीचे वाले तल का तापमान 120° से० ग्रे० है। अगर लोहे की ताप-चालकता 0·2 और भाप का गुप्त-ताप, 536 कैलोरी प्रतिग्राम हो तो, प्रति घटा भाप बनने वाले पानी की मात्रा का गणन करो। (राजपूताना *1946;* पटना *1930;* ढाका *1933*)

(An iron boiler 1·25 cm. thick contains boiling water at atmospheric pressure. The heated surface is 2·5 sq. meters in area and the temperature of the underside is 120°C. If the thermal-con-

ductivity of iron be 0·2 and the latent heat of steam be 536, find the mass of water evaporated per hour.)

(R. P. B. 1946; Pat. U. 1930; Dac. 1933)

उत्तर—प्रश्न से स्पष्ट है कि बॉयलर मे भरे हुए पानी का तापमान 100° सै० ग्रे० है। 2·5 वर्ग मीटर $=(2{\cdot}5\times10^4)$ वर्ग सै० मी०

मान लो प्रति घटा सचालित होने वाले ताप की मात्रा $=Q$ कैलोरी

अतः सूत्र (96·1) से—

$$Q=\frac{0\,2\ (2\,5\times10^4)\ (120-100)\ 60\times60}{1\,25}\text{ कैलोरी}$$

$$=288\times10^6\text{ कैलोरी}$$

$$\therefore\ \text{भाप बनने वाले पानी की मात्रा}=\frac{288\times10^6}{536}=\textbf{537·3 किलोग्राम}$$

2 किसी कमरे की दीवारो का क्षेत्रफल 100 वर्ग मीटर है। दीवारे 60 सै० मी० मोटी है। कमरे के भीतर तापमान, 30° सै० ग्रे० और बाहर 0° सै० ग्रे० है। दीवार के पदार्थ की चालकता 0·002 है। तो कमरे से प्रति सैकिड बाहर जाने वाले ताप की मात्रा ज्ञात करो। (मद्रास *1951*)

(The effective wall area of a room is 100 square metres. Find the rate of flow of heat through the walls of thickness 60 cm. when the temperature of the interior is 30°C. and that of the exterior is 0°C. [Thermal-conductivity of the material of wall= 0·002 C. G S.]) *(Mad. U. 1951)*

उत्तर—दीवारो का क्षेत्रफल $=100$ वर्ग-मीटर $=10^6$ वर्ग सै० मी०

दीवार की मोटाई $=60$ सै० मी०

दीवार के दोनो ओर के तापमानो मे अन्तर $=(30-0)=30°$ सै० ग्रे०

दीवार के पदार्थ की ताप-चालकता $=0{\cdot}002$

$$\therefore\ \theta=\frac{0{\cdot}002\times10^6\times30}{60}=\textbf{1000 कैलोरी/सैकिड}$$

3. बॉयलर की प्लेटो को दोनो सतहो के बीच तापमानान्तर मालूम करो, जबकि इसकी मोटाई 20 मि० मी०, और चालकता 0 2 स० ग० स० इकाई है। ताप का प्रवाह 600 किलो-ग्राम कैलोरी प्रति वर्ग मीटर प्रति मिनिट है। (राजपूताना *1953*)

(Find the difference in temperatures between the two sides of a boiler plate 20 mm. thick and of conductivity 0·2 C. G. S. units when transmitting heat at the rate of 600 kilogram calories per square metre per minute.) *(Raj. U. 1953)*

उत्तर—प्रश्न के अनुसार—

$Q=(600\times1000)$ कैलोरी, ताप-संचालित क्षेत्र $(A)=(100\times100)$ वर्ग सै० मी०। समय $(t)=60$सैकिड ; मोटाई (दूरी) $=d=2$ सैं० मी०; चालकता

$$\therefore \quad 600 \times 1000 = \frac{0{\cdot}2 \times 100 \times 100 \quad -\theta_1)\ 60}{2}$$

अतः $(\theta_2 - \theta_1) = \mathbf{10}°C$

4. काँच के बने 'वाष्प-कूट' में से सूखी भाप प्रवाहित हो रही है। यह यंत्र, चारों ओर से बर्फ से घिरा हुआ है। इसकी दीवारो की मोटाई, और प्रति मिनिट द्रवित होने वाली भाप की मात्रा का गणन करो, जबकि वाष्प-कूट का क्षेत्रफल 100 वर्ग-सैं० मी० है और बर्फ 75 ग्राम/मिनिट की दर से पिघल रहा है। (काँच की चालकता $= 0{\cdot}001$)

(A current of dry steam is maintained through a glass stream-trap surrounded by melting ice on all sides. Calculate the thickness of the glass walls and the steam condensed per minute if the total area of free glass-trap is 100 sq. cm; ice melted per minute is 75 gm., thermal conductivity of glass is ·001.) *(Nag. U. 1953)*

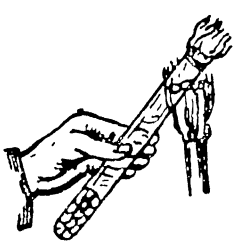
उत्तर—इस प्रश्न मे मानलो Q, 75 ग्राम बर्फ द्वारा, पिघलने के लिये लिये गये ताप की मात्रा है। इसका मान (75×80) कैलोरी प्रति ग्राम होगा, जबकि 80 कैलोरी, बर्फ का गलन-गुप्त-ताप है। इस क्रिया मे समय $(=t)$, 1 मिनट $(=60$ सैकिड) लगता है, ताप-सचालित क्षेत्र का क्षेत्रफल (A) 100 वर्ग सैं० मी० है, तापमानान्तर $(\theta_1 - \theta_2)$, 100° सें० ग्रे० है और कांच की ताप-चालकता (k), 0·0001 है। अतः सूत्र (97·1) से—

$$(75 \times 80) = \frac{0{\cdot}001 \times 100 \times 100 \times 60}{d}$$

यानी काँच की दीवार की मोटाई $(d) = \mathbf{0{\cdot}1}$ सैं० मी०

99. द्रवों की चालकता—सिर्फ पारा और पिघली हुई (molten) धातुओं को छोडकर, बाकी सारे द्रव, 'ताप-कुचालक' होते है। द्रवो मे (i) सवाहन-धाराओं, और (ii) द्रव को भरने वाले बर्तन की दीवारो द्वारा होने वाले ताप-सचालन के कारण, द्रव की चालकता मापना कठिन हो जाता है।

पानी की ताप-कुचालकता का प्रदर्शन (demonstration) इस तरह किया जा सकता है (चित्र 66)। पतली दीवारो वाली काँच की परख-नली मे ठण्डा पानी भरकर ऊपर से बर्फ का टुकडा डाल दो। अब बर्फ के टुकडे को, नली की तलेटी मे दबाये रखकर, नली को तिरछा करके, ऊपरी किनारे के पास छोटी सी लौ (flame) से गर्म करो। आप देखोगे कि कुछ देर बाद ऊपर वाले भाग में तो पानी उबलने भी लगता है, जबकि तलेटी मे पड़ा हुआ बर्फ जैसा का तैसा ही पडा रहता है। परख-नली में ऊपरी भाग में गर्म करने से, पानी में संवाहन-धारायें नहीं उठतीं।



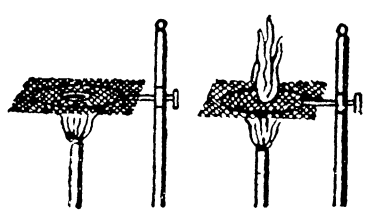
चित्र—66

डैस प्रेट्ज़-विधि (Despretz's Method)—इस विधि से द्रवों की

चालकताओं की तुलना की जाती है। एक लम्बा, खडा नलका लेकर, उसकी लम्बाई पर सीधी रेखा मे एक जैसे छेद बनाये होते हैं। हरएक छेद मे एक-एक डाट कस कर फिट की हुई रहती है, जिसमे से एक थर्मामीटर पिरोया हुआ रहता है। नलके मे प्रायोगिक द्रव भर, उसको ऊपर से गर्म करने के लिए एक दूसरे बर्तन मे गर्म पानी निश्चित तापमान पर चालू रखा जाता है। इस ऊपर वाले बर्तन की पैंदी से ही नलके मे भरा हुआ द्रव ताप पाता है और उसका तापमान बढने लगता है। थर्मामीटरों की मापें स्थिर हो जाने पर, इनकी मापे लेकर, 'ताप-उतार' (temperature gradient) मालूम कर लेते है। बारी-बारी से नलके मे कई द्रव भरकर, हरएक द्रव के लिए 'ताप-उतार' का मान ज्ञात हो जाता है। इन ताप-उतारो का अनुपात ही, चालकताओ की तुलना होती है।

100. गैसों की चालकता—पदार्थ के अणुओ के बीच की आपस की दूरी काफी अधिक हो जाने से, गैसीय अवस्था मे उसकी ताप-चालकता, करीब-करीब नही के बराबर रह जाती है। **कुन्ड** (Kund) और **वारबर्ग** ने एक खास ढग से गैसो की चालकता मालूम की। इस विधि का सिद्धान्त इस तरह है—"गैस की चालकता पर दबाव का कोई असर नही पडता, और कम दबाव (=150 मि० मी०) पर, गैस मे सवाहन-धाराये भी नही बन पाती। इसलिये गैस वाले नलके मे हवा का दबाव, पप से हवा बाहर निकालकर काफी कम कर लिया जाता है। अब एक ज्ञात चालकता वाला थर्मामीटर, इस नलके मे लगा देते है। साथ ही नलके की दीवारो का तापमान उष्मक द्वारा 0° सें० ग्रे० पर रखा जाता है। तब इस शून्य-स्थान के लिये 'ताप-उतार', सिर्फ विकिरण द्वारा होने वाली चालकता को बतलावेगा। ताप-उतार की एक दूसरी माप, कम दबाव पर प्रायोगिक गैस नलके मे भरकर नली मे ली जाती है। दोनो मापो का अन्तर केवल सचालन द्वारा होने वाली ताप की मात्रा होता है। शून्य-स्थान के वक्रता-व्यासार्द्ध, तापमानान्तर और तापमान गिरने मे लगने वाले समय, से ताप-चालकता (k) का गणन किया जा सकता है। इस प्रकार, हवा के लिये (k) का मान (56×10^{-6}) स० ग० स० प्राप्त हुआ।

98. सुचालक और कुचालक वस्तुएँ (Good and Bad Conductors)—गैस के ज्वालक (बर्नर) के ऊपर, एक तिपाई पर, तार की जाली (wire-gauge) रख दो। अब बर्नर को जलाओ। गैस की ज्वाला जाली के नीचे ही रहती है, ऊपर नही आ पाती, क्यों ? लोहे के तार की जाली, ताप का संचालन इतनी जल्दी से कर लेती है कि जाली से ऊपर वाली गैस तक इतना ताप नही पहुँच पाता कि उसका तापमान, 'ज्वलन-तापमान' (ignition-point) तक पहुँच जावे। इसीलिए ज्वाला जाली के नीचे ही रहती है। अब अगर एक जलती हुई दिया-सलाई जाली के ऊपर लाई जावे, तो ज्वाला, जाली के ऊपर आ जाती है। यानी



चित्र 67

जाली के छेदों में से गैस लगातार ऊपर जाती रहती है। पहले की तरह, जाली के ऊपर वाली ज्वाला भी नीचे नही आ पाती। जाली को हवा मे ऊपर-नीचे करने पर, ज्वाला भी उसी के साथ-साथ चलती है (चित्र 67)।

लकडी की मेज पर पडा हुआ चाकू, हाथ से छूने पर, मेज से ज्यादा ठंडा लगता है, हालाँकि दोनो ही कमरे के तापमान पर होते है ? लोहा ताप-सुचालक धातु है और लकडी ताप-कुचालक। इसलिये छुए जाने पर, लोहा, हमारे हाथ मे से, लकडी की अपेक्षा अधिक ताप खीचता है। इसी तरह अगर हाथ का तापमान, कमरे के तापमान से कम है, हमको लोहा, लकडी से ज्यादा गर्म लगेगा, क्योकि यह आसानी और जल्दी से हमारे हाथ को गर्मी दे सकेगा। धातु और लकडी के टुकडों को धूप मे डाल देने पर उतने ही समय मे धातु का टुकडा, लकडी की अपेक्षा काफी अधिक गर्म हो जावेगा। यही कारण है कि सगमरमर का फर्श सीमेंट के फर्श मे ज्यादा ठडा रहता है, और मोमजामा (oil-cloth), 'लिनन' (linen) से ज्यादा ठडा लगता है।

काँच के छड को, ज्वालक की लौ (flame) पर रखकर उसके काफी पास तक पकडकर, पिघला सकते है, जबकि धातु का छड, आग मे रखने पर, थोडी ही देर मे, सारा छड इतना गर्म हो जाता है कि उसको हाथ मे नही पकडे रखा जा सकता। यही कारण है कि "टाँका लगाने वाले यत्र" (soldering iron), धातु की बनी केतली (kettle), चायदानी (tea-pots), 'कुकर' वगैरह के पकडने वाले सिरों पर लकडी के हत्थे (handles) लगाये जाते है। पिघलने से बचाने के लिये, बर्फ को लकडी के बारीक बुरादे (saw-dust) या टाट (जूट) की बोरी मे लपेटकर रखा जाता है। यह दोनो चीजे ताप-कुचालक होने से हवा की गर्मी को, बर्फ तक पहुँचने से रोकती है।

पतले कागज के बने बर्तन मे भरकर, पानी को उबाला जा सकता है। कागज नही जलता, और पानी का तापमान लगातार बढता जाता है। लेकिन 100° सै० ग्रे० के बाद स्थिर हो जाता है। कागज के पतले होने से उसकी पैंदी पर ताप इकट्ठा नही हो पाता। सारे पानी का तापमान, कागज के ज्वलन-तापमान (ignition point) तक नही पहुंच पाता। इसलिये कागज, ज्वालक (बर्नर) की आग से झुलसने तक भी नही पाता। भाप ले जाने वाली नलियो (steam-pipes) का जो हिस्सा हवा मे खुला रहता है, उसे असबसटस (asbestos) से ढीला ढँककर रखते है। इस तरह ताप-क्षय काफी कम हो जाता है। अग्नि-सुरक्षित (fire-proof) आलमारियों (safes) मे भी किनारो पर असबसटस की पतली पर्त लगी रहती है। इन आलमारियो के ढँकने और दीवारें, दोहरी चादरो की बनी होती है। हरएक दीवार की भीतरी और बाहरी चादरो के बीच मे लकडी का बारीक चूरा जैसा ताप-कुचालक पदार्थ भरा होता है।

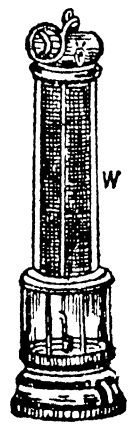
जाडे के दिनों मे हम ऊनी कपडे और कम्बल वगैरह का प्रयोग करते है। इनके इस्तेमाल से सर्दी का बचाव हो जाता है और बदन (शरीर) गर्म बना रहता है। कैसे ? यह चीजें ताप-कुचालक हैं। इसलिये हमारे शरीर की गर्मी, इसमें से

होकर, आसानी से बाहर नही जाने पाती। इन कपडों के रेशो के बीच मे फँसी हुई हवा भी, ताप-संचालन को रोकती है। हालाँकि इन कपडो को 'गर्म' कहा जाता है, लेकिन इनका तापमान, कमरे मे रखी हुई दूसरी चीजो के बराबर ही होता है। यहाँ एक बात ध्यान मे रखने की है कि वैसे तो ऊन और सूत की चालकता मे कोई खास फर्क नही होता, फिर भी गर्म कपडे बनाने मे ऊन का ही अधिक प्रयोग होता है। क्यो ? क्योकि उनके रेशे, सूती रेशो (cloth fibres) से ज्यादा ढीले (loose) रहते हैं। इसलिये ऊनी कपडो मे, उतने ही भार वाले सूती कपडे की अपेक्षा अधिक हवा भरी रहती है। आपने देखा होगा कि नई बनी हुई रजाइयाँ (quilts), पुरानियो (old) से ज्यादा गर्म रहती है। क्यो ? पुरानी रजाई मे, काम मे आते-आते, रेशो के बीच वाली खाली जगह, दब-दबाकर, बहुत कम रह जाती है। इससे उनके बीच मे फँसी हुई हवा की मात्रा भी कम हो जाती है।

ठण्डे देशो मे, कमरे को गर्म रखने के लिये, दोहरी चादर वाली खिडकियाँ लगाई जाती है। इन खिडकियो के दरवाजो को भी दो चादरो से मिलाकर बनाया जाता है। दोनो चादरो के बीच वाली खाली जगह मे हवा भरी रहती है।

हवा के झोके चलने पर, गर्म कपडे पहने होने पर भी हमको सर्दी लगने लगती है, क्योकि झोको के कारण, हवा मे सवाहन-धारायें चलने लगती है। अगर ऐसा न होता, तो हमारे चारो ओर की हवा ही हमको काफी गर्म रख सकती थी। तब हमको गर्म कपडो की जरूरत ही नही पडती।

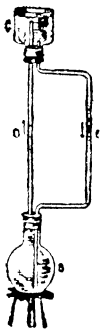
डेवी का "सेफ्टी—लैंप" (Davy's Safety—Lamp)—यह एक लालटेन जैसा होता है। लैंप की लौ (flame) को, तार की जाली से पूरी तरह ढँका हुआ रखते है (चित्र 68)। जलने के लिये जरूरी हवा, इस जाली मे से होकर, बत्ती (wick) तक पहुचती है। खान (mine) मे ले जाने पर, अगर वहाँ पर 'मार्श-गैस' (CO) मौजूद है, तो यह तार की जाली मे से होकर, भीतर जाकर, हल्की नीली लौ (flame) के रूप मे जलने लगती है। इस लौ के ताप को, तार की जाली, अपनी सुचालकता के कारण, स्वय इतनी जल्दी खीच लेती है कि लौ, जाली से बाहर नही आने पाती, क्योंकि बाहर वाली हवा का तापमान उसके 'ज्वलन-बिन्दु' तक नही पहुँच पाता। इसलिये जैसे ही लैम्प के अन्दर हल्के नीले रग की लपट सी दीखने लगती है, त्योही खान मे इस जहरीली गैस के होने का पता लग जाता है और खतरे की सूचना पाकर, सब लोग खान मे से बाहर निकल आते है। बाद मे इन लैपों मे, ऊपर और नीचे, दोनों ओर ही जाली लगे हुए काँच की चिमनी लगा दी गई है।



चित्र 68

102. द्रवों में संवाहन (Convection of Liquids)—पीछे हमने देखा था कि बर्तन मे पानी गर्म करने पर उसमे ठडे और गर्म पानी की धारायें चलने लगती हैं और अन्त मे सारा पानी गर्म हो जाता है। इसी सत्य को चित्र 69 वाले प्रयोग

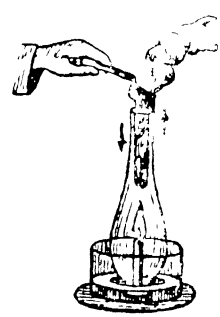
इसकी डाट में दो छेद हैं। इनमे से एक में सीधी नली (D) लगी है और दूसरे मे एक मोडी हुई नली (E)। नली (D) का ऊपरी सिरा, दूसरी नली (E) से थोडा ऊँचा रहना चाहिए। इसके विपरीत, नीचे की ओर, नली (D) का निचला सिरा, नली (E) के निचले सिरे से ऊँचा रहेगा। इन दोनो नलियों के ऊपरी सिरो को एक डाट में से ले जाकर, इस डाट से एक दूसरी फ्लास्क (C) का मुँह पानी भरकर बद कर दिया जाता है। अब फलास्क (B) के पानी को गर्म करते है। इससे यह पानी (लाल रग का) गर्म होकर ऊपर उठता है और नली (D) से फ्लास्क (C) तक जाता है। फलास्क (C) का सादा पानी भी, इस गर्म पानी की खाली की हुई जगह लेने के लिए ऊपर से नीचे, नली (E) मे होकर, फ्लास्क (B) तक पहुचता है। पानी की रगीन धारा से ताप-सवाहन-धाराओ को साफ-साफ पहचाना जा सकता है। बाद मे रगीन और सादा पानी मिलकर एक हो जाते है।


चित्र 69

इमारतो (buildings) को गर्म पानी से गर्म रखने के लिये भी यही सिद्धान्त काम मे लाया जाता है।

103. गैसों में संवाहन (Convection of Gases)—द्रवो की तरह गैसो मे भी सवाहन द्वारा ताप-सचार होता है। गर्म होकर गैस ऊपर उठती है। उसकी खाली की हुई जगह को भरने के लिये, अगल-बगल वाली हवा चारो ओर से आने लगती है। यही गैस की सवाहन-धारायें कहलाती है। हम प्राय. देखते है कि जब किसी घर मे आग लगती है तो इन सवाहन-धाराओ के कारण ही चारो ओर से चलकर हवा इस आग को बढाने लगती है।

एक बर्तन मे जलती हुई मोमबत्ती-खडी करके लगा दो। बर्तन मे थोडा सा पानी डालकर, मोमबत्ती पर काँच की एक चिमनी लगा दो। ध्यान रहे कि चिमनी की पैंदी पानी मे डूबी रहे। आप देखोगे कि मोमबत्ती की लौ धीरे-धीरे धीमी पडती जाती है और बाद मे बुझ ही जाती है। क्यों? चिमनी की पैंदी, पानी मे डूबी रहने से, इसके भीतर नीचे से तो हवा जा नही पाती। इस तरह, जलने के लिये आवश्यक आक्सीजन की मात्रा, मोमबत्ती की लौ को मिलना बन्द हो जाती है और वह बुझ जाती है। अब अगर चिमनी के मुँह के बीच मे T के आकार का गत्ते का टुकडा लगा देते है (चित्र 70) तो मोमबत्ती जलती रहती है। एक जलते हुए कागज के टुकडे की लौ को बुझाकर, चिमनी के मुँह के पास ले जाने पर, पता लगेगा कि इस T आकार वाले टुकड़े के एक ओर से धुँआ चिमनी के भीतर जाता है और दूसरी ओर से बाहर निकल जाता है। अर्थात् एक ओर से ठडी हवा चिमनी मे घुसती है। नीचे लौ से गर्मी पाकर यह ऊपर उठती है और T टुकडे के दूसरी ओर से बाहर निकल जाती है।


चित्र 70

अन्दर आने वाली हवा मे आक्सीजन मिला रहता है और यही मोमबत्ती को जलाये रखता है। लालटेनो मे चिमनी के ऊपर छेद बनाने के पीछे भी यही बात छिपी रहती है। यही सिद्धान्त वायु-शोधन (ventilation) मे भी काम आता है।

वायु-शुद्धि (Ventilation)—आजकल घरो मे शुद्ध खुली हवा पाने के लिये खिडकियाँ और दरवाजे बनाये जाते है। इससे कमरों की गर्म और गन्दी हवा तो बाहर निकलती रहती है, और सांस लेने के लिये ताजी हवा भीतर आती रहती है। इस क्रिया मे भी सवाहन-धाराये चलती है। शुद्ध और ताजी हवा मे मिली हुई आक्सीजन, हमे साँस के साथ फेफडो मे जाकर जीवित रखती है। साँस से बाहर निकलने वाली हवा मे ज्यादातर कार्बन-डाई-आक्साइड (CO_2) मिली होती है। अगर किसी कमरे मे कई आदमी रहते हो, और उसमे हवा के आने-जाने का कोई रास्ता न हो, तो कुछ देर बाद ही दम घुटने लगता है। यही कारण है कि दरवाजो के ठीक ऊपर ही खिडकियाँ या रोशनदान (ventilators) बनाये जाते है। नीचे से दरवाजो मे होकर ताजी हवा भीतर जाती है, और गन्दी हवा ऊपर वाले रोशनदान से बाहर निकल जाती है। कमरो मे लगी हुई चिमनी (chimney) भी इसी तरह काम करती है। कमरे की हवा और उसमे मिला हुआ धुआँ, अँगीठी की आग मे ताप पाकर, चिमनी मे ऊपर उठते है, और इसी रास्ते बाहर निकल जाते है, जबकि ताजी हवा, चिमनी की अँगीठी के नीचे बने छेदो से आती है। इस तरह सवाहन-धारा का चक्र (circle) पूरा हो जाता है और अँगीठी जलती रहती है। चिमनी की ऊँचाई तथा उसके भीतर और बाहर वाले सिरो के पास वाली हवाओ के तापमानो के अन्तर पर, हवा का खिचाव (draught) निर्भर करता है। चिमनी न होने पर, गर्म हवा की जगह लेने के लिये चारो ओर से खिच आने वाली हवा, लपटो (flame) के तापमान को कम कर देती है और उससे धुआँ निकलने लगता है।

गैस से भरे हुए लैम्प (Gas-filled Lamps)—इन लैम्पो के भीतर, थोडी सी कोई निष्क्रिय (inert) गैसे, जैसे आर्गन (argon) वगैरह भरी होती है। 'फिलामेट' के गर्म होने पर, उससे ताप लेकर यह निष्क्रिय-गैस, ऊपर उठती है। इसलिये 'फिलामेट' (filament) को गलन से पहले ही और भी ज्यादा तापमान तक गर्म किया जा सकता है। साथ ही इसके द्वारा फेके गये धातु के छोटे-छोटे कण, सवाहन-धाराओ से, लैप के ऊपरी सिरे पर इकट्ठा होकर उसको काला कर देते है। इस तरह यह लैप दूसरे लैपो से ज्यादा दिनो तक चलते है।

104. सवाहन पर निर्भर दूसरी घटनायें—

(i) प्राकृतिक हवायें (Winds)—वायुमण्डल मे कही पर भी जब तापमान कम या अधिक हो जाता है, वहाँ पर ही सवाहन-धाराये चलना शुरू हो जाती है, ज्यादा गर्म (जैसे विषुवत्-रेखा वाले) क्षेत्रो पर की हवा गर्म होकर ऊपर उठती है। इसकी जगह लेने के लिए, आस-पास से ठडी हवा, इस स्थान-विशेष की ओर खिच आती है, और सवाहन-धाराओ का चक्र पूरा हो जाता है। गर्म क्षेत्रो वाली हवा मे,

वाष्पीकरण की तीव्रता के कारण, जल-वाष्प-कणो की सख्या अधिक होती है। सूखी हवा से, नम हवा, हल्की होती है। इसलिए जल-वाष्प-कणों वाली यह नम हवा ऊपर उठती है। नीचे स्तर (level) मे, ठण्डी हवा का प्रवाह, कम तापमान वाले स्थान से अधिक तापमान (कम दबाव) वाले क्षेत्र की ओर होता है। जब कभी किसी जगह पर वायु-दबाव कम हो जाता है, तो चारो ओर से आने वाली हवा का वेग बहुत अधिक होने से, 'तूफान' (storm) आ जाता है।

(ii) स्थलीय और समुद्री समीर (Land and Sea Breezes)—धरातल, सूर्य की किरणों से गर्मी लेकर, पानी की अपेक्षा, जल्दी ही गर्म हो जाता है क्योकि इसका विशिष्ट-ताप काफी कम है। इसलिए धरातल का तापमान, पास वाले जल-समूह की अपेक्षा, **दिन में,** अधिक हो जाता है। इससे धरातल के पास वाली हवा गर्म होकर ऊपर उठती है। इसकी जगह लेने के लिये, पानी के ऊपर वाली ठंडी हवा, समुद्र की ओर से धरातल की ओर चलने लगती है। इसको '**समुद्री समीर**' कहते है।

रात के समय, धरातल (land), विकिरण (radiation) से, पानी की अपेक्षा, अधिक ठडा हो जाता है। इसलिये इसके ऊपर वाली हवा, पानी के ऊपर वाली हवा से अपेक्षाकृत (Relatively) ठडी हो जाती है। इसलिये पानी के ऊपर वाली हवा ऊपर उठती है, और उसकी जगह, लेने के लिए, धरातल पर से समुद्र की ओर हवा चलती है, जो कि **स्थलीय समीर** कहलाती है। ध्यान रहे कि समुद्र-तट से लगभग 25 मील तक ही इन समीरो का प्रभाव होता है। इनके कारण, इन क्षेत्रो की जलवायु समशीतोष्ण हो जाती है।

(iii) व्यापारिक हवाएँ (Trade Winds)—विषुवत्-रेखा (Equator) के पास वाले स्थान, सूर्य की सीधी किरणो से ताप लेकर, दूसरे स्थानो की अपेक्षा, काफी गर्म हो जाते है, इसलिये इन स्थानो पर की हवा, गर्म होकर ऊपर उठती है और उत्तर, दक्षिण से ठडी हवाये, इसकी जगह लेने के लिये आने लगती हैं। अगर पृथ्वी अपनी कीली (axis) पर घूमती हुई न होती, तो इन हवाओ के कारण, उत्तरी गोलार्द्ध में 'उत्तरी-हवा' और 'दक्षिणी गोलार्द्ध' मे दक्षिणी हवा चलती। लेकिन पृथ्वी, अपनी कीली पर पश्चिम से पूर्व की ओर लगातार चक्कर लगाती रहती है। इसलिये, उत्तर और दक्षिण से आने वाली ठडी हवाओ की दिशा, ठीक उत्तर और दक्षिण की ओर न होकर, तिरछी होकर, क्रमश. उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम हो जाती है। इन हवाओ को ही 'व्यापारिक हवाये' कहा जाता है। पाल (sails) से चलने वाले, पानी के जहाजो को चलाने मे इन हवाओ के कारण मिलने वाली सहायता के कारण ही इनका यह नाम पडा।

(iv) मानसून (बरसाती हवाये—Monsoons)—यह हवाये, साल के कुछ महीने ही चलती हैं। गर्मी की ऋतु मे भारत और मध्य एशिया का भाग हिन्द महासागर की अपेक्षा बहुत अधिक गर्म हो जाता है। इसलिये इन भागों की हवा गर्म हो कर ऊपर उठती है। इसकी खाली जगह को भरने के लिये, हिन्द-महासागर की ओर

से जल-वाष्प-कणों से लदी हुई हवायें, दक्षिण की ओर से चलने लगती हैं। लेकिन पृथ्वी के, पश्चिम से पूर्व की ओर घूमने के कारण ये हवायें, दक्षिण-पश्चिम से आती हुई लगती है। जब इन बरसाती हवाओ के रास्ते मे थल पर कोई ऊँची पर्वत-श्रेणी आ जाती है तो इनको ऊपर उठना पडता है। ऊपर उठकर फैलने से, इनका तापमान कम हो जाता है। इससे यह हवा अपने मे ही मिले हुए जल-वाष्प-कणो से सतृप्त हो जाती है और वर्षा होने लगती है। इसका प्रभाव हिमालय-पर्वत की श्रेणियों के कारण, गगा-सिन्ध के मैदान मे और आसाम की पहाडियो से बगाल और आसाम मे वर्षा इन्ही बरसाती हवाओ द्वारा होती है। आसाम मे **चेरापूँजी** नामक स्थान पर, ससार मे सबसे अधिक वर्षा होती है।

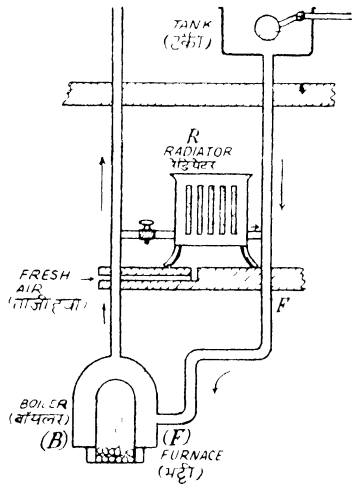
जाडे के मौसम मे, सूर्य की किरणे हिन्द-महासागर पर सीधी पडती है। इस, लिये उत्तर और दक्षिण की ओर से ठडी हवाये, हिन्द-महासागर की ओर चलने लगती है। पहले की तरह, पृथ्वी के घूमने के कारण, यह उत्तर-पूर्व से आती हुई लगती है। इनको ही **'उत्तरी-पूर्वी' या सूखी बरसाती** हवाये कहते है।

(v) सामुद्रिक हवायें (Ocean Currents)—महासागरो (Oceans) में, विषुवत्-रेखा के पास वाले क्षेत्रो मे, सूर्य की किरणे साल भर सीधी पडने से, वहाँ का पानी, काफी गर्म हो जाता है। गर्म होकर यह पानी हल्का होकर ऊपर उठता है। इसके विपरीत, ध्रुवो (Poles) वाले क्षेत्र मे ठड के कारण, पानी भारी होकर नीचे तलेटी (bottom) की ओर जाने लगता है। यही पानी अब ध्रुवों से, विषुवत्-रेखा की ओर समुद्र की तलेटी के साथ-साथ नीचे-नीचे चलना लगता है। इसी तरह विषुवत्-रेखा पर का जल ध्रुवो की ओर पानी की ऊपरी सतह के साथ-साथ चलता है। गल्फ-स्ट्रीम (Gulf Stream) नामक गर्म पानी की बडी धारा, एटलाटिक महासागर मे मैक्सिको की खाडी से शुरू होती है। यह अमेरिका के पूर्वी समुद्र-तट को गर्म करती हुई यूरोप के पश्चिमी तट के साथ-साथ बहकर अपना चक्र पूरा करती है। प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) वाली गर्म धारा का नाम क्यूरो-सिवो है। ठडे स्थानो के बहुत से बदरगाह जो बर्फ जमने से बंद हो जाते है, इन धाराओ के कारण ही व्यापार के लिये वर्ष-भर खुले रहते है।

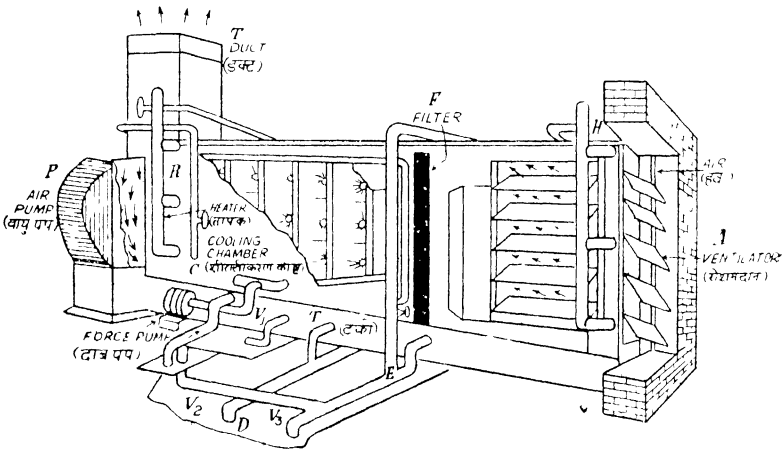
(vi) वायु प्रतिबन्ध प्रणाली (Air-Conditioning)—पीछे हम बता आये है कि जब कई आदमी, एक बन्द कमरे मे बैठकर काम करते है, तो थोडी देर बाद ही वहाँ की हवा, ताजी हवा न मिलने से, अशुद्ध हो जाती है, और वहाँ दम सा घुटने लगता है। साथ ही यह बात भी है कि बद स्थान मे, हमारे शरीर से निकलने वाले पसीने (sweat) का वाष्पीकरण नही हो पाता। इसलिये ऐसे स्थान मे बैठने से जी घबराने लगता है। प्राय. देखा गया है कि स्थान के तापमान के साथ-साथ आर्द्रता भी कमरे के वातावरण को आनन्दप्रद बनाने मे मदद देती है। अमेरिका के शिकागो नामक स्थान पर पढने वाले बच्चो पर प्रयोग करके पता चला कि 71° फैरेनहाइट तापमान पर 30% आ० आर्द्रता वाली हवा, 61° फैरेनेहाइट पर 70% आ०

आर्द्रता वाली हवा के बराबर ही आनन्द प्रद (comfortable) होती है। वायु-प्रतिबंध-प्रणाली का काम ही कमरे की हवा का तापमान, शुद्धता और आ० आर्द्रता का इस प्रकार नियत्रण करना होता है कि उसमे बैठने से आराम मिले। दिन प्रतिदिन इस प्रणाली का उपयोग बढता जा रहा है।

वायु-प्रतिबध-प्रणाली दो प्रकार से कार्य करती है—(i) ठडे स्थानो मे, कमरे की हवा को अप्राकृतिक ढग से गर्म और शुद्ध करना, और (ii) गर्म स्थानो की हवा को ठडी और ताजी बनाना। चिमनी की अँगीठी को जलाकर, कमरे को गर्म रखने की विधि हम पीछे बता आये है। लेकिन इस क्रिया मे काफी पैसा बेकार जाता है, क्योकि कोयले के जलने से मिलने वाले ताप का सिर्फ 10-15% अश ही कमरे को गर्म करने मे काम आता है। इसलिये बडे-बडे भवनो मे कमरो को गर्म रखने के लिये गर्म पानी या भाप का उपयोग किया जाता है। सबसे निचली मजिल (storey) मे एक 'बायलर' भट्टी के ऊपर रखा रहता है (चित्र-71 A)। बॉयलर के भीतर पडी हुई एक नली, सीधी, भवन के ऊपर तक चली जाती है। वहाँ से दूसरी जगहो, जैसे स्नानघर वगैरह मे होती हुई यह वापस बायलर मे लौट आती है। लेकिन यह



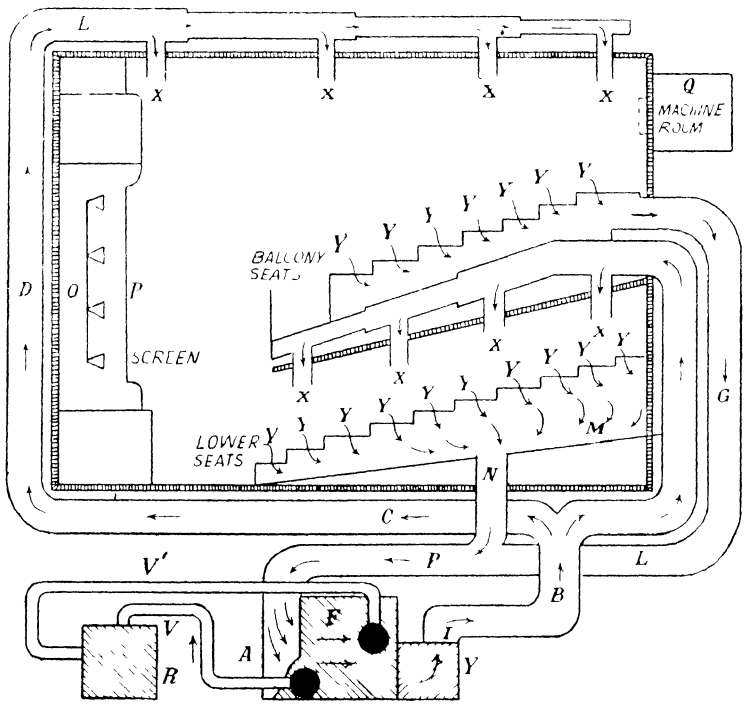
चित्र 71-A



चित्र 71-B

वापस आने वाली भाप (या गर्म पानी) यहाँ तक आते-आते ठडी हो जाती है। बॉयलर में फिर से गर्म होकर पहले वाला क्रम फिर से चलने लगता है। हरएक कमरे मे एक-एक विकीर्णक (radiator) लगा रहता है, जिसको भाप (या गर्म पानी), मुख्य नली के अगल-बगल से निकली हुई पाइप से मिलती है। यह सभी पाइपे, ताँबे की बनी और खूब ही चमकदार रखी जाती है। प्रत्येक विकीर्णक मे भाप (या गर्म जल) को, पतली और मुडकर थोडी ही जगह मे रखी हुई नलियो मे घूम कर जाना पडता है। इस क्रिया मे गर्म पानी (या भाप) अपना कुछ ताप, कमरे की हवा को देता है।

(ख) कमरों को ठण्डा करने वाली वायु-प्रतिबन्ध-प्रणाली (चित्र 71-B) मे पहले एक वायु-पम्प (P) (blower) से, बाहर वाली ताजी हवा को भीतर खीचते हैं। इसके रास्ते मे एक निस्पदक (filter) (F) रखा होता है, जो कि इसमे से धूल के कण वगैरह को सोख लेता है। यहाँ से यह साफ और ताजी हवा, 'शीतक-कोष्ठ'



चित्र 71-C

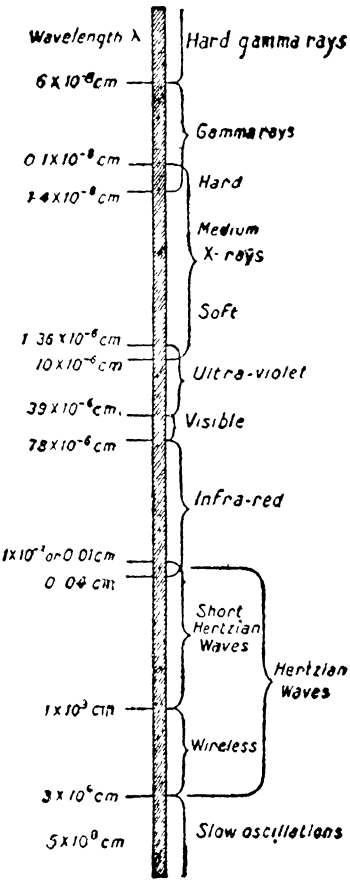
(C) (cooling chamber) मे जाती है। इस कोष्ठ के भीतर कुछ मोटे पाइप क्षैतिज लगे रहते है। इन मोटे पाइपो की अगल-बगल से थोडी-थोडी दूर पर पतले और लम्बे खडे (vertical) पाइप जुड़े रहते है। उन खडे छड़ों की पूरी लम्बाई पर

पास-पास बारीक छेद बने होते है। शीतक (refrigerator) से ठडा पानी, मोटे पाइप (V_2) से पहुँचता है। वाल्वो को इच्छानुसार खोलकर, बारीक छेदों मे से ठडे पानी की फुहारे (springs) छोडी जाती है। यह फुहारे, भीतर खीची गई ताजी और साफ हवा मे से गुप्त-ताप खीचकर उसे ठण्डा कर देती है और स्वय नीचे वाली टंकी मे इकट्ठी होती रहती है। इस तरह भीतर खीची गई ताजी हवा लगातार ठण्डी होती रहती है। टकी (T) मे इकट्ठा होने वाला पानी, पाइप (V_3) से वापस 'शीतक' को चला जाता है।

शीतक-कोष्ठ से बाहर वाली ताजी हवा ठडी तो होती ही है, साथ ही यह उसमे मौजूद जल-वाष्प-कणो से भी सतृप्त हो जाती है। इसलिये इसकी आर्द्रता और तापमान का अनुकूलन (adjustment) करना पडता है। उसके बाद ही इसको चौडी नली (duct) से कमरो मे भेज देते है। हर एक कमरे मे, दूषित हवा को बाहर निकालने के लिये, फर्श के पास ही छेद बने होते है जो कि चौडी पाइपो से सम्बधित होते हैं। दूषित हवा इन पाइपो मे से होकर, मुख्य-पाइप मे पहुँचती है, जहाँ से वह वापस, शीतक-कोष्ठ मे फिर से ठडी होने के लिये भेज दी जाती है। (चित्र 71-C) मे एक बडे सिनेमा-हाल की वायु-प्रतिबन्ध-प्रणाली को दिखलाया गया है। इसमे (R) शीतक, (F) शीतक-कोष्ठ है और (P) वायु-पम्प है। इस प्रबन्ध से ठण्डी होकर बाहर निकलने वाली ताज़ी हवा, चौडी पाइप (duct) मे से होकर हाल मे आती है। यहाँ पर 'डक्ट' के दो भाग हो जाते है, एक धारा (B.C.D.E) ऊपर वाली गैलरी, दूसरी (X, X, X) नीचे वाली गैलरी को ठण्डा करती है। दूषित वायु (Y, Y, Y) छेदो मे होकर, चौडी बद नली मे से होकर मार्ग (ध, झ, ल, प) और (म, न, प) मार्ग से वापस शीतक-कोष्ठ को पहुँच जाती है।

105. परिवाहन (विकिरण) का प्रकार (Nature of Radiation)—पीछे हम बतला चुके है कि परिवाहन से ताप-सचार के लिये किसी माध्यम (medium) की आवश्यकता नही होती। गर्म चीजो से बहुत सी कम्पनाक (frequency) वाली किरणे (या लहरे) लगातार बाहर निकलती रहती है। लहरो के लिये माध्यम चाहिये। इसलिये एक सर्वव्यापी, पूरी तरह लचकीले माध्यम 'ईथर' (ether) की कल्पना कर ली गई। यह तरगे, 3×10^{10} सै० मी० प्रति सैकिड के वेग से, सब दिशाओ मे फैलती रहती है। इन तरगो द्वारा ही ताप-स्रोत का ताप, दूसरे स्थानो तक पहुँच पाता है। जब इन तरगो के मार्ग मे कोई भौतिक पदार्थ आ जाता है, तो उसमे से होकर जाते हुए इनका वेग कुछ कम हो जाता है। साथ ही उनकी ऊर्जा का कुछ अश भी यह पदार्थ अपने मे सोख लेता है। इससे पदार्थ का तापमान बढ जाता है। आधुनिक सिद्धान्त के अनुसार अब इस काल्पनिक माध्यम की आवश्यकता नही रही है। अब तो इन तरंगों को वैद्युतिक-चुम्बकीय अनुप्रस्थ-तरगे (electro-magnetic-transverse waves) माना जाता है। यही तरगे क्यो, गामा-किरणे, एक्स-किरणें, रेडियो-तरगे यह सभी तरह की तरगें, वैद्युतिक-चुम्बकीय होती है। इनमे अन्तर केवल उनके कम्पनाक का ही होता है। लहरो के वेग (v), कंपनाक (n) और तरंग-लम्बन (wave-length) (λ) यह सबन्ध होता है $v = n\lambda$.

छोटी और बडी, सभी तरंगों द्वारा ऊर्जा विकीर्ण होती है। लेकिन हमारी आँख पर इनमे से कुछ थोडी सी ही लहरे प्रभाव डाल पाती है। यह सीमा (7800×10^{-8}) सै० मी० से (3900×10^{-8}) सै० मी० है और इसको **'दृष्टिगोचर-विकिरण'** (luminous radiation) कहते हैं। तापिक विकिरण वाली तरगों से केवल ताप का अनुभव होता है, प्रकाश का नही। इससे अधिक तरग-लम्बान वाली तरगों को 'रेडियो-तरगे' कहते है। इसके बाद **'मद-स्पदन'** (slow oscillations) वाला क्षेत्र आ जाता है (चित्र 72)। 3900×10^{-8} सै० मी० से कम तरंग-लम्बन वाली तरगे, रास्ते के पदार्थ पर रासायनिक प्रक्रिया भी करने लगती है। इनके समूह को **'परा-कासनी'** (Ultra-violet) किरणें कहते है। इनके बाद एक्स-किरणे, फिर उससे भी छोटी किरणे, गामा-किरणे कहलाती है। **'सृष्टि-किरणे'** (cosmic rays) **कठोर** (hard) **गामा-किरणे** भी इसी क्रम मे आती है।



चित्र 72

जैसे-जैसे पिड का तापमान बढता जाता है, उससे निकलने वाली तरगो का तरग-लम्बान घटता जाता है और कपनाक उसी अनुपात मे बढता जाता है। जब वह रक्त-तप्त (red hot) हो जाता है तो इससे लाल रग की दृष्टिगोचर किरणे निकलने लगती है। और अधिक ताप पाने पर, पीला, वगैरह दूसरे रग भी दीखने लगते है, और अन्त मे यह सफेद चमकने (white hot) लगता है। तब इससे दृष्टिगोचर पराकासनी और तापिक किरणे निकलने लगती है।


चित्र 73

106. विकीर्ण ताप का पता लगाने और मापने वाले यन्त्र—

(1) ईथरीय थर्मोस्कोप (चित्र 73)—इस यन्त्र मे काँच के दो गोलक (bulbs), एक मुडी हुई केश-नली से जुडे हुए रहते है। गोलको और नली मे से हवा निकालकर, ईथर (द्रव) भरा होता है, और सारा यन्त्र, स्टैड पर सीधा खडा रखा जाता है। नीचे वाले गोलक पर कालिख पोतकर उसे खूब काला कर लेते हैं। जब ताप की अदृश्य (invisible) किरणें, इस काले गोलक पर पडती हैं, तो यह पूर्ण शोषक होने से किरणो का ताप सोख लेती है और इसका तापमान बढ जाता है। इससे इसके भीतर भरी हुई

ईथर-वाष्प का वाष्प-दबाव बढ जाता है, और ईथर-द्रव का तल (level), दूसरे गोलक की ओर चढ जाता है। स्पष्ट है कि नली के दोनों स्तम्भो मे तलो का अन्तर, वाष्प-दबाव मे बढोत्तरी (अतः काले पुते हुए गोलक पर पडने वाले ताप की तीव्रता) पर निर्भर करेगा। नली के समानान्तर एक पैमाना लगाकर, इस यन्त्र को अशाकित किया जा सकता है। इससे सीधे ही आने वाली ताप की तीव्रता की माप मिल जाती है। क्योकि ईथर का वाष्प-दबाव, बहुत अधिक होता है, इसलिए थोडे से ही 'ताप-मानान्तर' (difference of temperature) से, तलो मे काफी अन्तर पड जाता है।

(ii) साधारण भेद-दर्शक वायु-तापमापक (Differential Air Thermometer)- इसका प्रयोग सबसे पहले **लीजले** (Leslie) ने किया। इसके काम करने की विधि और बनावट भी बहुत कुछ, ऊपर वाले यन्त्र जैसी ही है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि इसकी यू-नली, ईथरीय थर्मोस्कोप से थोडी मोटी होती है और इसमे ईथर द्रव की जगह कोई न उडने वाला द्रव, जैसे गधक का तेजाब या पारा भरा होता है, इसलिए वह इतना सुग्राही (sensitive) नही होता। दोनो गोलको के तापमान बराबर होने पर, यू-नली के दोनो स्तम्भो मे द्रव-स्तम्भो के ऊपरी सिरे भी बराबर ऊँचाई पर रहते है। क्योकि दोनो गोलक, एक जैसे और बराबर ऊँचाई पर, यू-नली के ऊपरी सिरो से जुडे रहते है।

ऊपर बतलाये गये दोनो यन्त्रो के सिवाय ऐसे ही कुछ दूसरे यन्त्र भी है, जैसेकि थर्मोपाइल, बोलोमीटर, रेडियो माइक्रोमीटर वगैरह। इस सबका वर्णन, 'विद्युत्' मे किया गया है।

107 विकीर्ण-ताप और प्रकाश की तुलना (Thermal Radiation and Light Compared)—इन दोनो मे समानता (similarity) वाली मुख्य बाते इस प्रकार है—

(i) **शून्य-स्थान में से होकर जाना (Transmission through Vacuum)**—सूर्य से हमारे पास तक आने वाला प्रकाश और ताप दोनो ही बीच वाले शून्य-स्थान मे से होकर आते है। एक थर्मामीटर की घुडी को ऊपर से काला पोतकर हवा निकाले हुए बर्तन मे रखकर, बाहर, धूप या आग के पास रख देने पर, थोड़ी देर मे ही थर्मामीटर की माप बढ जाती है। अर्थात् ताप-किरणें प्रकाश की तरह ही बीच वाले शून्य-स्थान में से आर-पार चली जाती है।

(ii) **रैखिक पथ-गमन (Rectilinear Propagation)**—प्रकाश-किरणों की भाति ताप-किरणें भी सीधी रेखा में चलती है। आग से आने वाले ताप के मार्ग मे पर्दा वगैरह रख देने पर, वह हमारे पास नही आने पाता। अपार-दर्शक (opaque) वस्तुओ के किनारो पर दोनो प्रकार की किरणे थोड़ा झुक (bend) जाती है। लेकिन यह झुकाव ताप-किरणो मे अधिक होता है।

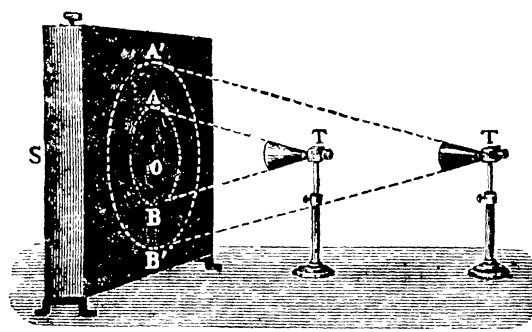
(iii) **एक समान प्रवाह (Uniform Emission)**—प्रकाश की तरह, ताप-किरणें सभी दिशाओं में समान प्रवाह से चलती रहती है। धातु के गरम पिड को अँधेरे कमरे मे रख दो। इसके चारो ओर बराबर दूरियों पर, थर्मामीटरों की घुडियों

को काला करके रख दो। आप देखोगे कि इन सभी थर्मामीटरों की मापें, हर समय एक सी ही रहेगी।

(iv) **प्रवाह का वेग (Velocity of Propagation)**—प्रकाश और ताप दोनों ही एक जैसी अवस्थाओं में बराबर-बराबर वेगों से चलते हैं। सूर्य ग्रहण के समय प्रकाश के रुक जाने से साथ-साथ तापमान भी गिर जाता है।

(v) **उत्क्रम-वर्ग-नियम (Inverse Square Law)**—ताप की तरह, विकीर्ण-ताप भी, उत्क्रम-वर्ग-नियम को मानकर चलता है। स्रोत (source) से कुछ दूरी पर विकीर्ण-ताप की तीव्रता (intensity) उस स्थान की स्रोत से दूरी के वर्ग (square) के विलोमी (inversely proportional) होती है। जैसे-जैसे हम स्रोत से दूर होते जाते है, ताप की तीव्रता इसी अनुपात मे कम होती जाती है।

चित्र 74 मे (S) एक काफी बडा, खोखला, टीन का बक्सा सीधा खडा हुआ रखा है। इसके एक बडे तल को गहरा काला पोता गया है। बक्स के भीतर खौलता हुआ पानी भर दो। काले तल के सामने, (d) दूरी पर, एक 'थर्मोपाइल' और उसमे लगा हुआ कोनदार सग्राहक (conical collector) रखकर, 'गैलवनोमीटर' मे विक्षेप (deflection) की माप ले लो। फिर इसी थर्मोपाइल (T) (सग्राहक सहित) को ($2d_1$) दूरी पर रखकर, दुबारा गैलवनोमीटर मे विक्षेप की माप लो। आप देखोगे कि दोनो बार की मापे लगभग बराबर ही आती है। क्यो ? दूरी बढ जाने से थर्मोपाइल तक ताप पहुँचाने वाला क्षेत्र, पहले से चार गुना हो जाता है। लेकिन साथ ही दूरी के दो गुना हो जाने से, इस ताप की तीव्रता भी चार गुना घट जाती है, और विक्षेप, दोनो अवस्थाओ मे बराबर ही रहता है। इसलिए उत्क्रम-वर्ग-नियम सिद्ध हुआ माना जावेगा।



चित्र 74

(vi) **परावर्त्तन (Reflection)**—प्रकाश की भाति ताप की किरणें भी पालिश किये हुए तलों से परावर्त्तित होती है। यह परावर्त्तन, प्रकाश-सम्बन्धी नियमों के अनुसार ही होता है।

(क) **समतल (plane surface) पर ताप का परावर्त्तन** दिखलाने के लिए, पालिश की हुई, चमकदार, टीन की चादर को स्टैड मे लगाकर, सीधा खडा लगा दो। टीन की दो चौडी नलियाँ, स्टैड मे लगाकर इस तरह रक्खो कि उनके अक्ष (axis) आगे बढाने पर, पालिशदार टीन के तल के बीचोबीच जाकर मिले। अब इनमें से एक नली के सिरे के पास एक तप्त गैंद और दूसरे के पास एक थर्मोपाइल लगा दो। थर्मोपाइल को थोड़ा इधर-उधर (क्षैतिज तल मे) घुमाकर, गैलवनोमीटर में

विक्षेप देखो। जिस स्थिति में सबसे ज्यादा विक्षेप आवे, उसे नोट कर लो। आप देखोगे कि आयतन (incidence) और परावर्त्तन (reflection) के कोण बराबर होते हैं।

(ख) **गोल तलों पर ताप-परावर्त्तन** के प्रदर्शन के लिए धातु के बने, दो चमकीले नतोदर दर्पणो को, आमने-सामने, कुछ दूरी पर रख दो। इनमे से एक की नाभि (focus) पर एक गरम पिंड रख दो, तो इसकी प्रतिमूर्ति, दूसरे दर्पण की नाभि पर बनेगी। इसलिए अगर इस दूसरी नाभि पर फासफोरस का टुकडा रख दें तो वह जल उठेगा। यही इस परावर्त्तन की सत्यता का प्रमाण होगा।

(vii) **आवर्त्तन** (**Reflection**)—प्रकाश की तरह, ताप-किरणें भी उन्हीं नियमों को मानती हुई आवर्त्तित होती है। जब सूर्य की किरणो को, जिनमे आकाश और ताप दोनो ही तरह की किरणे मिली होती है, एक उन्नतोदर-लैंस (convex lens) पर डाला जाता है तो वह सब लैंस की नाभि पर केन्द्रित हो जाती है। इसकी जाँच, थर्मोपाइल और गैलवनोमीटर की सहायता से की जा सकती है। नाभि पर ही विक्षेप की माप सबसे ज्यादा आवेगी। ताहिर हुसैन ने, इसी सिद्धान्त से, पहली बार हीरे की भस्म बनाई।

(viii) **वर्ण-पट का क्रम** (**Continuity of Spectrum**)—सूर्य से आने वाली किरणों को, नमक के बने त्रिपार्श्व (प्रिज्म) मे से ले जाकर, उसका वर्ण-पट बनाइये। एक थर्मोपाइल लेकर, सारे वर्ण-पट मे ताप की तीव्रता का पता लगाओ। जैसे-जैसे हम वर्ण-पट के लाल रग वाले सिरे की ओर बढते जाते है, वैसे-वैसे ताप की तीव्रता बढती जाती है। 'लघु-लाल' (infra-red) किरणो वाले क्षेत्र (region) मे यह तीव्रता अधिकतम (maximum) होती है। प्रकाश की भाँति इस क्षेत्र मे भी काली 'फ्रानहोफर रेखायें' देखी गई है। दूसरे शब्दो मे, प्रकाश-किरणो वाला वर्ण-पट ही, ताप-किरणो के रूप मे क्रम मे आगे आता है।

(ix) **ध्रुवीकरण** (**Polarisation**)—प्रकाश-किरणो की तरह ताप-किरणो को कुछ खास पदार्थों मे से निकालकर ध्रुवित अर्थात इस पदार्थ के अणुओ की गति (motion) को तल-विशेष (In a particular plane) मे लाया जाता है। टूरमलीन (tourmaline) एक इसी तरह का पदार्थ है।

(x) **ताप द्वारा प्रकाश का उत्पन्न होना** (**Production of Light by Heating**)—प्लेटिनम के तार मे बिजली चालू करके गर्म करने पर पहले तो इसमे से ताप किरणे (अदृश्य) निकलती है। जब इसका तापमान लगभग 16000° से० ग्रे० हो जाता है तो इससे श्वेत-प्रकाश (white light) निकलने लगता है।

ऊपर के वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि प्रकाश और ताप-किरणे दोनो एक ही चीज है। फर्क सिर्फ इनके कंपनाक (या तरग-लम्बान) का ही है। इसलिये हम कह सकते हैं कि विकीर्ण ताप अदृश्य-प्रकाश होता है।

108. विकीर्ण ताप का शोषण, प्रेषण और परावर्त्तन (**Absorption, Transmission and Reflection of Radiation**)—जब विकीर्ण ताप किसी वस्तु पर पडता है, तो यह तीन भागो मे बँट जाता है।

(1) इसका कुछ अश, वस्तु के तल पर परावर्त्तित हो जाता है, प्रकाश-नियम का पालन करते हुए।

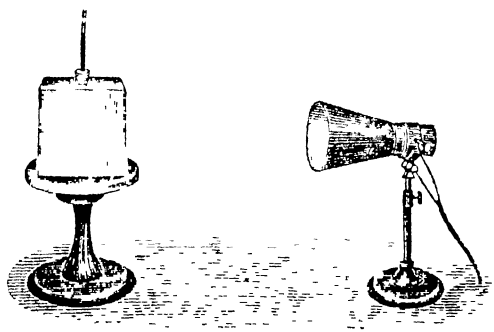
(ii) कुछ अंश, वस्तु के तक पर इधर-उधर, चारों ओर फैल(scatter) जाता है।

(iii) बाकी मे से कुछ हिस्सा, उस वस्तु मे से आर-पार निकल जाता है, लेकिन आवर्तन-नियमो का पालन करते हुए शेष को वह वस्तु स्वय सोख लेती है, जिससे उसका अपना तापमान बढ जाता है। अलग-अलग चीजो की परावर्त्तन, शोषण और प्रेषण सामर्थ्य भी अलग-अलग होती है।

वरणात्मक-शोषण (Selective Absorption)—किसी भी वस्तु की शोषण-क्षमता, उस पर पडने वाले विकीर्ण ताप के गुण (कपनाक इत्यादि) और स्वय स्रोत के तापमान पर निर्भर करती है। साधारण काँच मे से ताप और प्रकाश दोनो की किरणे आर-पार चली जाती है। लेकिन जब ताप-स्रोत का तापमान रक्त-तप्त (red hot) से भी कम होता है, तो यही किरणे साधारण काँच को पार नही कर पाती। सूर्य से आने वाला प्रकाश और ताप-किरणे वायुमडल मे मिले हुए वाष्प कणो मे होकर धरातल तक पहुँचती है जिससे वहाँ का तापमान बढ जाता है। इससे विकीर्ण ताप की तरगे, हवा मे चारो ओर फैलने लगती है। लेकिन अब वही जल-वाष्प-कण, इस ताप को ऊपर को जाने से रोक लेते है। इसी तरह सेधा नमक (rock salt) के रवे मे से ताप-किरणे और बिल्लौरी (quartz) काँच मे से सूर्य की रसायनिक किरणे (actinic rays) बडी आसानी से आर-पार चली जाती है। कार्बन-बाइ-सल-फाइड और आयोडीन के घोल मे से होकर प्रकाश की किरणे तो नही, लेकिन ताप-किरणे चली जाती है।

109 विकीर्ण ताप का उत्सजन (Emission of Radiation)—जब किसी चीज से ताप का विकिरण होता है तो उसकी यह ऊर्जा (energy) तरगो की शकल मे, माध्यम मे प्रकाश की चाल से, आगे बढती है। क्योकि यह बदल, चीज की सतह पर ही होती है, इसलिये उसकी "विकिरण क्षमता" (emissive or radiating power) उसकी सतह के प्रकार पर निर्भर करती है। प्रयोगो से पता चला है कि एक ही ताप-मान पर होने पर भी, अलग-अलग तलो की विकिरण-क्षमता अलग-अलग होती है।

चित्र-75 मे 'लीजले-घनक', एक स्टैंड पर रखा है। इस घनक के पार्श्वों (faces) के तलो के प्रकार अलग-अलग रखे जाते है। जैसे कि एक तल को पालिश करके चमकदार बना लेते है, दूसरे को कालिख लगा कर खूब काला कर लेते है, तो तीसरे को सफेद रग से पोत कर, चौथे को खुरदरा (rough) कर लेते है। घनक के ऊपरी पार्श्व मे थर्मामीटर, घनक के भीतर भरे हुए द्रव का तापमान बत-लाता है।



चित्र 75

प्रयोग के लिए, घनक

के भीतर, खौलता हुआ पानी भरकर, इससे थोडी दूर पर एक 'थर्मोपाइल' रख देते है। एक-एक करके, हर एक तल को थर्मोपाइल की ओर, निश्चित (definite) देर तक रख कर, विक्षेप (deflection) की माप लेते जाते है। इस सारे प्रयोग मे घनक और थर्मोपाइल के बीच की दूरी को स्थिर (constant) रखा जाता है। आप देखोगे कि काले तल के लिए विक्षेप की मात्रा सबसे अधिक आती है और चमकदार तल के लिए सबसे कम। यह विक्षेप तल की 'विकिरण-क्षमता' के समानुपाती होता है।

प्रायः देखा गया है कि बाहर से काली की हुई देगचियो मे रखे हुए गर्म द्रव चमकीले तल वाले बर्तनो मे रखे द्रवो की बनिस्बत जल्दी से ठडे होते है। इसका कारण, काले तलो की विकिरण-क्षमता, चमकीले तलो से अधिक होना है। इसी से काले तल की 'विकिरण-क्षमता' को प्रमाणभूत (standard) मानकर, दूसरे तलो की विकिरण-क्षमता की इससे तुलना की जाती है।

एक निश्चित तापमान पर किसी भी वस्तु के तल की **ताप-विकिरण-क्षमता** या (विकिरण-गुणक), उस अनुपात के बराबर होती है, जो कि उस वस्तु के एक वर्ग सैं० मी० क्षेत्र से प्रति सैकिंड बाहर निकलने वाले ताप और उसी तापमान पर, काजल से पुते हुए तल के उतने ही क्षेत्र से, उतने ही समय में बाहर निकलने वाले ताप में होता है।

गणित के शब्दो मे, अगर किसी तल से कुछ समय विशेष मे (e) ताप की मात्रा विकीर्ण होती है, और इतने ही क्षेत्र वाले काले तल से इतने ही समय मे (E) ताप की मात्रा विकीर्ण होती है, तो

$$\text{विकीर्ण-गुणक } (\alpha) = e/E$$

उदाहरण के लिये मान लो धातु के एक गोले की ताप-ग्राहिता 6·5 कैलोरी प्रति डिग्री सें० ग्रे० है। अगर यह आस-पास से 50 सैं० ग्रे० अधिक तापमान पर 0·5 डिग्री प्रति मिनिट की दर (rate) से ठडा हो रहा है, और इसका व्यास 3 सैं० मी० है, तो--

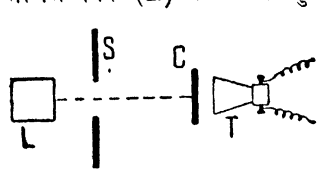
$$\text{प्रति सैकिंड विकीर्ण होने वाले ताप की मात्रा} = \frac{6{\cdot}5 \times {\cdot}5}{60} \text{ कैलोरी}$$

$$\text{लेकिन इस गोले के तल का क्षेत्रफल} = (4 \times 3{\cdot}14 \times 1{\cdot}5^2) \text{वर्ग सैं.मी.}$$

$$\therefore \text{ताप-विकिरण-क्षमता} = \left(\frac{6{\cdot}5 \times {\cdot}5}{60 \times 4 \times 3{\cdot}14 \times 1{\cdot}5^2} \right)$$

$$= 0{\cdot}0019 \text{ कैलोरी प्रति सैकिंड प्रति वर्ग सैं० मी०}$$

110. विकीर्ण ताप का अवशोषण (Absorption of Radiation)—एक लीजले-घनक (L) मे खौलता हुआ पानी भरकर, स्टैंड पर रख दो। इसके सामने कुछ दूर पर एक थर्मोपाइल (T) रख दो। अब इन दोनों के बीच मे, एक पतले और छोटे से छेद वाला पर्दा (S) रख दो। ध्यान रहे कि घनक के पार्श्व का मध्य-बिन्दु छेद का केन्द्र और थर्मोपाइल का बीच, तीनों बिदु एक ही सीधी रेखा में रहें। ताँबे को एक पतली और गोल चकती (C) लेकर, उसके एक तल पर

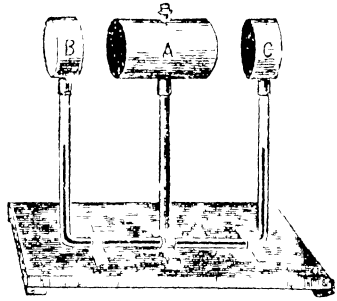


चित्र 76

कालिख पोत दो, और दूसरी ओर प्रायोगिक पदार्थ का लेप लगा दो। अब (C) के दोनों तलों पर, अलग-अलग घनक और पर्दे के छेद मे से होकर आने वाले ताप को डालकर, थर्मोपाइल के साथ लगे हुए गैलवनोमीटर मे विक्षेप की माप लो। आप देखोगे कि विभिन्न तलों द्वारा ताप का अवशोषण भी अलग-अलग होता है।

एक निश्चित तापमान पर, किसी भी वस्तु के तल की **अवशोषण-क्षमता** (या अवशोषण-गुणक), उस अनुपात के बराबर होती है, जो कि वस्तु के तल के निश्चित क्षेत्र द्वारा, निश्चित समय में होने वाले ताप के अवशोषण, और उतने ही क्षेत्र वाले कालिख लगे हुए तल द्वारा, उतने ही समय में होने वाले अवशोषण मे होता है।

किसी तल की ताप-विकिरण और अवशोषण क्षमताओ की तुलना (रिथी यन्त्र–Rithi's Apparatus से)—यह यन्त्र बहुत कुछ भेद-दर्शक जैसा ही होता है। सिर्फ भेद-दर्शक के गोलको (bulbs) की जगह पर इसमे दो एक जैसे नलके (B,C) लगे होते है (चित्र 77) डिब्बो मे हवा भरी होती है और इनके बीच मे, इन्ही के जैसा एक तीसरा डिब्बा (A), एक स्टैड पर खडा कर दिया जाता है। जब इस तीसरे डिब्बे (A) मे खौलता हुआ पानी भर देते है तो इसके तलो से ताप का विकिरण होने लगता है। ध्यान रहे कि तीनो डिब्बो के सिरे, चपटे (flat), गोलाकार (circular) और बराबर-बराबर क्षेत्रफल (equal area) वाले होते है। हर एक डिब्बे का एक सिरा कालिख से पोतकर, दूसरे सिरे को चमकदार रखा जाता है। हर एक डिब्बे को अपने-अपने स्टैड पर, क्षैतिज-तल मे घुमाया जा सकता है।



चित्र 77

प्रयोग के लिये, पहले डिब्बो को इस तरह घुमाओ कि बीच वाले डिब्बे (A) का काला सिरा, किनारे वाले डिब्बे (B) के चमकदार सिरे के सामने पडे और इसका चमकदार तल, दूसरे डिब्बे (C) के कालिख लगे हुए सिरे की ओर रहे। ऐसा हो जाने पर, यू-नली मे द्रवो के तलो की माप ले लो। अब बीच वाले डिब्बे (A) मे खौलता हुआ पानी भर कर, फिर से द्रव के तलो की माप ले लो। दोनो मापो मे कोई फर्क नही आवेगा। यानी दोनो भागो मे तापमान एक जैसा बढा। इसके बाद बीच वाले डिब्बे (A) को 180° घुमा दो। इससे इसका चमकदार तल, और कालिख लगा हुआ तल, दूसरे डिब्बे के कालिख वाले तल की ओर आ जावेगा। इस बार माप लेने पर पता चलेगा कि यू-नली की एक भुजा मे द्रव का तल ऊँचा उठ गया है तो दूसरी मे उतना गिर गया है। अर्थात् ताप-विकिरण और ताप-अवशोषण क्षमतायें बराबर होती है। इसलिये अच्छे विकीर्णक, ताप के अच्छे अवशोषक भी होते है। यही कारण है कि कालिख लगे हुए तल, उन पर पडने वाले ताप का सबसे अधिक अवशोषण और विकिरण करते हैं। साथ ही तल की अवशोषण-क्षमता पर, उस पर पडने वाले ताप के तरग-लम्बान का भी प्रभाव पडता है। जो चीज, उस पर पडने

वाले ताप को पूरी तरह से सोख ले, उसको "पूर्णतः काला पिंड" (perfectly black body) कहते हैं।

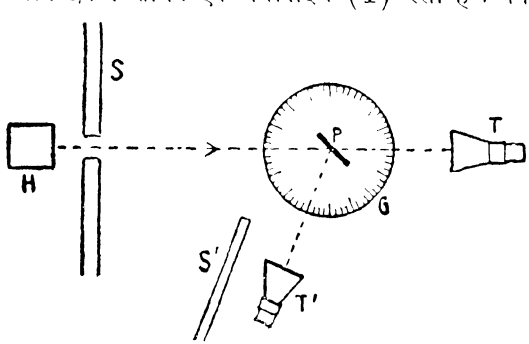
विभिन्न वस्तुओं की आपेक्षिक ताप-प्रेषणताओं की तुलना (Comparison of the Relative Heat Transparency of different materials)—ताप-स्रोत (heat source) से ताप, सीधे ही थर्मोपाइल पर डालकर विक्षेप की माप ले लो। इसके बाद, प्रायोगिक पदार्थ की बनी एक चादर (sheet) को ताप-स्रोत और थर्मोपाइल के बीच में रखकर विक्षेप की दुबारा माप लो। दोनों मापों का अनुपात (ratio) उस पदार्थ की 'ताप-प्रेषणता' बतलाता है। बराबर-बराबर मोटाई वाली लेकिन अलग-अलग पदार्थ की बनी हुई चादरें, रखकर प्रयोग करने पर इन सबके पदार्थों की प्रेषणताओं की तुलना की जा सकती है। अगर प्रायोगिक पदार्थ द्रव है, तो उसको पतली दीवारों वाले बर्तन में भरकर, चादर वाले स्थान पर रखकर प्रयोग किया जाता है।

प्रयोगों से पता चलता है कि 0·25 से० मी० मोटी चादर होने पर सेंधा नमक (rock-salt), उस पर पड़ने वाले (incident) ताप का 90% अंश अपने में से बाहर निकाल देता है, काँच 29% और फिटकरी का घोल सिर्फ 2% अंश। अर्थात सेंधे नमक की ताप-प्रेषणता ही सबसे अधिक होती है।

प्राय देखा गया है कि जैसे-जैसे वस्तु का तापमान बढ़ता जाता है, उसकी ताप-प्रेषणता भी बढ़ती जाती है। किसी भी पदार्थ की ताप-प्रेषणता उसमें से आर-पार होकर जाने वाले ताप और उस पर पड़ने वाले पूरे ताप के अनुपात को कहते हैं। 1 मि० मी० मोटी चादर पर पड़ने वाले ताप में से जितना अंश आर-पार चला जावे, वह उस तल का ताप-प्रेषणता-गुणक कहलाता है।

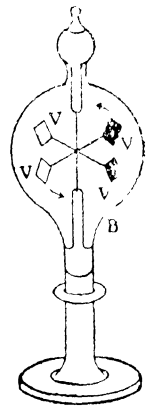
111. विकीर्ण ताप का परावर्त्तन (Reflection of Radiation)—किसी भी तल पर पड़ने वाले विकीर्ण ताप का जितना अंश परावर्त्तित हो जावे, उसको उस तल की 'परावर्त्तन-क्षमता कहते हैं।

चित्र 78 में एक लीजले-घनक (H) के सामने, छेद वाला पर्दा (S) रखा है और छेद के सामने एक थर्मोपाइल (T) रखी है। घनक से चलने वाला ताप, पर्दे के छेद में से होकर, सीधा थर्मोपाइल पर पड़ता है, जिससे उसके साथ लगे हुए गैलवनोमीटर में विक्षेप हो जाता है। अब प्रयोगिक तल (P) को एक गोल-पैमाने के केन्द्र पर रखकर, थर्मोपाइल (T) को (T') स्थिति पर ले आओ। ध्यान रहे कि पहली स्थिति में जितनी दूरी थर्मोपाइल और तल के केन्द्र के बीच थी, उतनी ही बदली हुई इस दूसरी



चित्र 78

स्थिति मे भी रहेगी। अब तल को गोल पैमाने पर इतना घुमाओ कि थर्मोपाइल के गैल-वनोमीटर मे विक्षेप की माप अधिकतम हो जावे। पहली और इस दूसरी माप का अनुपात, तल की परावर्त्तन-क्षमता होगी। प्रयोगो से पता चला है कि कालिख लगे हुए तल की परावर्त्तकता सबसे कम होती है, और पालिश किये हुए चमकीले तलो की सबसे ज्यादा। अर्थात् सुशोषक, कुपरावर्त्तक होते है। (Good absorbers are poor reflectors)।



चित्र 79

112 क्रुक्स का रेडियो-मीटर (Crook's Radio Meter)—इस यन्त्र मे काँच के एक खोखले गोलक (B) (चित्र-79) हवा निकालकर, कम दबाव (लगभग 1 मि० मि० पारा) पर थोडी सी गैस भर देते है। साथ ही भीतर, प्लेटीनम के बने हुए चार, बहुत ही हल्के पखे, बहुत ही हल्की डडियो पर लगाकर, उनके घूमने का प्रबन्ध किया होता है। चारो पखे, ऊपर-नीचे वाली चूलो (pivots) पर, बिना किसी घर्षण के, खडे अक्ष के चारो ओर गति कर सकते है। हर एक पखे के एक तल को कालिख लगाकर काला किया होता है, और दूसरा तल पालिश करके चमकाया हुआ होता है। पखे इस क्रम मे लगे होते है कि हर एक काले तल के सामने, समकोण पर, दूसरे पखे का चमकीला तल रहता है। जब इस यन्त्र को किसी ताप-स्रोत के सामने रखते है, तो पखे घूमने लगते है। जितना ही इस यन्त्र को ताप-स्रोत के पास लेते जाते है, उतना ही पखो के घूमने की गति भी बढती जाती है।

इस यत्र मे ताप-स्रोत के पास होने पर पखे क्यो घूमते है? गोलक के भीतर वाली गैस का दबाव बहुत कम होता है। इसमे अणुओ की सख्या बहुत कम होती है। इसी से अणुओ को घूमने-फिरने की काफी स्वतत्रता रहती है। जब विकीर्ण-ताप की किरण, इस यत्र पर पडती है, तो पखो के काले तल, उन पर पडने वाले ताप का काफी अश सोखकर स्वय गर्म हो जाते है। इसलिये गैस (या हवा) के वह अणु, जो इन गर्म तलो से टकराते है, ताप मिलने से, उनकी अपनी गतिज-ऊर्जा बढ जाती है। हर एक टक्कर मे, पखे पर लगने वाला प्रतिक्रिया-बल, उसको पीछे की ओर ढकेलता है। यह धक्का काले तलो पर, चमकदार तलो से अधिक होता है। हर एक धक्के पर पखो को हल्की सी चोट लगती है। यह चोटे, वैसे तो पखे के दोनो तलो पर लगती है। लेकिन काले तल पर इनकी तीव्रता अधिक होने से, काले तल की ओर ही घुमाव होता है। बीच वाली खडी अक्ष पर के दोनो सिरो पर, समकोणिक लगे हुए पखे, इस तरह विपरीत दिशा मे घूमने की कोशिश करते है, और इन पर एक 'बल-युग्म' (couple) लगने लगता है। इस बल-युग्म के कारण ही पखे घूमते है।

113. विकीर्ण ताप के व्यावहारिक उपयोग (Practical Observations on Thermal Radiation)—ऊपर के वर्णन से स्पष्ट है कि साधारणत ताप के अच्छे विकीर्णक, साथ ही अच्छे अवशोषक भी होते है। इसी तरह ताप के अच्छे प्रेषक, अच्छे परावर्त्तक भी होते है लेकिन इनमे ताप का विकिरण और अवशोषण बहुत ही

वैद्युतिक-विकीर्णको (electric radiators) के तल, पालिश करके चमकाये हुए रखे जाते है, क्योकि चमकीले तल ही सबसे अच्छे ताप-परावर्त्तक होते है। भट्टी मे कोयला झोकने वाले लोगो या आग बुझाने वाले लोगो के, धातु मे बने टोपो (steel helmets) को भी ऊपर से पालिश करके चमकाया हुआ रखते है, जिससे सामने वाले ताप-स्रोत से आने वाला ताप, परावर्त्तित हो जावे, और टोप को पहनने वाला उसकी गर्मी से बच जावे। इसी तरह जिस द्रव को काफी देर तक गर्म रखना होता है, उसको भरने वाले बर्तन की बाहरी सतह को खूब चमकीला कर देते है। कैलोरी-मीटर के बाहरी तल को, रेलगाडी के इजिन मे भाप की नलियो को खूब चमकाकर रखने का भी यही कारण है। इसके विपरीत कमरे को गर्म करने वाली पाइपो को बाहर से काला करके रखा जाता है। काले पत्थरो से बने बर्तन मे, धातु के चमकीले प्याले की अपेक्षा, गर्म द्रव, जल्दी से ठडे होते है। अच्छी तरह से पालिश किये हुए जूते और टोप, खुरदरे और मटमैले जूतो व टोपो से ज्यादा ठडे रहते है। खाना पकाने के बर्तनो की पेदी को बाहर से काला और खुरदरा रखने से वे ताप-स्रोत से ताप का अवशोषण अच्छी तरह कर लेते है, और ऐसे बर्तन मे रखा हुआ पदार्थ जल्दी पक जाता है।

किसी थर्मामीटर की घुंडी पर कालिख लगाकर धूप मे रख देने से इसकी माप, साधारण, माप से बढ जाती है, क्योकि काली घुडी ताप का अवशोषण करके गर्म हो जाती है।

सफेद कपडे, गर्मी मे बडे सुखद और ठडे लगते है, क्योकि वह उन पर पडने वाले सूर्य के ताप का काफी अश, परावर्त्तन द्वारा वापस कर देते है। इनसे बहुत थोडे ही अश का अवशोषण हो पाता है। लेकिन जाडो मे गहरे रग वाले कपडे ही पहिने जाते है, क्योकि यह सूर्य से आने वाले ताप का अधिकाश भाग सोखकर, हमको गर्म रखते है। सफेद पुता हुआ मकान, जाडो मे हल्का गर्म और गर्मी मे हल्का ठडा रहकर आराम देने वाला हो जाता है।

काँच-गृहो (Green Houses) मे, ताप के वरणात्मक (selective) अवशोषण का प्रयोग किया जाता है। 100° सै० ग्रे० से कम तापमान वाले ताप-स्रोत से आने वाली ताप-किरणे, काँच मे से आर-पार नही जा सकती। इसलिये सूर्य या जलती हुई आग से आने वाली ताप-किरणे, काँच-गृह के घेरे को भेदकर भीतर घुस तो जाती है, लेकिन घेरे के भीतर उगने वाली वनस्पतियो, पेड-पौधे, धूल इत्यादि का तापमान, 100° सै० ग्रे० से कम होने के कारण, उनके द्वारा विकीर्ण ताप, काँच के घेरे मे से बाहर नही निकल पाता। अन्दर फँसा हुआ यह ताप, वनस्पतियो इत्यादि को बढाने मे मदद देता है। साथ ही उनको ठड से भी बचा लेता है। आग की गर्मी बचाने के लिये 'काँच के पर्दे' (Glass Screens) काम मे लाये जाते है। वह भी इसी सिद्धान्त पर काम करते है, इनके भीतर से गर्मी पहुँचाने वाली लम्बी किरणे नही निकल पाती। लेकिन दीखने वाली छोटी किरणे आर-पार हो जाती है। इसलिये इनको लगाकर आग की लपटो के काफी पास तक खडा होकर काम किया जा सकता है।

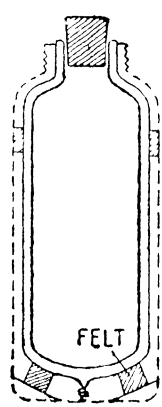
सूखी हवा मे से ताप-किरणे आर-पार चली जाती है। लेकिन नम हवा को यह नही भेद पाती। इसलिये जिस दिन हवा मे नमी होती है उस रोज अधिक गर्मी नही पडती। रात मे भी पृथ्वी का तापमान, कम होने मे, उसके द्वारा विकीर्ण ताप को नम हवा सोख लेती है, जिससे उसका तापमान थोडा बढ जाता है और रात भी अधिक ठडी नही होने पाती। यही कारण है कि सूखे प्रदेशो (जैसे सहारा का रेगिस्तान) मे, दिन मे काफी गर्मी और रात मे काफी सर्दी पडती है।

प्राय हम देखते है कि आसमान मे बादल रहने पर, रात को थोडी गर्मी लगने लगती है, लेकिन साफ आसमान होने पर ठडक लगती है। क्यो ? ताप-किरणे बादलो मे से आर-पार नही जा पाती। इसी से, साफ आसमान होने पर रात को गहरी और घनी ओस (dew) पडती है।

भट्टियो (furnaces) की ईटे, गैसीली मिट्टी की बनी होती है, क्योकि गैस, ताप की अच्छी विकीर्णक नही होती।

दिन मे सूर्य से आने वाले ताप को, पृथ्वी का धरातल, सोखकर रात मे उस का विकिरण कर देता है। गर्मी की ऋतु मे, दिन रात की अपेक्षा लम्बे होते है। इस लिये ताप का अवशोषण, विकिरण की अपेक्षा अधिक होता है। इसलिये हमको गर्मी लगती है। इसके विपरीत जाडो मे रात बडी और दिन छोटे होने से, ताप का विकिरण, अवशोषण से अधिक होता है, और हमको सर्दी लगती है।

114 थर्मोस-फ्लास्क (Thermos Flask)—ठडे या गर्म द्रव को कई घटे तक, वैसा ही बनाये रखने के लिये, उसको थर्मोस मे भरकर रखा जाता है। यह एक बोतल जैसी होती है। इसके भीतर एक दोहरी दीवार वाला काँच का बर्त्तन रखा होता है। काँच वाले इस बर्त्तन को नमदे, लकडी या धातु के बाहरी खोल (case) मे कमानी (स्प्रिग) पर बद करके रखा जाता है। बर्त्तन और उसके बाहरी खोल के बीच मे नमदा भरा रहता है। काँच वाले बर्त्तन की दोहरी दीवारो के बीच वाली जगह मे से हवा निकाली हुई होती है। साथ ही इस की भीतरी दीवार की ऊपरी सतह और बाहर वाली दीवार की भीतरी सतह (यानी आमने-सामने वाले तल) पर चाँदी की पालिश की हुई रहती है। बर्त्तन के मुँह पर डाट लगाई जा सकती है। ऊपर से चूडीदार ढकना लगाया जा सकता है।



चित्र 80

काँच की दोहरी दीवारो के बीच मे हवा न रहने से, सचालन और सवाहन, दोनो ही ढग से ताप, एक ओर से दूसरी ओर नही जाने पाता। दीवारो की भीतरी सतहो पर पालिश कर देने से, विकीर्ण-ताप, बाहर से भीतर को और भीतर वाला ताप बाहर की ओर नही जाने पाता। अपितु परावर्त्तित (reflected) होकर वापस लौट जाता है। इन सब उपायो के सम्मिलित प्रभाव से, बोतल मे भरे हुए द्रव का तापमान स्थिर रहता है। देवार-फ्लास्क की बनावट भी इसी तरह होती है। प्रो० देवार ने इसमे द्रवित गैस रखी थी।

115 विकिरण-द्वारा ताप-क्षय (Loss of Heat by Radiation)—प्रयोगों से पता चला है कि विकिरण से होने वाले ताप-क्षय (loss of heat) की दर (rate) पर इन बातों का असर पड़ता है—(i) चीज का अपना तापमान (ii) चीज की सतह का फैलाव और प्रकार (nature) और (iii) चीज के चारों ओर का तापमान।

न्यूटन का शीतलीभवन नियम (Newton's Law of Cooling)—किसी गर्म वस्तु के ठण्डे होने से होने वाले ताप-क्षय की दर, उसके अपने तापमान और चारों ओर के वातावरण के तापमान, इन दोनों के अन्तर के समानुपाती होती है। लेकिन इसके लिये यह तापमानान्तर (temperature difference) 10° सै. ग्रे. से ज्यादा नहीं होना चाहिये।

[अधिक विस्तार के लिए "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक विज्ञान" 'ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिए]।

द्रवों के ठंडे होने के 'न्यूटन-नियम' को, बाद में, **डुलाँग-पेटिट** और फिर **स्टीफैन** और **बोल्ट्जमैन** ने शोधा। इसके बाद, एक दूसरे ही दृष्टिकोण से, प्रो० ब्लैक ने इसी विषय पर दूसरा नियम बतलाया। 'स्टीफैन-बोल्ट्जमैन-नियम' (Stefan Boltzman's Law) के अनुसार विकीर्ण होने वाले ताप की दर (E), उस वस्तु के अपने ही 'परम-तापमान' (absolute temperature) (=T) के चतुर्थ घात (fourth power) ($=T^4$) के समानुपाती होती है। अर्थात्—

$$E = R.\ T^4 \qquad \ldots \quad (115\ 1)$$

जबकि R एक स्थिराक ($= 5\ 72\ \ 10^5$ अर्ग प्रति सैकिंड/वर्ग सै० मी० 1 डिग्री परम-तापमान) है।

वीन-नियम (Wien's Law) के अनुसार वस्तु के परम-तापमान (T) और सबसे ज्यादा विकिरण करने वाली ताप-किरण के तरंग-लम्बान ($=\lambda$ mox) का गुणनफल स्थिर रहता है। यानी—

$T\ \lambda_{mox}$ = स्थिर ($= B = 0\ 289$ सै० मी०/डिग्री परम तापमान) अर्थात् जैसे-जैसे वस्तु का तापमान बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे सगत, अधिकतम विकिरण करने वाली ताप-किरण का तरंग-लम्बान भी कम होता जाता है।

आंकिक उदाहरण

1. शुरू में एक पिंड का तापमान 80° सै० ग्रे० है। 64° सै० ग्रे० तक ठण्डा होने में इसको 5 मिनिट लगते हैं, और 52° सै० ग्रे० के लिए 10 मिनिट। पिंड के चारों ओर के वातावरण का कितना तापमान है? (गौहाटी *1954*)

(A body initially at 80°C cools to 64°C in 5 minutes and to 52° C. in 10 minutes. What is the temperature of its surroundings ?) (*Gauh. U.1954*)

उत्तर—मान लो चारो ओर के वातावरण का तापमान $\theta°$ सै० ग्रे० है, पिंड की मात्रा (M), और विशिष्ट-ताप (S) है। तो—

5 मिनिट मे पिंड द्वारा छोड़ा गया ताप $= M.\ S.\ (80-64)$

$= 16\ M.S.$

$\therefore$ ताप कम होने की दर $= \left(\frac{16\ M.\ S.}{60 \times 5}\right)$

इसी तरह दूसरी बार ताप कम होने की दर $= \frac{M.\ S.\ (80-52)}{60 \times 10}$

लेकिन पहली अवस्था ($64°$ तक ठंडा होने मे),

चारो ओर के वातावरण और पिंड के अपने तापमान मे औसत अन्तर

$= \left(\frac{80+64}{2} - \theta\right)$

इसी तरह, दूसरी बार ,, ,, ,, $= \left(\frac{80+52}{2} - \theta\right)$

न्यूटन के नियम से—

$$\frac{16\ M.\ S}{28\ M\ S} \frac{300}{600} = \left(\frac{72-\theta}{66-\theta}\right)$$

या $$\frac{8}{7} = \frac{72-\theta}{66-\theta}$$

अत: $$\theta = 24°\ \text{सै० ग्रे०}$$

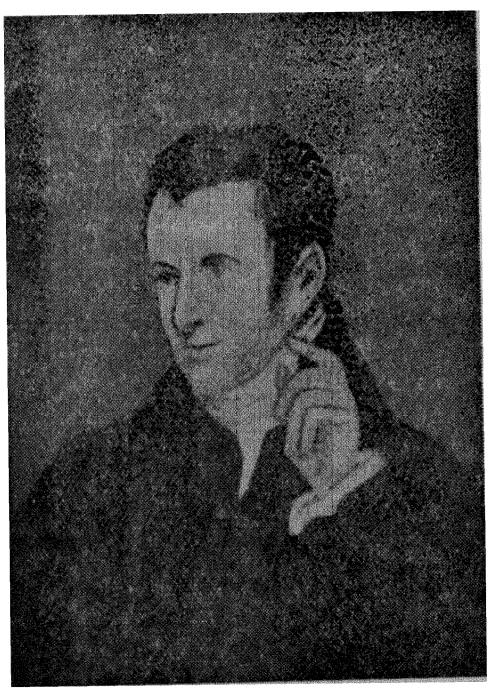
116. ताप के आदान-प्रदान का प्रीवोस्ट-सिद्धान्त (Prevosts Theory of Exchanges)—हवा से खाली किये हुए कोष्ठ मे एक गर्म पिंड लटका दो। हवा न होने से इस कोष्ठ की दीवारो मे ताप बाहर या भीतर आ-जा नही सकेगा। इस तरह इसके भीतर रखे हुए गर्म पिंड मे विकीर्ण होने वाले ताप का 'सचालन' और 'सवाहन' द्वारा क्षय नही हो पावेगा। पिंड से विकीर्ण ताप, कोष्ठ की भीतरी दीवारो पर पडता है। इससे उसका कुछ अश सोख लिया जाता है, बाकी वापिस पिंड को लौट जाता है। धीरे-धीरे कोष्ठ और पिंड के तापमान बराबर हो जाते है। तो क्या ताप-विकिरण बन्द हो गया? बिलकुल नही। ऐसा तो तभी होता जबकि पिंड के अणुओ की गति ही समाप्त हो जाती (यानी परम शून्याक—absolute zero)। इसलिये प्रत्येक वस्तु, सभी समय और तापमान पर ताप का विकिरण करती रहती है। विकीर्ण ताप की मात्रा पर, पिंड के तापमान और उसके तल का तो प्रभाव पडता है, लेकिन चारो ओर के वातावरण का कोई प्रभाव नही पडता। इन दोनो के बीच आपस मे ताप का आदान-प्रदान (exchange) होता रहता है। किसी वस्तु के ताप-मान का गिरना या बढना, इस बात पर निर्भर करता है कि वह वस्तु जितने ताप का विकिरण करती है, वह मात्रा, उसके द्वारा अवशोषित (absorbed) ताप से कम

है या अधिक। कम होने पर तापमान बढता है और अधिक होने पर घटता जाता है। यही ताप के आदान-प्रदान का "प्रीवोस्ट-सिद्धान्त" है।

आग के सामने खडा होने पर हम को गर्मी लगने लगती है, क्योंकि हमको प्रति सैकिड मिलने वाले ताप की मात्रा, उतने ही समय मे, हमारे शरीर द्वारा विकीर्ण ताप की मात्रा से अधिक होती है। इसी तरह हाथ मे बर्फ रखने पर ठडा लगता है, क्योंकि तब हमारे शरीर से विकीर्ण ताप की मात्रा, शरीर को मिलने वाले ताप मे से सोखे गये ताप की मात्रा से अधिक होती है। जब विकीर्ण ताप और अवशोषित ताप की मात्रायें बराबर हो जाती है, तो तापमान स्थिर हो जाता है। दूसरे शब्दों मे वस्तु की विकीर्णता और अवशोषकता बराबर होती है।

हमफ्रे डेवी (1778--1829)
(Humphry Davy)

आपका जन्म 'कार्नवाल' के 'पैनजॉन्स' नामक स्थान पर 17 दिसम्बर, 1778 ई० को हुआ। सोलह वर्ष की आयु मे ही आपके पिता की मृत्यु हो गई। इसलिए आपने, एक मैडिकल स्टोर मे काम सीखने के लिए नौकरी कर ली। इसी दुकान के एक कोने मे आपने अपनी छोटी सी प्रयोगशाला बना ली। किसी तरह आपको एक पुराना वायु-पप भी मिल गया। तब आपने हवा का दबाव बढाकर, होने वाली रासायनिक प्रक्रियाओ का अध्ययन करना शुरू किया। 20 वर्ष की आयु मे आपको डा० **थॉमस बेडोस** के निरीक्षण मे सहायक का पद मिल गया। यहाँ आपने 'नाइट्रस ऑक्साइड' पर खोज करके इसकी उपयोगिता पर खोज-पत्र लिखा। इस गैस से, किसी भी शरीर के भाग को सुन्न (insensitive) कर शल्य-क्रिया (surgery) की जा सकती है। बाद मे आपका ध्यान, वोल्टीय पुंज, लीडन-जॉर, बैटरी इत्यादि की ओर गया। इन्ही विषयो पर खोज करते-करते आपकी भेट **माइकेल फैराडे** से हुई। उन्होने आपकी प्रतिभा से प्रभावित होकर आपको अपना सहायक बना लिया। अपने इस योग्य शिष्य के



चित्र 81

साथ मिलकर उन्होने 'विद्युत-विश्लेषण' (electrolysis) पर काफी महत्त्वपूर्ण खोज-कार्य किया। इसी खोज के साथ-साथ 'अलकली-तत्त्वो' (जैसे पोटेशियम, सोडियम, मैग्नीशियम वगैरह) का पता लगा। इन्ही दिनो आपने खानो मे होने वाले विस्फोटो से, उनमे काम करने वालो की रक्षा के लिए एक लैप बनाया, जो कि खान मे विषैली गैस के निश्चित मात्रा से अधिक होने ही उसका पता बता देता है और लोग तुरन्त ही खान मे से बाहर निकल आते है। आपकी मृत्यु जिनेवा मे 29 मई, 1829 ई० को हुई।

सार (Summary)

ताप-सचार की विधिया—(i) संचालन (ii) सवाहन (iii) परिवाहन (या विकिरण)।

संचालन मे ताप का संचार, पदार्थ की एक पर्त से दूसरी पर्त को होता है। इस क्रिया मे वस्तु के कण अपना स्थान नहीं छोड़ते।

संवाहन की क्रिया मे ताप का संचार, एक जगह से दूसरी जगह तक, वस्तु के कणो द्वारा स्वयं चलकर होता है।

परिवाहन (विकिरण) द्वारा ताप-सचार में दोनो स्थानों के बीच किसी भी माध्यम की आवश्यकता नही होती। ताप, अदृश्य तरगो के रूप में एक जगह से दूसरी जगह तक पहुँचता है। सूर्य से मिलने वाला ताप हम तक इसी ढँग से आता है।

धातु की ताप-चालकता—उसकी बनी हुई इकाई क्षेत्र वाली चादर की एक इकाई मोटाई मे से प्रति सैकिड होकर जाने वाले ताप की मात्रा होती है। साथ ही चादर के दोनों सिरो (मोटाई मे) के बीच तापमानान्तर भी इकाई अश रहना चाहिए।

विकिरण के गुण—पदार्थ के अणु जब ताप पाकर कंपन करने लगते है, तो उससे वैद्युतिक-चुम्बकीय किरणे प्रसारित होने लगती है। कपनांक (frequency) की भिन्नता से इन किरणो के गुण भी अलग-अलग होते है। साधारणत इन किरणों के गुण, बहुत कुछ, प्रकाश की किरणों जैसे ही होते है। इसीलिए ताप-किरणों को 'अदृश्य-प्रकाश-किरणे' कहा जा सकता है।

अवशोषण और विकिरण क्षमताएँ—अलग-अलग तलों के लिए इनके मान भी अलग-अलग होते है। एक ही तल के लिए इन दोनों के मान बराबर होते है।

विकिरण द्वारा ताप-क्षय के तीन नियम है—(i) न्यूटन-नियम (ii) डुलॉग-पेटिट-नियम और (iii) स्टीफैन-नियम।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. ताप-सचार की विधियो बतलाकर, उनके उदाहरण दो और आपसी भेद स्पष्ट करो।
(गोहाटी 1951, 53 ; विश्व-भारती 1952 ; दिल्ली 1951 ; कलकत्ता 1939, 1956 , ढाका 1943 , उत्कल 1948)

2. (i) तापचालकता की परिभाषा दो। "काँच की चालकता 0 002 स० ग० स० इकाई है," इसका मतलब क्या है ?

(राजपूताना 1944, 46, 53 ; कलकत्ता 1952 ; मद्रास 1952, 51 ; यू० पी० बोर्ड 1954, 50 ; नागपुर 1952, 55 , गोहाटी 1955 , पंजाब 1951)

(ii) दो धातुओं की छड़ों की तापचालकताओं की तुलना करने के लिए किसी विधि का वर्णन करो। (आन्ध्र 1950 ; मद्रास 1951 ; अनामली 1950 , गोहाटी 1955 ; मैसूर 1951)

3 "ताप-चालकता" और "तापमापक-चालकता" (thermometric conductivity) में भेद स्पष्ट करो। (गोहाटी 1954 , बम्बई 1953, 54)

4. खिड़की के काँच का आकार (1 मीटर × 1/2 मीटर) है और यह 2 मि० मी० मोटा है। बाहर का तापमान 50 सैं० ग्रे० है। लेकिन कमरे के भीतर, 'वायु-शीतक' द्वारा, तापमान, 20° सैं० ग्रे० पर स्थिर रखा जा रहा है। अगर काँच की चालकता 0·002 स० ग० स० इकाई हो तो प्रति मिनिट काँच से कितना ताप भीतर घुसेगा ? (पूना 1954)

उत्तर—90,000 कैलोरी

5. दो अलग-अलग धातुओं की पत्तों से एक टुकड़ा बनाया गया है। इन धातुओं की ताप-चालकताएँ क्रमशः 0·2 और 0·3 है, और प्रत्येक पत्त की मोटाई 1 सैं० मी० है। अगर इस टुकड़े के एक तरफ तापमान 100° सैं० ग्रे० और दूसरी ओर तापमान 0° सैं० ग्रे० हो तो दोनों धातुओं के मिलने वाले तल का तापमान कितना होगा ? (नागपुर 1952)

उत्तर—40° सैं० ग्रे०

6. एक मीटर लम्बी और 15 मि० मी० मोटी, लोहे की पाइप में से, 100° सैं० ग्रे० पर भाप प्रवाहित की जाती है। पाइप का परिधि 10 सैं० मी० है। अगर 100 ग्राम प्रति मिनट की दर से 100° सैं० ग्रे० पर पानी इकट्ठा हो रहा है तो बाहर वाला हवा का कितना तापमान है ? लोहे का चालकता = 0 2, भाप का गुप्त-ताप = 540 कैलोरी/ग्राम) (यू० पी० बोर्ड 1954)

उत्तर—93 25° सें० ग्रे०

7. 40 सैं० मी० लम्बे छड़ (व्यास = 1 6 सैं० मी०) का एक सिरा, उबलते हुए पानी (तापमान 100 सैं० ग्रे०) में रखा है और दूसरा सिरा बर्फ में रखा है। अगर छड़ का धातु की चालकता 0 9 स० ग० स० इकाई हो तो प्रति मिनिट पिघलने वाले बर्फ की मात्रा मालूम करो, जबकि बर्फ का गलन-गुप्त-ताप, 80 कैलोरी /ग्राम होता है। (मैसूर 1951)

उत्तर—3·39 ग्राम

8. लोहे की तापचालकता 0·017 स० ग० स० इकाई है। लोहे की बनी दीवार के दोनों सिरों के तापमानों का अन्तर मालूम करो, जबकि दीवार की मोटाई 3 मैं० मी० है और ताप एक मिट्टी से 30,000 ताप-इकाई प्रतिमिनिट की दर से मिल रहा है। (राजपूताना 1944)

उत्तर—8 8° सैं० ग्रे०

9. बायलर की चादर 0 5 सैं० मी० मोटी है। गर्मी पाने वाली इसकी दीवारों का कुल क्षेत्रफल 2 वर्ग-मीटर है, तो प्रति मिनट भाप बनने वाले पानी की मात्रा बतलाओ, जबकि, बायलर की दीवार के भीतरी और बाहरी तलों के तापमान, क्रमशः 120° और 200° सैं० ग्रे० हैं. भाप का गुप्त-ताप 522 और लोहे की ताप-चालकता 0·164 है।

उत्तर—60·321 किलोग्राम

10 ताँबे की एक चकती (disc) की मोटाई 1 सैं० मी० है। इसका एक सिरा तो 100° सैं० ग्रे० के स्थायी मान पर है। दूसरे सिरे का तापमान, बहते पानी द्वारा 10° सैं० ग्रे० पर स्थिर रखा जाता है। इस ठण्डा करने वाले पानी को प्रति सैकिंड प्रति वर्ग सैं० मी० कितना ताप मिलता है, जबकि ताँबे की ताप-चालकता 0·91 स० ग० स० इकाई है ? (अनामली 1950)

उत्तर—81·9 कैलोरी।

11. धातु के एक बर्तन के तल का क्षेत्रफल 1 वर्ग-मीटर है। इसकी दीवारें 0·5 सैं० मी० मोटी है। बर्तन में पिघलता हुआ बर्फ भरकर 100° सैं० ग्रे० तापमान वाले पानी में रख दिया गया है। प्रति घण्टा पिघल जाने वाले बर्फ की मात्रा मालूम करो, जबकि धातु की ताप-चालकता 0·02 स० ग० स० इकाई और बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 कैलोरी प्रति ग्राम है। (उत्कल 1958)

उत्तर—1800 किलोग्राम

12. काच से बनी खिड़की का शीशा 3/16 इंच मोटा और 15 वर्ग-फुट क्षेत्रफल वाला है। कमरे के भीतर का तापमान 10° फैरेनहाइट और बाहर हवा का तापमान 60° फैरेनहाइट है। काच की चालकता 1.4×10^{-3} स० ग० स० इकाई है। खिड़की के काच में से होकर आने वाले ताप को 2 घण्टे में कितनी मात्रा भीतर आ जावेगी? (कलकत्ता 1946)

उत्तर—81,93,024 कैलोरी

13 लटकते हुए, काच के एक घनक को, चारों ओर से बर्फ से ढक दिया गया है। घनक के प्रत्येक पार्श्व का क्षेत्रफल 144 वर्ग सैं० मी० है और इसकी काच की दीवारों की मोटाई 0·8 सैं० मी० है। एक घण्टे में कितना बर्फ पिघल जावेगा, जबकि कमरे का तापमान 20° सैं० ग्रे०, काच की चालकता 0·0025 स० ग० स० इकाई और बर्फ का गलन-गुप्त-ताप 80 कैलोरी/ग्राम है? (गोहाटी 1954)

उत्तर—2430 ग्राम

14. भट्टी के ऊपर रखे हुए लोहे के बर्तन में पानी उबाला जा रहा है। ग्राम प्रति सैकिंड में, भाप बनने वाले पानी की दर मालूम करो (दूसरे कारणों से होने वाले ताप-क्षय को नगण्य मान लो)। भट्टी के साथ, बर्तन का 250 वर्ग सैं० मी० क्षेत्र स्पर्श में है, और लोहे की चादर की मोटाई 5 मि० मीटर है। भाप का गुप्त-ताप 536 कैलोरी ग्राम, भट्टी का तामान 400° सैं० ग्रे०, लोहे की चालकता 0·2 स० ग० स० इकाई और पानी का वाष्पांक 100° स० ग्रे० है। (पटना, 1952)

उत्तर—56 ग्राम/सैकिंड (लगभग)

15. बॉयलर की दीवारों के तल का कुल क्षेत्रफल 2 वर्ग-मीटर है। इसके दोनों ओर के तापमान क्रमशः 120° और 108° सैं० ग्रे० है। दीवार का धातु (लोहा) का चालकता 0·14 है और मोटाई 8 मि० मी०। भाप के गुप्त ताप का मान 525 कैलोरी प्रतिग्राम है। उबलना शुरू होने के बाद, प्रतिमिनिट भाप बनने वाले पानी की मात्रा ज्ञात करो। (मद्रास 1950)

उत्तर—16·8 किलोग्राम

16 काँच के एक खोखले गोले का अर्ध व्यास 16 सें० मी० है। इसमें 100° सैं० ग्रे० तापमान पर पानी भरकर, गोले को पिघलते हुए बर्फ में दबा दिया गया है। गोले के भीतर पैदा होने वाले ताप की दर बतलाओ, जबकि पानी का तापमान स्थिर रखा जाता है। काँच की मोटाई 1 मि० मी० और ताप-चालकता 0·0025 है। (राजपूताना 1951)

उत्तर—615·4 कैलोरी/सैकिंड

17. धातु के छड़ को एक सिरे पर गर्म किया जाता है। इसके दूसरे सिरे तक पहुँचने वाले ताप की मात्रा का नियन्त्रण करने वाली बातों को समझाओ। तापचालकता का क्या अर्थ है?

(अजमेर 1953, पटना 1925, उत्कल 1951, राजपूताना 1942, 49, 53, 55)

18. पतली दीवारों वाली ताँबे की पाइप (व्यास=6 सैं० मी०), 0° सैं० ग्रे० तापमान वाली जल-कुंडी (water bath) में से होकर जाती है। इस पाइप में से, (−10)° सें० ग्रे० पर नमकीन पानी प्रवाहित हो रहा है। इससे नली के चारों ओर 5 सैं० मी० मोटी बर्फ की तह बन गई है। अगली ½ मि० मि० मोटी पर्त को बनने में कितनी देर लगेगी, जब कि बर्फ की चालकता=0·005 स० ग० स० इकाई, उसका गलन गुप्त-ताप 80 कैलोरी प्रति ग्राम और 1 घन सें० मी० पानी बर्फ बनने पर 1·09 घन सैं० मी० स्थान लेता है। (गोहाटी 1951)

उत्तर—533·8 सैकिंड

19. कमरे को गर्म करनेवाले एक यन्त्र में पतली दीवार वाली ताँबे की 10 नलियाँ लगी हैं। हर एक नली की लम्बाई 1 मीटर और व्यास 5 मैं० मी० है। अगर इन नलियों में लगातार प्रवाहित होने वाले पानी का तापमान 70° मैं० ग्रे० हो तो प्रति घंटा विकीर्ण होने वाले ताप की मात्रा, कैलोरी में मालूम करो, जब कि कमरे का औसत तापमान 15° मैं० ग्रे० और ताँबे की चालकता 4×10^{-6} स० ग० स० इकाई है। (राजपूताना 1948)

उत्तर – 12434·4 कैलोरी

20. प्रयोग द्वारा सिद्ध करो कि अच्छे अवशोषक पदार्थ, ताप के अच्छे विकीर्णक भी होते हैं। (कलकत्ता 1925, प्रयाग 1927)

21 किसी तल की अवशोषण और विकिरण चमताओं से क्या तात्पर्य है? दो तलों के लिये इनकी तुलना किस तरह करोगे? (गोहाटी 1952, बम्बई 1951, नागपुर 1951, 54)

22. आपको दो सादा पारे वाले थर्मामीटर दिये गये हैं। इनमें से एक की घुंडी को कालिख लगाकर काला कर लेते हैं। इन दोनों थर्मामीटरों की मापों की तुलना इन अवस्थाओं में करो—

(i) नम हवा और बादलों से भरी रात में (ii) सूखी हवा और साफ आसमान में, जाड़े के दिन और (iii) धूप में। (इलाहाबाद 1929, पंजाब 1932, राजपूताना 1952)

23 शीतलाभवन के न्यूटन-नियम की सहायता से किसी द्रव का विशिष्ट-ताप किस तरह मालूम करोगे? यह विधि किन-किन परिस्थितियों में शुद्ध फल देती है?

(अजमेर 1953; पंजाब 1953, यू० पी० बोर्ड 1951)

24 शीतलाभवन के न्यूटन नियम को बतलाकर, किसी तल की विकिरण-चमता का अर्थ समझाओ। (राजपूताना 1950, 53, ढाका 1941, आन्ध्र 1952, गोहाटी 1954, बम्बई 1953)

25. इन पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये—

(i) लीजले घनक (कलकत्ता 1948)

(ii) डेवी का सुरक्षा-लैंप (कलकत्ता 1928)

(iii) स्थली और समुद्री समीर (उत्कल 1954)

(iv) ताप-किरणों के गुण (उत्कल 1954, पटना 1950, पंजाब 1952)

(v) थर्मोस फ्लास्क (कलकत्ता 1950; पंजाब 1951, गोहाटी 1953, दिल्ली 1951, बम्बई 1952, आन्ध्र 1952)

(vi) रेडियो-माइक्रोमीटर (राजपूताना 1952)

26. नीचे लिखी घटनाओं का स्पष्टीकरण दीजिये—

(i) पतले कागज के बर्तन में भी पानी उबाला जा सकता है। (विश्व-भारती 1955)

(ii) बुन्सन-उबालक का लौ के ऊपर, तार की जाली रख देने पर वह ऊपर नहीं आ पाता। (विश्व-भारती 1954)

(iii) रेलवे-इंजन की पाइपें, कैलोरीमीटर की बाहरी सतह काफी चमकदार रखी जाती है जब कि पकाने वाले बर्तनों की पेंदी को काला करके रखा जाता है।

27. ताप के आदान-प्रदान का नियन्त्रण करने वाले प्रीवोस्ट-सिद्धान्त का वर्णन करो। (राजपूताना 1948, गोहाटी 1951, 52, 55, पंजाब 1950, 53, बम्बई 1952, 55, अजमेर 1952)

अध्याय 9

ताप का यांत्रिक तुल्यांक

(Mechanical Equivalent of Heat)

117. ताप व कार्य—पुराने जमाने मे आग पैदा करने के लिए एक कडी लकडी के सिरे को नुकीला करके उसे बर्मे की तरह मुलायम लकडी मे बने छेद मे घुमाकर, उन दोनो के बीच के घर्षण से आग पैदा की जाती थी। जब एक कडी धातु को किसी घूमते हुए पत्थर पर रगडते है तो उससे चिनगारियाँ निकलने लगती है। इसी तरह लोहे के टुकडे व चकमक पत्थर (Flint-stone) की टक्कर से भी चिनगारियाँ निकलती है। दियासलाई को रगडने पर आग लग जाती है। आरी (saw), रेती (file) या बर्मी (drill) वगैरह मे काम करते-करते भी, वे काफी गरम हो जाते है। इन सभी उदाहरणो से स्पष्ट हो जाता है कि **घर्षण से ताप उत्पन्न होता है।**

इसी तरह जब किसी वस्तु की गति को, रोक लगाकर खत्म करते है तो वस्तु की गतिज-ऊर्जा, ताप-ऊर्जा मे बदल जाती है। ऊपर से कुछ ऊँचाई पर से गिरता हुआ पिंड जब पृथ्वी से जाकर टकराता है, तो उसका तापमान बढ जाता है। लोहे के टुकडे पर जब हथौडे से बार-बार चोटे लगाई जाती है, तो टुकडा गर्म हो जाता है। घोडे के खुरो मे लगे नाल (horse-shoes) जब पक्की सडक से रगड खाते है तो उनसे चिनगारियाँ निकलने लगती है। दियासलाई की डिबिया (tinder-box) के कार्य करने का सिद्धात, रगडकर आग पैदा करने का अच्छा उदाहरण है। साइकिल मे हवा भरते समय, हवा के दबाव से, पंप का नलका गर्म हो जाता है। इन सब उदाहरणो से प्रकट होता है कि यात्रिक कार्य से भी ताप उत्पन्न होता है। इसी तरह ताप से यात्रिक-शक्ति प्राप्त की जा सकती है। भाप के इजिन और अन्य तापीय इजिनो मे यही क्रिया होती है। यह सब इस बात का द्योतक है कि किये गये कार्य और उससे उत्पन्न ताप के बीच कुछ-न-कुछ सम्बन्ध अवश्य होता है।

118. ताप का रूप—ताप का रूप स्पष्ट करने के लिये कई सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया गया है। इसमे से मुख्य-मुख्य सिद्धान्तो का सक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है।

कैलोरी सिद्धान्त—इस सिद्धान्त के अनुसार ताप को एक प्रकार का अदृश्य और तरल पदार्थ माना गया है। इस तरल का नाम "कैलोरी" रखा गया। यह तरल सभी भौतिक पदार्थों के अन्दर भरा रहता है। अधिक तापमान वाले पदार्थ से कम तापमान वाले पदार्थ की ओर ताप-प्रवाह होता है। 'कैलोरी' न तो उत्पन्न हो सकता है और न समाप्त हो सकता है। अत. प्रत्येक प्रणाली मे ताप की कुल मात्रा स्थिर रहती है। एक प्रणाली द्वारा छोडा गया ताप, दूसरी प्रणाली द्वारा ले लिया जाता

है। घर्षण अथवा दाब के कारण, ताप का उत्पन्न होना, तरल "कैलोरी" का उस पदार्थ मे से निचुडकर बाहर निकलने मे होता है; ठीक उसी भाँति जैसे कि स्पज मे से पानी का निचोडना। निकला हुआ कैलोरी (ताप), तुरन्त ही, क्रिया मे भाग लेने वाली वस्तुओ द्वारा ले लिया जाता है, और इससे उनका तापमान बढ जाता है।

रूमफोर्ड का प्रयोग—म्यूनिक नगर मे कूएँ खोदने के कार्य का निरीक्षण करते समय, **काउंट रूमफोर्ड** ने देखा कि कार्य करते हुए बर्मी और काटने वाले दूसरे औजारो, दोनो ही का तापमान काफी बढ जाता है। इतनी अधिक मात्रा मे ताप का उत्पन्न होना, वस्तु की इतनी थोडी मात्रा की ताप-ग्राहिता बढ जाने से तो असभव था। प्रयोग करने पर पता चला कि धातु का विशिष्ट-ताप, बदलता नही चाहे वह अधिक मात्रा मे हो या चाहे चूरे के रूप मे, थोडे से ही परिमाण मे हो। साथ ही घर्षण द्वारा उत्पन्न होने वाले ताप की मात्रा की कोई सीमा ही नही है। अत: उन्होने कहा कि ताप **एक भौतिक पदार्थ** है और इसकी उत्पन्न मात्रा की कोई सीमा नही होती। दूसरे शब्दो मे **ताप एक प्रकार की गति है। सर हमफ्रे डैवी** ने भी बाद मे, अपने स्वतन्त्र प्रयोगो द्वारा इसी बात का प्रतिपादन किया।

गतिज ऊर्जा का सिद्धान्त (Dynamic Energy Theory)—इस सिद्धान्त के अनुसार भी ताप, गति (motion) के कारण ही उत्पन्न होता है। लेकिन प्रश्न है—किसकी गति ? वस्तु के अणु लगातार तेज गति करते रहते है। इन अणुओ की गतिज-ऊर्जा ही, इन अणुओ से मिलकर बनने वाले पदार्थ की तापिक-ऊर्जा का स्रोत बन जाती है। ठोस पदार्थो मे ऊर्जा का कुछ अश, स्थितिज-ऊर्जा के रूप मे भी रहता है, जिसका कारण अणुओ का आपसी आकर्षण होता है। वस्तु को गर्म करने से, अणुओ का वेग बढ जाता है, जिससे उनकी गतिज-ऊर्जा (अत तापिक-ऊर्जा) बढ जाती है।

119. ताप का यान्त्रिक तुल्यांक (Mechanical Equivalent of Heat)—'यान्त्रिक कार्य' से ताप उत्पन्न होना ही, इन दोनो के बीच किसी सम्बन्ध का होना बतलाता है। यानी "**ताप की निश्चित मात्रा को उत्पन्न करने के लिये, निश्चित मात्रा में कार्य करना पड़ेगा।**" इस नियम को "ताप के गतिज सिद्धान्त का पहला नियम" (First law of Thremo-dynamics)—कहते है। प्रो० मैक्सवल (Maxwell) ने इस नियम का प्रतिपादन इस तरह किया—

"जब कुछ काम करने से ताप उत्पन्न होता है, तो किया गया कार्य (W) यान्त्रिक रूप से, उत्पन्न हुए ताप (H) के बराबर होता है गणित के शब्दो मे

$$(W/H) = J \quad \text{या} \quad W = JH \qquad (119{\cdot}1)$$

जब कि 'J' एक स्थिराक है, जिसको ताप का यान्त्रिक तुल्याक या **'जूल-तुल्यांक'** कहते है। ध्यान रहे कि इस क्रिया मे काम करते हुए उसका कुछ भी अश बेकार होता हुआ नही, माना जाता। दूसरे शब्दो मे, 'जूल-तुल्याक' ताप की इकाई मात्रा को उत्पन्न करने के लिये आवश्यक कार्य होता है। और इसको इसके आविष्कर्त्ता के नाम पर 'J' अक्षर से व्यक्त करते है।

120. 'J' का मान निकालने की विधियाँ—

(1) ऊपर से नीचे गिरने वाली विधि (Vertical Fall Method)—करीब 50 सैं० मी० लम्बी एक नली के दोनो सिरो को गद्दीदार डाटो से बन्द कर दो। नली के भीतर सीसे के कुछ छर्रे भरे रहने चाहिये। छर्रों सहित, बन्द नली को सीधा खडा करने पर यह छर्रे, नीचे वाली डाट पर इकट्ठे हो जायेंगे। अब एक साथ ही नली को उल्टा कर दो यानी नीचे वाला सिरा ऊपर और ऊपर वाला सिरा नीचे आ जावेगा। इस क्रिया मे सीसे के छर्रे भी, नली के भीतर एक सिरे से दूसरे सिरे तक गिरेंगे। अगर यह क्रिया लगातार कई बार की जावेगी तो कुछ देर बाद आप देखोगे कि छर्रों का तापमान थोडा बढ गया है। क्योंकि ऊपर से नीचे गिरते हुए छर्रे कुछ काम करते है। यही काम तापिक-ऊर्जा मे बदलकर उनका तापमान बढा देता है। ध्यान रहे कि इस प्रयोग मे हम यह मान लेते है कि उत्पन्न होने वाले ताप का क्षय बिलकुल नही होता। लेकिन व्यवहारत: कांच की नली और डाटे (stoppers) पैदा हुए ताप का कुछ न कुछ अश तो सोख ही लेते है। इसलिये इस विधि से 'J' का सिर्फ लगभग (approximate) मान ही प्राप्त होता है, बिलकुल शुद्ध नही।

मान लो कि सीसे के छर्रों की मात्रा (m) है और वे प्रत्येक बार (h) ऊँचाई पर से गिरते है। प्रत्येक बार ऊपर से नीचे गिरने मे होने वाला ऊर्जा-क्षय ($m.g.h.$) होता है। यदि छर्रों को (n) बार, ऊपर से नीचे गिराया जाता है तो स्थितिज-ऊर्जा का क्षय ($m\,n\,g\,h$) हुआ। अत: छर्रों द्वारा इस क्रिया मे इतना ही कार्य हुआ। यदि सीसे का विशिष्ट-ताप (s) और तापमान मे बढाव (θ) है, तो छर्रों द्वारा लिया गया ताप ($m\,s\,\theta$) हुआ। अत.—

$$J = \frac{\text{किया गया कार्य}}{\text{उत्पन्न हुआ ताप}} = \frac{m\,n\,g\,h}{m\,s\,\theta} = \frac{n\,g\,h}{s\,\theta} \quad \ldots \quad \ldots \quad (120{\cdot}1)$$

हमको पता है कि छर्रों की स्थितिज-ऊर्जा मे ही गतिज-ऊर्जा प्राप्त होती है, और फिर यही गतिज-ऊर्जा, डाट से टक्कर खाने पर ताप मे बदल जाती है। यदि टक्कर के समय, छर्रों का औसत वेग (v) है, तो उनकी गतिज ऊर्जा ($\frac{1}{2}\,m.v.^2$) = ($m.g\,h.$)। अत: (n) टक्करो मे गतिज-ऊर्जा ($\frac{1}{2}m.n.v.^2$) होगी। तब—

$$J = \left(\frac{\text{किया गया कार्य}}{\text{उत्पन्न हुआ ताप}}\right) = \left(\frac{\frac{1}{2}m.n\,v^2}{m\,s.\theta}\right) = (n.v.^2/_2s\theta) \quad \ldots \quad (117{\cdot}2)$$

आंकिक उदाहरण

1. एक मीटर लम्बी, गत्ते की बनी बद नली के भीतर सीसे के कुछ छर्रे पडे है। नली को एक साथ ही झटके से उल्टा कर देने पर यह छर्रे, नली के एक सिरे से दूसरे सिरे तक गिरते है। यह क्रिया 100 बार की जाती है। अगर छर्रों की धातु का वि० ताप 0·03 हो तो इनका तापमान कितना बढ जावेगा ?

(A closed card-board tube, 1 metre long contains some lead shots at one end and the tube is quickly inverted, so that the

shots fall through the whole length of the tube. This operation is repeated 100 times. Find the rise of temperature if the sp. ht. of lead is 0·03.)

उत्तर—मान लो सीसे के छर्रों की मात्रा (m) ग्राम है। नली को एक बार उल्टा करने से स्थितिज-ऊर्जा मे ($m.g.\ 100$) अर्ग की कमी होगी। इसलिये 100 बार उलटने मे ($m \times 980 \times 100^2$) अर्ग कमी होगी।

लेकिन छर्रों मे पैदा होने वाला ताप $= m.\ (0{\cdot}03)\theta$

जबकि 'θ', तापमान का बढाव है। अत जूल-सिद्धान्त मे—

$$[m\ 980 \times 100^2] = [(4{\cdot}2 \times 10^7)\ m. \times 0{\cdot}03 \times \theta]$$

या $\theta = 7{\cdot}8°$ सै० ग्रे०

2. एक वस्तु 837 मीटर की ऊँचाई से गिरती है। अगर यह मान ले कि गिरने मे कम होने वाली सारी ऊर्जा, ताप मे बदल जाती है तो वस्तु का तापमान कितना बढ जावेगा ? वस्तु का वि० ताप 0·049 कैलोरी/ग्राम और $J = 4{\cdot}185 \times 10^7$ अर्ग कैलोरी है, जबकि $g = 980$ सै० मी०/सैकिड^2। (पूना *1953*)

(A body falls through a height of 837 metres Assuming that all the energy of fall is converted into heat, find out the rise of temperature of the body, if the specific-heat of the body is 0·049 cals./gm. $J = 4{\cdot}185 \times 10^7$ ergs/calorie, $g = 980$ cm/sec^2)

(*Poona U. 1953*)

उत्तर—क्योकि गिरने मे प्राप्त होने वाली ऊर्जा, वस्तु की स्थितिज-ऊर्जा मे कमी के बराबर होगी, इसलिये

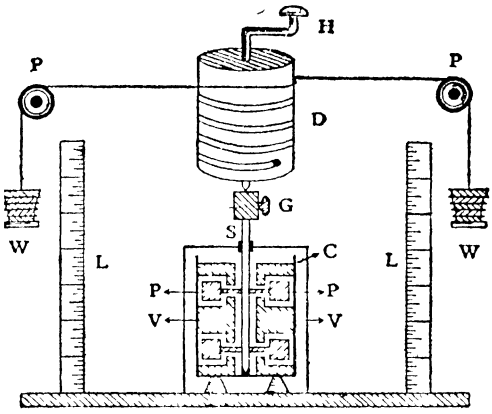
$\frac{1}{2}\ mv^2 = m.g\ h. =$ किया गया कार्य $=$ J.H., जबकि H $=$ पैदा हुआ ताप

$\therefore\ m.g\ h = J(m \times 0{\cdot}049 \times t)$, जबकि t, $=$ तापमान मे बढाव

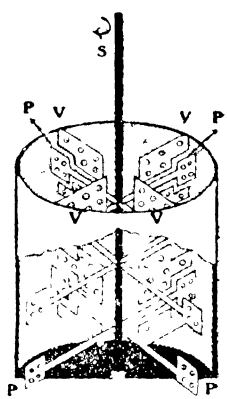
अत $t = \dfrac{g\ h}{J\ 0{\cdot}049} = \dfrac{980 \times (837 \times 100)}{(4{\cdot}185 \times 10^7)\ (0{\cdot}049)} = 40°$ सै० ग्रे०.

2 जूल-विधि (Joul's Method)—डा० जूल द्वारा काम मे लाये गये यत्र को चित्र 82 मे दिखलाया गया है। इसमे ताँबे का एक कैलोरी मीटर (C) लेकर, उसके भीतर एक मथक (stirrer) (S) डाला होता है। जब मथक को घुमाकर, पानी को मथते है तो इन दोनो के बीच होने वाले घर्षण से ताप उत्पन्न होता है, जो कि कैलोरीमीटर मे भरे हुए पानी का तापमान बढा देता है। कैलोरीमीटर के भीतर वाला स्थान चार भागो मे बँटा होता है। इसके लिये, चार पतली चादरे, कैलोरीमीटर की भीतरी सतह के समकोणिक जडी होती है। इन चारो चादरो (vanes) (V, V) (चित्र 83) मे बीच मे केन्द्रवत् छेद बने होते है। इसी तरह मथक के सीधे छड मे भी चार पखे (P, P) एक ओर और चार दूसरी ओर, यानी कुल आठ पखे जडे रहते है। इस तरह कैलोरीमीटर के हर एक भाग मे दो-दो पखे (P, P) आ जाते है। कैलोरीमीटर मे पडा हुआ पानी इन्ही पखो और चादरो के बीच मे रहता

है। जब मंथक को घुमाते हैं तो हर एक भाग में भरा हुआ पानी उतनी ही जगह में टकराकर मथ उठता है। पानी और पखों के बीच घर्षण होने से ताप उत्पन्न होता है। मथक के छड़ (S) को, एक पैंच (G) द्वारा, ऊपर वाले बेलन (D) से जोड़ा जा सकता है।



चित्र 82



चित्र 83

म
बने हुए

इस रू बेलन (D) को घुमाने के लिये, इस पर दो रस्सियाँ एक ही दिशा मे लिपटी भी हैं, और रस्सी के दोनो सिरो को घिरियो (P, P) (चित्र 82) पर से ले जाकर, सिरे पर बराबर-बराबर मात्रा वाले बाट (weights) बाँधकर लटका देते है। जब बीच वाला हत्था (H) घुमाया जाता है तो, बेलन (D) के साथ-साथ, बाट भी ऊपर-नीचे उठते गिरते है। गिरने की ऊँचाई की माप लेने के लिये यत्र के दोनो ओर, दो खडे पैमाने (L, L) लगे रहते है। जब बीच वाला पैंच (G) निकाल लेते है, तो बाट नीचे गिरते है, और उनके साथ-साथ, डोरियों के तनाव (tension) से बेलन मंथक सहित घूमने लगता है। मथक के घूमने से कैलोरीमीटर का पानी मथ जाता है। यह क्रिया बार-बार दोहराने से पानी की गतिज-ऊर्जा ताप मे बदल जाती है; और इस पानी का तापमान बढ जाता है। इस प्रयोग मे यह ध्यान रखा जाता है कि जब-जब बाटों को डोरियों से ऊपर उठाया जावे, कैलोरीमीटर, बेलन से अलग रहे, और साथ ही नीचे गिरने का समय भी कम से कम रहे। मान लो प्रयोग करके मापें इस तरह आती हैं—

प्रत्येक बाट की मात्रा	$=M$ ग्राम
प्रत्येक बाट के गिरने की ऊँचाई	$=h$ सैं० मी०
गिरने की संख्या	$=n$
(कैलोरीमीटर + मंथक) की धातु का जल-तुल्यांक	$=m$ ग्राम
पानी का प्रारभिक तापमान	$=t_1°$ सैं० ग्रे०
पानी का अन्तिम तापमान	$=t_2°$ सैं० ग्रे०
प्रत्येक बाट का पृथ्वी तक पहुँचने पर वेग	$=v$ सैं० मी० प्रति सैकिंड

$\therefore$ बाटों की स्थितिज-ऊर्जा $= (2Mgh)$ अर्ग

पृथ्वी पर टकराने से पहले बाटो की गतिज-ऊर्जा $= 2(\frac{1}{2} M v^2)$ अर्ग

अतः मथक (रैंही) को घुमाने मे लगने वाली ऊर्जा $= (2Mgh - Mv^2)$ अर्ग

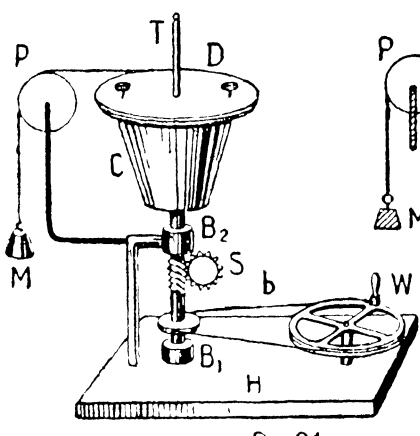
$\therefore$ n बार गिरने मे किया गया कार्य (अर्थात् काम मे आने वाली ऊर्जा) $= W$
$= (2\,M.\,g.h - M\,v^2)$ अर्ग

उत्पन्न हुआ ताप $= H = m\,(t_2 - t_1)$ कैलोरी

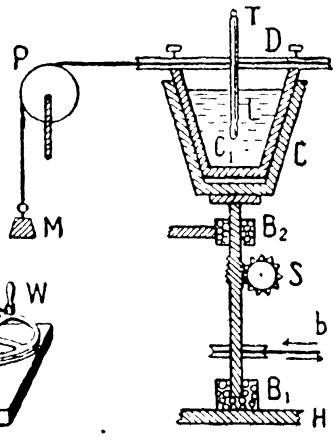
अतः $J = \frac{W}{H} = \frac{(2M\,g.h. - M\,J^2)}{m(t_2 - t_1)}$ अर्ग प्रति कैलोरी ... (120 3)

बाद मे इस विधि मे सचालन व सवाहन द्वारा होने वाले ताप-क्षय को कम करने का प्रबन्ध किया गया। साथ ही कुछ अन्य सावधानियाँ भी ली गईं। घिरियों के घर्षण को अल्पतम रखा गया। मथक के घूमने से होने वाले शब्द के रूप मे होने वाले शक्तिक्षय को भी गणन करते समय ध्यान मे रखा गया। फिर भी प्रो० जूल ने प्रो० रैंनू के कहने पर पानी का विशिष्ट-ताप, सभी तापमानों पर स्थिर माना। साथ ही उन्होने अपने थर्मामीटर को प्रमाणभूत गैस थर्मामीटर से तुलना करके ठीक नही किया। अत· कैलोरीमीटर के पानी का तापमान बहुत ही थोडा बढने के कारण इस विधि मे अशुद्धि की सभावना अधिक रही। साथ ही हर बार मथक अलग करके और डोरियो को लपेटकर बाटो को ऊपर उठाने मे समय तो है। इससे पूरे प्रयोग मे काफी समय लग जाता था।

कई बार प्रयोग करके प्रो० जूल ने ताप के यान्त्रिक तुल्यांक (J) का 773 फुट-पौड कार्य प्रति ब्रिटिश-ताप-इकाई, ज्ञात किया। अर्थात् 1 पाउण्ड पानी (3)



चित्र 84



चित्र 85

मात्रा का तापक्रम 1° फैरेनहाइट बढ़ाने के लिये आवश्यक ताप उत्पन्न करने के लिये, 773 फुट-पौड कार्य करना पड़ेगा। उपकरण का थोड़ा शोधन करके, जूल ने बाद मे J का मान 778 फुट-पौंड प्रति ब्रिटिश ताप इकाई अथवा $4{\cdot}16 \times 10^7$ अर्ग प्रति कैलोरी पाया।

सर्ल-विधि (Searl's Friction Cone Method)—इस विधि से प्रयोगशाला मे ही 'J' का मान निकाला जाता है। खास बात यह है कि इसमे घर्षण, द्रव मे न होकर, धातु के तलो के बीच होता है। इसलिये उत्पन्न होने वाले ताप की मात्रा अधिक होती है। इसके लिये पीतल के छोटे गिलासो के आकार वाले, दो खोखले और काटे हुए शकु (truncated cones) (C, C_1) (चित्र 85), एक दूसरे मे फँस जाने वाले लिये जाते है। भीतरी गिलास (C_1) के ऊपर, लकडी की एक चकती (D) कसी जा सकती है। बाहरी गिलास (C) को, पहिये (W, S) की सहायता से, यत्र की मुख्य-अक्ष (गिलास से) के केन्द्र पर से ऊर्ध्वतल मे जाने वाली रेखा पर घुमाया जा सकता है। दोनो पहिये आपस मे चमडे की एक पेटी (belt) से जुडे रहते है। चक्करो (revolutions) की सख्या मापने के लिये, प्रधान छड पर कुछ चूडियाँ (threads) काटकर, उनसे एक दाँतेदार चक्र (S) कँसा देते है। बाहरी गिलास (C) को घुमाने वाली छड, दो 'बाल-बियरिगो' (B_1 B) पर रुका रहता है। इस प्रबन्ध से गति आसान हो जाती है। ऊपर वाले चक्र (D) की परिधि पर बनी हुई खाँच (groove) मे डोरी लपेटकर, उसको घिर्री (P) पर से ले जाकर, बाट से बाँधकर लटका दिया जाता है। गिलासो (C,C_1) को 'इबोनाइट' के खोल (खाँचे) मे रखा जाता है। इस खाँचे मे दो पिन लगे रहते है। बाहरी गिलास की पेंदी में बने हुए छेद मे जाकर यह पिन फिट हो जाता है। इस तरह बाहरी गिलास (C) इस खाँचे से जकड जाता है। इसी तरह भीतर वाले गिलास (C_1) के किनारे पर भी दो पिन लगे रहते है। यह पिन ऊपर वाली चकती (D) मे बने छेदो मे फिट होकर, चकती को अन्दर वाले गिलास से जकड देता है। जब हत्थे से, पहिया (W) घुमाया जाता है, तो उसके साथ-साथ, दाँतेदार पहिया (S), घूमने वाला खडा छड़, और खाँचे मे रखा हुआ बाहरी गिलास (C), सभी एक साथ घूमने लगते है।

बाहरी गिलास (C) के साथ-साथ, भीतर वाला गिलास भी घूमना चाहता है। लेकिन यह तो ऊपर वाली चकती (D) से पिनो द्वारा जकडा हुआ होता है। इस चकती के किनारे पर एक बल, डोरी के सिरे पर लटके हुए बाट के कारण भी लगता है। यह बल, चकती मे घुमाव पैदा करके, घर्षण-घूर्ण के विरुद्ध, भीतरी गिलास को रोके रखता है। इसलिए दोनो गिलासो के बीच घर्षण के कारण ताप उत्पन्न होने लगता है। अब अगर अन्दर वाले खोखले गिलास (C_1) में, कोई द्रव भर लें, तो इस ताप से उसका तापमान बढ जावेगा। इस तरह भीतरी गिलास, एक कैलोरी-मीटर जैसा काम करता है।

इस प्रयोग में यह बात ध्यान में रखने की है कि जब-जब घर्षण-घूर्ण (rotational inertia) घुमाव-बल से अधिक होता है, भीतरी गिलास के साथ चकती भी घूमेगी और उस पर धागा लिपटकर बार ऊपर उठ जावेगा। इसलिये दोनों गिलासो के मिलने वाले तलों पर तेल या चिकनाई लगाकर घर्षण-प्रतिरोध को कम कर लेना चाहिए। घर्षण-प्रतिरोध-बल के, घुमाव-बल से कम होने पर, यही बाट नीचे गिरने लगता है। इसलिए पहिये की चाल को इतना कम-अधिक करना चाहिए कि

धागा चकती पर स्पर्शक (tangential) रहे। साथ ही भीतरी गिलास मे भरे द्रव के अन्तिम तापमान को भी, विकिरण-अशुद्धि के लिए ठीक कर लेना चाहिए। घिर्री घर्षण-विमुक्त (frictionless) और मापने वाला थर्मामीटर, सूक्ष्मग्राही (sensitive) होना चाहिए। थर्मामीटर से ही मथक का भी काम लिया जा सकता है। मान लो प्रयोग द्वारा मापे इस तरह आती है :

लकडी की गोल चकती (disc) का अर्द्धव्यास $=(r)$ सें० मी०

यत्र के दोनो गिलासो (cones) के बीच घर्षण-बल $=(F)$ डाइन

,, ,, का औसत अर्द्धव्यास $=(a)$ सें० मी०

प्रति सैकिड होने वाले चक्करो की सख्या $=n$

गिलासो का तुल्य-जल-भार $=m$ ग्राम

तापमान मे बढाव (विकिरण-शुद्धि लगाकर) $=t°$ सें० ग्रे०

भ्रमण पर घर्षण-बल का घूर्ण $=(F.\ a)$

लटकने वाले बाट के कारण लगने वाले खिचाव बल का घूर्ण $=(M\ g.\ r)$

$\therefore$ स्थायी सतुलन के लिए $(F.\ a)$ $=(M.\ g.\ r)$

n चक्करो मे किया गया काम $(W)=(2\pi\ n.\ a\ F)$

$=(2\pi n\ M\ g\ r$ अर्ग

चक्करो के कारण पैदा होने वाला ताप (H) $=m\ t)$ कैलोरी

$\therefore$ ताप का यात्रिक-तुल्याक $(J)=W/H$ $=\left(\dfrac{2\ \pi\ n\ M.\ g\ r}{m.\ t}\right)$

(4) **विद्युत् विधि (Electrical Method)**—इसका वर्णन, 'विद्युत्' मे किया गया है।

121. विभिन्न इकाइयों में J का मान—'J' का शुद्ध मान तो 778 फुट-पौड प्रति ब्रिटिश-ताप-इकाई (B. Th. U) है। यानी 1 पौड-फैरेनेहाइट ताप के लिये, 778 फुट-पौड कार्य करना पड़ता है। स० ग० स० इकाई मे इसका मान इस तरह निकाला जाता है।

1 फुट-पौड $=(30{\cdot}48\times453{\cdot}6\times981)$ अर्ग

1 B. Th. U. $=1$ पौड डिग्री-फैरेनेहाइट $=(453{\cdot}6\times\frac{5}{9})$ कैलोरी

$\therefore$ जूल-तुल्यांक $(J)=\dfrac{778\text{ फुट-पौड}}{1\text{ पौड-डिग्री-फैरेनेहाइट}}$

$=\dfrac{9\ (778)(30{\cdot}48\times453{\cdot}6\times981)\text{ अर्ग}}{(453{\cdot}6\times5)\text{ कैलोरी}}$

$=(4{\cdot}186\times10^7)$ अर्ग प्रति कैलोरी

या (J) $=4{\cdot}186$ जूल प्रति कैलोरी

आंकिक उदाहरण

1. एक बन्दूक की गोली का तापमान 50° सैं० ग्रे० है। यह अपने निशाने (लक्ष्य-target) पर से कितने वेग से जाकर टकरावे कि टक्कर से पैदा होने वाला ताप इतना ज्यादा हो कि उससे गोली पूरी तरह पिघल जावे ? टक्कर खाने पर गोली रुककर गिर पडती है। शीशे का वि० ताप=0·031 ; सीसे का गलनाक=335° सैं० ग्रे०, उसका गलन-गुप्त ताप=5·37 और $J=4{\cdot}18\times10^7$ अर्ग प्रति कैलोरी।

(With what velocity must a lead bullet at 50°C. strike against an obstacle in order that the heat produced by the arrest of the motion, if all the heat produced within the bullet is utilised, might be just sufficient to melt it ? [sp. ht. of lead=0·031 ; melting point of lead=335°C. ; latent heat of fusion of lead=5·37 ; $J=4{\cdot}18\times10^7$ ergs per calorie])

उत्तर—मान लो की गोली की मात्रा (m) ग्राम है और उसके वेग (v) सैं० मी० प्रति सैकिंड है। तो इसकी गतिज-ऊर्जा=$\frac{1}{2}\ mv^2$ अर्ग।

यह ऊर्जा, गोली के टकराने पर, ताप मे बदल जाती है, और इससे गोली का तापमान, 50° सैं० ग्रे० से बढकर 335° सैं० ग्रे० (गलनाक) हो जाता है और वह पिघल जाती है।

$\therefore$ उत्पन्न हुआ ताप=$\{m\times0{\cdot}031\ (335-50)+m\times5{\cdot}3\}$

$=m\ (14{\cdot}205)$ कैलोरी

लेकिन जूल-सिद्धान्त से, $W=H$

यानी $\frac{1}{2}\ mv^2=(4{\cdot}18\times10^7)\ m\times14{\cdot}205)$ अर्ग

$\therefore\quad v=\sqrt{2\times4{\cdot}18\times10^7\times14\ 205}$

$\therefore\ v=34{\cdot}46\times10^3$ सैं० मी० सैकिंड

2. फौलाद के एक टुकडे की मात्रा 1,200 ग्राम है। इस पर 960 किलोग्राम वाला एक हथौडा 1·6 मीटर की ऊँचाई से आकर गिरता है। यह मान कर कि इस टक्कर से पैदा होने वाला 75% ताप, इस्पात के टुकडे मे ही रहता है, इस टुकड़े के तापमान मे होने वाले बढाव का मान निकालो, जबकि उसका वि० ताप 0·12 हो।

(A piece of steel of mass 1,200 gm. is struck by a hammer weighing 960 kgm. dropped from a height of 1·6 metres. Assuming 75% of the heat generated to be retained by the steel piece whose specific heat is 0 12, calculate its rise in temperature.)

उत्तर—हथौडे की मात्रा $=960$ किलोग्राम$=(96\times10^4)$ ग्राम

गिरने वाले स्थान की ऊँचाई=1·6 मीटर=160 सैं० मी०

$\therefore$ हथौडे की स्थितिज-ऊर्जा=$(96\times10^4\times980\times160)$ अर्ग

यह सारी स्थितिज-ऊर्जा गिरने से ठीक पहले गतिज-ऊर्जा में बदल जावेगी। परन्तु 'जूल-नियम से—

उत्पन्न हुआ ताप $(H) = \frac{W}{J}$; और $J = 4{\cdot}2 \times 10^7$ अर्ग/कैलोरी

$$\therefore \quad H = \left(\frac{96 \times 10^4 \times 980 \times 160}{4{\cdot}2 \times 10^7}\right) \text{ कैलोरी}$$

$$= 3584 \text{ कैलोरी}।$$

ताप की इस मात्रा का केवल 75% अश ही इस्पात के टुकडे को मिलता है, यानी सिर्फ 2688 कैलोरी। मान लो इससे इसका तापमान $t°$ सै० ग्रे० बढ जाता है, तो

$$t = \left(\frac{2688}{1200 \times 0{\cdot}12}\right) = 18{\cdot}6 \text{ सै० ग्रे०}$$

3. पानी को कितनी ऊँचाई से गिराया जावे कि इसका तापमान 0·1 सै० ग्रे० बढ़ जावे ? जबकि $J = 4{\cdot}2 \times 10^7$ अर्ग/कैलोरी और $g = 980$ सै० मी०/सैकिड और ताप-क्षय को नगण्य माना जा सकता है। (पटना *19 2*)

(If the Mechanical Equivalent of heat be $4{\cdot}2 \times 10^7$ ergs/cal. from what height must a mass of water be dropped in order to raise its temperature by 0·1°C. assuming that all the kinetic-energy gained by the mass of water is used up in raising the temperature ?) ($g = 980$ cm /sec.^{2}) (*Pat. U. 1952*)

उत्तर—मान लो आवश्यक ऊँचाई (h) सें० मी० है।

क्योकि इस पानी की, ऊँचाई पर स्थितिज-ऊर्जा, गिरने वाली जगह पर गतिज-ऊर्जा मे बदल जावेगी, इसलिये

$\frac{1}{2} m. v^2 = m g h.$ जबकि m = पानी की मात्रा (ग्राम मे)

परन्तु $W = J. H$, या $m g.h. = J. H = J (m \times 0{\cdot}1)$

या $(980. h) = 4{\cdot}2 \quad 10^7 (0{\cdot}1)$

अत आवश्यक ऊँचाई $(h) = 4286$ सै० मी० (लगभग)

4. ताँबे की एक कैलोरीमीटर की मात्रा 120 ग्राम और उसकी धातु का वि० ताप 0·1 है। इसमे, 0·5 वि० ताप वाले तेल की 3901 ग्राम मात्रा भरी है। इस तेल को मथक से चलाया जाता है। मथक स्वय एक बल-युग्म से चलता है, जिसका मान 10^8 डाइन प्रति सै० मी० है। अगर मथक के 1000 चक्करों से, तेल का तापमान 8° सै० ग्रे० बढ जावे, तो J का मान मालूम करो। (आन्ध्र *1952*)

(A copper calorimeter weighing 120 gm. [sp. heat 0·1] and containing 3901 gm. of oil [sp. heat 0·5] is stirred by a rotating paddle. If the couple driving the paddle is 10^8 dynes-cm. and if the rise of temperature is 8° after 1000 revolutions, calculate J) (*Andhra 1952*)

उत्तर—बल-युग्म द्वारा किया गया कार्य (W) = (बल-युग्म का घूर्ण) (युग्म द्वारा घूमा हुआ कोण)

$\therefore W = (10^8 \text{ डाइन}) \, 2\pi \times 100) = 2\pi \times 10^{11}$ अर्ग

कैलोरीमीटर और उसमे भरे हुए तेल द्वारा लिया गया ताप

$(H) = 8(120 \times 0{\cdot}1 + 3901 \times 0{\cdot}5) = 15700$ कैलोरी

परन्तु 'जूल-नियम' से —

$$J = \frac{W}{H}\left(\frac{2 \times 3{\cdot}14 \times 10^{11}}{15700}\right) = 4\,0 \times 10^7 \text{ अर्ग प्रति कैलोरी}$$

5. सर्ल-उपकरण से ताप का यांत्रिक तुल्याक निकालने के एक प्रयोग मे ऊपर वाली गोल चकती का अर्द्ध-व्यास 20 सै० मी० है और उसके किनारे पर लिपटी हुई डोरी घिर्री पर से होकर, 100 ग्राम के बाट से बँधी हुई है। जब 300 चक्कर प्रति मिनट होने लगते है, तो यह बाट एक ही ऊँचाई पर स्थिर रहता है। अगर $J = 4{\cdot}2$ जूल प्रति कैलोरी, और $g = 980$ स० ग० स० इकाई, तो इन बातो का गणना करो—

(i) घर्षण-बल से लगने वाले बल-युग्म का घूर्ण, यत्र की मध्य अक्षर पर और (ii) ऊर्जा के पैदा होने की दर (वॉट मे) (राजपूताना *1951*)

(The radius of the top disc of a friction cone apparatus is 20 cm. and a weight of 100 gms remains suspended when the speed of rotation is 300 revolutions per minute. Calculate (i) the moment of the couple due to the frictional forces about the central axis and (ii) rate of development of energy in watts. [$J = 4{\cdot}2$ joules per calorie ; and $g = 980$ C. G. S.]) (*R. P. B. 1951*)

उत्तर—यन्त्र के मध्य-अक्ष पर बल-युग्म का घूर्ण $= M\,g\,r$

$= (100 \times 980 \times 20) = 196 \times 10^4$ डाइन/सै०मी०

300 चक्कर प्रति मिनिट $= 5$ चक्कर/सैकिड

$\therefore$ प्रति सैकिड किया गया कार्य $= 2\pi n \; (M.g\,r)$

$= (2 \times 3{\cdot}14 \times 5 \times 100 \times 980 \times 20)$ अर्ग

और ऊर्जा उत्पन्न होने की दर $= \left(\frac{2 \times 3{\cdot}14 \times 5 \times 100 \times 980 \times 20}{10^7}\right)$

$= 6{\cdot}154$ जूल/सैकिड $= 6{\cdot}154$ वॉट

122. गैस के दो विशिष्ट-तापों में अन्तर (Difference between two Specific Heats of a Gas)—जब गैस की कुछ निश्चित मात्रा को स्थिर आयतन पर गर्म करते हैं, तो इस क्रिया में गैस द्वारा कोई बाहरी काम नही होता। इसलिये जितना ताप गैस को मिलता है, उससे उसका तापमान बढ़ता रहता है और साथ ही दबाव भी बढता जाता है। लेकिन जब गैस को ताप देते समय. उसका दबाव स्थिर

रखते हैं, तो इस क्रिया में गैस को कुछ बाहरी कार्य करना पड जाता है। गैस को इस कार्य के बराबर, अतिरिक्त ताप देना पडता है। अतः किसी भी गैस का विशिष्ट-ताप, स्थिर दबाव पर $(=C_p)$, उसके स्थिर आयतन वाले विशिष्ट ताप $(=C_v)$ से अधिक होता है। इन दोनो विशिष्ट तापों का अन्तर, गैस द्वारा किये गये बाहरी काम के बराबर होता है। इस कार्य मे गैस की 1 ग्राम मात्रा का तापमान 1° सै० ग्रे०, स्थिर दबाव पर बढता है।

मान लीजिये कि कुछ निश्चित मात्रा वाली गैस का दबाव $=P_0$ डाइन प्रति वर्ग सै० मी०। यह गैस एक सिलेडर मे भरी है। सिलेडर मे पिस्टन लगा है। पिस्टन के सिरे का क्षेत्रफल $=A$ वर्ग सै० मी०

अतः पिस्टन पर गैस का दबाव $=(P_0.A)$ डाइन

अब इस गैस को स्थिर दबाव पर, गर्म करके, इसका तापमान 1° सै० ग्रे० बढा लेते है। मान लो कि इस क्रिया मे पिस्टन, सिलेडर मे बाहर की ओर d सै० मी० हट जाता है।

∴ पिस्टन के हटाने मे गैस द्वारा किया गया कार्य $=(P_0.A\,d)$ अर्ग

1° सै० ग्रे० तापमान बढाने से, गैस के आयतन मे बढोतरी $=A.\,d$

मान लो कि गैस की 1 ग्राम मात्रा का 0° सै० ग्रे० तापमान पर, और P_0 दबाव पर, आयतन V_0 होता है। तो, $A.d.=V_0/273$

∴ 1° सै० ग्रे० तापमान बढाने मे गैस द्वारा किया गया कार्य

$$=P_0\,A\,d=\frac{P_0V_0}{273}\text{ अर्ग}$$

चार्ल्स-नियम से—$P_0V_0=R.T_0$, जबकि $T_0=0$° सै० ग्रे० का सगत परम तापमान $=273$°

$$\therefore \frac{P_0V_0}{273}=\frac{P_0V_0}{T_0}=R$$

इसलिये 1° सै० ग्रे० तापमान बढाने मे गैस द्वारा किया गया बाहरी कार्य $=$ R अर्ग। यह कार्य गैस के दोनो विशिष्ट-तापों के अन्तर के बराबर होता है। दूसरे शब्दों मे $(C_p-C_v)=R/J$ ... ... (122·1)

'J' का मान 'मेयर-विधि' से निकालना (Mayer's method of determining 'J')—प्रो० मेयर ने ऊपर वाले समीकरण (122·1) का प्रयोग कर, हाइड्रोजन गैस के लिए 'J' का मान निकाला।

हाइड्रोजन के लिये $C_p=3·409$ कैलोरी/ग्राम/डिग्री सै० ग्रे०

और $C_v=2·411$,, ,, ,,

इसकी 1 ग्राम मात्रा का वैधिक दबाव और तापमान (N.T.P.) पर आयतन $=11160$ घन सै० मी०।

लेकिन वैधिक दबाव $(P_0) = (76 \times 13{\cdot}6 \times 981) = 1{\cdot}014 \times 10^6$ डाइन/वर्ग सें० मी०

$\therefore$ 1 ग्राम हाइड्रोजन के लिए $(R) = \dfrac{1{\cdot}014 \times 10^6 \times 11160}{273}$

$= 4{\cdot}145 \times 10^7$ अर्ग/सें० ग्रे०

समीकरण (122·1) से

$$(3{\cdot}409 - 2{\cdot}411) = \frac{4{\cdot}145 \times 10^7}{J}$$

अतः 'जूल-तुल्याक' $(J) = 4{\cdot}1452 \times 10^7$ अर्ग/कैलोरी

आंकिक उदाहरण

1. साधारण वायु-दबाव के विरुद्ध, 1 ग्राम पानी 0° सें० ग्रे० पर की भाप बनाने मे कितना कार्य करना पडेगा ? अपने फल को कैलोरी मे लिखो।

(How much work is done against atmospheric pressure when 1 gm. of water at 0°C, is converted into steam ? Express your result in calories.)

उत्तर—साधारणत. 100° सें० ग्रे० पर पानी की भाप बनाते समय, हवा का दबाव 76 सें० मी० (पारा) होता है।

$\therefore$ वायु-दबाव $= (76 \times 13{\cdot}6 \times 981)$ डाइन प्रति वर्ग सें० मी०

जब पानी की 1 ग्राम मात्रा को 100° सें० ग्रे० तक गर्म करके भाप बनायी जाती है, तो—

आयतन मे बढोतरी = 1672 घन सें० मी०

$\therefore$ आवश्यक कार्य $= (76 \times 13{\cdot}6 \times 981 \times 1672)$ अर्ग

$$= \left(\frac{76 \times 13{\cdot}6 \times 981 \times 1672}{4{\cdot}2 \times 10^7} \right) = \mathbf{40{\cdot}37}$$ कैलोरी

2. स्थिर आयतन पर हवा का वि० ताप 0·1648 होता है और स्थिर दबाव पर यह मान बढकर 0·2375 हो जाता है। अगर वैधिक दबाव और तापमान (N. T. P.) पर हवा का घनत्व 0·001293 ग्राम/घन सें० मी० हो तो, 'J' का मान बतलाओ।

(The specific heat of air at constant volume is 0·1648 and at constant pressure is 0·2375. Calculate the value of 'J'. Density of air at N. T. P. = 0·001293 gm. per c. c.)

उत्तर—वैधिक वायु-दबाव $= P_0 = (76 \times 13{\cdot}6 \times 981)$ डाइन/वर्ग सें० मी०

1 ग्राम हवा का 0° सें० ग्रे० पर आयतन $= V_0 = 773{\cdot}3$ घन सें० मी०

$\therefore$ 1 ग्राम हवा के लिए $(R) = \frac{P_0 V_0}{273} = \left(\frac{76 \times 13{\cdot}6 \times 981 \times 773{\cdot}3}{273}\right($ अर्ग

समीकरण (122·1) से—

$$(10{\cdot}2375 - 0{\cdot}1648) = \frac{76 \times 13{\cdot}6 \times 981 \times 773{\cdot}3}{273 \times J}$$

अत $J = 4{\cdot}16 \times 10^7$ अर्ग/कैलोरी

जेम्स देवार (1842—1922)
(James Dewar)

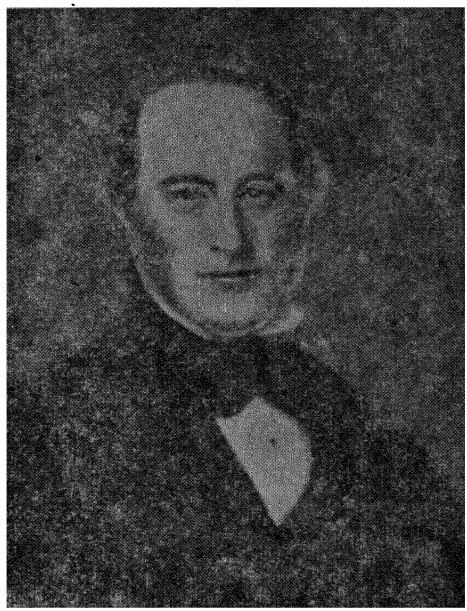
देवार का जन्म, 'किनकार्डाइन-आन-फोर्थ' नामक स्थान पर, 20 सितम्बर, 1842 ई० को हुआ। इन्होने अपनी शिक्षा 'डालर-एकेडमी' मे रहकर प्राप्त की, और बाद मे यह इडिनबर्ग-विश्वविद्यालय मे प्रविष्ट हो गये। इक्कीस वर्ष की आयु में इनको लार्ड प्लेफेयर का सहायक नियुक्त कर दिया गया। बाद मे इडिनबर्ग-विश्वविद्यालय मे रसायन-शास्त्र के प्रोफेसर का पद मिल गया। 1868 ई० मे इन्होने कुछ महीने प्रो० कैकुले के निरीक्षण मे कार्य किया। इनकी मुख्य खोज, एक विस्फोटक पदार्थ "कोरडाइट" का पता लगाना था। इस कार्य मे सर फ्रैडरिक एबिल ने भी इनका साथ दिया।

बाद मे इनका ध्यान निचले तापमानो को उत्पन्न करने मे लग गया। तब आप को कैम्ब्रिज-विश्वविद्यालय मे "प्रायोगिक-दर्शन-शास्त्र" के आचार्य का पद मिल गया। 1891 ई० मे यह आक्सीजन को द्रवित करने मे सफल हो गये। इस द्रवित गैस को रखने के लिये आपने प्रसिद्ध दोहरी दीवार वाली, 'देवार फ्लास्क' का आविष्कार किया। बाद मे हाइड्रोजन को द्रवित करके उसको ठोस रूप मे करके, $(-260)^\circ$ सें० ग्रे० तक का निचला तापमान प्राप्त किया। तभी इन्होने कहा "जैसे-जैसे हम परम शून्याक की ओर बढते जाते हैं, हम भौतिक पदार्थ की मृत अवस्था के पास पहुँचते जाते है।" 1904 ई० मे इनको सर का खिताब मिला। इनका अन्तिम प्रयास हीलियम गैस को द्रवित करना था, परन्तु एक दुर्घटना के कारण, इनके यह प्रयोग पूरे न हो सके। इनकी मृत्यु 27 मार्च, 1923 ई० को हुई।

जेम्स प्रैस्कोट जूल (1818—1889)
(James Presscot Joule)

जूल का जन्म मानचैस्टर के निकट साल्फोर्ड स्थान पर 24 दिसम्बर, 1818 ई० को हुआ। आपके पिता शराब के कारखाने के मालिक थे। इसलिये बचपन से ही आपको प्रयोग करने की काफी सुविधाये प्राप्त थी। लेकिन आपका स्वास्थ्य कुछ अच्छा न था। इसलिये आपको घर पर ही शिक्षा दी गई। भाग्यवश आपके घर के शिक्षक जोह्न डाल्टन थे।

शुरू में आपने 'विद्युत्' पर खोज-कार्य किया। इन खोजो मे आपको प्रसिद्ध वैज्ञानिक फैराडे से प्रेरणा मिलती रही। आपने एक विद्युत-चुम्बकीय इजन भी बनाया। बाद मे आपने इन इंजनो द्वारा यान्त्रिक कार्य करवाने के लिये खोज-कार्य किया। आपने देखा कि सभी इजनो मे ताप का कुछ क्षय होकर ही कुछ कार्य होता है। तब आपने ताप और कार्य मे सम्बन्ध दिखलाने के लिये अपना प्रसिद्ध प्रयोग किया। इस विषय पर आपने लगातार 15 वर्ष तक खोज-कार्य किया। बाद मे आपने बिजली से चलने वाली मोटर, हाइड्रोजन के अणुओ का गति-मापक (speed counter) बनाया। 1872 ई० मे आपका स्वास्थ्य काफी गिर गया। इसलिये मजबूर होकर आपको अवकाश लेना पडा और 11 अक्टूबर, 1889 ई० को आपकी मृत्यु हो गई।



चित्र—86

सार (Summary)

ताप का रूप—**पदार्थ के अणुओं की गति के कारण ही वस्तु में ताप रहता है।**

ताप का यांत्रिक तुल्यांक—**जब किया गया कार्य, ताप के रूप में बदलता है या ताप-ऊर्जा, यांत्रिक ऊर्जा से बदलती है तो किये गए कार्य की मात्रा, उससे उत्पन्न हुए ताप की मात्रा में सदैव बराबर होती है। इसलिये अगर W परिमाण का कार्य करने से H मात्रा का ताप उत्पन्न होता है तो—**

$$J = W/H \text{ या } W = J.H$$

जब कि J = जूल का यांत्रिक-तुल्यांक है।

गैस के दो विशिष्ट-तापों में अन्तर—$(C_p - C_v) = R/J$.

अभ्यास के लिये प्रश्न

1. ताप और कार्य के बीच सम्बन्ध बतलाने वाले किसी प्रयोग का वर्णन करो। इस प्रयोग के फल से, ताप के यान्त्रिक तुल्यांक का अर्थ मालूम करके समझाओ।

(गौहाटी 1955, राजपूताना 1942; पटना 1930, ढाका 1941)

2. ताप गतिज-सिद्धान्त के पहले नियम को लिखो। ताप के यांत्रिक तुल्यांक से क्या अर्थ लगाते हो?

(गौहाटी 1951, 53; बम्बई 1952)

3. बर्फ (तापमान $-10°$ सैं० ग्रे०) के टुकड़े को कितनी ऊँचाई से गिराया जावे कि नीचे पहुचने ही उसमें इतना ताप उत्पन्न हो जावे कि उससे बने टुकड़े का 1/10 अश पिघल जावे। (बर्फ का वि० ताप=0 5) (गोहाटी 1955, 54)

उत्तर—5571 मीटर (लगभग)

4. 420 वॉट वाले बिजली के तापक-छड़ (electrical heating rod) से 100 घन सैं० मी० पानी का तापमान, $10°$ सैं० ग्रे० तापमान बढाने में कितना समय लगेगा। ($J=4·2\times 10^7$ अर्ग/कैलोरी)

उत्तर—10 सैकिड (बनारस 1953)

5. हवाई-जहाज पर से गिराई हुई सीसे की एक गेंद (तापमान=$15°$ सैं० ग्रे०), धरातल से टकराते ही पिघल जाती है। अगर यह मान लें कि इसकी सारी गतिज-ऊर्जा ताप में बदल जाती है, तो गिराने के समय जहाज़ कितनी ऊचाई पर था? सीसे का वि० ताप =0 03, उसका गलनांक=$350°$ से० ग्रे० और गलन गुप्त-ताप=35 कैलोरी/ग्राम।

उत्तर—19287 मीटर (गोहाटी 1951)

6. एक किलोग्राम कोयला जलाने से ($1 7\times 10^4$) कैलोरी ताप उत्पन्न होता है। अगर इस ताप क केवल (1/50) अश ही यान्त्रिक कार्य कर पाता ह, तो 10 H P वाले इजिन को चलाने के लिये प्रति घटे कितने कोयले की जरूरत होगी? (1 H P.=746×10^7) अर्ग/सैकिड, $J=4·2\times 10^7$ अर्ग/कैलोरी)

उत्तर—18806 किलोग्राम/घंटा (उत्कल 1953)

7. 50 मीटर ऊँचे जल-प्रपात (watar-fall) के ऊपर व नीचे वाले पानी के तापमानों में अन्तर मालूम करो, जबकि $J=4·2\times 10^7$ अर्ग/कैलोरी

उत्तर—0 12° सैं० ग्रे० (गोहाटी 1953)

8. बन्दूक की गोली को एक साथ ही रोक देने से उत्पन्न होने वाला ताप, उसका तापमान $100°$सैं० ग्रे० बढा देता ह, अगर गोली की धातु का वि० ताप 0 21 हो, और $J=4 2\times 10^7$ अर्ग/कैलोरी तो बतलाओ कि गोली टकराने से पहले कितने वेग से चल रही थी?

उत्तर—42×10^3 सैं० मी०/सैकिड (राजपूताना 1953)

9. बन्दूक की गोली (तापमान=$15°$ सैं० ग्रे०), अपने लक्ष्य से जाकर टकराती है। इससे उत्पन्न होने वाला ताप इसको पिघला देता है। अगर गोली की धातु का वि० ताप 0·031, गलन-गुप्त-ताप 5 कैलोरी/ग्राम, गलनाक=$325°$ सैं० ग्रे० और $J=4·18\times 10^7$ स० ग० स० इकाई हो तो टकराने से पहला गोली का वेग मालूम करो।

उत्तर—349·5 मीटर/सैकिड (बम्बई 1953)

10. 200 मीटर प्रति सैकिड के वेग से चलती हुई सीसे की गोली जब अपने लक्ष्य से टकराती है तो रुक जाती है। गतिज-ऊर्जा का केवल 8 % अश ही ताप में बदल पाता है, तो इस टक्कर से गोली का तापमान कितना बढ जावेगा?

उत्तर—126·9° सैं० ग्रे० (नागपुर 1952)

11. सर्ल-विधि से ताप का यांत्रिक-तुल्यांक किस तरह निकालते है। इस विधि में ली जाने वाली सावधानियाँ और संभावित अशुद्धियाँ बतलाओ।

(राजपूताना 1951; मैसूर 1952; यू० पी० बोर्ड 1951; बनारस 1950; विश्व-भारती 1954, 55; उत्कल 1953, गोहाटी 1951, 53; नागपुर 1951; दिल्ली 1951)

12. J का मान निकालने के एक प्रयोग में छर्रों की मात्रा 800 ग्राम थी। जिस नली में यह छर्रे भरे हुए थे, उसकी लम्बाई 100 सैं० मी० थी। नली के दोनों सिरे बंद करके इसको 100

बार उल्टा-सीधा किया गया। इससे छर्रों का तापमान 3·84° सैं० ग्रे० बढ़ गया। J का मान निकालो। जबकि $s=0{\cdot}031$, और $g=980$

उत्तर—$4{\cdot}12\times10^7$ अर्ग/कैलोरी (कलकत्ता 1950)

13. ताबे के एक कैलोरी मीटर की मात्रा 200 ग्राम है। इसमें पानी भरा है। इसमें एक यांत्रिक विधि से घूमने वाला मंथक भी पड़ा है। मथक को घुमाने से पानी का तापमान 0·3 सैं० ग्रे०/मिनिट की दर से बढ़ने लगता है। मथक द्वारा काम में लाई गई ऊर्जा की मात्रा, वॉट में बतलाओ।

उत्तर—6·3 वॉट (मद्रास 1950)

14. ताप के यांत्रिक तुल्यांक को मालूम करने की 'जूल-विधि' का वर्णन करो।

(नागपुर 1951, 53, बम्बई 1953, गौहाटी 1951, 54; पूना 1953)

15. 10 ग्राम बर्फ को (−5°) सैं० ग्रे० पर से 100° सैं० ग्रे० वाली भाप में बदलने के लिये आवश्यक ताप उत्पन्न करने के लिये कितना कार्य करना पड़ेगा जबकि बर्फ का वि० ताप = 3·5, ताप का यांत्रिक तुल्यांक = $4{\cdot}2\times10^7$ अर्ग/कैलोरी है। (राजपूताना 1942)

16. (i) सिद्ध करो कि $(C_p-C_v)=R/J$।

(राजपूताना 1955, 49, मध्य भारत 1952)

(ii) गैस के दो वि० तापों के अन्तर से ताप के यांत्रिक तुल्यांक को मालूम करने की विधि का सिद्धान्त समझाओ। (यू० पी० बोर्ड 1952, राजपूताना 1949)

17. स्थिर दबाव पर आरगन (argon) गैस का वि० ताप 0·125 कैलोरी/ग्राम और स्थिर आयतन पर वि० ताप 0·075 कैलोरी/ग्राम होता है। N.T.P. पर आरगन गैस के घनत्व का गणन करो, जबकि $J=4{\cdot}18\times10^7$ अर्ग/कैलोरी, वैधिक दबाव $=1{\cdot}01\times10^6$ डाइन/वर्ग सैं० मी०।

उत्तर—$1{\cdot}8\times10^{-3}$ ग्राम/घन सैं० मी० (राजपूताना 1949)

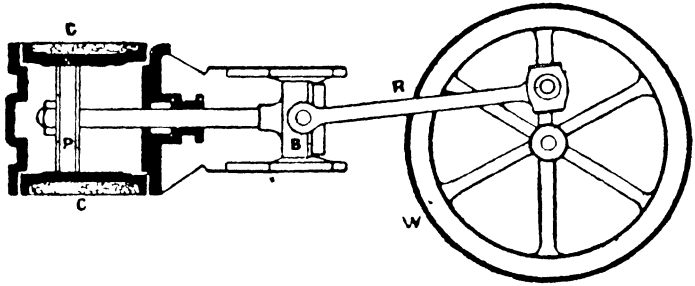
अध्याय 10

ताप-इंजिन

(Heat Engines)

123 ताप-इजिन—आजकल कारखानो, रेल, जहाज व दूसरी कलों को चलाने के लिये मुख्यत ताप-ऊर्जा का ही उपयोग होता है। जिन साधनों से ताप-ऊर्जा द्वारा यत्र-सचालन का कार्य किया जाता है; उनको ताप-इजिन कहते है। ताप-इजिन प्रधानत दो तरह के होते है—(1) **बाह्य-दहन** (External Combustion) वाले और (2) **अन्तर्दहन इजिन** (Internal Combustion Engines)। बाह्य-दहन-इजिनों मे पहले एक कोष्ठ (Chamber) मे पानी की भाप बनती है। यह कोष्ठ इजिन के मुख्य भाग से अलग रहता है। बॉयलर मे बनने वाली भाप का दबाव व तापमान काफी अधिक होता है। पश्चात् इस भाप को नियत्रित करके, इजन के मुख्य सिलेडर मे ले जाकर पिस्टन द्वारा यात्रिक काम कराया जाता है। अन्तर्दहन-इजनो मे ताप-ऊर्जा सिलेडर मे ही उत्पन्न होती है। इनमे ईधन (fuel) के रूप मे कोई गैस या द्रव लिया जाता है। जब यह ईधन सिलेडर के अन्दर ही जलता है, तो उससे प्राप्त होने वाली ताप ऊर्जा ही इजिन को चलाती है।

रैखिक गति को चक्रिक गति में बदलना—अगर किसी मशीन से लगातार (continuous) गति मिल सकती है, तो चाहे यह गति रैखिक हो अथवा चक्रिक, इसको मनचाही और आवश्यक प्रकार की गति मे बदला जा सकता है। सभी प्रकार के इजिनो मे, हमारा प्रधान लक्ष्य, इजिन के भारी पहिये को चक्रिक गति देना होता है। इस भारी पहिये को **गति-पालक-चक्र** (fly-wheel) कहते है। इस गति-पालक चक्र के साथ आवश्यक प्रबन्ध करके अन्य प्रकार की गतियाँ उत्पन्न कर ली जाती हैं।

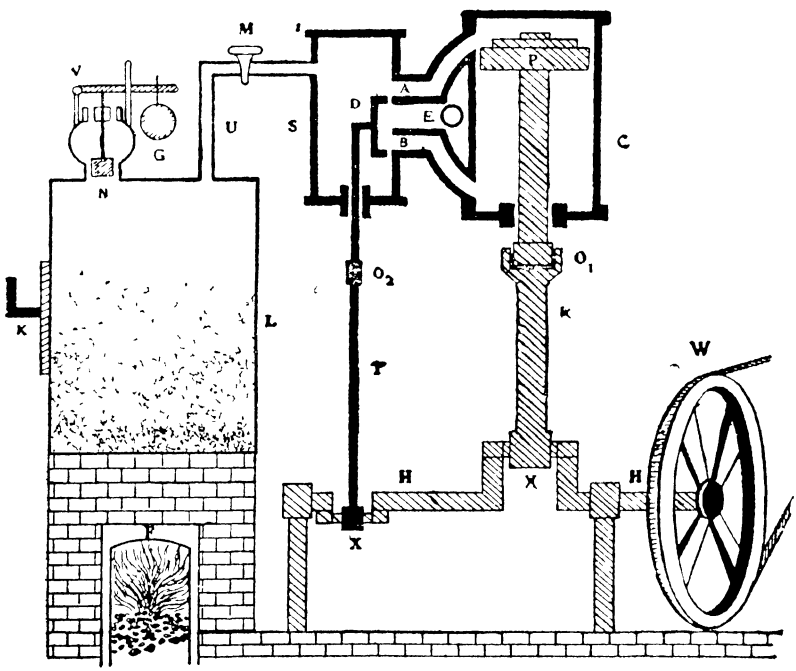


चित्र 87

चित्र 87 मे (W) गति-पालक चक्र है। यह प्रधान धुरे (Shaft) से लगा हुआ है। धातु के एक मजबूत छड (R) के एक सिरे को इस भारी पहिये (W) के एक आरे (spoke) के साथ जोड़ देते हैं और इसका दूसरा सिरा एक पिस्टन के बाहरी सिरे

से जुडा रहता है। इस छड को "क्रैंक" (crank) कहते है। जब पिस्टन, सिलेंडर मे आगे-पीछे चलता है, तो उसके साथ-साथ 'क्रैंक' भी घूमना चाहता है और गति-पालक चक्र (W) घूमने लगता है। बहुत भारी और गतिवान होने से, इस पहिये में बहुत अधिक सवेग (impulse) पैदा होता है। इससे पिस्टन की चाल मे रुकावट नहीं पडती। जिस जगह पर पिस्टन वाले छड का बाहरी सिरा और क्रैंक का सिरा जोडा जाता है, उसको 'पूरक-काष्ठ' (stuffing box) कहते है। (चित्र—87 मे 'B')। सभी तरह के इजिनो मे पिस्टन की रैखिक गति से, पहिये को चलाने के लिये, यही ढग अपनाया जाता है।

124. भाप के इंजिन (Heat Engines) (चित्र 88)—1758 ई० मे जेम्स वाट ने भाप के इजिन के सिद्धान्त का पता लगाया। इस इजिन के मुख्य भाग इस तरह होते है।



चित्र 88

(i) बायलर (Boiler) (L)—भट्टी (F) के ऊपर रखे हुए मजबूत बर्तन में भरे पानी को खौलाकर भाप बनाई जाती है। भट्टी मे कोयला जलता है। बॉयलर में से भाप, नली (u) द्वारा भाप-कोष्ठ (Steam-Chests) मे जाती है। बीच मे एक नियन्त्रक टोटी (M) लगाकर, कोष्ठ मे जाने वाली भाप की मात्रा को कम या अधिक किया जा सकता है। बॉयलर (L) और नली, (U) सुदृढ़ इस्पात से बने होते हैं।

(ii) भाप-कोष्ठ (S)—यह एक बक्स के आकार का बना होता है। बॉयलर (L) से आनेवाली भाप इस कोष्ठ मे ही आकर इकट्ठी होती है। इसके अन्दर तीन

छेद (या द्वार) (ports) (A, B और E) बने होते है। इन द्वारों मे से बीच वाला (E) एक शून्यक (exhaust) से सम्बन्धित रहता है, और बाकी दो (A और B) सिलेडर (C) मे खुलते है।

(iii) 'डी'-वाल्व (Slide or D. Valve)—यह 'डी' के आकार वाला वाल्व, भाप-कोष्ठ मे, सीधी चाल से सरल रेखा मे, आगे-पीछे चलता रहता है। इसके किनारे चिपटे और बढे हुए रहते हैं। देखने मे यह एक उल्टे ढँकने जैसा लगता है। यह एक छड (D) द्वारा पूरक-कोष्ठ (Stuffing box) (O_2) से जुडा रहता है। (O_2) पर एक दूसरा छड (T) भी इस छड (D) से आकर जुड जाता है। छड (T), प्रधान धुरे (main shaft) मे लगे हुए किसी विकेन्द्रिक चक्के (Eccentric disc) (X) से जुडा रहता है। मुख्य धुरे के घूमने से, छड (T) और छड (D), भाप कोष्ठ, (S) मे C) आगे-पीछे, सीधी रेखा मे चलने लगते है। छड (D) के साथ लगा डी-वाल्व ही सिलेडर मे भाप-कोष्ठ (S) से जाने वाली भाप की मात्रा का नियत्रण करता है।

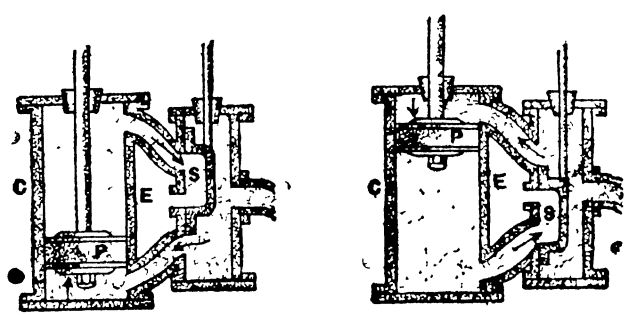
(iv) सिलेंडर (C)—यह भी एक सुदृढ कोष्ठ के रूप मे बना रहता है। इस मे बने दो छेदो (A व B) से इसमे भाप-कोष्ठ वाली भाप अन्दर आती है। इसके भीतर एक भाप-रुद्ध (steam-tight) पिस्टन (P) काम करता रहता है। पिस्टन (P) का छड, दूसरे छड (R) से, पूरक-कोष्ठ (O_1) द्वारा, प्रधान धुरे से (Y) स्थान पर जुडा रहता है। छड (R) को चालक-छड (driving rod) भी कहते है।

(v) अभय वाल्व (Safety Valve) (G)—इस वाल्व द्वारा बॉयलर (L) को दबाव के बढ जाने पर फटने से बचाया जाता है। इसके लिए, बॉयलर के ऊपरी भाग मे, भाप बाहर ले जाने वाली पतली पाइप (U) के साथ एक वाल्व (N) लगा रहता है। वाल्व, एक लीवर (V) द्वारा चालित होता है। जब बॉयलर के भीतर; भाप का दबाव, निश्चित मात्रा से अधिक बढ जाता है, तो यह वाल्व अपने आप ही खुल जाता है और थोडी-सी भाप बाहर निकलकर हवा मे मिल जाती है। इससे भाप का दबाव अभय मान (safe-limit) पर आ जाता है।

(vi) गतिपालक-चक्र (W) (Fly-Wheel)—यह प्रधान धुरे पर लगा, एक बहुत बडे और भारी पहिये के रूप मे लगा रहता है। इसका जड़त्व-घूर्ण काफी अधिक होने से, गति को बनाये रखने मे इससे काफी सहायता मिलती है।

कार्य-विधि (Action)—अधिक तापमान, और दबाव (करीब 20 एटमोस) वाली भाप, बॉयलर से, भाप-कोष्ठ मे, जब 'प्रवेश-नली' (inlet tube) से, भीतर घुसती है, तो वहाँ से सिलेडर तक पहुँचने मे (D) वाल्व, इसकी मात्रा का नियत्रण करता है। भाप, सिलेडर मे ऊपर या नीचे वाले किसी भी छेद (द्वार) (A या B) मे से घुस सकती है। चित्र (89-A) मे यह निचले छेद से घुसती हुई दिखाई गई है। इस स्थिति मे डी-वाल्व, दूसरे छेद (B) और शून्यक (exhaust) (E) को ढँके रखता है। पिस्टन भाप-रुद्ध होता है। इसलिये सिलेंडर दो भागो मे बँट जाता है—एक भाग सलेडर से ऊपर और दूसरा उसके नीचे। इसलिये जब भाप निचले छेद से

घुसती है, तो सिलेडर के निचले भाग में ही दबाव और तापमान बढते है, ऊपर वाले में नही। ऊपर वाले भाग का संबंध शून्यक (E) से होने के कारण, उसका दबाव तो साधारण वायु-दबाव (लगभग 1 एटमोस) ही होता है। इस दबावान्तर (pressure-difference) के कारण, पिस्टन (चित्र 89-A) मे ऊपर की ओर उठने लगता है, और क्रैंक वाला धुरा गतिवान हो जाता है। क्रैंक की यह गति विकेन्द्रित चक्के (eccentric rod) को घुमाती है, जो कि डी-वाल्व के छड को ऊपर-नीचे, सीधी चाल से सरल रेखा मे गतिवान कर देता है। इस तरह, अपने आप ही, जब पिस्टन, सिलेडर मे ऊपर उठता है, डी-वाल्व वाला छड़ नीचे की ओर जाता है, और जब पिस्टन नीचे आता है तो यह नीचे से ऊपर जाने लगता है। ऊपर की ओर उठते-उठते जब पिस्टन, सिलेडर के ऊपरी सिरे के पास पहुंचता है, तो डी-वाल्व, नीचे वाले प्रवेश-द्वार को ढँक लेता है और शून्यक वाले छेद (E) से; पिस्टन के नीचे वाले भाग का सम्बन्ध जुड जाता है और ऊपर वाला प्रवेश-द्वारा (port) (A) खुल जाता है। इस खुले द्वार से दबाव वाली भाप सिलेंडर के ऊपरी भाग मे आने लगती है और पिस्टन, ऊपर से नीचे की ओर चलने लगता है। साथ ही डी-वाल्व, अब नीचे से ऊपर की ओर जाने लगता है। चित्र 89-B मे यही स्थिति दिखलाई गई है। जब पिस्टन ऊपर से नीचे की ओर चलते हुए, सिलेडर के निचले सिरे के निकट पहुँचता है, तो फिर से चित्र 89-A वाली स्थिति आ जाने से पिस्टन, अब नीचे से ऊपर, और डी-वाल्व ऊपर से नीचे चलने लगता है। इस तरह प्रवेश-द्वार (A और B) के बारी-बारी से और ठीक समय पर खुलने और बन्द होने से सिलेडर का पिस्टन उसके भीतर सीधी चाल से सरल रेखा मे आगे-पीछे चलने लगता है। पिस्टन की इस सरलरेखीय गति को क्रैंक-विधि द्वारा चक्रिक-गति मे बदल लेते है (इसका विस्तृत वर्णन हम पीछे धारा 123 मे कर आये है)। यह क्रम लगातार चलता रहता है। इससे प्रधान धुरा लगातार घूमता रहता है। इसके हरएक पूरे चक्कर मे दो बार, यानी हरएक धक्के (stroke) के ऊपरी व निचले सिरे पर, क्रैंक और जोडने वाला छड, एक ही रेखा मे आते है। इन स्थितियो मे पिस्टन थोडे समय के लिए स्थिर हो जाता



(A) (B)

चित्र 89

है। अतः प्रधान धुरा कुछ क्षणों के लिये रुक जाता है। इन स्थानो को "**मृत-स्थिति बिन्दु**" (dead centres) कहते है। इसी तरह धुरे के चक्कर मे दो बार क्रैंक और

जोड़ने वाला छड़, परस्पर समकोणिक हो जाते हैं। इस अवस्था में, धुरे को घुमाने वाला बल अधिकतम होता है। अतः एक भारी और बडा गतिपालक चक्र, प्रधान धुरे पर लगाकर, उसके सवेग से गति को क्रैंक की मृतावस्था मे भी चालू रखा जाता है। गतिपालक-चक्र के सवेग के कारण प्रधान धुरा इन अवस्थाओ मे भी घूमता रहता है, और क्रैंक अपनी मृतावस्था से पार हो जाता है। कुछ इजिनों मे, भाप की मात्रा (भाप-कोष्ठ के भीतर) का नियत्रण करने के लिये गति-नियत्रक (speed governor) लगाया जाता है। जब इजिन, गति की अभय-सीमा (safe limit) को पार कर जाता है तो इस नियन्त्रण से गेंदे ऊपर उठ जाती है और ढकने को खीचकर, वाल्व द्वारा, भाप की मात्रा का नियत्रण कर लेती है। प्रधान धुरे की चक्रिक गति से, चमडे की पेटी इत्यादि लगाकर, कोई दूसरी मशीन भी चलाई जा सकती है। यहाँ पर जिस इजिन का हमने वर्णन किया उसे **'डबल ऐक्टिंग टाइप'** (double acting type) वाला कहते है, क्योकि इसमे भाप आगे-पीछे एकान्तर क्रम से पिस्टन के दोनो पार्श्वों पर कार्य करती है, तभी पिस्टन मे गति आ पाती है।

शीतक-रहित और शीतक-सहित इंजिन (Condensing and Non-condensing Engines)—जिन इजिनो मे शून्यक (Exhaust) से बाहर निकलने वाली भाप, बाहर जाकर हवा मे मिल जाती है, उनको शीतक-रहित इजिन कहते है। इस प्रकार के इजिनो को, उनके मुँह से निकलते हुए धुएँ द्वारा आसानी से पहचाना जा सकता है। शीतक-सहित इजिनो मे, शून्यक से बाहर जाने वाली भाप को कम दबाव पर द्रवित करके, वापिस बॉयलर मे ले जाकर, भाप बना लेते है। इस प्रकार के इजिनों की दक्षता, शीतक-रहित इजिनो से अधिक होती है।

रेल के इंजिन (Locomotives) के कार्य करने का भी यही सिद्धान्त है। परन्तु इनमे एक के स्थान पर दो पिस्टन बॉयलर के नीचे लगे रहते है। एक गाडी के एक ओर वाले बडे पहियो को क्रैंक द्वारा खीचता है, और दूसरा दूसरे पहिये को। जब एक पिस्टन आगे जाता है तो दूसरा पीछे। बॉयलर के एक ओर, अग्नि-कोष्ठ (fire box) और दूसरी ओर धूम्रकोष्ठ (smoke box) लगा रहता है। बॉयलर भी, धातु की पतली लम्बी और मुडकर एक दूसरे के समानान्तर हुई नलियो (ट्यूब) के रूप मे होता है। इन नलियो के चारो ओर पानी भरा रहता है। गर्म गैसे और धुआँ इन नलियो मे से ही होकर, अग्नि-कोष्ठ से धूम्रकोष्ठ को जाते है। गर्म गैसो से ताप लेकर, पानी की भाप बनती है, और यही भाप, भाप-कोष्ठ मे से सिलेण्डरो मे जाती है।

125. इंजिन की दक्षता (Efficiency of an Engine)—इजिन द्वारा कार्य मे परिणत ताप व उनको दिये जाने वाली ताप-ऊर्जा (निश्चित समय मे) का अनुपात, उस इजिन की 'तापिक दक्षता' (Thermal efficiency) कहलाती है।

अगर इकाई समय मे ईंधन के जलने से उत्पन्न होने वाले ताप की मात्रा Q है और फिर इस ताप से W यान्त्रिक कार्य प्रति सैकिड होता है, तो तापिक दक्षता—

$$\eta = \frac{W}{J\,Q.}$$

अतः तापिक दक्षता (η) से इंजिन को दिये गये ताप के कार्य में परिणत हो जाने वाले अंश का पता चलता है। इसका मान सदैव इकाई से कम ही होता है। सब से अच्छे भाप के इंजिन की दक्षता सिर्फ 77 प्रतिशत ही होती है। इंजिन से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को, इंजिन की सामर्थ्य (H. P.) के रूप में मापा जाता है। जब इंजिन 550 फुट-पौंड प्रति सैकिंड अथवा 33,000 फुट-पौंड प्रति मिनिट कार्य करता है तो उसकी सामर्थ्य, इकाई अश्व-सामर्थ्य कही जाती है। ताप की मात्रा का, काम में आने वाली भाप की मात्रा, व उसके प्रारम्भिक और अन्तिम तापक्रम व दबाव को मापकर गणना कर सकते है।

भाप के दबाव से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा को इंजिन की **'इंगित अश्व-सामर्थ्य'** (Indicated Horse Power) कहते है। यह सामर्थ्य (i) भाप का पिस्टन पर औसत दबाव, (ii) पिस्टन के पार्श्व का क्षेत्रफल, (iii) सिलेंडर अथवा स्ट्रोक की लम्बाई, और (iv) प्रति सैकिंड होने वाले स्ट्रोकों की संख्या पर निर्भर करती है। यह सारी ऊर्जा गतिपालक-चक्र को नही मिल पाती, क्योंकि इसका कुछ भाग, घर्षण प्रतिरोध-बल को दूर करने मे लग जाता है। अतः इंजिन से प्राप्त होने वाली (available) सामर्थ्य कुछ कम होती है। "प्राप्त ऊर्जा" और इंगित सामर्थ्य का अनुपात, इंजिन की "यांत्रिक दक्षता" कहलाती है। अर्थात्—

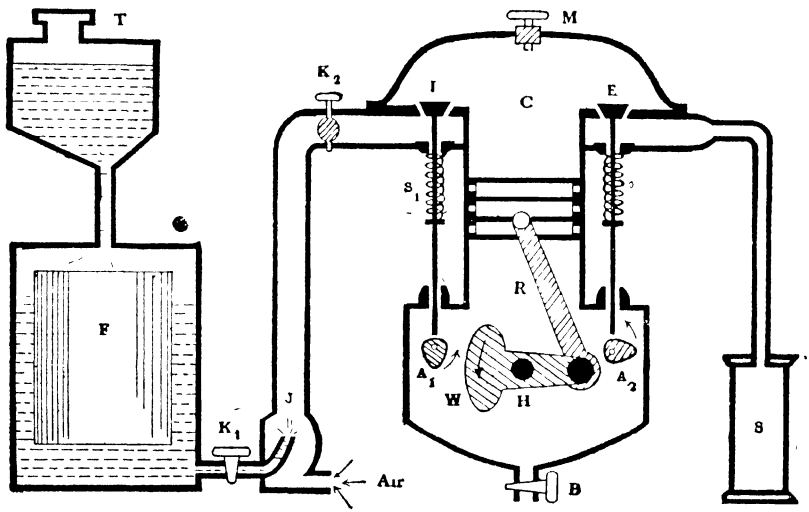
$$\text{यांत्रिक दक्षता} = \left(100 \times \frac{\text{प्राप्त सामर्थ्य}}{\text{इंगित सामर्थ्य}} \right)$$

126. अन्तर्दहन-इंजिन (Internal Combustion Engine)—इस तरह के इंजिनो मे ईंधन को सिलेंडर के भीतर ही जलाया जाता है, बाहर नही। अतः इनको अन्तर्दहन-कहते है। ईंधन के अनुसार, यह दो प्रकार के होते है, (क) पैट्रोल इंजिन और (ख) गैस या तेल के इंजिन (Oil or Gas Engines)

पैट्रोल-इंजिन (Petrol Engines)—इस इंजिन मे पैट्रोल (या बैनजीन Benzene) को ईंधन की तरह से, 'सिलेंडर' के भीतर ही जलाया जाता है। पैट्रोल की वाष्प (vapours) को हवा के साथ मिलाकर, बिजली से विस्फोटित (explode) किया जाता है। विस्फोट के धक्के, सीधे पिस्टन के पार्श्व (face) पर लगते है, इसलिये वह उसी दशा मे चलने लगता है। इन इंजिनो मे न तो राख ही बनती है और न ही कोयले को जलाने के लिये अलग से भट्टी और बॉयलर की जरूरत होती है। पैट्रोल-इंजिन का उपयोग ज्यादातर मोटर-साइकिल, मोटर-कार, हवाई जहाज और छोटे-छोटे डायनमो वगैरह को चलाने मे किया जाता है।

चित्र 90 मे पैट्रोल-इंजिन का पूरा रेखा-चित्र दिखलाया है। पैट्रोल, एक टंकी (T) मे भरकर रखा जाता है। टंकी से पैट्रोल, सीमित मात्रा (limited quantity) मे पतली और लम्बी नली से, एक दूसरे कोष्ठ मे आता है। इस कोष्ठ मे एक भारी डिब्बा उलटकर तैराया हुआ रहता है। इस डिब्बे को 'तैरक' (फ्लोट float) कहते है। जब इस कोष्ठ मे पैट्रोल की मात्रा घटने लगती है, तो यह 'फ्लोट' बैठने लगता है। इससे नली का मुँह खुल जाने पर टंकी से और अधिक पैट्रोल इस कोष्ठ मे आने लगता है।

इस कोष्ठ से पैट्रोल "कारबुरेटर" (carburator) को जाता है। "कारबुरेटर" को जाने वाली पैट्रोल की मात्रा का नियंत्रण, टौटी (T_1) से किया जाता है। कारबुरेटर में पैट्रोल को एक पतली नुकीली नली मे से तेजी से फुव्वार के रूप मे निकालकर उसका वाष्पीकरण किया जाता है। साथ-साथ ही इस वाष्प मे, उचित मात्रा मे हवा भी मिला दी जाती है। हवा और पैट्रोल का यह मिश्रण एक वाल्व (S_2) मे से होकर 'दहन-कोष्ठ' (Combustion Chamber) मे पहुँचता है। इस कोष्ठ मे एक विद्युत्-प्लग (plug) लगा होता है। विद्युत्-धारा चालू होते ही, इससे चिनगारी (spark) उठती है, और पैट्रोल की वाष्प और हवा के मिश्रण को जला देती है। यह कोष्ठ, सिलेंडर (C) के ठीक ऊपर रखा रहता है। प्लग को विद्युत्-धारा, एक छोटे से डायनमो या 'मेगनटो' (magneto) से मिलाती है। इस 'मेगनटो' को इजिन स्वय ही चलाता है।



चित्र 90

सिलेडर के भीतर एक वायु-रुद्ध (air-tight) पिस्टन कार्य करता रहता है। सिलेडर मे दो वाल्व लगे होते हैं; एक (D_1) से पैट्रोल-वाष्प और वायु का मिश्रण, सिलेडर के भीतर घुसता है, और दूसरे (D_2) से बाहर निकल जाता है। इन वाल्वो को खोलने और बन्द करने के लिये, कैम (Cam) (A_1 A_2) काम मे आते है। यह दोनों "कैम" प्रधान धुरे से आधी गति पर घूमते रहते है और इनका एक सिरा, कुछ तिकोना सा होकर किनारे पर बाहर उठा रहता है। घूमते-घूमते जब यह सिरा, इन वाल्वों मे से किसी एक के निचले सिरे के नीचे आ जाता है, तो यह छड ऊपर उठ जाता है और द्वार खुल जाता है। जितनी देर तक, वाल्व का छड इस तिकोने भाग पर रहता है द्वार खुला रहता है। इस स्थान से हटते ही (कैम की गति के कारण) द्वार फिर से बंद हो जाता है। इन द्वारो को कसकर बद रखने के लिये, कमानी (C_1, C_2) (spring) लगायी जाती है। कार्य करते-करते इजिन कही अधिक गर्म न हो जाये,

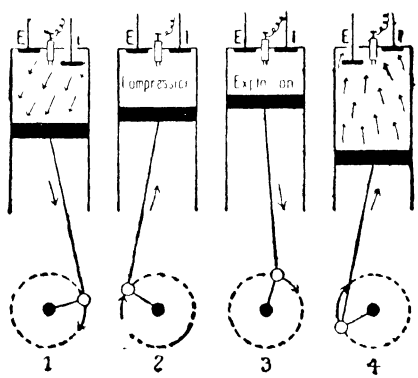
इसलिये इसके चारों ओर पानी की जैकेट लगा दी जाती है। इस जैकेट मे से पानी लगातार घूमता रहता है। चित्र मे यह जैकेट नही दिखलाई गई है।

पैट्रोल के इजिन को "चार स्ट्रोक वाला इजिन" (four stroke engine) भी कहते है। पूरी आवृत्ति (cycle) मे पिस्टन के चार स्ट्रोक होते है, दो ऊपर और दो नीचे। इस बीच गैस अथवा पैट्रोल-वाष्प सिलेडर मे केवल एक बार ही आता है। डा० आटो, 1876 ई० मे सर्वप्रथम, एक गैस का इजिन बनाने मे सफल हुए, अतः इस इजिन की आवृत्ति को **ओटो आवृत्ति** (Otto Cycle) भी कहते है। इस पूरी आवृत्ति की कार्य-विधि इस प्रकार है :

(1) **प्रवेश-स्ट्रोक** (Charging Stroke)—इसमे पिस्टन नीचे की ओर जाता है, प्रवेश-द्वार (D_1) खुल जाता है। कारबुरेटर से पैट्रोल-वाष्प और हवा का मिश्रण सिलेडर मे घुस आता है। (चित्र 91·1)

(2) **दाब-स्ट्रोक** (Compression Stroke)—पिस्टन ऊपर जाता है, और हवा व पैट्रोल के मिश्रण को दबाकर उसका आयतन लगभग 1/5 कर देता है। इस क्रिया मे दोनो वाल्व, (D_1, D_2) बद रहते है। मिश्रण का तापमान लगभग 600 से० ग्रे० हो जाता है (चित्र 91·2)। इस स्ट्रोक के अन्त मे मिश्रण को विद्युत्-प्लग मे धारा मे प्रवाहित करके चिनगारियो द्वारा जलाया जाता है।

(3) **सामर्थ्य-स्ट्रोक** (Working Stroke)—मिश्रण के जलने से विस्फोट होता है। इससे काफी ताप पैदा होता है, और मिश्रण का तापमान बढ़कर करीब 2000° से० ग्रे० हो जाता है। साथ ही विस्फोट के दबाव से, सिलेडर की गैसों का दबाव करीब 15 एटमोस हो जाता है। विस्फोटित होकर गैसे फैलना चाहती है। इसलिए पिस्टन पर जोर से धक्का लगाकर इसको नीचे ढकेलने लगती है। इस क्रिया मे भी, दोनो वाल्व (E, I) बद रहते है। सिर्फ इसी स्ट्रोक मे प्रधान धुरे को गति मिल पाती है। क्योकि विस्फोटित-मिश्रण, पूरी तरह जलने के लिये थोडा ही समय लेता है, इसलिये चिनगारी लगने के थोडी ही देर बाद, विस्फोट हो जाता है।



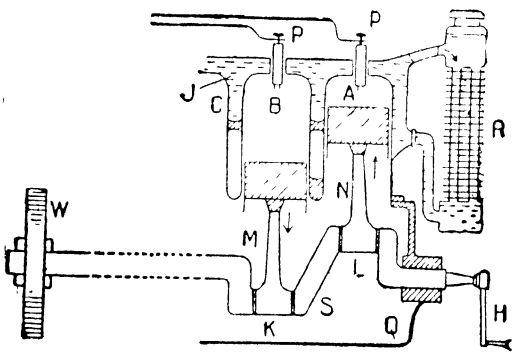
चित्र 91

(4) **निर्गम-स्ट्रोक** (Exhaust Stroke)—पिस्टन ऊपर उठता है, 'निर्गम-वाल्व' (exhaust valve) (E) खुल जाता है, और जली हुई गैसें, सिलेडर से बाहर निकल जाती है (चित्र 91)।

चारो स्ट्रोक पूरा हो जाने पर फिर से पहली वाली हालत आ जाती है, और इस 'आवृत्ति' (cycle) की पुनरावृत्ति होने लगती है। क्योंकि इजिन को ऊर्जा, सिर्फ तीसरे 'स्टोक' मे मिलती है इसलिये इस तरह के इंजिनों का 'गति-पालक-चक्र'

(fly wheel) बडा भारी होता है। बहुत भारी होने से, इसका जडत्व-घूर्ण काफी अधिक हो जाता है, और यह प्रधान धुरे को बाकी तीन स्ट्रोकों के समय भी घुमाता रहता है। चित्र-90 मे इस चक्र के स्थान पर, एक भारी बोझ (क) का प्रयोग किया जाता है।

मोटरकार या हवाई-जहाजो में लगने वाले पेट्रोल-इजिनो में, एक की जगह पर कई सिलेडर लगे होते है (4, 6 या 8)। इन सभी सिलेडरो के 'पिस्टन' एक ही धुरे से जुडे रहते है। इससे इजिन का अश्व-बल (H.P.) बढ जाता है। चित्र 92 मे मोटरकार मे लगे हुए पैट्रोल-इजिन का चित्र दिया गया है। इसमे (A, B) दो सिलेडर है, (M, N) इनके पिस्टनो के छड है; (K,S,L,Q) प्रधान धुरा है। (W) गतिपालक-चक्र और (R) 'रेडियेटर' (विकीर्णक) है क्योकि इस तरह के इजिन शुरू में बाहरी बल से चलाये जाते है, अतः इंजिन को चलाने के लिये एक मुठिया (हैंडिल) (H) भी लगा होता है। कभी-कभी इजिन को अपने आप ही चलाने के लिये भी प्रबन्ध किया होता है। इसको "**स्वत.-प्रचालक**" (Self-starter) कहते है। इसमे एक छोटी-सी 'विद्युत्-मोटर' होती है जिसके धुरे पर पेटी लगाकर, इजिन के गतिपालक-चक्र (फ्लाई-व्हील) (H) को जोड देते हैं। पहले मोटर चलाकर, चक्र को गतिवान बना लेते है। गतिपालक-चक्र के सवेग से ही फिर इजिन अपने आप चलने लगता है। तब विद्युत-मोटर को बद कर देते है।



चित्र 92

गैस-इजिन (Gas Engine)—यह इजिन भी पैट्रोल-इजिन की तरह ही कार्य करते हैं। इनमे ईधन के रूप मे 1 भाग "कोल गैस" (coal gas) और 8 भाग 'हवा' मिलाई जाती है। पैट्रोल-इजिन जैसी चार स्ट्रोक वाली आवृत्ति, इन इजिनो मे भी कार्य करती है। इस मिश्रण को, एक चीनी (पोर्सलीन) की नली को रक्त-तप्त (red-hot) करके, उसकी दीवारो से स्पर्श कराके, जलाया जाता है। कभी-कभी विद्युत्-चिनगारी से भी यही काम लिया जाता है। इजिन को ठडा रखने के लिये पानी व 'विकीर्णक' का प्रयोग होता है।

गैस-इजिन और भाप के इंजिन की तुलना—(क) गैस इजिन की दक्षता भाप के इजिन की दक्षता से कही अधिक होती है (क्रमश मान लगभग 70% और 17%), (ख) गैस के इंजिन मे भाप के इजिन की भाँति न ईधन की राख बनती है और न धुआँ ही उठता है, (ग) गैस-इंजिन, भाप के इजिन की अपेक्षा कम स्थान घेरता है, (घ) गैस के इंजिन को चालू करना और फिट करना भी, भाप के इजिन की अपेक्षा आसान होता है।

परन्तु ईंधन के रूप मे गैस, कोयले की अपेक्षा अधिक मँहगी पडती है।

127. डीज़ेल-इंजिन (Oil Engine)—इस प्रकार के इजिनों में पैट्रोल की जगह पर किसी तेल की वाष्प हवा मे मिलाई जाती है। तेल की फुव्वार, एक "वाष्पक" (vapouriser) मे छूटती है। इसी वाष्पक मे एक रक्त-तप्त धातु की नली रखी रहती है। इसकी गर्मी से फुव्वारे की छोटी-छोटी बूंदों की भाप बन जाती है। इन इजिनो मे भी प्रत्येक आवृत्ति मे चार स्ट्रोक होते है। परन्तु चारों स्ट्रोकों का कार्य थोडा-थोडा बदल जाता है। पहले स्ट्रोक मे उचित मात्रा मे हवा, सिलेडर के भीतर खिचती है। दूसरे स्ट्रोक मे हवा की इस मात्रा को दबाया जाता है। इससे इसका तापमान बढ़कर 540° सें० ग्रे० हो जाता है। तीसरे स्ट्रोक के शुरू मे तेल का फुव्वारा काफी अधिक दबाव पर सिलेडर मे छोडा जाता है। अधिक दबाव व ताप-मान वाली हवा और इस तेल की वाष्प का मिश्रण, विद्युत् चिनगारी से जलने लगता है। परन्तु इस क्रिया मे विस्फोट नही होता। चौथे स्ट्रोक मे जली हुई गैसें निर्गम द्वार से बाहर निकल जाती हैं। इन इजिनो की दक्षता काफी अधिक होती है (करीब 40%)। यह पेट्रोल की बनिस्बत सस्ता भी रहता है। साथ ही इसमे कोई भी तेल, ईंधन के रूप मे काम मे आ सकता है। डीज़ल-इजिन, 'सबमैरिन' (पनडुब्बी) और कुछ व्यापारी जहाज़ो मे लगाये जाते है। अब मोटर-बसों मे भी इनका प्रयोग होने लगा है।

आंकिक उदाहरण

1. एक पैट्रोल-इजिन मे फी घंटा 1 पौड पैट्रोल काम मे आता है, और इससे 22,000 B Th U. ताप उत्पन्न होता है। इजिन की दक्षता 30% है, तो इजिन का अश्व-बल (H.P.) मालूम करो। (गौहाटी *1952*)

(A petrol engine uses every hour 1 lb. of petrol which produces 22,000 B. Th. U. of heat, and has an efficiency of 30%. What is its H.P. ?) (*Gauhati 1952*)

उत्तर—क्योकि इजिन की दक्षता $(\eta) = \frac{\text{प्राप्त होने वाली ऊर्जा (output)}}{\text{दी जाने वाली ऊर्जा (input)}}$

प्रश्न के अनुसार $30\% = \frac{\text{प्राप्त होने वाली ऊर्जा (output)}}{22{,}000 \text{ B.Th.U.}}$

$\therefore$ इजिन से प्राप्त होने वाली ऊर्जा $= \frac{33}{100}(22{,}000)$ B.Th.U.

$= (66{,}000 \times 778)$ फुट-पौंड कार्य/घटा

$= \left(\frac{66{,}000 \times 778}{60 \times 60}\right)$ फुट-पौंड-कार्य/सैकिंड

$= \left(\frac{66{,}000 \times 778}{60 \times 60}\right)\left(\frac{1}{550}\right)$

$= 2{\cdot}59$ H P.

2. दो स्टेशनों के बीच, रेलगाडी को खीचने के लिये, उसके इजिन में 80 पौंड कोयला डालना पड़ता है। रेलगाड़ी का वजन 240 टन है, और दोनों स्टेशनों के बीच की दूरी 1 मील है। प्रतिरोध-बल 35 पौंड/टन की दर से लगता है। कोयले की ताप-ऊर्जा, इतनी है कि उसकी 1 पौंड मात्रा को जलाने पर जितना ताप पैदा होता है, उससे 15 पौंड खौलते हुए पानी को, 100° सै० ग्रे० पर भाप बनाया जा सकता है। अगर भाप का गुप्त-ताप 536 कैलोरी/ग्राम, और J=1400 फुट-पौंड-डिग्री सै० ग्रे० हो तो, इजिन की दक्षता का गणन करो।

(An engine consumes 80 lb. of coal in drawing a train of weight 240 tons over a distance of 1 mile, the resisting force being equal to 35 lbs. per ton. The calorific value of the particular sample of coal is such that 1 lb. is capable of converting 15 lb. of water at 100° C. into steam at the same temperature. Find the efficiency of the engine, given that the latent heat of steam=536; J=1400 ft. lb. deg. Centigrade).

उत्तर—कुल प्रतिरोध-बल (force of resisting)=(35×240) पौंड

इसलिये रेलगाडी को 1 मील चलाने मे किया गया कार्य (W)=(35×240×1760×3) फुट-पौंड

80 पौंड कोयले को जलाने से मिलने वाले ताप की मात्रा (H)=(15×536×80) कैलोरी

$$\therefore \text{इजिन की दक्षता } (\eta) = \frac{W}{J\,H} = \frac{35\times 240\times 1760\times 3}{(15\times 5360\times 8)}\left(\frac{1}{1400}\right)$$

$$= 0\cdot 049 = 4\cdot 9\%$$

3. मोटरकार के इंजिन में पैट्रोल डाला जाता है, जिसका कैलोरी-मान 11×10^4 B. Th. U. प्रति गैलन है। कार को चलाने मे औसतन 1 गैलन पैट्रोल 20 मील की दर से काम आता है। कार की औसत चाल 24 मील घटा मानकर, और इजिन को 10 अश्व-बल (H. P.) वाला लेकर, कार की दक्षता का गणन करो।

(A motor car uses petrol whose calorific value is 11×10^4 B. Th. U. per gallon. The car covers an average 20 miles for the gallon running at 24 miles an hour during which the average output is 10 H. P. Find the overall efficiency of the car)

उत्तर—किया गया कार्य=(10×550) फुट प्रति सैकिंड

प्रति घंटा काम में आने वाले पैट्रोल की मात्रा $= \frac{24}{20} = \frac{6}{5}$ गैलन

$$\therefore \text{प्रति सैकिंड दिये गये ताप की मात्रा} = \left(\frac{6}{5}\times\frac{1}{60\times 60}\times 11\times 10\right)$$

इसलिये इंजिन से प्रति सैकिड प्राप्त होने वाले बल की मात्रा

$$=\left(\frac{6}{5}\times\frac{11\times10^4}{60\times60}\times778 \text{ फुट पौंड}\right)$$

$$\text{अतः कार की दक्षता}=\frac{\text{किया गया कार्य}}{\text{दी जाने वाली ऊर्जा}}=\frac{(10\times550)\ (60\times60)}{(6/5)11\times10^4\times778}$$

$$=0\ 193=19{\cdot}3\%$$

जेम्स वॉट (1736-1819)
James Watt

वॉट का जन्म, स्कॉटलैंड के ग्रीननोक नामक स्थान पर 19 जनवरी, 1736 ई० को हुआ। बचपन से स्वास्थ्य अच्छा न होते हुए भी आपने औजारो के इस्तेमाल और ड्राइंग मे विशेष योग्यता का परिचय दिया। स्कूल मे आप रेखागणित (geometery) के सबसे तेज़ विद्यार्थी थे। स्कूली शिक्षा के बाद आप सौदागरी सीखने लन्दन चले गये। लेकिन वहाँ की कोहरे भरी हुई जलवायु आपको नही भाई और वापस ग्लासगो चले आये। वहाँ पर आपको औजार बनाने वाले का काम मिल गया।

अपनी प्रयोगशाला मे बोल्टन के साथ मिलकर आपने भाप की शक्ति से मशीन चलाने की समस्या पर खोज करनी शुरू की। आप प्रो० ब्लैक से, अधिक ताप वाली भाप के गुणो पर विचार-विनिमय कर लिया करते थे। अन्त मे आपने एक भाप का इंजिन बना ही लिया। इस आविष्कार के बाद ही, रेल की पटरियों पर चलने लायक इंजिन जार्ज स्टीफैन्सन, टैवीथिक वगैरह ने बनाये। लेकिन इसके असली आविष्कारक तो आप ही थे।

इसके सिवाय आपने आरगन-बाजा, पत्रों की प्रतिलिपि निकालने वाला प्रेस (duplicator) और दूसरे साँचे भी बनाये। आपकी मृत्यु 19 अगस्त, 1819 ई० को बरमिंघम मे हुई।

सार

भाप के इंजिनों द्वारा **ताप-शक्ति का यांत्रिक शक्ति में परिवर्त्तन होता है। इनके दो प्रकार होते हैं—(क) भाप के इंजिन, (ख) अन्तर्दहन वाले इंजिन।**

भाप के इंजिन—**इनमें खूब ही गर्म भाप को बॉयलर से भाप-कोष्ठ में इकट्ठा करते हैं। वहाँ से यह एक सिलेंडर में जाती है। एक बार भाप, पिस्टन के ऊपर जाती है तो अगली बार पिस्टन के नीचे। इसके लिए कोष्ठ में दो प्रवेश-द्वार (ports) होते हैं। भाप के दबाव से पिस्टन पर धक्का लगता है। इससे पिस्टन, सिलेंडर में ऊपर-नीचे गति करता रहता है। पिस्टन की इस गति को ही प्रधान धुरे की कोणीय गति में बदल दिया जाता है।**

अन्तर्दहन वाले इंजिन—**(क) पेंट्रोल इंजिन, (ख) तेल वाले इंजिन और (ग) गैस के इंजिन।**

इंजिन की दक्षता—**इंजिन से प्राप्त होने वाले कार्य और उसकी दी जाने वाली शक्ति का अनुपात होती है।**

इंजिन की ग्राहकता—**उसके द्वारा किये जाने वाले कार्य की दर को कहते हैं। इसको H. P. भी कहते हैं। 1 H. P.=550 फुट पौंड प्रति सैकिंड।**

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भाप के इंजिन की बनावट व कार्य करने का सिद्धान्त चित्र खींचकर समझाओ।

(दिल्ली 1950, यू० पी० बोर्ड 1938, 41, 50, 55, पटना 1954, विश्व-भारती 1954; कलकत्ता 1947, ढाका 1939, 41, पंजाब 1952)

2. चित्र खींचकर, भाप के इंजिन की बनावट के सिद्धान्त को समझाओ। यह भी बतलाओ कि इसमें शक्ति परिवर्त्तन किस भाँति होता है? (उत्कल 1947, 49, 52)

3. आधुनिक पैट्रोल-इंजिन का रेखाचित्र खींचकर उसकी बनावट और कार्य करने के सिद्धान्त को स्पष्ट कीजिये। (कलकत्ता 1940, 42, 48, 53, यू० पी० बोर्ड 1947; गोहाटी 1950, 55)

4. चित्र खींचकर एक साधारण प्रकार वाले पेट्रोल-इंजिन के कार्य करने का सिद्धान्त बतलाओ।

(गोहाटी 1950, 52, कलकत्ता 1953, ढाका 1942, यू० पी० बोर्ड 1947, बनारस 1950)

5. एक भाप के इंजिन की अश्व-सामर्थ्य (H.P.) 33 है। इसमें 22,500 ग्राम कोयला प्रति घंटा जलता है। यदि इस कोयले की ताप-शक्ति इतनी हो कि उसकी 1 ग्राम मात्रा को जलाने से उत्पन्न होने वाला ताप, 100° सैं० ग्रे० पर उबलते हुए पानी की 16 ग्राम मात्रा को भाप में बदल सकता है, तो कोयले का कौनसा अंश व्यर्थ जाता है? ($3H.P.=746\times10^7$ अर्ग प्रति सैकिंड, $J=42\times10^7$ अर्ग कैलोरी, भाप का गुप्त-ताप=536)

उत्तर—0·9

6. एक गैस इंजिन की दक्षता 20% है। इसमें 1500 घन-फुट गैस प्रति घण्टा काम में आती है। यदि इस गैसीय ईंधन की ताप-शक्ति 800 B. Th. U. प्रति घन-फुट हो, तो इंजिन की H. P. क्या है?

उत्तर—94 H P.

7. भाप के एक इंजिन में 100 ग्राम कोयला प्रति मिनिट जलता है। इस कोयले की ताप शक्ति 600 कैलोरी प्रति ग्राम है। इस इंजिन द्वारा एक पहिए को चलाया जाता है, और पहिये से एक रस्सी लिपटी हुई है। रस्सी से 140 किलोग्राम का भार उठाया जा रहा है। पहिया 30 चक्कर प्रति मिनिट के हिसाब से घूम रहा है, और उसका अर्द्ध-व्यास 50 सैं० मी० है। यन्त्र की दक्षता बतलाओ।

उत्तर—5·1

8. भाप के इंजिनों पर एक संक्षिप्त नोट लिखिये।

(यू० पी० बोर्ड 1939, राजपूताना 1953)

9. भाप के इंजिन और तेल के इंजिन में क्या मुख्य अन्तर है?

(कलकत्ता 1948, राजपूताना 1955, पंजाब 1950)

10. 1 पौंड कोयले के जलने से 14,000 B. Th U. ताप उत्पन्न होता है। भाप इंजिन द्वारा चालित, पम्प की दक्षता का गणन करो, जबकि इंजिन में 20 पौंड कोयला प्रति घण्टा लगता है। इस इंजिन से प्रति मिनिट 20,000 पौंड पानी, 12 फुट ऊँचाई पर चढ़ता है।

उत्तर—66 प्रतिशत

प्रकाश

[LIGHT]

अध्याय 1

सीधी रेखा में चलना : दीप्ति-मापन

(Rectilinear Propagation : Photometry)

1. प्रकाश (Light)—प्रकाश में लाने पर ही चीजे दिखलाई पडती हैं, उसके बिना नही। दोपहर के समय मे भी, जब कि प्रकाश की तेज़ी सबसे ज्यादा होती है, अगर हम किसी अँधेरी कोठरी मे जावे, तो वहाँ हमारी आँखे कुछ भी नही देख पाती। इसलिए 'प्रकाश' वह बाह्य कारण (external cause) है, जिसके कारण हमको चीजे देखने की शक्ति मिलती है। देखने की यह क्रिया आँखो से होती है। आँखों के अन्धे को इस सृष्टि की सुन्दरता का क्या पता ? उसके मार्मिक कष्ट का सुन्दर नेत्रो वाले को क्या अनुभव ?

'प्रकाश' के रूप को समझने की जिज्ञासा सृष्टि के प्रारम्भ से ही रही होगी। लोग देखते होगे कि आग का एक गोला सा, हमेशा एक ही दिशा से उठता है और आकाश का चक्कर काटकर, सायँ को छिप जाता है। उगते और छिपते समय इसका आकार बड़ा दीखने लगता है, साथ मे लाली भी रहती है। इसी तरह आकाश मे सात रगो वाला 'इन्द्रधनुष' और पानी मे किनारे के दृश्यो की सुन्दर प्रतिच्छाया इत्यादि आकर्षक होते हुए भी, जिज्ञासा को बढाने वाली घटनाये थी। इन सब के कार्य और कारण पर, उस काल के लोगो ने विचार किया होगा। यह विचार-क्रम अभी तक भी नही टूटा है। लेकिन इस बीच प्रकाश के रूप और ज्ञान के बारे मे काफी कुछ जाना-पहचाना जा चुका है। यह ज्ञान-भडार अब तक इतना विशाल हो गया है कि 'प्रकाश विज्ञान' (Optics) को तीन भागो मे बाँटना आवश्यक हो गया। यथा—(i) **"रेखागणितीय-प्रकाश-विज्ञान"** (Geometrical Optics) (ii) **"सैद्धान्तिक-प्रकाश-विज्ञान"** (Physical Optics) और (iii) **"शारीरिक-प्रकाश-विज्ञान"** Physiological Optics)।

2. कुछ मौलिक परिभाषायें (Some Fundamental Definitions)—

(i) प्रकाशमान और प्रकाशहीन वस्तुएँ (Luminous and non-luminous bodies)—वस्तुएँ या तो अपने ही प्रकाश से चमकती हैं, या दूसरों के प्रकाश से। पहले प्रकार वाली वस्तुओं को 'प्रकाशमान' और दूसरी को 'प्रकाशहीन' कहा जाता है। सूर्य, लैंप, मोमबत्ती की ज्वाला, जलती हुई दिसासलाई, बिजली की बत्ती इत्यादि प्रकाशमान वस्तुओं के उदाहरण हैं। मकान, कुर्सी, पेड-पौधे, चन्द्रमा, पृथ्वी इत्यादि प्रकाशहीन चीजे हैं।

(ii) प्रकाश-माध्यम (Optical Medium)—जिस चीज में से प्रकाश आर-पार जा सके, उसको 'प्रकाश-माध्यम' कहते हैं, जैसे कि हवा, पानी, तेल, अभ्रक

(mica) वगैरह ।) माध्यम दो तरह के होते हैं : (क) "**समांगी**" (homogeneous) जिनमे उनके गुण सभी दिशाओं मे एक जैसे होते हैं, और (ख) "**विषमांगी**" (heterogeneous), जिनके गुण स्थान-स्थान पर बदल जाते हैं।

(जब वस्तु पर पडने वाले प्रकाश का अधिकाश (major portion), आर-पार चला जाता है, तो इसको "पार-दर्शक" (transparent) कहते है। इसके विपरीत जिन पदार्थों मे से प्रकाश दूसरी ओर दिखलाई ही नही पडता, उनको "अपार-दर्शक" (opaque) कहते है। अगर वस्तु मे से थोडा सा प्रकाश दूसरी ओर निकल सके, लेकिन उससे वह वस्तु स्पष्ट न देखी जा सके, तो ऐसे पदार्थ को "पार-भासक" (translucent) कहते है। जैसे कि तेल लगा हुआ कागज, खुरदरा काँच (ground glass)। वस्तु मे से प्रकाश का आर-पार हो पाना उसकी घनता पर ही निर्भर करता है। जैसे कि थोडी मात्रा मे पानी पार-दर्शक है, लेकिन गहरी झीलो या नदियो की तलेटी (bottom) नही दिखलाई पडती। साधारणत: सभी धातुएँ (metals) अपार-दर्शक होती है।)

3. प्रकाश, ऊर्जा का ही एक रूप है (Light is energy)—'पदार्थ के सामान्य गुण' (General properties) मे हम पीछे बतला आये है कि 'ऊर्जा' का नाश नही होता। यह एक रूप (form) मे लुप्त होकर दूसरे रूप मे प्रकट हो जाती है। 'प्रकाश' भी ऊर्जा का एक रूप ही है। इसको भी, ऊर्जा के दूसरे रूपो मे बदला जा सकता है। इस बदल के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते है।

(i) यान्त्रिक-ऊर्जा (Mechanical Energy) और 'प्रकाश'—जब दो चीजें आपस मे जोर से टकराती है, तो इस रगड मे पहले ताप उत्पन्न होता है। जब तापमान काफी बढ जाता है, तो फिर चिनगारियाँ निकलने लगती है। इस तरह इस क्रिया मे यान्त्रिक-ऊर्जा, पहले ताप और फिर प्रकाश मे बदलती है। यही क्रिया चाकू वगैरह के फल (blade) पर धार चढाने मे भी होती है।

प्रकाश-किरणो को केन्द्रित करके, प्लैटीनम के बने बहुत से पतले पंखों (vanes) से बनी हुई फिरकनी पर डालने से, वह घूमने लगती है। इस प्रयोग में प्रकाश, यान्त्रिक-ऊर्जा मे बदलता है।

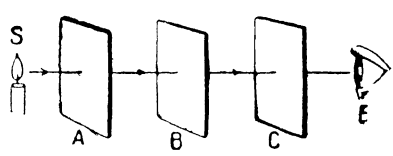
(ii) रासायनिक ऊर्जा (Chemical Energy) और 'प्रकाश'—हवा मे किसी चीज़ को जलाने से वह जलने लगती है, क्योकि हवा मे मिली हुई आक्सीजन, उस पदार्थ के साथ मिलकर रासायनिक प्रतिक्रिया (reaction) करती है। इसकी विपरीत क्रिया, यानी 'प्रकाश' का रासायनिक-ऊर्जा मे बदलने का उदाहरण 'फोटोग्राफी' है। 'सिलवर' (चाँदी) के एक नमक (salt) पर जब प्रकाश-किरणे पडती है, तो वह रासायनिक-प्रतिक्रिया से नमक की मूल-धातु (base-metal) 'सिलवर' (Ag) मे बदल जाते है।

(iii) विद्युत् ऊर्जा (Electrical Energy) और प्रकाश—बिजली के लैपों में विद्युत-ऊर्जा प्रकाश में बदलती है। जब लैप के तार (filament) मे विद्युत-धारा प्रवाहित होती है, तो पहले यह तार गर्म होता है और बाद में सफेद चमकने लगता है।

इसके विपरीत जब पोटैशियम, कैलशियम, सीज़ियम इत्यादि पर प्रकाश की किरणें पडती हैं, तो इनके तल पर से विद्युतअणु (इलैक्ट्रान) बाहर निकलने लगते है, जिनके चलने से विद्युत-धारा प्रवाहित होने लगती है। इस क्रिया मे प्रकाश, विद्युत-ऊर्जा मे बदलता है।

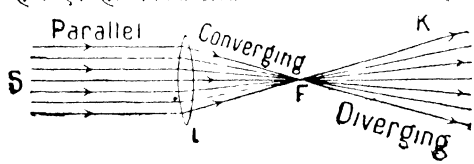
4. प्रकाश दृष्टिगोचर नहीं होता (Lihgt is Invisible)—हालांकि प्रकाश से ही हम चीजो को देख पाते है लेकिन स्वय प्रकाश दृष्टिगोचर नही होता। अगर किसी अँधेरे कमरे मे एक छेद से सूर्य का प्रकाश आता हो, तो इन किरणो के मार्ग मे पडने वाले धूल या धूएँ के कणो के कारण प्रकाश का सीधा मार्ग चमकने लगता है। लेकिन इन कणो के हटाते ही इसका दीखना बद हो जाता है। प्रकाश-किरणें, 186,000 मील/सेकिड की चाल से चलती है। यही कारण है कि लैप जलाते ही सारा कमरा प्रकाशित हो जाता है। सघन (dense) माध्यमो मे यह वेग कम हो जाता है।

5. प्रकाश सीधी रेखा में चलता है (Rectilinear Propagation of Light)—समागी माध्यम मे प्रकाश-किरणें सीधी रेखा मे चलती हैं। चित्र 1 मे (S), मोमबत्ती की लौ है। (A, B, C), गत्ते के बने तीन पर्दे (screens) है। तीनों पर्दों के बीच मे एक-एक बारीक छेद (pin-hole) बना है। अब गत्तो को इतना ऊपर-नीचे करो कि मोमबत्ती की लौ (flame) दीखने लगे। तब गत्तो के छेद और आँख एक ही सीधी रेखा मे होगे। तीनो मे से किसी भी एक गत्ते को इधर-उधर हटाते ही मोमबत्ती की लौ दीखना बद हो जावेगी। यह प्रकाश-किरणो के सीधी रेखा मे चलने का एक उदाहरण है।



चित्र 1

प्रकाश-किरण की दिशा (direction) को तीर (arrow) से दिखलाया जाता है। एक ही प्रकाश-स्रोत से चलने वाली किरणो के समूह को 'किरण-पुज' (beam of light) कहते है। प्रकाश-किरणें, अपसृत (divergent) समानान्तर (parallel) या ससृत (convergent) हो सकती है। (देखो चित्र 2)। 'समानान्तर' किरणो मे सभी किरणें एक दूसरे के समानान्तर होती है। जब, प्रकाश-किरणें, बहुत अधिक दूरी पर रखे हुए स्रोत से आती है, तो थोडे से स्थान के बीच मे, यह किरणें मिलकर, 'समानान्तर' 'किरण-पुज' बनाती है। 'ससृत किरण-पुज' मे, किरणें थोडी दूर चलकर एक बिन्दु पर केन्द्रित हो जाती है। इसलिये इन किरणों के बीच की आपसी दूरी धीरे-धीरे कम होती जाती है। चित्र 2 मे बीच वाला किरण-पुज इसी प्रकार का है। लेकिन जब पुज की किरणें, आगे बढती हुई किसी एक बिन्दु से आती हैं, या आती हुई प्रतीत होती है, तो इस तरह के किरण-पुंज को 'अपसृत'



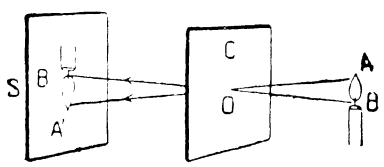
चित्र 2

कहते हैं। इस पुंज की किरणों के बीच की दूरी धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। चित्र 2 मे दाँये किनारे वाला पुज इसी प्रकार का है।

6. सीधी रेखा में चलने के उदाहरण— (Illustrations of Rectilinear Propagation)—

(i) छेद द्वारा प्रतिमूर्त्ति (Image by a hole) (चित्र 3)—एक प्रकाश-स्रोत (A, B) (जैसे मोमबत्ती) के सामने, एक गत्ते (C) को खडा रख दो। गत्ते के बीच मे एक बारीक छेद (O) बना होना चाहिये। इसके बाद एक दूसरा पर्दा (screen) (S) भी, (C) की तरह खडा कर दो। आप देखोगे कि दूसरे पर्दे (S) पर, प्रकाश-स्रोत (A, B) की उल्टी (inverted) प्रतिमूर्त्ति (A′, B′) बन जाती है।

इस उल्टी प्रतिमूर्त्ति के बनने की क्रिया इस तरह समझी जा सकती है। बिन्दु (A) से एक किरण, (A, O) दिशा मे चलकर, पर्दे (S) पर बिदु (A′) पर पहुँचती है। इसी तरह प्रकाश-स्रोत के दूसरे सिरे (B) से चलने वाली किरण, सीधी रेखा मे चलकर, छेद (O) मे से होती हुई बिंदु (B′) पर आती है। स्रोत के दूसरे बिन्दुओ से चलने वाली किरणे भी इसी तरह बीच वाले छेद मे से होकर जावेगी। इस तरह (A, B) की उल्टी प्रतिमूर्त्ति (B′,A′) बन जावेगी। प्रतिमूर्त्ति (B′, A′) का आकार-अभिवर्धन (magnification) $(=m)=\frac{A'B'}{A\ B}$

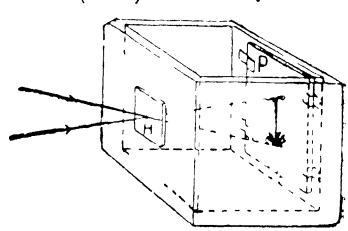


चित्र 3

या $(m)=\frac{\text{छेद 'O' से पर्दे की दूरी}}{\text{छेद 'O' स्रोत की दूरी}}$

जब बीच वाला छेद (O) काफी बडा हो जाता है तो, प्रतिमूर्त्ति चमकीली तो जरूर हो जाती है, लेकिन उसकी रूप-रेखा स्पष्ट नही रहती। बडे छेद को अनेक छोटे-छोटे छेदो से मिलकर बना हुआ माना जा सकता है। इनमे से हर एक छोटा छेद स्रोत की अपनी-अपनी प्रतिमूर्त्ति बनाता है। इन सब प्रतिमूर्त्तियो के एक दूसरे पर चढ जाने (over-lapping) से अन्तिम प्रतिमूर्त्ति स्पष्ट नही रहती।

(ii) पिन-होल (छिद्र)-कैमरा (Pin-hole Camera)—यह लकडी का बना, चौकोर बक्सा होता है (चित्र 4)। इस बक्स के एक पार्श्व (face) के बीच मे एक पतला छेद बना होता है। इस पार्श्व के ठीक सामने वाले पार्श्व पर खुरदरे काँच की प्लेट लगी रहती है। बक्स की सभी दीवारो और पार्श्वों को भीतर से काला किया रहता है। जब छेद वाले पार्श्व को किसी चमकीली चीज़ (जैसे पेड, भवन इत्यादि) की ओर देखते है, तो काँच की प्लेट पर, उस चीज़ की उल्टी प्रतिमूर्त्ति बन जाती है। अगर काँच की प्लेट की जगह पर फोटो खीचने की प्लेट (photo-plate) या

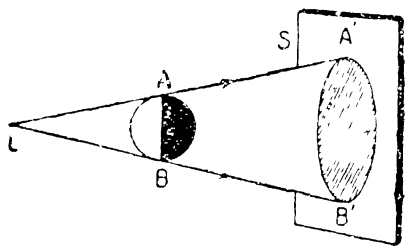


चित्र 4

फिल्म लगा दे, तो इस दृश्य का फोटो भी उतारा जा सकता है।

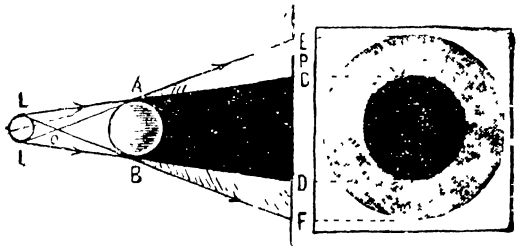
7. छाया (Shadow)—जब किसी चमकदार चीज़ के सामने कोई 'अपार-दर्शक' (opaque) पिंड आ जाता है, तो पिंड के पीछे रखे पर्दे पर पिंड की 'छाया' बन जाती है। धूप या किसी दूसरी रोशनी मे चलते हुए, छाया का बनना और उसका घटना-बढना हम रोजाना देखते हैं। इसमे पृथ्वी का धरातल (surface), पर्दे का काम देता है। छाया बनाने वाला 'प्रकाश-स्रोत' (source of light) कई तरह का हो सकता है। इसलिये छाया भी कई तरह की होती है। यथा—

(i) बिन्दु-स्रोत (A Point Source)—चित्र 5 मे (L), प्रकाश का बिंदु-स्रोत है; (A, B) एक ठोस और अपारदर्शक पिंड है। इसके दूसरी ओर पर्दा रखा है। पर्दे पर पिंड (A, B) की 'छाया' (A', B') बन रही है। प्रकाश का शंकु (cone) (L, A) और (P, B) से सीमित (limited) होता है। ठोस पिंड के काट देने से, छाया का क्षेत्र, (L, B, B') (L, A, A') से सीमित होने लगता है। जैसे-जैसे हम पर्दे को पिंड (A, B) से दूर रखते जावेंगे, वैसे-वैसे छाया का आकार बढता जावेगा लेकिन उसका कालापन कम होता जावेगा।



चित्र 5

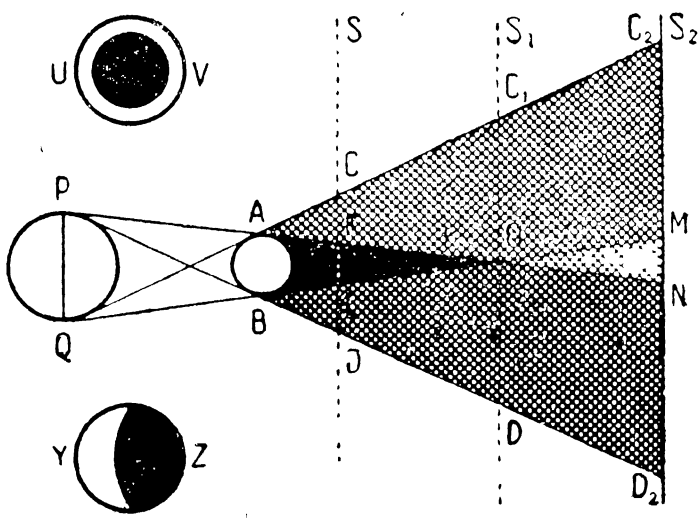
(ii) अपारदर्शक पिंड से छोटा स्रोत (Extended Source smaller than the obstacle)—चित्र 6 मे (L, L') एक प्रकाश-स्रोत है, (A, B) ठोस और अपारदर्शक गोल पिंड है, और पिंड के पीछे एक पर्दा रखा है। ठोस पिंड का आकार, स्रोत से बडा है। प्रकाश-स्रोत (L, L') को पास-पास रखे हुए कई बिन्दु-स्रोतो से मिलकर बना हुआ माना जा सकता है। वैसे तो प्रकाश-स्रोत से किरणे चारो ओर फैलती है, लेकिन इन मे से सीधी रेखा मे चलने वाली किरणे (L, A) और (L, B), रास्ते मे ठोस (A, B) के आ जाने से, रुक जाती है और पर्दे पर पिंड (A, B) की छाया बन जाती है। इस छाया के (C, D) भाग मे प्रकाश की कोई किरण नही पहुँच पाती इसलिये यह भाग काफी घना अँधेरे वाला होता है। इस घने अँधेरे भाग को 'पूर्ण-छाया' (umbra) कहते है। पूर्ण-छाया के चारों ओर वाले भाग (C, E) या (D, F) मे हल्का अँधेरा होता है। इसको 'उप-छाया' (penumbra) कहते हैं। जैसे-जैसे हम पूर्ण-छाया वाले क्षेत्र (area) मे



चित्र 6 चित्र 7

से, उप-छाया के बाहर की ओर जाते है, वैसे-वैसे प्रकाश की तीव्रता बढ़ती जाती है। इस तरह (C) और (D) के बीच वाले किसी बिंदु (P) पर पड़ने वाली किरणें, रेखा (L, A) से ऊपरी भाग से आती हैं। चित्र 7 में, पर्दे पर पडने वाली छाया का चित्र दिखलाया गया है। इसमे प्रकाश-स्रोत और ठोस-पिंड, दोनो को ही गोलाकार (spherical) माना गया है। पर्दे को, ठोस से दूर हटाने पर, पूर्ण-छाया और उप-छाया दोनों के ही आकार बढ जाते है।

(ni) अपार-दर्शक पिंड से बडा स्रोत (Extended source larger than the obstacle)—चित्र 8 मे प्रकाश-स्रोत (P,Q), अपार-दर्शक ठोस (A,B) और (S,S_1,S_2) पर्दे की अलग-अलग स्थितियाँ है। बीच वाला ठोस (A,B) प्रकाश-स्रोत (P,Q) से छोटा होता है। ऊपर वाले भाग (n) की तरह, इस स्थिति मे भी पूर्ण-छाया (K, L) और उप-छाया वाले क्षेत्र (K,C या L,D) पर्दे पर बनते है। चित्र से स्पष्ट है कि पूर्ण छाया वाला शकु (cone), केन्द्राभिमुखी (convergent) है। इसलिये पर्दे (S) को हम जितना ही पिड (A, B) से दूर हटाते जावेगे, वैसे-वैसे, पूर्ण छाया-वाला भाग कम होता जावेगा, लेकिन उप-छाया वाला भाग आकार मे बढता जावेगा। पर्दे की (S_1) स्थिति मे, पूर्ण-छाया वाला भाग घटकर, सिर्फ एक बिन्दु (point) ही रह जाता है, और (S_2) स्थिति मे बिलकुल ही गायब



चित्र 8

हो जाता है। (M,N) के ऊपर व नीचे, बिन्दु (S_2 और D_2) तक वाले भाग मे आंशिक या उप-छाया रहती है। लेकिन (M, N) वाले भाग मे, प्रकाश-किरणे, स्रोत के ऊपरी व निचले, दोनो सिरो से पहुँचती है। इसलिए ऊपर व नीचे भागों की अपेक्षा, यह अश थोडा चमकीला हो जाता है। हाँ, स्रोत के बीच वाले भाग से इस अश मे कोई किरण नही पहुँच पाती। इस तरह की छाया को कभी-कभी 'ऋणात्मक छाया'

(negative shadow) भी कह देते हैं। इस भाग (M,N) में खडे होकर के प्रकाश-स्रोत की ओर देखने पर, वह ठोस (A,B) के चारो ओर, घने अँधेरे वाली मुंदरी (छल्ले) (ring) जैसा लगता है (चित्र 8 मे 'U,V'), जबकि (MS_2) या (N,D_2) में से देखने पर (Y,Z) जैसा दीखेगा।

पर्दे को ओर भी अधिक दूर हटाने पर, उप-छाया वाला क्षेत्र आकार मे बढता जाता है, लेकिन साथ-साथ अस्पष्ट भी होता जाता है। अन्त मे बहुत दूरी पर रखने पर, छाया एक बिन्दु जैसी ही रह जाती है। इस बिन्दु-छाया को, पास वाले क्षेत्र मे, चारो ओर वाले बिखरे हुए प्रकाश के क्षेत्र मे से देख पाना कठिन हो जाता है। यही कारण है कि हवा मे बहुत ऊँचे उडने वाले पक्षियो और वायुयानो की, धूप मे, पृथ्वी पर छाया नही पडती।

(iv) जब प्रकाश-स्रोत का आकार, अपार-दर्शक ठोस के बराबर होता है, तो पूर्णछाया वाले क्षेत्र का आकार, सभी दूरियो पर एक जैसा ही रहता है। हाँ, इसके चारो ओर वाली उप-छाया का आकार अवश्य ही घटता-बढता रहता है।

आंकिक उदाहरण

1. एक कमरे की खिडकी के दरवाजे मे एक छोटा सा छेद बना हुआ है। कमरे की चौडाई 10 फुट है। बाहर लगे एक पेड की प्रतिमूर्त्ति, इस कमरे की सामने वाली दीवार पर बन रही है। अगर प्रतिमूर्त्ति की ऊँचाई 4 फुट हो और पेड की, खिडकी से दूरी 30 फुट हो, तो पेड की ऊँचाई मालूम करो।

(A small hole is made in the window-shutter of a room 10 ft. wide and image of a tree outside the room is cast on the opposite wall. If the image is 4 ft. high and the tree is 30 ft. from the window, what is the height of the tree ?)

उत्तर—पिन-होल कैमरा-सिद्धान्त से—

$$\frac{\text{प्रतिमूर्त्ति का आकार}}{\text{प्रतिमूर्त्ति की छेद से दूरी}} = \frac{\text{वस्तु का आकार}}{\text{वस्तु की छेद से दूरी}}$$

$$\therefore \quad \frac{4}{10} = \frac{x}{30}; \text{ अतः पेड की ऊँचाई } (x) = 12 \text{ फुट}$$

2. समान रूप से प्रकाशित ग्लोब (व्यास = 1 फुट) को, एक टेनिस-बॉल (व्यास = 3 इंच) से 3 फुट की दूरी पर रख दिया जाता है। तो गणन कीजिये—

(i) पूर्ण-छाया वाले कोनाकार शंकु की लम्बाई।

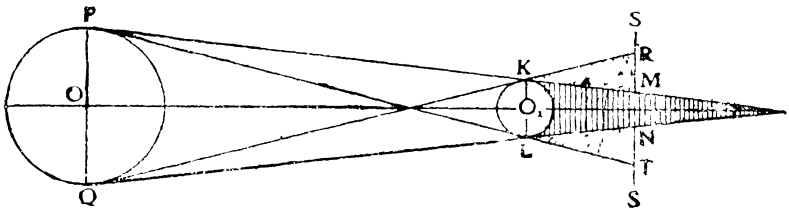
(ii) गेंद के पीछे, उसके केन्द्र से 8 इंच की दूरी पर रखे पर्दे पर बनने वाली पूर्ण-छाया का क्षेत्रफल।

(iii) ऊपर (ii) वाली स्थिति मे ही रखे पर्दे पर, उप-छाया वाले क्षेत्र का क्षेत्रफल।

(A uniformly illuminated globe, 1 foot in diameter, is placed at a distance of 3 ft. from a tennis-ball of 3 inches in diameter. Find (a) the length of the umbral cone, (b) cross-section of the

umbral cone, when a screen is placed at right angles to the line passing through the centres of the globe and the ball and at a distance of 8 inches from the centre of the ball. Find also the diameter of the penumbral cone at that position)

उत्तर—चित्र 9 मे (P, Q), ग्लोब है, जिसका व्यास (P, Q) 1 फुट है और (K, L), टैनिस-बॉल (व्यास K O_2=3 इच) है। स्पष्ट है कि (K O_2 L) पूर्ण-छाया का कोनाकार-शकु है। (O) और (O_1) ग्लोब व गेंद के केन्द्र है। (M, N) और (R T) क्रमश. पूर्ण-छाया व उपछाया वाले क्षेत्रो के व्यास है, जब कि पर्दा (S, S) स्थिति मे रखा है, (O_1 O_2) और (S, S) का काट-बिन्दु (X) है।



चित्र 9

मानलो कि पूर्ण-छाया वाले कोनाकार-शकु की लम्बाई (=O_1, O_2), x इंच है। एक जैसे त्रिभुजो (POO_2) और (KO_1O_2) मे—

$$\frac{OO_2}{O_1O_2}=\frac{PO}{KO_1} \quad \text{या} \quad \left(\frac{36+x}{x}\right)=\frac{6}{1\cdot5}=4$$

अर्थात् **x=12 इच=(पूर्ण-छाया-शंकु की लम्बाई)**

साथ ही समान त्रिभुजो (MNO_2) और (KLO_2) मे—

$$\frac{MN}{KL}=\frac{XO_2}{O_1O_2}=\frac{O_1O_2-O_1X}{O_1O_2}=\frac{12-8}{12}=\frac{1}{3}$$

या $MN=\frac{1}{3}$ $KL=\frac{1}{3}\times 3=1$ इच

∴ पूर्ण-छाया वाले शकु के आधार का अर्ध-व्यास=0·5 इच

इसलिये, पर्दे की स्थिति (S,S) पर, पूर्ण-छाया वाले क्षेत्र का क्षेत्रफल=πv^2
$=3\cdot14(0\cdot5)^2=$**0·785 वर्ग इच**

मान लो (PL) और (QK) रेखाये (Z) बिंदु पर मिलती है तो एक जैसे त्रिभुजों (PQZ) और (KLZ) में—

$$\frac{PQ}{KL}=\frac{OZ}{O_1Z}, \quad \text{या} \quad \left(1+\frac{PQ}{KL}\right)=\left(1+\frac{OZ}{O_1Z}\right)=\frac{OO_1}{O_1Z}$$

$$\text{या} \quad \left(1+\frac{12}{3}\right)=\frac{36}{O_1Z}, \quad \text{या} \quad 5=\frac{36}{O_1Z}$$

∴ O_1Z=7·2 इंच

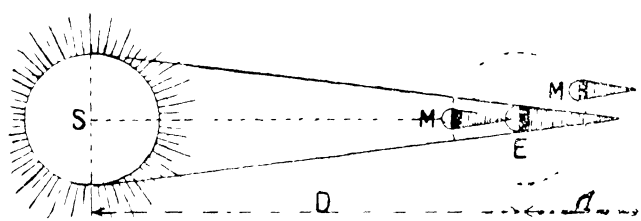
इसी तरह समान त्रिभुजों (R T Z) और (K L Z) मे—

$$\frac{RT}{KL}=\frac{XZ}{O_1Z} \text{ या } (RT)=KL\frac{XZ}{O_1Z}=KL\frac{O_1Z+XO_1}{ZO_1}$$

$$\text{या } (RT) = \text{उप-छाया शकु का व्यास}=3\times\frac{7{\cdot}2+8}{7{\cdot}2}=6{\cdot}33 \text{ इंच}$$

8. ग्रहण (Eclipse) – सूर्य और चन्द्रग्रहणो को, छाया के सिद्धान्त से अच्छी तरह से समझा जा सकता है। पृथ्वी, सूर्य के चारो ओर, और चन्द्रमा पृथ्वी के चारो ओर, चक्कर काट रहे है। इनकी कक्षा (orbit) और आवृत्ति-काल (period), दोनो निश्चित है।

(क) सूर्य-ग्रहण—यह हमेशा, नव-चन्द्र (new moon) के समय लगता है। जब चन्द्रमा, सूर्य और पृथ्वी के बीच मे आ जाता है, तो स्थिति, चित्र 10 या (चित्र 8) जैसी हो जाती है। सूर्य पृथ्वी से करीब दस लाख गुना बडा है। जब कभी चन्द्रमा की छाया, पृथ्वी पर पडती है, और सूर्य, चन्द्रमा की ओट मे आ जाता है, तो इसको "सूर्य-ग्रहण" (solar eclipse) कहते है। सूर्य-ग्रहण कभी दीखता है, कभी नही।



चित्र 10

इसका एक कारण तो चन्द्रमा और पृथ्वी की कक्षाओं वाले तलो (planes) के बीच लगभग 5° का झुकाव होना है। साथ ही सूर्य, चन्द्रमा, और पृथ्वी के बीच की दूरियाँ भी घटती-बढती रहती है। चन्द्रमा की पूर्ण-छाया वाले कोन (शकु) की ज्यादा से ज्यादा लम्बाई करीब 236,000 मील और न्यूनतम 228,000 मील है, जबकि पृथ्वी की पूर्ण-छाया वाले कोन की लम्बाई, लगभग 857,000 मील होती है। पृथ्वी पर उप-छाया वाले क्षेत्र मे सूर्य की ओर देखकर, वह चित्र 8 मे (YZ) जैसा दीखता है, और पूर्ण-छाया वाले क्षेत्र मे (U, V) जैसा। (U, V) वाली स्थिति को ही 'सर्व-ग्रास' (total eclipse) कहते है।

(ख) चन्द्र-ग्रहण (Lunar Eclipse)—यह हमेशा पूर्णमासी को लगता है। तब पृथ्वी, सूर्य और चन्द्रमा के बीच मे आ जाती है। क्योंकि सूर्य, पृथ्वी से कई लाख गुना बडा है, इसलिये यह स्थिति चित्र 10 जैसी होती है। इस स्थिति मे (देखो चित्र 8) सूर्य, एक बहुत बडे प्रकाश-स्रोत, पृथ्वी अपारदर्शक छोटा पिंड और चन्द्रमा पर्दे जैसा कार्य करने लगते है। पूर्ण-छाया वाले कोन का शीर्ष (vertex), हमेशा, चन्द्रमा से परे (beyond) ही रहता है। इसलिये यह कभी भी (U, V) जैसा नही

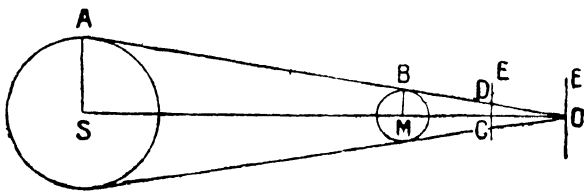
दीखता। जब यह, पूरी तरह से, पूर्ण-छाया वाले क्षेत्र में आ जाता है, तो इस स्थिति को 'सर्व-ग्रास' कहते है। हर एक पूर्णमासी को चन्द्र-ग्रहण न दीखने का यही कारण है कि पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य, तीनो एक सीध मे कभी-कभी ही आते है।

सूर्य का व्यास 900,000 मील और चन्द्रमा का 2,100 मील है। पृथ्वी और सूर्य के बीच की दूरी 9×10^7 मील है। तो हमको केवल एक बिन्दु पर ही सर्वग्रास वाली स्थिति मे, पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच की दूरी मालूम करनी है। चित्र 11 में (S) सूर्य को, (M) चन्द्रमा को और इस स्थिति मे (O, E) पृथ्वी को बतलाते है। तो स्पष्टत· ही—

$$(S\,A)=\frac{9\times10^5}{2}\text{ मील, }(MB)=\frac{2100}{2}\text{ मील और }(SO)=(9\times10^7)\text{मील}$$

परन्तु $\frac{MO}{MB}=\frac{SO}{SA}$ या $\frac{MO}{1050}=\frac{9\times10^7}{4{\cdot}5\times10^5}$

$\therefore$ (MO) (=चन्द्रमा और पृथ्वी के बीच की दूरी)=210,000 मील



चित्र 11

इसी तरह मानलो हमे पृथ्वी की (C D E') स्थिति मे पूर्ण-छाया वाले क्षेत्र का क्षेत्रफल निकालना है, जबकि (MC)=209,000 मील। चित्र 11 से स्पष्ट है कि

$$\frac{CD}{CO}=\frac{MB}{MO}\quad\text{या}\quad\left(\frac{C\,D}{210\times10^3-209\times10^3}\right)=\frac{1050}{210{,}000}$$

$\therefore$ C D=5 मील

अतः पूर्ण-छाया क्षेत्र का क्षेत्रफल $=(\frac{22}{7}\times5^2)=78{\cdot}57$ वर्ग मील

9. दीप्तिमापन (Photometry)—क्योंकि प्रकाश ऊर्जा का ही एक रूप है, इसलिये इसको मापने की कोई इकाई चाहिए। 'दीप्तिमापन' मे दो प्रकाश-स्रोतो या चमकती हुई चीजो की 'आपेक्षिक-दीप्ति' (relative illumination) को मापा जाता है। किसी भी सतह (surface) पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा, इन बातों पर निर्भर करती है—

(i) तल का अपना क्षेत्रफल (area of the surface),

(ii) तल की स्रोत से दूरी (distance of the surface from the

(iii) स्रोत की 'प्रदीपन-सामर्थ्य' (illuminating power of the source), तथा

(iv) तल और स्रोत के बीच झुकाव (inclination of the surface relative to the source)।

प्रदीपन-सामर्थ्य (Illuminationg Power)—प्रकाश-स्रोत से, इकाई दूरी (unit distance) पर समकोणिक (at right angles) रखे हुए, इकाई क्षेत्र (unit area) पर, प्रति सैकिंड (per second) पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा, उस स्रोत की 'प्रदीपन सामर्थ्य' कहलाती है।

एक सैकिड मे, तल पर के एक बिन्दु के चारो ओर, इकाई क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा को उस तल की **'प्रदीप्ति'** (intensity of illumination) कहते है। गणित के शब्दो मे यदि किसी तल का क्षेत्रफल (S) और उस पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा (Q) है तो

तल की 'प्रदीप्ति' (I) = Q/S ....(9·1)

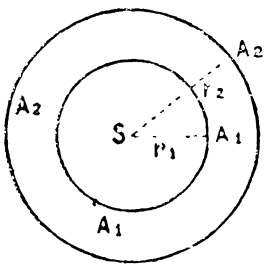
वस्तु की प्रदीप्ति मापने की व्यावहारिक इकाई **'फुट-कैंडिल'** (foot-candle) है। एक फुट अर्धव्यास वाले खोखले गोले के भीतरी तल को सफेद रगकर, उसके केन्द्र पर एक 'प्रमाण-बत्ती' (standard candle) रखने से, गोले के भीतरी तल पर इकाई क्षेत्र मे पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा, 'एक इकाई फुट-कैंडिल' कहलाती है। गोले का व्यास 1 सै० मी० या 1 मीटर कर देने पर प्रकाश की समत मात्रा को 'सै० मी० कैंडिल' और 'मी०-कैंडिल' कहने लगते है। कभी-कभी तल की चमक (brightness) को **ल्यूमेन** (lumen) मे भी माप लेते हैं। तल को प्रमाण-बत्ती से आने वाली किरणो के समकोणिक, 1 फुट की दूरी पर रखने पर उस तल के इकाई वर्ग-फुट क्षेत्र पर प्रति सैकिड पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा, 'इकाई ल्यूमेन' होती है। अर्थात् 1 ल्यूमेन प्रति वर्ग-फुट, एक फुट-कैंडिल के बराबर होती है।

कैंडिल-पावर (Candle Power)—प्रमाण-बत्ती की 'प्रदीप्ति' और दिये हुए प्रकाश-स्रोत की प्रदीप्ति, दोनो का अनुपात, इस दिये हुए प्रकाश-स्रोत की 'कैंडिल-पावर' (C. P.) कहलाता है। अत: 25 C. P. वाले लैंप का यही अर्थ है कि अगर हम 25 प्रमाण-बत्तियाँ पास-पास एक साथ ही जला दे, तो उनसे जितना प्रकाश निकलेगा, वह इस लैंप के प्रकाश के बराबर होगा।

प्रमाण-बत्ती (Standard Candle)—यह बत्ती, ह्वेल मछली के सिर से निकली हुई चर्बी (spermaceti) से बनाई जाती है। इसका व्यास $\frac{7}{8}$ इच होता है और 6 बत्तियो का वजन 1 पौड होता है। इसके जलने की दर 120 ग्रेन प्रति घटा है। लेकिन इसकी प्रदीप्ति पर स्थान-विशेष के तापमान और वायु-दबाव वगैरह का भी प्रभाव पड़ता है। इसलिये अब इसको त्याग कर एक दूसरी ही प्रमाण-बत्ती बनाई गई है। इगलैड मे इसके लिए **वर्नन-हारकोर्ट-पेन्टेन लैंप** (Vernon-Harcourt Pentane Lamp) ही काम मे आता है। इसमे हवा और पेन्टेन वाष्प का मिश्रण जलाया जाता है। ठीक अनुकूलन होने पर इसकी प्रदीप्ति 10 C P. होती है।

10. उत्क्रम-वर्ग-नियम (Law of Inverse Squares)—किसी भी तल की 'प्रदीप्ति' प्रकाश-स्रोत से उसकी दूरी के वर्ग (Square of distance) के व्युत्क्रमानुपाती और उसकी प्रदीपन-सामर्थ्य के समानुपाती (directly proportional) होती है। गणित की दृष्टि से चित्र 12 मे .—

अगर किसी तल (सतह—Surface) पर, स्रोत (S) से (r_1) दूरी पर प्रदीप्ति I_1 है, और (r_2) दूरी पर यही मान (I_2) हो जाता है, तो सूत्र (9·1) से



चित्र 12

$$I_1 = \frac{Q}{4\pi r_1^2} \quad \ldots \quad (10\cdot1)$$

और $I_2 = \frac{Q}{4\pi r_2^2}$, जब कि (Q), स्रोत से प्रति सैकिड बाहर निकलने वाले प्रकाश की मात्रा है।

$$\therefore \frac{I_1}{I_2} = \left(\frac{r_2}{r_1}\right)^2 \quad \ldots \quad (10\cdot2)$$

अर्थात् किसी भी तल पर 'प्रदीप्ति', बत्ती (प्रकाश-स्रोत) से उसकी दूरी के वर्ग की व्युत्क्रमानुपाती होती है। इस नियम को 'व्युत्क्रम-वर्ग-नियम' कहते है।

ऊपर समीकरण (10·1) मे $r_1 = 1$ हो जाने पर, प्रदीप्ति I को स्रोत की **'प्रदीपन-सामर्थ्य** (Illuminating power) (P) कहने लगते है। अत.

$$\text{प्रदीप्ति (I)} = \frac{Q}{4\pi r^2} = \frac{P}{r^2} \quad \ldots \quad (10\cdot3)$$

उदाहरण के लिए, 60 C.P. वाले लैंप से, 2 फुट की दूरी पर प्रकाश की प्रदीप्ति $\left(\frac{60}{2^2} = 15\right)$ फुट-कैंडिल होगी, और 3 फुट की दूरी पर 6·6 फुट-कैंडिल।

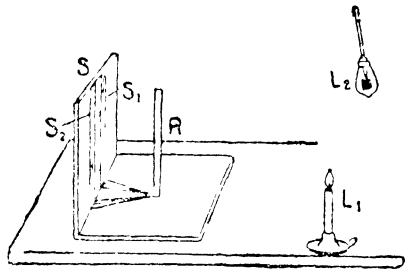
11. दीप्ति-मापन का सिद्धान्त (Principle of Photometry)—क्योकि स्रोत (souce) से इकाई दूरी पर होने वाली 'प्रदीप्ति' उस स्रोत की 'प्रदीपन-सामर्थ्य' कहलाती है, इसलिए अगर हमारे पास P_1, P_2 प्रदीपन-सामर्थ्य वाले दो प्रकाश-स्रोत है, और उनको किसी पर्दे (screen) से क्रमश r_1 और r_2 दूरियो पर रखने पर, एक जैसी प्रदीप्ति पैदा होती है, तो एक रगे प्रकाश के लिए

$$\frac{P_1}{P_2} = \left(\frac{r_1}{r_2}\right)^2 \quad \ldots \quad (11\cdot1)$$

12. फोटो-मीटर (दीप्ति मापक) (Photo-meters)—इन यन्त्रों से, दो प्रकाश-स्रोतो की प्रदीपन-सामर्थ्यों की तुलना (comparison) की जाती है। इसमे से प्रमुख फोटोमीटरो का वर्णन आगे दिया जा रहा है।

(क) रूमफोर्ड-छाया-फोटोमीटर (Rumford's Shadow Photometer)—(चित्र 13) इस यन्त्र में एक अपारदर्शक ठोस छड (R) को प्रकाश-मच

(optical bench) पर सीधा-सीधा खडा रखा जाता है। इस प्रकाश-मच के एक सिरे पर एक पर्दा (S) लगा रहता है। इसको खुरदरे काँच, या लकडी की समतल तख्ती पर सफेद कागज चिपका कर बनाया जाता है। प्रकाश-मच पर, मापे लेने के लिए, एक मीटर-पैमाना जडा रहता है। मंच (bench) की सीधी पतली और लम्बी पट्टी में एक खाँच (groove) बनी रहती है। इसी खाँच मे फँसा कर छड वगैरह, उसके समकोणिक, सीधे खडे लगाये जाते है। छड (R) की



चित्र 13

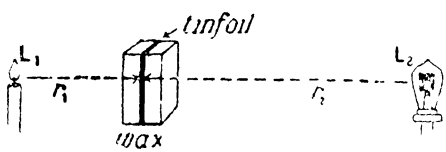
ऊँचाई, पर्दे (S) की ऊँचाई के बराबर, और गोलाई, करीब 1 सेंटीमीटर होती है। प्रकाश-मच के दूसरे किनारे पर, आगे-पीछे, थोडी ही दूरी पर, दो अलग-अलग प्रकाश स्रोत (L_1, L_2) (जैसे एक लैंप, और एक मोमबत्ती), लेकर, खडे कर दिये जाते है। इन दोनो स्रोतो की ऊँचाई भी बराबर रखी जाती है। दोनो स्रोत, छड के कारण, पर्दे पर अपनी-अपनी छाया (S_1, S_2) अलग-अलग बनाते है। स्रोतों और छड के बीच की दूरी को इतना घटाया-बढाया जाता है कि यह दोनो छायाएँ (S_1, S_2) एक जैसी घनी (dark) हो। ठीक स्थिति आ जाने पर, पर्दे छड और दोनो स्रोतो की स्थितियो की मापे प्रकाश-मच पर लगे हुए मीटर-पैमाने पर पढ लेते है। इन मापों से, प्रकाश-स्रोतो की, छड से दूरिया (r_1, r_2) मालूम हो जाती है। अगर इन स्रोतो की प्रदीपन-सामर्थ्य क्रमश P_1, P_2 है, तो दीप्ति मापन-सिद्धान्त से समान प्रदीप्ति के कारण—

$$I = \frac{P_1}{r_1^2} = \frac{P_2}{r_2^2} \quad \text{या} \quad \frac{P_1}{P_2} = \left(\frac{r_1}{r_2}\right)^2$$

$$\text{अत} \quad P_2 = \left(\frac{r_2}{r_1}\right)^2 P_1 \qquad \ldots \qquad (12{\cdot}1)$$

इस फोटोमीटर पर दूर वाले स्रोत से आने वाले प्रकाश का कोई प्रभाव नही पड़ता।

(ख) **जौली-फोटोमीटर (Jolly's Photometer)**—इस फोटोमीटर मे, मोम के दो समानान्तर (parallel) और चौकोर (rectangular), एक जैसे (similar) (मोटाई वगैरह मे) टुकडे लेकर, टीन के पतले पत्तं (tin-foil) के इधर-उधर लगाकर, बक्स को मजबूती से बद कर देते है। इस बक्स को प्रकाश-मंच के बीच, दोनो प्रकाश-स्रोतों के लगभग मध्य मे रख देते हैं। इसके बाद, दोनो स्रोतों को इतना आगे-पीछे करते है, कि बक्स के दोनो विपरीत पार्श्व (opposite faces), एक जैसे



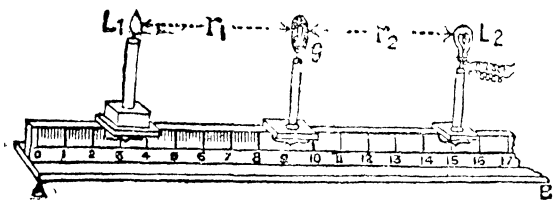
चित्र 14

चमकने लगें। अगर इस स्थिति में, स्रोतो की, बक्स से दूरियाँ, r_1, r_2 है तो

$$\frac{P_1}{P_2} = \left(\frac{r_1}{r}\right)$$

इस फोटोमीटर मे टीन का पतला पर्त्त लगाने का यही लाभ है कि अपार-दर्शक (opaque) होने से एक स्रोत का प्रकाश, भेद कर दूसरी ओर नही जाने पाता।

(ग) **बुनसन-ग्रीज-स्पॉट-फोटोमीटर (Bunsen's Grease Spot Photometer)** (चित्र 15)—यह फोटोमीटर काफी उपयोगी और दूसरे फोटोमीटरों की बनिस्बत, आसानी से और ठीक-ठीक मापे देने वाला है। इसमे, एक मोटे कागज के बीच मे थोडी सी चिकनाहट (ग्रीज) लगी रहती है। जब इस कागज के एक ओर कोई प्रकाश-स्रोत रखकर, दूसरी ओर मे देखते है, तो चिकनाहट लगा हुआ हिस्सा, कागज के दूसरे हिस्सो की बनिस्बत, ज्यादा चमकीला (पारभासक-translucent बन जाने से) लगने लगता है। अब अगर एक दूसरा प्रकाश-स्रोत, कागज के दूसरी ओर रख दिया जावे, तो दोनो ओर से प्रकाश पाने से इस भाग की चमक घट जावेगी। दोनो प्रकाश-स्रोतो को आगे-पीछे करने पर एक ऐसी स्थिति (position) आवेगी, कि दोनो ओर से देखने पर बीच वाले चमकीले भाग का पता ही नही लगने पावेगा, पूरा कागज एक जैसा दीखने लगेगा। यही समान प्रदीप्ति वाली स्थिति होगी।



चित्र 15

कुछ यन्त्रो मे इस चिकने धब्बे वाले कागज को एक बक्स के बीच मे लगा देते हैं। कागज के इधर-उधर सामने वाली, बक्स की दीवारो (sides of the box) से, प्रकाश आने के लिये, एक-एक छेद बना होता है। यह ध्यान रखा जाता है कि इन दोनों छेदो (holes) का केन्द्र और कागज वाले धब्बे का केन्द्र एक ही सीधी रेखा मे रहे। साथ ही दीवारो के सहारे, 45° पर झुके हुए, दो समतल दर्पण भी लगे रहते है। इन दर्पणो (mirrors) की सहायता से, चिकनाहट वाले धब्बे के दोनो ओर की दशा सामने की ओर से एक साथ ही देखी जा सकती है। बक्स की दीवारे, भीतर से काली की हुई होती है। बक्स को, स्टैड मे लगाकर, प्रकाश-मच पर रख देते है। इस बक्स के इधर-उधर, एक-एक प्रकाश-स्रोत भी स्टैड मे लगाकर रख देते है। यह ध्यान रखते है कि दोनो स्रोतो और बक्स का केन्द्र, एक ही सीधी पडी रेखा मे मच की लम्बाई के समानान्तर रहे। इसके बाद एक स्रोत को स्थिर रखकर, दूसरे को मंच पर इतना आगे-पीछे करते है, कि चिकनाहट (धब्बे) वाला भाग, दोनो दर्पणो में एक जैसा चमके। दोनों स्रोतो की धब्बे से दूरियाँ मापकर, प्रदीपन सामर्थ्यों की तुलना की जा सकती है।

(अधिक विस्तार के लिये "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० जे० चटर्जी देखिये)।

मान लो कि, प्रकाश-स्रोतो (L_1, L_2), की प्रदीपन-सामर्थ्य P_1, P_2 है, इनकी 'धब्बे वाले बक्स' से दूरियाँ क्रमश. r_1, r_2 है। और q_1, q_2, इनसे पर्दे के इकाई क्षेत्र पर पडने वाले प्रकाश की क्रमशः मात्राये है। धब्बे पर (L_1) से पडने वाले प्रकाश का (a) अंश तो फैलकर, कागज के बिना धब्बे वाले अश से परावर्त्तित (reflected) हो जाता है, और धब्बे से परावर्त्तित होने वाला भाग (b) है। तो धब्बे वाले भाग मे से पार निकलने वाला अश $(1-b)$, और बिना धब्बे वाले भाग मे से पार निकलने वाला अश $(1-a)$ होगा।

अगर धब्बे वाले कागज को, प्रकाश-स्रोत (L_1) की ओर से देखा जा रहा है, तो इसके चिकने अश के इकाई क्षेत्र द्वारा, L_1 से आने वाले प्रकाश का परावर्त्तित अश (q_1, b) होगा, जबकि चिकने अश के इकाई क्षेत्र मे से आर-पार आने वाला अश q_2 $(1-b)$ होगा अर्थात् चिकने अश के इकाई क्षेत्र पर से, हमारी आँख तक पहुँचने वाला कुल प्रकाश, $\{q_1 b+q_2 (1-b)\}$ होगा।

इसी तरह, बिना चिकनाई वाले अश मे, हमारी आँख तक, कुल $\{q_1 a+q_2 (1-a)\}$ प्रकाश पहुँचेगा।

समान प्रदीप्ति होने पर, प्रकाश की यह दोनो मात्राओ मे बराबर होगी।

अर्थात् $\{q_1 b+q_2(1-b)\} = \{q_1 a+q_2 (1-a)\}$

या $q_1 (b-a) = q_2 (b-a)$

या $q_1 = q_2$

अर्थात् $\frac{P_1}{{r_1}^2} = \frac{P_2}{{r_2}^2}$ या $\frac{P_1}{P_2} = \left(\frac{r_1}{r_2}\right)^2$

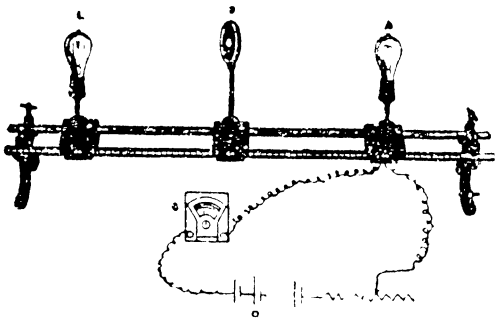
13. उत्क्रम-वर्ग-नियम को प्रयोग द्वारा सिद्ध करना (Experimental verification of the Inverse Square Law)—एक बुनसन-फोटोमीटर लेकर, उसके एक ओर एक मोमबत्ती, और दूसरी ओर वैसी ही चार मोमबत्तियो को पास-पास ही एक स्टैड मे खडा लगा दो। अब मोमबत्तियो वाले स्टैडो मे से एक को स्थिर रखकर दूसरे को इतना आगे-पीछे करो कि बीच वाला धब्बा दीखना बद हो जावे। तब स्रोतो की धब्बे से अपनी-अपनी दूरियाँ (r_1, r_2) माप लो। आप देखोगे कि ($r_2=2r_1$) जबकि r_1, अकेली मोमबत्ती वाले स्टैड की, पर्दे से दूरी, और r_2, दूसरे स्टैड की, इसी धब्बे से दूरी है। यह फल उत्क्रम-वर्ग-नियम की सत्यता सिद्ध करता हो, क्योकि—

$$\frac{P_2}{P_1} = \frac{\text{4 मोमबत्तियो की प्रदीपन-सामर्थ्य}}{\text{1 मोमबत्ती की प्रदीपन-सामर्थ्य}} = 4$$

परन्तु $\left(\frac{r_2}{r_1}\right)^2 = \left(\frac{2r_1}{r_1}\right)^2 = 4$, अतः $\frac{P_2}{P_1} = \left(\frac{r_2}{r_1}\right)^2$

क्योंकि इस प्रयोग मे प्रदीप्ति (चमक) की समानता, केवल अनुमान से की जाती है इसलिये इस क्रिया को कई बार करके, औसत फल मालूम किया जाता है।

ऊपर बतलाई हुई विधि से भी अधिक शुद्ध विधि इस तरह है—दोनों प्रकाश-स्रोतो मे से एक को परिवर्त्तनशील और प्रायोगिक को स्थिर प्रदीप्ति वाला रखा जाता है। यह परिवर्त्तनशील प्रदीपन-सामर्थ्य वाला प्रकाश-स्रोत, (चित्र 16) बिजली के एक लैंप के रूप मे होता है। इस लैंप के तार (filament) मे से चलने वाली बिजली की माप लेने के लिये, इस सर्किट मे एक गैलवनोमीटर, और इस मान को कम-अधिक करने के लिये एक 'परिवर्त्तनशील-प्रतिरोध-तार' (variable resistance wire) या 'रिहोस्टैट' (rheostat) लगा होता है। विद्युत-धारा का स्रोत, सूखी बैटरी (dry batteries) होता है। गैलवनोमीटर को प्रकाश-स्रोत की C. P मे पहले ही से अशाकित (calibrate) किया हुआ रहता है। इसलिये तुलना किये जाने वाले स्रोत की C P सीधे ही ज्ञात हो जाती है। बाकी सारा प्रयोग, बुनसन-फोटोमीटर जैसा ही होता है। अन्तर केवल इतना है कि इस विधि में बिजली के लैंप (L_2) को तो, प्रकाश-मन्च पर स्थिर रखते है, लेकिन सर्किट का प्रतिरोध घटा-बढ़ाकर, लैंप के प्रकाश की C P, कम या अधिक की जाती है। उसी के अनुसार, तुलना किये जाने वाले प्रायोगिक प्रकाश-स्रोत (L_1) को भी इधर-उधर हटाकर, चिकनाहट वाले अश की चमक एक जैसी की जाती है। प्रयोग द्वारा पता लगेगा कि, क्योंकि $I = \frac{P_1}{d_1^2} = \frac{P_2}{d_2^2}$

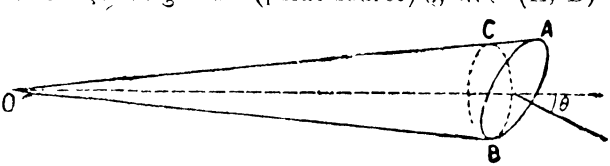


चित्र 16

$\therefore (P_1, d_2^2) = (P_2, d_1^2)$

जबकि P_1, P_2 स्रोत, L_1, L_2 की प्रदीपन-सामर्थ्य है, और d_1, d_2 इनकी चिकने भाग से क्रमश दूरियाँ है।

14. तिरछी किरणों की प्रदीप्ति (Intensity of oblique illumination)—चित्र 13 मे 'O' एक 'बिन्दु-स्रोत' (point source) है, और (A, B) समतल का एक छोटा सा हिस्सा है। (A, B) का क्षेत्रफल (A) है। इस अश को प्रकाश-किरणो के रास्ते पर रख दिया गया है। बिन्दु 'O' से कोनाकार (conical) चलने वाला



चित्र 17

प्रकाश, जब इस क्षेत्र (A, B) पर पडता है, तो मान लो, बीच वाली किरण और इस अश पर के अभिलम्ब (normal) के बीच ($\theta°$) का कोण बनता है। अब अगर (A, B) को $\theta°$ घुमाकर, (B, C) की स्थिति मे ले आवे, तो 'O' से किरणें, इस पर, अभिलम्बवत् (normally) पडने लगेगी। ज्यामिति के अनुसार, (A, B) का 'प्रत्यालेख' (projection) ही (B, C) बन जाता है। इसलिये (B, C) = (B, A) Cos θ। अगर प्रकाश के 'कोन' में, प्रति सैकिड बाहर जाने वाले प्रकाश की मात्रा (q) है, तो (A, B) तल के इकाई क्षेत्र की प्रदीप्ति ($I_1 = q/A$) होगी, और (B, C) की प्रदीप्ति ($I_2 = q/A$ Cos θ) $= I_1/\text{Cos } \theta$

$$\text{या } I_1 = I_2 \text{ Cos } \theta = \frac{P}{d_2} \text{Cos } \theta \quad \ldots \quad (14{\cdot}1)$$

जबकि P = प्रकाश-स्रोत की प्रदीपन-सामर्थ्य और d = स्रोत से तल की दूरी। अर्थात् जब स्रोत और तल के बीच की दूरी को स्थिर रखते हुए, किरणो को तिरछा करते जाते है, तो प्रदीप्ति कम होती जाती है। सुबह और शाम को कम प्रकाश रहने का यही कारण है।

आन्तरिक-प्रदीप्ति (Intrinsic Luminosity)—जब प्रकाश-स्रोत एक बिन्दु के रूप मे न होकर, किसी चौडे तल, जैसे सूर्य या श्वेत-तप्त (white-hot) प्लैटीनम का तार, जैसा हो, तो इसका हर एक बिन्दु, स्वतत्र प्रकाश-बिन्दु जैसा कार्य करने लगता है। तब इस स्रोत के प्रकाश को सभी दिशाओ मे एक जैसा फैलता हुआ मानकर, स्रोत की "आन्तरिक-प्रदीप्ति" प्रति सैकिड, तल के इकाई क्षेत्र पर पडने वाले प्रकाश की मात्रा होती है। यह प्रकाश, तल पर लम्बवत् पडना चाहिये, और तल, स्रोत से इकाई दूरी पर रखा होना चाहिये।

आंकिक उदाहरण

1. दो लैंपो की प्रदीपन-सामर्थ्य क्रमश 8 और 32 C. P. है। दोनो के बीच की दूरी 120 से० मी० है। इन दोनो के बीच मे किस स्थिति मे एक पर्दा रखे कि उस पर इन दोनो की प्रदीप्तियाँ बराबर हो जावे।

(यू० पी० बोर्ड *1951*, राजपूताना *1951*)

(Two lamps of 8 and 32 C. P fixed 120 cms apart. Find the positions on the line joining them, where a screen would be equally illuminated) (*U. P. B 1951; Raj U. 1951*)

उत्तर—मान लो पर्दा, 8 C. P. वाले लैंप से x फुट की दूरी पर रखा है। तो इसकी, दूसरे लैंप से दूरी $(120-x)$ फुट होगी। दोनो स्रोतो की प्रदीप्तियाँ बराबर हो जाने पर, $\frac{8}{x^2} = \frac{32}{(120-x)^2}$ या $4 = \frac{(120-x)^2}{x^2}$

$\therefore \quad 2 = \pm \left(\frac{120-x}{x}\right)$; इसलिये $x = 40$ फुट या (-120) फुट

(i) जब $x=40$ फुट, तो पर्दा, 8 C. P. वाले लैंप से 40 फुट की दूरी पर रखा होगा, और दूसरे (32. C. P. वाले) लैंप से इसकी दूरी $(120-x=80)$ फुट होगी। इस प्रबध मे पर्दा दोनों लैंपो के बीच मे रखना होगा, यह प्रबध, बुनसन-फोटोमीटर मे होता है।

(ii) जब $(x=-120)$, तो 8 C. P. वाले लैंप से पर्दे की दूरी (-120) फुट और दूसरे 32 C. P. वाले लैंप से $(120-x)=240$ फुट होगी। यानी फोटोमीटर को, 8 C. P. वाले लैंप के पीछे 120 फुट की दूरी पर रखना होगा। यह प्रबन्ध रूमफोर्ड-फोटोमीटर मे होता है।

2. फोटो खीचते समय, जब प्रिंटिग-फ्रेम मे लगे हुए 'ब्रोमाइड-पेपर' को 30 C.P. वाले लैंप से 2 फुट की दूरी पर 20 सैकिड तक रखते है, तो फोटो (प्रिंट) ठीक उतरती है। अगर लैंप की C.P. बढाकर 25 कर दी जावे, तो पहले जैसा ही स्पष्ट चित्र उतारने के लिए, 36 सैकिड तक, उसे कितनी दूरी पर रखना पडेगा ?

(पूर्वी पजाब *1953*)

(A satisfactory photographic print was obtained when the exposure was for 20 seconds at a distance of 2 ft. from a 20 c. p. lamp. At what distance must the same print exposed for 36 seconds be placed from a 25 c. p. lamp to obtain an equally satisfactory print). (*East Punjab 1953*)

उत्तर—मान लो लैंप से प्रकाश की कुल (Q) मात्रा आ रही है, तो

पहली स्थिति मे, 'ब्रोमाइड-पेपर' पर प्रदीप्ति $(I)=\dfrac{Q}{20}=\dfrac{20}{2^2}$

$$\therefore\ Q_1=20\ \frac{20}{2^2}$$

इसी तरह दूसरी स्थिति मे, $\dfrac{Q_2}{36}=\dfrac{25}{X^2}$

जब कि (x) कागज और 25 C P. वाले लैंप के बीच की दूरी, सें० मी० मे है। लेकिन दोनो स्थितियों मे प्रकाश की मात्रा बराबर होगी, क्योकि 'प्रिंट' एक जैसा ही स्पष्ट उतरता है।

$$\therefore\quad Q_1=Q_2\ \text{या}\ \left(\frac{20\times 20}{2^2}\right)=\frac{25\times 36}{X^2}$$

अथवा $X=3$ फुट

3. 20 C. P. वाला एक लैंप, 6 फुट भुजा वाली वर्गाकार (square) मेज के बीच से, 4 फुट ऊपर लटक रहा है। मेज के केन्द्र और कोनों (corners) पर पड़ने वाले प्रकाश की प्रदीप्ति मालूम करो। (गौहाटी *1951*)

(A 20 c p. lamp is suspended 4 ft. above the centre of a square table of side 6 ft Find the illumination at the centre of the table and at the corners.) (*Gauhati 1951*)

उत्तर—क्योंकि प्रकाश की किरणें, मेज के केन्द्र पर लम्बवत् पड़ रही हैं।

$\therefore$ मेज के केन्द्र पर प्रदीप्ति $(I) = \frac{20}{4^2} = 1.25$ फुट-कैंडिल

वर्गाकार होने से, मेज के केन्द्र से उसके हरएक कोने से दूरी $(3\sqrt{2})$ फुट होगी।

लैंप से कोने की दूरी $(=x)\sqrt{2+4^2} = \sqrt{34}$ फट

साथ ही कोने पर, प्रकाश-किरणें, ऊर्ध्व-तल (vertical plane) के साथ कुछ कोण $(=\theta)$ बनाती हुई पडेंगी।

$\therefore$ कोने पर प्रदीप्ति $(I\theta) = I \cos\theta = \frac{20}{16} \quad \frac{4}{\sqrt{34}}$

$= 0{\cdot}4$ फुट-कैंडिल

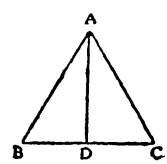
4. समत्रिबाहु त्रिभुज (equilateral triangle) (A, B, C) की भुजा (B, C) का मध्य-बिन्दु (mid-pt) (D) है। बिंदु (B), (C) और (D) पर अलग-अलग, प्रदीपन-सामर्थ्य वाले, प्रकाश-स्रोत रखने से, बिंदु (A) पर एक जैसी प्रदीप्ति होती है। इन स्रोतों की सामर्थ्यों की तुलना करो। (पटना *1953*)

(The lines joining the points A, B, C, form an equilateral triangle 'D' is the middle point of the side BC. Sources of light placed at B, C, and D are found to illuminate the screen at 'A' equally Compare their candle-powers.) (*Patna 1953*)

उत्तर—चित्र 18 से स्पष्ट है कि रेखा (A, D) कोण (B, A, C) $= 60^\circ$ को द्विभाजित (bisect) करती है। मान लो A C $= x =$ A B.

परन्तु $\frac{AD}{AC} = \sin 60^\circ = \frac{\sqrt{3}}{2}$

$\therefore \quad AD = \frac{x\sqrt{3}}{2}$



चित्र 18

गणन की सरलता के लिये मान लो कि पर्दा, (A, D) के लम्बवत् (perpendicularly) रखा है तो P_1, प्रदीपन-सामर्थ्य वाला स्रोत,

बिन्दु 'A' पर $\frac{P_1}{AD^2} = \frac{4P_1}{3x^2}$ प्रदीप्ति करेगा।

इसी तरह बिन्दु (B) या (C) पर P_2 सामर्थ्य वाला स्रोत रखने से, 'A' पर,

$\frac{P_2}{x^2} \cos DAC = \frac{P_2}{x^2} \quad \frac{\sqrt{3}}{2}$ प्रदीप्ति करेगा।

परन्तु प्रश्न के अनुसार यह दोनों प्रदीप्तियाँ बराबर है।

$\therefore \quad \frac{4}{3} \quad \frac{P_1}{x^2} = \frac{\sqrt{3}}{2} \quad \frac{P_2}{x^2}$

अथवा $\frac{P_1}{P_2} = \frac{3\sqrt{3}}{8}$

इसकी प्रदीपन-सामर्थ्य, 8 . 8 . $3\sqrt{3}$ के अनुपात मे है।

रोजर बेकन (1214-1294)
(Roger Bacon)

आपका जन्म, सोमरसैर के 'इलचैस्टर' नामक स्थान पर हुआ। ऑक्सफोर्ड मे आपकी बचपन की शिक्षा-दीक्षा के बारे मे कुछ विशेष पता नही चलता। बाद मे आप पेरिस चले गये, जो कि उन दिनों सारे यूरोप मे विद्याध्ययन का प्रमुख केन्द्र बना हुआ था। वहाँ से 'डिविनिटी' की उपाधि लेकर आप वापस ऑक्सफोर्ड चले आये।

बेकन ने ही 'आतशी शीशे' (magnifying glass) का आविष्कार किया, और दूरबीन (telescope) बना सकने की सम्भावना बतलाई। 400 वर्ष बाद, गैलीलियो ने यह यत्र पूरा किया। गन-पाउडर (बारूद) भी आपने ही बनाया। 'इद्र-धनुष' (rainbow) बनने की क्रिया को आपने समझाया। आपने तत्कालीन सभी विषयो पर एक अच्छी पुस्तक भी लिखी।

सार (Summary)

माध्यम, **पारदर्शक, अपारदर्शक या पार-भासक हो सकता है।**

प्रकाश का सीधी रेखा मे चलना—**समांगी माध्यम में प्रकाश, सीधी रेखा में चलता है। इसको "पिन होल-कैमरा" और 'छाया' से सिद्ध किया जा सकता है।**

चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण को भी छाया के सिद्धान्त से समझाया जा सकता है।

छायाएँ (i) **बिन्दु-स्रोत होने पर सिर्फ पूर्ण-छाया बनती है।**

(ii) **बड़ा स्रोत होने पर पूर्ण-छाया और उप-छाया, दोनों ही बनती है।**

प्रदीप्ति—**यह, तल के किसी भी बिन्दु पर, उस बिन्दु के चारों ओर, इकाई क्षेत्र पर प्रति सैकिंड पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा होती है।**

स्रोत की प्रदीपन-सामर्थ्य—**यह उसके द्वारा, उससे इकाई दूरी पर, समकोणिक रखे हुए तल के इकाई क्षेत्र पर प्रति सैकिड पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा होती है।**

उत्क्रम-वर्ग-नियम $I_1 : I_2 :: r_2^2 : r_1^2$, **इस नियम को 'फोटोमीटर' से सिद्ध किया जा सकता है।**

फोटोमीटरों **से प्रकाश-स्रोतों की प्रदीपन-सामर्थ्य की तुलना की जाती है। इनके विभिन्न प्रकार यह हैं**—(i) **रूमफोर्ड-छाया-फोटोमीटर;** (ii) **जौली-फोटोमीटर;** (iii) **बुनसन-ग्रीज़-स्पॉट-फोटोमीटर।**

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. पिनहोल-(छिद्र)-कैमरा का वर्णन करो। अगर (i) इसका छेद चौड़ा कर दें और (ii) छेद व पर्दे के बीच की दूरी को बढ़ाकर दो गुना कर दें, तो बनने वाली प्रतिमूर्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा? (कलकत्ता 1953)

2. (i) चित्र खींच कर, बन सकने वाली तरह-तरह की छायाओं की बनावट समझाओ। पूर्ण-छाया और उप-छाया का भेद भी स्पष्ट करो। (उत्कल 1951)

(ii) एक ठोस गोल पिंड (अपारदर्शक) द्वारा बनने वाली 'पूर्ण-छाया' और 'उप-छाया' बनने की क्रिया साफ-साफ समझाओ। इस पिंड के छोटा और बड़ा होने का छाया पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? (कलकत्ता 1950)

3. 'सूर्य-ग्रहण' और 'चन्द्र ग्रहण' लगने की क्रियाओं को चित्र खींचकर समझाओ। चन्द्रमा का वलयाकार (annular) ग्रहण क्यों नहीं दिखलाई पड़ता ?

(कलकत्ता 1950 ; ढाका 1932 ; पटना 1927 ; बनारस 1953)

4. सूर्य का अर्ध-व्यास, पृथ्वी के अर्ध-व्यास से 100 गुना है। चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी पृथ्वी के अर्ध-व्यास की 160 गुना है और सूर्य, पृथ्वी से 93×10^6 मील दूरी पर है। (i) पृथ्वी के पूर्ण-छाया वाले कोन की लम्बाई बतलाओ। (ii) चन्द्रमा की दूरी वाले स्थान पर, इस कोन के आधार-क्षेत्र का व्यास मालूम करो, जबकि पृथ्वी का अर्धव्यास 4000 मील है।

उत्तर—(i) 939394 मील ; (ii) 5956 मील

5. 'बुनसन-फोटोमीटर' की बनावट बतलाकर, उसकी कार्य-विधि और सिद्धान्त समझाओ।

(यू० पी० बोर्ड 1947 ; मद्रास 1945 ; राजपूताना 1948, 50, 52 ; पंजाब 1951)

6. 'प्रदीप्ति' और 'प्रदीपन-सामर्थ्य' की परिभाषायें दो। दो प्रकाश-स्रोतों की तुलना किस तरह करोगे ?

(यू० पी० बोर्ड 1951, 55 ; मद्रास 1942, 46, 50 ; पटना 1953 ; पंजाब 1951 ; विश्व-भारती 1952 ; गोहाटी 1951 , उत्कल 1954)

7. (i) लैंप की कैंडिल-पावर से क्या अर्थ लगाते हो ? दो प्रकाश-स्रोतों की C. P. की किस तरह तुलना करोगे ? (दिल्ली 1940)

(ii) एक प्रमाण-बत्ती और एक लैंप को जब पर्दे से क्रमशः 16 और 80 सैं० मी० की दूरी पर रखते हैं तो समान प्रदीप्ति होती है। लैंप की कैंडिल-पावर (C. P.) मालूम करो।

(मद्रास 1950)

8. फोटो खींचते समय, जब प्रिंटिंग-फ्रेम में लगे हुए 'ब्रोमाइड-पेपर' को 16 C. P. वाले लैंप से 2 फुट की दूरी पर 15 सैकिंड तक रखते हैं, तो 'प्रिंट' (चित्र) ठीक उतरता है। अगर लैंप की C. P. 32 हो जावे, तो 20 सैकिंड तक प्रकाश के सामने रखकर पहले जैसा ही स्पष्ट चित्र उतारने के लिये, इसको लैंप से कितनी दूर रखना पड़ेगा ?

उत्तर—3·26 फुट (नागपुर 1954 ; दिल्ली 1932 ; पंजाब 1928)

9. सिद्ध करो कि बिन्दु-स्रोत की प्रदीप्ति; स्रोत से तल की दूरी के वर्ग की व्युत्क्रमानुपाती होती है। क्या 'सर्च-लाइट' की प्रदीप्ति भी इसी नियमानुसार बदलेंगे और क्यों ?

(गोहाटी 1952)

10. एक फोटोमीटर के पर्दे पर, दो लैंपों (A) और (B) की एक जैसी प्रदीप्ति हो रही है। पर्दे की दूरियाँ, इनसे क्रमशः 60 और 30 सैं० मी० है। एक समतल-दर्पण का चमकीला तल फोटोमीटर की अक्ष (दोनों स्रोतों और फोटोमीटर को मिलाने वाली रेखा) पर रखा जाता है। जब इस दर्पण को (B) स्रोत से 7·5 सैं० मी० पर पर्दे से अधिक दूरी वाली ओर रखा जाता है तो स्रोत (A) को, समान प्रदीप्ति के लिये, पर्दे की ओर 9 सैं० मी० हटाना पड़ता है। तो स्रोत (B) की C. P. की, उसकी प्रतिमूर्त्ति की C. P. से तुलना करो।

उत्तर—999/1156 (गोहाटी 1952)

11. तल की 'प्रदीप्ति' और स्रोत की 'प्रदीपन-सामर्थ्य' का भेद स्पष्ट करो। सिद्ध करो कि यह, तल की स्रोत से दूरी के वर्ग की व्युत्क्रमानुपाती होती है। इसके मापने की क्या इकाई है ?

(कलकत्ता 1949 ; राजपूताना 1951 ; पंजाब 1952 ; दिल्ली 1943 , मद्रास 1944)

12. तल के किसी बिंदु पर प्रकाश की प्रदीप्ति, और उस बिन्दु की प्रकाश-स्रोत से दूरी के बीच एक सबंध स्थापित करो। इस संबंध को प्रयोग द्वारा सिद्ध भी करो।

(मद्रास 1948 ; पटना 1954 ; नागपुर 1954)

13. 25 और 16 C. P. वाले दो लैंपों के बीच की दूरी 90 सैं० मी० है। इन दोनों के बीच किस बिन्दु पर समान प्रदीप्ति होगी ?

उत्तर—25 C. P. वाले लैंप से 50 सैं० मी० पर (पंजाब 1952)

14. 32 C P. वाले लैंप का प्रकाश, चमकीले दर्पण पर पड़कर परावर्त्तित हो रहा है। आगे यह परावर्त्तित प्रकाश, बुनसन-फोटोमीटर के चमकीले धब्बे पर पड़ता है। लैंप और इस धब्बे के बीच की दूरी 150 सैं० मी० है। अगर दर्पण, 90% प्रकाश परावर्तित करता है, तो इसको कहां रखने से, फोटोमीटर का धब्बा दीखना बंद हो जावेगा ?

उत्तर—धब्बे से 71 सैं० मी० पर (यू० पी० बोर्ड 1955)

15. 25 C. P. वाला एक लैंप, 100 C. P. वाले लैंप से 3 फुट की दूरी पर रखा है। इन दोनों के बीच में कागज़ रखने पर समान प्रदीप्ति होती है। अब 25 C. P, वाले लैंप को 2 फुट परे (further) हटा देते हैं। कागज को कितना और किस ओर हटावें कि फिर से समान प्रदीप्ति होने लगे ?

उत्तर—$1\frac{1}{5}$ फुट (पंजाब 1951)

16. बिजली का एक लैंप, (d) व्यास गोल मेज के केन्द्र से (b) फुट की ऊँचाई पर लटक रहा है। सिद्ध करो कि मेज के केन्द्र पर 'प्रदीप्ति' कोने वाली मान से $\left((1+\frac{d^2}{4h^2}\right)$ गुना है।

(राजपूताना 1954)

17. दो प्रकाश स्रोतों के बीच की दूरी 100 सैं० मी० है। इनके बीच में बुनसन-फोटोमीटर को इस तरह रखा गया है कि धब्बा दीखना बंद हो गया है। इन दोनों स्रोतों को आपस में बदल लेने पर, समान प्रदीप्ति के लिये, फोटोमीटर को 30 सैं० मी० हटाना पड़ जाता है। दोनों स्रोतों की प्रदीप्तियों की तुलना करो।

उत्तर—169 : 49 (उत्कल 1954)

अध्याय 2

समतलों पर परावर्तन

(Reflection at Plane Surfaces)

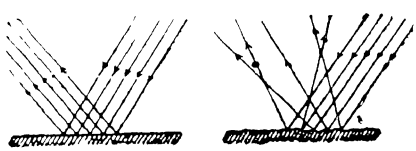
15. परावर्त्तन (Reflection)—एक ही 'समागी-माध्यम' (homogeneous medium) मे से होकर जाते हुए प्रकाश-किरणे सीधी रेखा मे चलती है। लेकिन जब वे एक माध्यम मे से चलकर, दूसरे माध्यम के 'सस्पर्शक-तल' (contact plane) पर आती है तो—

(i) इनमे से कुछ किरणे, परावर्त्तित होकर, उसी माध्यम मे वापस लौट जाती हैं।

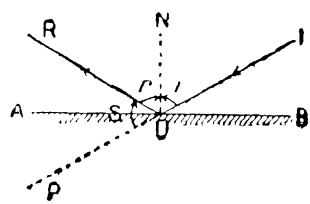
(ii) दूसरा माध्यम, इनके कुछ अश को सोख (absorb) लेता है। और

(iii) बाकी भाग, दूसरे माध्यम के पारदर्शक (transparent) होने पर, पहले माध्यम से दूसरे माध्यम मे चला जाता है। इस क्रिया को 'आवर्त्तन' (reffraction) कहते है।

प्रकाश-किरणो का परावर्त्तन, सस्पर्शक तल के प्रकार पर काफी निर्भर करता है। समतल होने पर यह निश्चित दिशा मे ही, 'परावर्त्तन-नियमो' का पालन करती



चित्र 19



चित्र 20

हुई मुडती है। लेकिन सतह के खुरदरे होने पर, यही किरणें चारो ओर बिखर (scatter) जाती हैं (देखो चित्र 19)। चित्र 20 मे नियमित (regular) परावर्त्तन दिखलाया गया है। प्रकाश की एक किरण (I, O) समसंस्पर्शक-तल (A B) पर आकर पडती है, और (O, R) दिशा मे, परावर्त्तित होकर, उसी माध्यम मे लौट जाती है। (O, N) इस तल पर, बिन्दु 'O' पर लम्ब (normal) है, (I, O) को आपतित-किरण (incident ray) और (O, R) को परावर्त्तित-किरण (reflected ray) कहते हैं। कोण ∠ION को आपतन-कोण (angle of incidence) ($=i$), और ∠RON, परावर्त्तन-कोण (angle of reflection) ($=r$) कहलाता है।

दर्पण (mirror)—जो भी खूब चमकता हुआ तल, प्रकाश का नियमित परावर्त्तन करे, दर्पण कहलाता है। साफ पारे की सतह, पालिश किया हुआ धातु का तल या मुंह देखने का शीशा, सभी दर्पण का काम देते है।

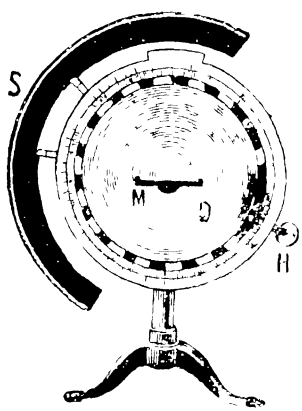
16. परावर्त्तन के नियम (Laws of Reflection)—नियमित परावर्त्तन (regular reflection) हमेशा नियम-बद्ध होता है। यह नियम इस प्रकार है—

(1) आपतित किरण, अभिलम्ब और परावर्त्तित किरण, सब एक ही तल (in one plane) मे रहते है।

(2) परावर्त्तन-कोण ($=\angle r$), हमेशा आपतन-कोण ($=\angle i$) के बराबर होता है। यानी ($\angle i = \angle r$)।

नियमों का सत्यापन (Verification of Laws)—

(i) हार्टिल-उपकरण (Hartel's Optical Disc) से—इस उपकरण मे एक गोल चक्र (D) (चित्र 21), ऊर्ध्व-तल (vertical plane) मे लगा रहता है। चक्र पर एक गोल पैमाना लगा होता है, जिसको चार भागो (quarters) मे बाँट कर, हर एक भाग मे ($0-90°$) के निशान लगे होते है। यह चक्र (D), अपनी बीच वाली क्षैतिजिक अक्ष (horizontal axis) पर घुमाया जा सकता है। साथ ही इसको एक ही उपस्तम्भ पर लगाकर, ऊर्ध्व-अक्ष पर भी घुमा सकने का प्रबन्ध रहता है। चक्र की परिधि के कुछ अश के समानान्तर एक अपारदर्शक पर्दा, जिसमे एक झिरी (slit) (S) बनी होती है, लगा रहता है। जब सूर्य या दूसरे किसी प्रकाश-स्रोत की किरणो को इस पर्दे पर डालते है तो प्रकाश-किरणे, इस झिरी मे से होकर, चक्र के तल पर पहुंच जाती है। चक्र के बाकी हिस्से फिर भी बिना प्रकाश के रहते हैं। चक्र के केन्द्र पर एक स्टैंड लगा रहता है, जिस पर आवश्यकतानुसार दर्पण, लैंस या प्रिज्म को रखकर प्रयोग किया जाता है।

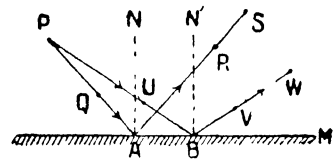


चित्र 21

इस यन्त्र से परावर्त्तन-नियमो की परीक्षा करने के लिए, चक्र के बीच वाले स्टैंड पर एक दर्पण इस तरह लगाओ कि उसका चमकता हुआ तल, झिरी की ओर रहे। ठीक रखा होने पर, दर्पण का तल, चक्र के गोल पैमाने पर ($0°-0°$) वाली रेखा के लम्बवत् हो जाता है। फिर, किसी प्रकाश-स्रोत (जैसे सूर्य, बिजली का लैंप) की किरणो को झिरी पर केन्द्रित करो। झिरी और प्रकाश-किरणों के मार्ग को इतना बदलो कि झिरी से चक्र पर आने वाली किरणे, चक्र के तल के समानान्तर हो जावे। जब यह किरणे, बीच में रखे दर्पण पर पडेगी, तो परावर्त्तित होकर, दूसरी दिशा मे चली जावेगी। क्योकि दर्पण को चक्र के तल पर लम्बवत् रखा जाता है, इस तरह आपतित किरणें, परावर्त्तित किरणे और अभिलम्ब, तीनों का एक ही तल मे होना सिद्ध हो जाता है। साथ ही चक्र के गोल पैमाने पर, आपतित किरण व परावर्त्तित किरण, दोनो की ($0°-0°$) वाली रेखा से मापे ले लेते है। आप

देखोगे कि आपतन और परावर्त्तन-कोण, दोनों बराबर आते हैं। प्रयोग को कई बार करके औसत फल निकलेगा। इसके लिए भिरी को स्थिर रखकर, चक्र को, एक ही ऊर्ध्व-तल मे, थोडा इधर-उधर घुमाना होगा।

(ii) पिन-विधि (Pin Method)—ड्राइंग बोर्ड पर एक सफेद कागज लगाओ। पेंसिल से एक सीधी रेखा कागज पर खीच लो। अब एक समतल-दर्पण (AB) (चित्र 22) को इस कागज पर इस तरह रखो कि इसका तल, कागज के साथ समकोण बनाये। दर्पण के सामने, दो पिन (P, Q) सीधे खडे, इस तरह लगाओ कि इनके निचले सिरो को मिलाने वाली रेखा, दर्पण के बिन्दु (A) पर पडे।



चित्र 22

दर्पण मे इन पिनो की प्रतिमूर्त्ति दिखलाई देगी। एक तीसरा पिन (R) इस तरह लगाओ कि इसका निचला नुकीला सिरा, पहले दो पिनो (P, Q) को मिलाने वाली रेखा की सीध मे रखा हुआ लगने लगे। इसी तरह पिन (S) को भी लगाओ। पिन (P) से प्रकाश-किरण (P, Q), दर्पण के बिन्दु (A) पर पडती है, और परावर्त्तित होकर (R, S) की दिशा मे आकर आँख पर पडती है। दर्पण के तल के साथ-साथ एक सीधी रेखा (A,B) खीचो। बिदु (P,Q) को मिलाकर, रेखा को आगे बढाओ। यह 'आपतित-किरण' (incident ray) होगी। इसी तरह बिन्दु (R, S) को मिलाकर इस रेखा को दर्पण की ओर बढा दो यह 'परावर्त्तित-किरण' (reflected ray) होगी। आप देखोगे कि यह दोनो रेखाये, बिन्दु (A) पर एक दूसरे को काटती है। बिदु (A) पर, तल (A, B) के समकोणिक (at right angles) रेखा (A, N) खीचो और कोण (QAN) व (RAN) को मापो। दोनों कोण बराबर होगे। यहाँ यह याद रखना चाहिए कि रेखा, (P,Q,A) और (A,R,S) मे से किसी एक को भी 'आपतित किरण' माना जा सकता है।

पिन (P,U,B,V,W) को, (P,Q,A,R,S) की तरह ही लगाकर, प्रयोग को दुबारा किया जा सकता है। जब $\angle i=0$ तो $\angle r=0$, अर्थात् आपतित किरण, उसी मार्ग पर वापिस लौट जाती है। इस तरह हम कह सकते है कि 'प्रकाश-किरणों का मार्ग उत्क्रमित होता है (path of light is reversible)। [अधिक विस्तार के लिये "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० जे० चटर्जी देखिये]।

17. प्रकाश-प्रतिमूर्ति (Optical Image)—जब एक बिन्दु से चलने वाली प्रकाश किरणे, परावर्त्तित होने पर, किसी दूसरे बिन्दु पर वास्तव में केन्द्रित होती हैं, या ऐसा होता हुआ प्रतीत होता है, तो इस दूसरे बिदु को पहले वाले बिन्दु की 'प्रकाश-प्रतिमूर्त्ति' कहते है।

'प्रतिमूर्त्ति' दो प्रकार की होती है—काल्पनिक और वास्तविक।

काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति (Virtual Image)—इस प्रतिमूर्त्ति पर, सगत वस्तु से चलने वाली प्रकाश-किरणें, परावर्त्तन के बाद, वास्तव में केन्द्रित नही होती हैं। हाँ, ऐसी होती हुई लगती अवश्य है। इसलिये इस तरह की प्रतिमूर्त्ति को पर्दे (screen) पर नही लिया जा सकता। एक परावर्त्तन से यह ज्यादातर सीधी दिखलाई देती है।

वास्तविक प्रतिमूर्त्ति (Real Image)—यह प्रतिमूर्त्ति, प्रकाश-किरणो के वास्तव में केन्द्रित होने से बनती है। इसलिये इसको पर्दे पर लिया जा सकता है। एक परावर्त्तन के बाद, यह अधिकतर उल्टी ही दीखती है।

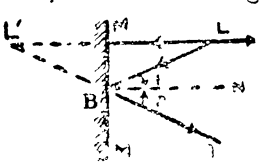
समतल-दर्पण मे प्रतिबिंब की स्थिति और प्रकार (Image due to a Plane Mirror)—समतल-दर्पण द्वारा, किसी प्रकाश-बिंदु-स्रोत की बनने वाली प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और प्रकार इस प्रकार होता है—

(i) वस्तु से, दर्पण पर पडने वाले लम्ब को, उसी दिशा मे उतना ही आगे बढाने से, प्रतिमूर्त्ति की स्थिति मिल जाती है।

(ii) यह प्रतिमूर्त्ति काल्पनिक होती है। अत इसकी स्थिति (अर्थात् दर्पण के पीछे) पर कोई पिन नही रखा जा सकता।

ऊपर बतलाये गये दोनो सत्यो को रेखागणित और प्रयोग, दोनो ही ढगो से सिद्ध किया जा सकता है। यथा—

(i) रेखागणित विधि मे सत्यापन (Geometrical Method)—चित्र 23 मे एक प्रकाशमान बिन्दु है, और (M, M) समतल-दर्पण (plane mirror) का चिकना तल है। एक प्रकाश-किरण (L, M), इस दर्पण पर लम्बवत् (normally) आकर पड रही है। इसलिये यह इसी दिशा मे परावर्त्तित (reflected) होकर, वापिस (M, L) दिशा मे लौट जावेगी। एक दूसरी आपतित (incident) किरण (L, B), दर्पण पर तिरछे होकर पड रही है। इसलिये यह परावर्त्तित होकर (B, R) दिशा मे चली जावेगी। अगर इन दोनो परावर्त्तित किरणो (M, L) और (B, R) को, दर्पण के पीछे की ओर बढाया जावे, तो यह दोनो, बिंदु (L′) पर मिलती हुई मालूम होगी। इसलिये बिंदु (L′), पहले वाले बिंदु (L) की प्रतिमूर्त्ति होगी।



चित्र 23

(B, N) को, बिंदु (B) पर, दर्पण के तल पर, अभिलम्ब (normal) के रूप मे खीचिये। तब परावर्त्तन-नियम से $(\angle RBN) = (\angle LBN)$। क्योकि (BN), (L, M) के समानान्तर है, इसलिये $(\angle LBN) = \angle MLB$ और $(\angle RBN) = (\angle BL'M)$

$\therefore \angle(M, L, B) = \angle(M, L', B)$

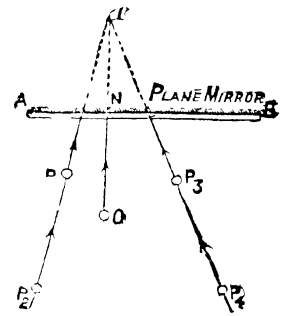
इसी तरह $\triangle(M, L, B)$ और $\triangle(M, L', B)$ मे

$\angle(M, L, B) = \angle(M, L', B)$; और साथ ही समकोण (right angles) होने से $\angle(L, M, B) = \angle(L', M, B)$। (B, M) दोनों मे समान (common) है। इस तरह दोनो त्रिभुज, सभी तरह से बराबर है। अतः $(L'M) = (L, M)$

अर्थात् दर्पण से प्रतिबिम्ब की दूरी = दर्पण से वस्तु की दूरी

क्योंकि यह प्रतिमूर्त्ति, दर्पण के पीछे बनती है, यह काल्पनिक होती है और इसको पर्दे पर नही लिया जा सकता।

(ii) प्रयोग द्वारा (Experimental Proof)—जिस तरह का प्रबध, धारा 16 में, परावर्तन-नियमों के सत्यापन के लिये किया गया था, वैसा ही इस प्रमाण के लिये भी करो। (चित्र 24) मे (A, B) एक समतल-दर्पण का तल है। सबसे पहले एक पिन (O) स्थान पर दर्पण के सामने सीधा गाढ दो। इस पिन के एक ओर बगल मे इसकी प्रतिमूर्त्ति देखो, और दो पिन (P_1, P_2) इस तरह लगाओ कि इन पिनों के निचले सिरे, प्रतिमूर्त्ति की रेखा मे रहें। ठीक तरह से लगने पर, दोनो पिनो (P_1, P_2) और पिन (O) की प्रतिमूर्त्ति के निचले सिरे, सब एक दूसरे पर छाये हुए लगेगे। अब इसी तरह, पिन (P_3, P_4), पहले पिन (P) के दूसरी ओर लगाओ। तब पिन O की प्रतिमूर्त्ति, रेखा (P_2, P_1) और (P_4, P_3) को दर्पण की ओर बढाने पर, इनके काट-बिंदु (point of intersection) (T) पर बनेगी। दर्पण को हटाकर, बिन्दु (O और T) को मिला दो। यह रेखा (O, T), दर्पण के तल वाली रेखा (A, B) को, बिन्दु (N) पर काटती है। मापने पर पता लगेगा कि—



चित्र 24

$$(O,N)=(N,I)$$

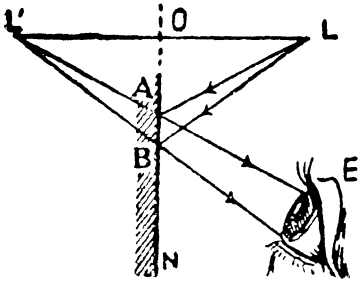
अधिक विस्तार के लिये, "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिये)।

18. प्रतिमूर्त्ति बनाने वाली प्रकाश-किरणो के मार्ग का पता लगाना (Tracing the path of Rays by which the Image is formed)—प्रतिमूर्त्ति बनाने वाली प्रकाश-किरणे निम्न विधि से खीची जाती है (चित्र 25)—

(i) 'बिन्दु-स्रोत' (P) से, एक लम्ब (P, O), दर्पण (M) के तल (A, B, C) पर डालो, और इसको दर्पण के पीछे की ओर बढा दो। इस बढी हुई रेखा मे से (P', O), (P,O) के बराबर काट लो। तो बिदु (P'), बिंदु स्रोत (P) की प्रतिमूर्त्ति होगा। यानी 'P' से चलने वाली प्रकाश-किरणे, दर्पण के तल पर परावर्तित होकर, (P') से फैलती हुई लगेगी।

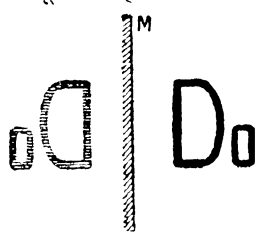
(ii) आँख की पुतली के दोनो सिरो को (P') से मिला दो। यह रेखायें दर्पण के तल को (A) और (B) बिंदुओ पर काटती है। (P, A) और (P, B) को मिला दो। (P, A) और (P, B) रेखाओं की सीमा मे आने वाली आपतित किरणे (incident rays), परावर्त्तित (reflected) होकर, (P') से फैलती हुई दिखलाई देंगी। अर्थात् समतल-दर्पण मे अपना प्रतिबिब देखने के लिये यह जरूरी है कि हमारी आँख और हमारी प्रतिमूर्त्ति को मिलाने वाली रेखा, दर्पण के तल को काटे।

(iii) यदि वस्तु, बिंदु-स्रोत (point-source) के रूप में न होकर, थोडी चौड़ी है, तो इसके प्रत्येक बिंदु को प्रकाश-स्रोत मानकर, प्रत्येक बिंदु की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति निकाली जावेगी। फिर प्रतिमूर्त्ति बनाने वाले सभी बिंदुओं को मिलाने से, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति बन जावेगी। जो भाग दर्पण के पास रहेगे, प्रतिमूर्त्ति मे भी वही भाग दर्पण के पास दीखेगे। प्रतिमूर्त्ति, वस्तु के बराबर आकार वाली ही बनती है। इस तरह समतल-दर्पण द्वारा, प्रतिमूर्त्ति बनने मे, वस्तु का दाँया भाग, प्रतिमूर्त्ति मे बाँया और बाँया भाग, दाँयी ओर दिखलाई पडेगा।



चित्र 25

19. पार्श्विक-उत्क्रमण (Lateral Inversion)—ऊपर धारा 18 (iii) मे हम देख आये है कि समतल-दर्पण द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति मे हमारा सीधा भाग, बाँया और बाँया भाग, दाँया दिखलाई पडता है; यानी पूरी प्रतिमूर्त्ति ही 'उल्टी' (inverted) दिखलाई पडती है। इस क्रिया को ही 'पार्श्विक-उत्क्रमण' (Lateral inversion) कहते हैं। स्पष्ट है कि जो वस्तु, दाँये और बाँये एक जैसी बनी होती है, (जैसे हमारा शरीर), उसकी प्रतिमूर्त्ति मे यह अन्तर अकस्मात् नही जान पडता। चित्र 26 मे एक ओर अग्रेजी का शब्द 'Do' लिखा है। इसमे 'D' बडा और 'o' छोटा अक्षर, उसके दाँयी ओर है। इस कागज़ को समतल-दर्पण के सामने रखने पर, प्रतिमूर्त्ति मे छोटा 'o' बाँयी ओर, और बड़ा 'D', दाँयी ओर आ जावेगा, यद्यपि वास्तव मे 'o', 'D' के दाँयी ओर है।



चित्र 26

20. परावर्त्तन के कुछ उदाहरण

(1) सिद्ध करो कि अपना पूरा प्रतिबिंब देखने के लिये, समतल-दर्पण, की लम्बाई, आदमी की ऊँचाई की आधी होनी चाहिये। (कलकत्ता *1952*)

(Prove that a man can see the whole of his body in a mirror, the length of which is half his own height.) (*C. U. 1952*)

चित्र 27 मे (D) एक समतल-दर्पण है और (P, O) एक आदमी है। (E) इस आदमी की आँखो की स्थिति (position) है। यह आदमी, सामने वाले दर्पण (M) मे अपना पूरा प्रतिबिंब देखना चाहता है। तो पीछे धारा मे बतलाई विधि के अनुसार, बिंदु (P) और (O) से, दर्पण के तल पर लम्ब (P, N) और (O, O') डालो। रेखा (P, N) को दर्पण के पीछे की ओर, इतना ही बढाने पर, 'P' की प्रतिमूर्त्ति (P') की स्थिति मिल जावेगी। इसी तरह 'O' की प्रतिमूर्त्ति (O') होगी।

अब प्रतिमूर्त्ति-बिंदुओं (P^1,Q^1) को बिन्दु (E) से मिला दो। यह दोनों रेखायें (P^1E) और (Q^1, E), समतल-दर्पण के तल को क्रमशः (A) और (B) बिंदुओं

पर काटती हैं। बिंदु (A) और (B) को (E) से मिला दो। इस तरह आदमी के सिर से चलने वाली किरण (P,A), समतल-दर्पण (M) पर से परावर्तित होकर, (A,E) दिशा मे, बिन्दु (P^1) पर से आती हुई मालूम पडेगी। इसी तरह उसके पैरों से चलने वाली किरण (Q,B), परावर्त्तित होकर, (B,E) दिशा में, बिंदु (Q^1) से आती हुई प्रतीत होगी। यानी समतल-दर्पण की आवश्यक लम्बाई (A,B) हुई।

$\triangle (P,P^1,E)$ मे $(P,N)=(P^1,N)$

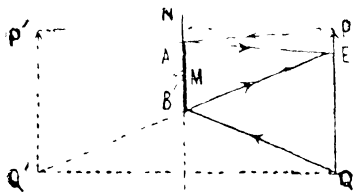
(A,N), (P,E) के समानान्तर है, और (A), (P^1,E) का मध्य-बिंदु है।

इसी तरह $\triangle$ (Q,Q^1E) मे (B), (Q^1,E) रेखा का मध्य-बिंदु है।

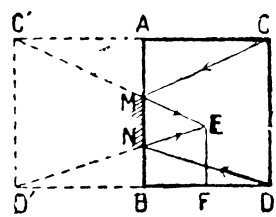
$\therefore$ $\triangle$ (E,P^1,Q^1) मे (A,B), रेखा (P^1,Q^1) की आधी और समानान्तर हुई।

लेकिन $(P^1, Q^1)=(P,Q)$

इसलिये $(A,B)=\frac{1}{2}(P,Q)$



चित्र 27



चित्र 28

(ii) कमरे की दीवार पर एक समतल-दर्पण लगाया जाना है। अगर कमरे के बीच मे खडे होकर पीठ पीछे वाली दीवार का पूरा प्रतिबिंब इस दर्पण में देखना हो तो इस दर्पण की कम से कम लंबाई क्या होगी? (पंजाब *1952*; कलकत्ता *1949*)

(Calculate the minimum size of a plane mirror fixed on the wall of a room in which an observer at the centre of the room can see the full image of the wall behind him.)

(*E. P. U. 1952* ; *C. U. 1949*)

चित्र 28 मे (A,B) कमरे की दीवार है। दर्पण (M,N) इसी दीवार पर टँगा हुआ है। E, देखने वाले आदमी की आँख की स्थिति है, जब कि वह कमरे के बीच मे खड़ा है (अर्थात् B,F=F,D), और (C,D) उसके पीठ पीछे वाली दीवार है।

(C) से (A,C), दर्पण के तल पर लम्ब खीचो। और इसको दर्पण के पीछे इतना ही आगे बढाओ यानी $(C^1A)=(C,A)$ (C^1,E) को मिलादो। यह दर्पण (M,N) को (M) बिंदु पर काटेगी। (C^1,D^1) को मिला दो। इस तरह, पीछे वाली दीवार (C,D) के ऊपरी सिरे (C) से चलने वाली किरण (C,M), दर्पण (M,N) पर परावर्त्तित होकर, (M,E) दिशा में, (C^1) से आती हुई मालूम पडेगी। इसलिये (C^1), (C) की प्रतिमूर्त्ति होगी। इसी तरह (D) की प्रतिमूर्त्ति (D^1) पर बनेगी।

क्योकि देखने वाला आदमी, कमरे के बीच में खडा है

$\therefore$ $(B,F)=\frac{1}{2}(B,D)=\frac{1}{2}(D^1,B)=\frac{1}{2}(D^1,F)$

क्योंकि (B,N), (E,F) के समानान्तर है, इसलिये $(E,N)=\frac{1}{3}(ED)$

इसी तरह $(E,M)=\frac{1}{3}(E,C^1)$

$\therefore \quad (M,N)=\frac{1}{3}(C^1D^1)=\frac{1}{3}(C,D')$

अर्थात् दर्पण की न्यूनतम (minimum) लम्बाई, कमरे की ऊँचाई की एक तिहाई होनी चाहिए।

(ii) **वस्तु और दर्पण का आपेक्षिक स्थानान्तर (Relative Displacement of the Object and Mirror)**—

सिद्ध करो कि जब समतल-दर्पण के सामने रखी हुई कोई वस्तु कुछ दूरी $(=d)$ आगे (या पीछे) हटती है, तो उसकी प्रतिमूर्त्ति भी उतनी दूरी $(=d)$, आगे-पीछे हट जाती है। लेकिन अगर वस्तु को न हटाकर, दर्पण को हटाया जावे, तो दर्पण के (d) दूरी हटने पर, प्रतिमूर्त्ति $(2d)$ दूरी हट जाती है।

(पंजाब *1952*, कलकत्ता *1946*, ढाका *1923*)

(Prove that if an object, in front of a plane mirror, moves through a distance d away from the mirror, the image moves through the same distance; whereas if the mirror moves parallel to itself through a distance (the object remaining fixed), the image will move through a distance $2d$)

[*P. U. 1952*, *C. U. 1946*, *Dac. U. 1923*]

(i) पहली अवस्था—मान लो कि वस्तु समतल-दर्पण के सामने x दूरी पर रखी है। इस वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, पीछे (x) दूरी पर बनेगी। अब वस्तु को, दर्पण के सामने (d) दूरी अधिक दूर पर हटा लो। इस तरह इसकी दर्पण से दूरी $(x+d)$ हो जावेगी। इसलिये अब प्रतिमूर्ति भी, दर्पण के तल के पीछे, $(x+d)$ दूरी पर ही बनेगी। यानी वस्तु के (d) दूर हटने पे, प्रतिमूर्त्ति भी उतना ही $(=d)$ दूरी हट जाती है।

(ii) दूसरी अवस्था—ऊपर की तरह ही इस अवस्था मे भी, समतल-दर्पण के सामने (x) दूरी पर रखी हुई वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, दर्पण के पीछे (x) दूरी पर ही बनेगी। इसके बाद दर्पण को, वस्तु की ओर (d) दूरी हटाते है। इससे वस्तु और दर्पण के बीच की दूरी $(x-d)$ हो जावेगी। साथ ही प्रतिमूर्त्ति भी तल से $(x-d)$ दूरी पर बनेगी, जबकि दर्पण हटाने से पहले बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, इस स्थिति मे $(x+d)$ दूरी पर होगी। इसलिये पुरानी और नई दोनो प्रतिमूर्त्तियों के बीच की दूरी $(x+d-(x-d)=2d)$ हो जावेगी।

(iv) **समतल-दर्पण का घुमाव (Rotation of a Plane Mirror)**—

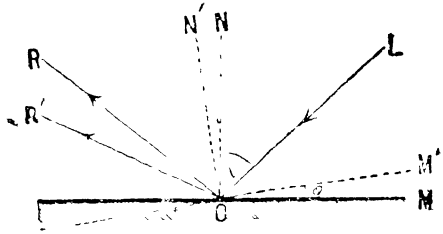
सिद्ध करो कि जब एक समतल-दर्पण कुछ कोण $(=Q)$ घूमता है, तो उससे परावर्त्तित किरण, उसके दो गुने कोण पर घूम जाती है।

(गोहाटी *1955*; पंजाब *1952*; राजपूताना *1949, 55*)

(Prove that when a plane mirror is rotated through any angle, the reflected ray is rotated through twice the angle)

(Gau. U. 1955 ; E. P. U.. 1952 ; Raj. U. 1949, '55 ; C. U. 1947)

चित्र 29 मे (O,M), दर्पण की पहली स्थिति है। इस स्थिति मे (L, O), आपतित किरण है। (O,M)पर, (O,N) लम्ब (normal) है, और (O,R) परावर्त्तित किरण है। जब इस दर्पण को, उसकी अक्ष पर, (0°) घुमाया जावेगा, तो यह (O,M) से (O,M′) स्थिति मे आ जावेगा। (O,N′) इसकी स्थिति मे, इसके तल पर अभिलम्ब होगा। और (O,R′) परावर्त्तित किरण। तब—



चित्र 29

$$\angle(M,O,M') = \angle(N,O,N') = \angle\theta$$

क्योंकि $\angle(L,O,N) = \angle(N,O,R) = \angle i$

यानी $\angle(L,O,R) = 2\angle i$

साथ ही $\angle(L,O,N') = \angle(L,O,R') = (i+\theta)$

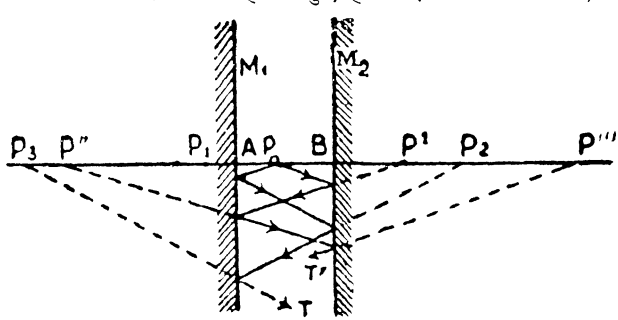
$\therefore \quad \angle(L,O,R') = 2\angle(i+\theta)$

या $\angle(L,O,R') = \angle(L,O,R) = \angle(L,O,R) = \angle(R,O,R) = 2\theta$

इस सिद्धान्त का प्रयोग, वस्तु के बहुत ही थोडे घुमाव को मापने मे किया जाता है, जैसे कि 'सैक्सटैंट' (Sextant), जिसका पूरा-पूरा हाल अध्याय 7 मे दिया गया है।

21. दो समतल-दर्पणों पर परावर्त्तन (Reflction at two Plane Mirrors)—

(क) दर्पण के समानान्तर होने पर (Parallel Mirrors)—चित्र 30 मे (M,M_2) दो समतल-दर्पण इस तरह रखे हुए है कि इनके चमकीले तल, एक दूसरे के



चित्र 30

समानान्तर और मुख किये हुए है। इन दोनों दर्पणों के बीच में, एक बिन्दु-स्रोत (P)

रखा है। दर्पण (M_1) द्वारा वस्तु (P) की प्रतिमूर्त्ति (P_1) बिन्दु पर बनती है और $(P_1,A)=(P,A)$। इसके बाद (P_1), दूसरे दर्पण (M_2) के लिये, एक वस्तु का कार्य करती है, और (P_1) की प्रतिमूर्त्ति (P_2) बनती है, जबकि $(P_2,B)=(P_1,B)$। इसी तरह (P_2), दर्पण (M_1) के लिए एक वस्तु जैसा कार्य करती है और (P_2) की प्रतिमूर्ति (P_3) बन जाती है और $(P_3,A)=(P_2,A)$। यही क्रम आगे भी चलता रहता है और हमको प्रमुख वस्तु (P) की अनेक प्रतिमूर्त्तियाँ (P_1, P_2, P_3) दिखलाई देने लगती है। ध्यान रहे कि (P_1), (P_2) इत्यादि को 'काल्पनिक वस्तु' (virtual objects) कहते है।

इसी तरह (P) की एक दूसरी प्रतिमूर्त्ति, दर्पण (M_2) द्वारा, (P') पर बनती है, और ऊपर बतलाई विधि के अनुसार, प्रतिमूर्त्तियो का एक दूसरा क्रम (P',P'', P''' ··) इत्यादि दिखलाई देने लगता है। अत. सिद्धान्ततः (theoretically), परस्पर समानान्तर रखे हुए दो समतल-दर्पणो के बीच रखी हुई वस्तु की प्रतिमूर्त्तियो की सख्या अनन्त होगी। लेकिन प्रत्येक परावर्त्तन पर, प्रकाश का कुछ भाग, दर्पण के तल द्वारा सोख लिया जाता है, और कुछ भाग बिखरकर खत्म हो जाता है। इसलिये प्रतिमूर्त्तियाँ, धीरे-धीरे, क्रम मे धीमी होने लगती है। यानी सब से पहली प्रतिमूर्त्ति सबसे अधिक चमकीली, उससे अगली, थोडी कम चमकीली और तीसरी उससे भी कम चमकीली।

गणित की दृष्टि से, मानलो $(P,A)=a$ और $(P,B)=b$; तो $(A,B)=(a+b)=d$ (मान लो)। इसलिये $(P,P_1)=2(P,A)=2a$

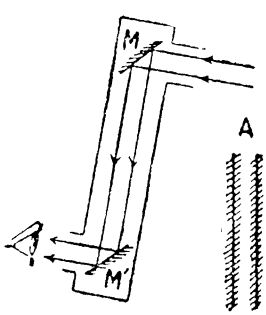
$$(P,P_2)=(P,B)+(B,P_2)=(P,B)+(B,P_1)=2b+2a=2d$$
$$(P,P_3)=(P,A)+(A,P_3)=(P,A)+(A,P_2)=(P\,A)+(A,P)+(P,P_2)=2a+2b$$

....

इसी तरह $(P,P')=2(P,B)=2b$, $(P,P'')=2d$

$(P,P''')=(2b+2d)$ ...इसी तरह दूसरी प्रतिमूर्त्तियो के लिए भी

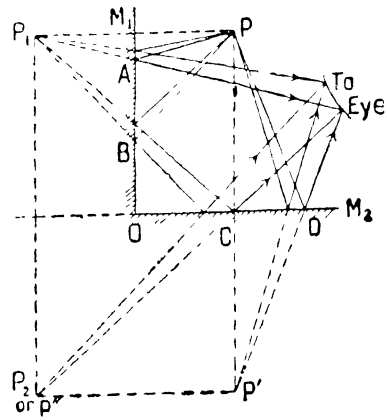
साधारण 'परिदर्शक' (पैरिस्कोप–Periscope) ऊपर बतलाये गए सिद्धान्त का उपयोग इस यन्त्र मे किया गया है। (चित्र—31)। इस यंत्र मे दो समतल-दर्पण (M,M') एक दूसरे के समानान्तर, और मुख किये हुए लगे रहते हैं। इन दोनो के बीच की दूरी घटाई-बढ़ाई जा सकती है। यह दोनो दर्पण, एक नली के एक-एक सिरे पर इस तरह लगे होते हैं कि नली की अक्ष के साथ 45° का कोण बने। ऊपर वाले दर्पण पर, प्रकाश-किरणें, चित्र में दाँयी ओर से आकर पड रही है। आयतन-कोण (angle of incidence) 45° होने से, परावर्त्तन-कोण भी 45° होता है, और किरण पूर्व दिशा के साथ समकोण पर मुड जाती है। नली के निचले भाग मे लगे दर्पण (M') पर पड कर, ये किरणें



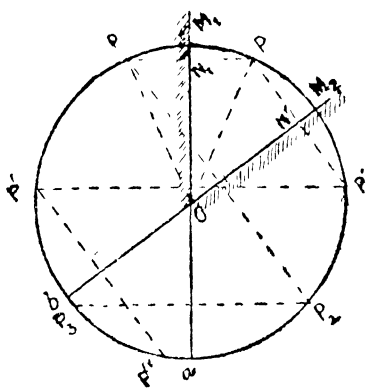
चित्र 31

दुबारा 90° पर मुड कर, दाँये से बाँये चलने लगती हैं। इस तरह जो भी दृश्य, ऊपर वाले दर्पण मे दीखता है, उसकी प्रतिमूर्त्ति, नीचे वाले दर्पण द्वारा, नली के तल मे देखी जा सकती है। इस यत्र की सहायता से, खाई मे छिपा हुआ सिपाही, बाहर शत्रु की गतिविधि का, बिना सिर उठाये हुए ही, पता लगा सकता है। पनडुब्बियों मे भी समुद्र के अन्दर डूबे रहकर, भी, ऊपर वाले समुद्र-तल का दृश्य इसी यन्त्र से देखा जाता है। फुट बाल-मैच, वगैरह देखने मे भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

(*ii*) समकोण पर रखे हुए दो समतल-दर्पणों से परावर्त्तन (Two Plane Mirrors at Right Angles)—चित्र 32 मे (O,M_1) और (O,M_2), दो समतल-दर्पण, परस्पर समकोण पर रखे हुए है; (P) एक चमकती हुई वस्तु, इनके बीच मे रखी है। इसकी एक प्रतिमूर्त्ति, (P_1), दर्पण (M_1, D) द्वारा बनती है जबकि $(P,M_1)=(M_1,P_1)$। (P') भी (P) की एक दूसरी प्रतिमूर्त्ति, दर्पण (M_2,O) के सामने पडती है, इसलिए इसकी प्रतिमूर्त्ति (P_2) बनेगी। इसी तरह (P') भी, दर्पण (O, M_1) के सामने पडती है। इसलिये इसकी प्रतिमूर्त्ति (P'') बनेगी। लेकिन (P_2) और (P'') दोनो एक ही बिन्दु होगे, क्योकि $(P,P')=(P_1,P_2)$, (P',P'') और $\angle(P_1,P,P')=$समकोण। क्योकि (P_2) और (P''), दोनों ही दर्पणो के पीछे पड़ती है, इसलिये और अधिक प्रतिमूर्त्तियाँ नही बन पाती अर्थात् (P) की कुल तीन प्रतिमूर्त्तियाँ (P_1,P_2,P_3), आयत (rectangle) के तीन कोनो पर बनेगी। वस्तु (P) की जगह पर जलती हुई मोमबत्ती रखकर, इस तथ्य की सचाई जाँची जा सकती है।



चित्र 32



चित्र 33

(*iii*) किसी भी कोण पर झुके हुए दो समतल-दर्पणों द्वारा परावर्त्तन (Two Mirrors at any Angle)—चित्र—33 मे दो समतल दर्पण (M), (M_2) एक दूसरे पर 'θ' कोण पर झुके हुए और आमने सामने मुख किये रखे है। इनके बीच मे वस्तु (P) रखी है। इस स्थिति मे, प्रतिमूर्त्तियाँ इस तरह बनती है—

(P) से, दर्पण (M_1) पर लम्ब (perpendicular) डालो। इस लम्ब (P,N_1) को, दर्पण के पीछे, (P_1) तक बढा लो, जबकि (N_1,P_1) = (P,N_1) तो (P_1), (P) की प्रतिमूर्ति, दर्पण (M_1) के कारण होगी। क्योकि (P_1) दर्पण (M_1) के सामने होने से, इसकी प्रतिमूर्त्ति (P_3) बनेगी। इस तरह (P_1,P_2,P_3) इत्यादि प्रतिमूर्त्तियो का एक क्रम (series) दिखलाई देगा। क्योकि (P_3), दोनो दर्पणो के पीछे बनती है, इसलिए उसके बाद फिर से परावर्त्तन ही होगा।

ऊपर बतलाये 'ढग जैसा ही दर्पण (M_2) पर पहला परावर्त्तन लेकर (P) की प्रतिमूर्त्तियो (P', P'', P''') का दूसरा क्रम भी दिखलाई देगा।

गणित की दृष्टि से—

समान (equal) त्रिभुजो (OPN_1) और (OP_1N_1) मे, $(OP) = (OP_1)$

इसी तरह $OP_1 = OP_2 = OP_3$

$OP = OP_1 = OP_2 = OP_3 = \ldots\ldots$

साथ ही $OP = OP' = OP'' = OP''' = \ldots\ldots$.

अर्थात् सारी प्रतिमूर्त्तियाँ, एक ही वृत्त (circle) की परिधि पर ही बनेगी, जिसका केन्द्र 'O' और अर्धव्यास (radius) (O, P) होगा। प्रतिमूर्त्तियो की सख्या, (n), दोनो दर्पणो के बीच के कोण (θ) पर निर्भर करती है। इसका सूत्र (formula) $n = \left\{ \left(\frac{360}{\theta} - 1 \right) + 1 \right\}$ है, जबकि θ, π का अपवर्त्तक (sub-multiple) न हो। जैसे अगर $\theta = 72°$, तो $n = 5$ और $\theta = 60°$ होने पर $n = 6$ यानी जैसे-जैसे दोनो दर्पणो के बीच का कोण (θ) कम होता जाता है, वैसे-वैसे प्रतिमूर्त्तियो की सख्या भी बढती जाती है। $\theta = 0$ (Zero) हो जाने अर्थात् दर्पणो के समानान्तर हो जाने पर, n का मान अनन्त (infinity) हो जाता है।

कैलेडस्कोप (Kaleidoscope) मे ऊपर बतलाये गये तथ्य का उपयोग किया गया है। यह बच्चो का एक सुन्दर खिलौना है। इसमे गत्ते की एक चौडी और लम्बी नली के भीतर, समतल-दर्पणो की लम्बी पट्टियाँ (strips) परस्पर 60° के कोण पर झुकी हुई लगी रहती है। नली का एक सिरा खुरदरे काच (ground glass) के ढकने से बद किया रहता है। जबकि दूसरे पर एक पारदर्शक (transparent) काँच का ढकना लगाया जाता है। पट्टियो के बीच मे काँच के रग-बिरगे छोटे-छोटे टुकडे डाले हुए रहते हैं। खुरदरे काँच वाले सिरे को प्रकाश की ओर करके, दूसरे सिरे के छेद के पास आँख रखकर देखने पर, अनेक सुन्दर-सुन्दर डिजाइन बनते दिखलाई पडते हैं। टुकडो की जमावट (configuration) की पाँच प्रतिमूर्तियाँ, उत्तरोत्तर परावर्त्तन (successive reflection) द्वारा बनती हैं। नली को थोडा ही घुमा देने पर, यह जमावट बदल जाती है और कोई दूसरा डिज़ाइन दीखने लगता है। इस तरह बार-बार घुमाने से नये-नये डिजाइन इस यत्र की सहायता से देखे जा सकते हैं। चित्रकार (artist) और कालीन वगैरह पर 'डिजाइन' बनाने वाले इसका खूब लाभ उठाते हैं।

22. विक्षिप्त-परावर्त्तन (Diffused Reflection)—जब प्रकाश किरणो के

रास्ते मे कोई दर्पण न रखकर, सिर्फ कागज रखते है, तो वह परावर्त्तित (reflected) न होकर चारो ओर बिखर (seatter) जाती हैं। ज्यादातर चीज़े हमको इसी ढग से दिखलाई पडती है। विक्षिप्त होने वाले प्रकाश की मात्रा, वस्तु के रग और प्रकार पर निर्भर करती है। गैस और द्रवो मे तैरते हुए कण भी इसी प्रकार से प्रकाशित किये जाते है।

गोधूलि (Twi light)—का भी ऊपर वाला ही सिद्धान्त है। जब सूर्य, किसी जगह पर अस्त (set) हो जाता है, तो इसकी किरणे, बादलो, धूल के कणो और हवा मे तैरते हुए दूसरे कणो पर पडकर विक्षिप्त हो जाती है। इनमे से कुछ किरणे, पृथ्वी तक भी पहुँच जाती है। इसलिये सूरज छिप जाने पर भी, उसका प्रकाश, थोडी देर और रह जाता है। जैसे-जैसे विक्षिप्त प्रकाश कम होता जाता है, वैस-वैसे अँधेरा बढता जाता है।

आकिक उदाहरण

1. प्रकाश-किरणे, एक समतल-दर्पण पर 45° पर पड रही है। एक दूसरा समतल-दर्पण, इस पहले दर्पण के साथ सटाकर इस तरह लगाना है कि परावर्त्तित-किरण, अन्त मे क्षैतिज-दिशा मे लौटे। दोनो दर्पणो के बीच कितना कोण रखना होगा ? (पजाब *1932*)

(Rays of light strike a horizontal plane mirror at an angle of 45° Show by diagram how would you arrange a second mirror in order that the reflected ray may finally be reflected from the second mirror horizontally) (*P U 1932*)

उत्तर—चित्र 34 मे (O, M) पहले वाला समतल-दर्पण, और (O, M′) दूसरा दर्पण है। दोनो दर्पणो के बीच वाला कोण मान लो $\theta°$ है। दर्पण (O, M) पर पडने वाली किरण, (I, O_2), अभिलम्ब (O_2, N) 45° का कोण बनाती है। इसलिये परावर्त्तन-कोण भी 45° होगा ; और परावर्त्तित-किरण (O_2, O_1), दूसरे दर्पण (O, M′) के (O_1) बिन्दु पर जाकर टकरावेगी। यहाँ पर परावर्त्तित होकर, यह किरण, क्षैतिज-तल मे, (O_1, L) दिशा मे लौट जावेगी।

गणित की दृष्टि से—

$\angle(IO_2M) = \angle(O_1O_2O) = 45°$

और $\angle M'O_1L = \angle O_2O_1O = \theta$

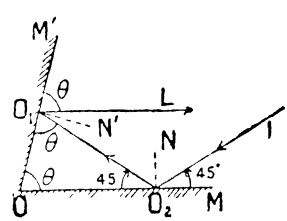
क्योकि (O, L), (OM) के समानान्तर है

अतः $\angle O_2O_1O = \angle O_1OO_2$

इसलिए त्रिभुज (O_1OO_2) मे,

$$(2\theta + 45°) = 180°$$

या $$\theta = 67'5°$$



चित्र 34

सार (Summary)

परावर्त्तन दो तरह का होता है, 'नियमित' और 'विक्षिप्त' (diffused)

परावर्त्तन-नियम—(i) आपतित किरण, परावर्त्तित किरण और दर्पण के तल पर अभिलम्ब, तीनों एक ही तल मे रहते हैं, और (ii) $\angle i = \angle r$

नियमों की परीक्षा—(i) हार्टिल-यन्त्र और (ii) पिन-विधि से।

अभिलम्बी आयतन—इस अवस्था मे $\angle i = 0$, इसलिये $\angle r = 0$ (शून्य) यानी किरण, अपने पहले मार्ग पर ही परावर्त्तित होकर वापिस लौट जाती है।

प्रतिमूर्त्तियाँ—दो तरह की होती है (i) काल्पनिक और (ii) **वास्तविक**। वास्तविक प्रतिमूर्त्ति पर्दे पर ली जा सकती है, लेकिन काल्पनिक की नही।

समतल-दर्पण द्वारा प्रतिमूर्त्ति—(i) यह दर्पण के पीछे, उतनी ही दूरी पर बनती है, जितनी कि वस्तु, दर्पण के सामने रखी है यानी $v = u$

(ii) यह काल्पनिक होती है ;

(iii) इसका आकार, वस्तु के बराबर ही होता है ; और

(iv) इसमे वस्तु का दाँया भाग, बाँया भाग, बन जाता है। इस क्रिया को वस्तु का 'पार्श्विक-उत्क्रमण' कहते है।

परावर्त्तन से विचलन—यह परावर्त्तित और आपतित-किरणो के बीच का कोण ($= \delta = \pi - 2i$) होता है।

समतल-दर्पण का घुमाव—$\theta°$ होने पर, परावर्त्तित-किरण पहली स्थिति से $2\theta°$ घूम जाती है।

दो समानान्तर समतल-दर्पणों के बीच किसी चमकीली वस्तु को रख देने से, प्रतिमूर्त्तियाँ वस्तु पर से होकर जाने वाले, दोनो दर्पणो पर अभिलम्ब वाली रेखा पर बनती है। सिद्धान्ततः इनकी सख्या अनन्त होती है। लेकिन हर एक परावर्त्तन मे, प्रकाश का शोषण हो जाने से, यह सख्या सीमित हो जाती है।

झुके हुए दर्पणों द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्तियो की संख्या $n = \left(\frac{360}{\theta} - 1\right) + 1$, जबकि θ, π का अपवर्त्तक (sub-multiple) न हो।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. 'परावर्त्तन-नियम' लिखो। इनको प्रयोग द्वारा किस प्रकार सिद्ध करोगे ?
(कलकत्ता 1943 ; मद्रास 1944 ; उत्कल 1947 ; पंजाब 1952 ; अनामली 1950)

2. 'नियमित' और 'विक्षिप्त' परावर्त्तन में भेद स्पष्ट करो ; समतल-दर्पण को अँधेरे कमरे में रखकर, देखने के लिये उस पर दिशा विशेष से प्रकाश-किरण डाली जा रही है। क्या कारण है कि दर्पण केवल इसी दिशा में ही दीखता है, इसके इधर-उधर नही ? हाँ, प्रकाश किरणों को सफेद गत्ते पर डालने पर, दर्पण को किसी भी दिशा में देखा जा सकता है। क्यों ? (पजाब 1953)

3. वस्तु की प्रतिमूर्त्ति से क्या अर्थ है ? 'वास्तविक' और 'काल्पनिक' प्रतिमूर्त्तियों का अन्तर स्पष्ट करो। प्रयोग द्वारा काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति की स्थिति का पता किस तरह लगाओगे ?
(कलकत्ता 1938 ; पजाब 1952 , मद्रास 1942 ; उत्कल 1952 ; पटना 1951)

(i) 'पार्श्विक-उत्क्रमण' क्या होता है ? चित्र खीचकर समझाओ।

(ii) एक घड़ी की चकती पर अंकों की जगह पर केवल चिन्ह ही बने हुए हैं। अगर इस को, समतल-दर्पण में देखने से 4-35 का समय मालूम पड़े, तो ठीक-ठीक समय क्या होगा ?

उत्तर—7·25 (गोहाटी 1952)

5. समतल-दर्पण से, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति किस तरह बनती है ? चित्र खींचकर समझाओ।

(कलकत्ता 1928 ; मद्रास 1944)

6. एक आदमी समतल-दर्पण की ओर दौड़ रहा है। दौड़ने का वेग 5 फुट/सैकिंड है। सिद्ध करो कि वह अपनी प्रतिमूर्त्ति की ओर 10 फुट/सैकिंड के वेग से भाग रहा है। (कलकत्ता 1943)

7. 6 फुट ऊँचा एक आदमी, अपना पूरा प्रतिबिंब, दीवार पर लटके हुए समतल-दर्पण में देखना चाहता है। दर्पण की न्यूनतम लम्बाई कितनी होनी चाहिये ?

उत्तर—3 फुट (दिल्ली 1952)

8. (i) समतल-दर्पण के घुमाव और परावर्त्तित-किरण के घुमाव के बीच क्या संबंध होता है ?

(कलकत्ता 1923)

(ii) आपको एक अंशांकित पैमाना, एक स्टैंड, एक प्रकाश-स्रोत और एक पतली भिरी दी गई है। दर्पण के थोड़े से ही विक्षेप को, इन उपकरणों की सहायता से किस प्रकार मापोगे ?

(पटना 1927)

9. चित्रों द्वारा समझाइये कि वस्तु की उत्तरोत्तर प्रतिमूर्त्तियाँ, निम्न अवस्थाओं में किस प्रकार बनती है—

(i) जबकि दोनों दर्पण, परस्पर समानान्तर और एक दूसरे की ओर मुख किये हुए हों ?

(अनामली 1950 , कलकत्ता 1949 , पंजाब 1952)

(ii) जबकि दोनों दर्पणों के बीच का कोण 90° हो ?

(उत्कल 1952 ; विश्व भारती 1950 , अनामली 1955)

(iii) दोनों दर्पणों के बीच का कोण 60° हो ?

(मद्रास 1944 ; पटना 1951 ; ढाका 1952)

10. दो समतल और परस्पर समानान्तर रखे हुए दर्पणों (A और B) के बीच में एक वस्तु रखी है। दर्पणों के बीच की कुल दूरी 3 इंच है, और यह वस्तु, इनमें से एक दर्पण से 2 इंच की दूरी पर है। दर्पण 'A' और 'B' के पीछे बनने वाली तीसरी प्रतिमूर्त्ति के बीच की दूरी मालूम करो।

उत्तर—18 इंच (पटना 1954)

11. दो समतल-दर्पणों को किस प्रकार रखोगे कि—

(i) पार्श्विक-उत्क्रमण हो ?

(ii) उत्क्रमण नहीं हो ?

इसकी सहायता से साधारण परिदर्शक का सिद्धान्त समझाओ। (गोहाटी 1953)

12. दो समतल-दर्पणों को इस प्रकार रखा गया है कि उनके चमकते हुए तल बाहर की ओर है। साथ ही इनके पिछले किनारे आपस में मिले हुए हैं (कोण बनाते हुए)। प्रकाश-किरणें, इस मिलने वाले किनारे पर आकर पड़ रही है, और परावर्त्तन के बाद इनके बीच का कोण 110° हो जाता है। दर्पणों के बीच का कोण मालूम करो।

उत्तर—55° (गोहाटी 1955)

13. 'कैलेडस्कोप' पर छोटा सा नोट लिखिये।

(यू० पी० बोर्ड 1933 ; पंजाब 1953 ; उत्कल 1953)

अध्याय 3

वक्र तलों पर परावर्त्तन

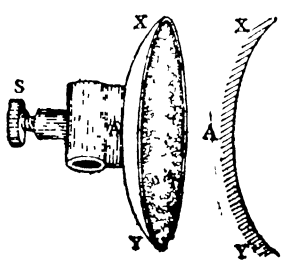
(Reflection at Spherical Surfaces)

23. मौलिक परिभाषायें (Fundamental Terms)—

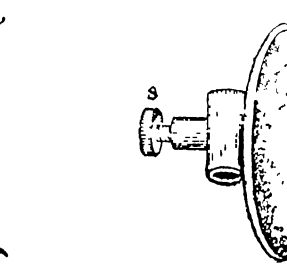
गोलाकार दर्पण—यह पालिश किया हुआ एक चमकीला तल होता है। प्रकाश-किरणें, इस पर पडकर परावर्त्तित हो जाती है। यह दर्पण, एक बडे, और खोखले गोले का छोटा सा अश होता है। इस बडे गोले के केन्द्र (चित्र-39-40 मे बिन्दु 'C') को दर्पण का 'वक्रता-केन्द्र" (centre of curvature) कहते है। गोलीय-दर्पण या तो "नतोदर" (concave) होते है, या "उन्नतोदर" (convex)। 'नतोदर (अवतल) दर्पण' मे परावर्त्तन करने वाला तल, बीच मे नीचे को दबा हुआ रहता है (चित्र 35), और 'उन्नतोदर-दर्पण' मे कलई, दर्पण के उभरे हुए भाग पर की हुई रहती है (चित्र 37)।

दर्पण का ध्रुव (pole of the mirror)—दर्पण के मुख (face) का वह मध्य-बिंदु है, जोकि दर्पण के सभी अक्षो (axes), (—मुख्य और गौण—principal and secondary) का सर्वनिष्ठ (common) बिन्दु हो (चित्र 36 और 38 मे बिन्दु A)।

जिस बडे गोले का, गोलीय दर्पण एक छोटा-सा अश होता है उसके अर्धव्यास को दर्पण का 'वक्रता-व्यासार्द्ध" (radius of curvature) या त्रिज्या कहते है। चित्र 39-40 मे रेखा (A, C) दर्पण के वक्रता-व्यासार्द्ध को व्यक्त करती है।



चित्र 35



चित्र 36

चित्र 37

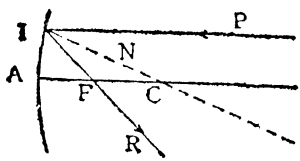


चित्र 38

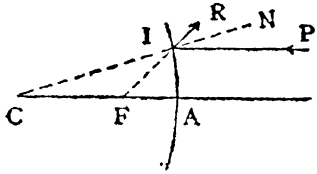
मुख्य-अक्ष (Principal axis)—दर्पण के ध्रुव और वक्रता-केन्द्र को जोडने वाली रेखा, दर्पण की 'मुख्य-अक्ष' कहलाती है। चित्र 39-40 मे रेखा (A, C), दर्पण की मुख्य-अक्ष है। यह दर्पण के तल पर अभिलम्ब (normal) होती है।

गौण-अक्ष (Secondary axis)—दर्पण के ध्रुव मे से होकर जानेवाली कोई भी रेखा गौण-अक्ष कहलाती है। दर्पण के ध्रुव पर से होकर जाने वाले तल

(plane) को 'प्रधान-तल' (principal plane) कहते है। यह तल, दर्पण के ध्रुव पर स्पर्शक (tangent) होता है।



चित्र 39

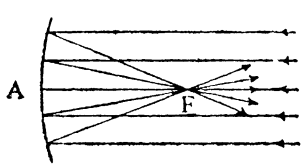


चित्र 40

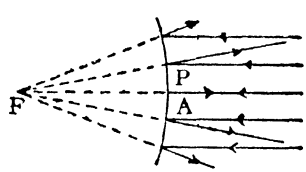
दर्पण के मुख-पृष्ठ (aperture) को, उसके द्वारा, दर्पण के वक्रता-केन्द्र पर बनने वाले कोण द्वारा मापा जाता है।

24. आपतित और परावर्तित किरण (Incident and Reflected Rays)—चित्र 39 मे (A,I) एक नतोदर-दर्पण का प्रधान-तल है। 'A' इसका 'ध्रुव' और (C) 'वक्रता-केन्द्र' है। इसलिये रेखा (A, C) दर्पण की 'प्रधान-अक्ष' हुई। चित्र 39 मे प्रकाश की एक किरण (P, I), दर्पण पर, उसकी प्रधान-अक्ष के समानान्तर आकर पड रही है। दर्पण के अर्द्धव्यास (I, C) को खीच लो तो रेखा (C, I), बिन्दु (I) पर, अभिलम्ब (normal) होगी। इसलिये आपतन-कोण ∠(PIN) होगा। अब एक रेखा (I,R) इस तरह खीचो कि ∠(PIN) = ∠(NIR); तब यह रेखा (I, R), परावर्त्तित किरण को बतलावेगी। मान लो यह परावर्त्तित किरण (I, R), प्रधान-अक्ष (A, C) को बिन्दु (F) पर काटती है, तो बिन्दु 'F' दर्पण की 'प्रधान-नाभि' (principal focus) कहलावेगा। दर्पण के ध्रुव (A) व इस नाभि (F) के बीच की दूरी (=AF) को 'नाभ्यन्तर' या 'फोकस-अन्तर' (focal length) कहते है। इस दूरी को (F) से व्यक्त किया जाता है।

उन्नतोदर-दर्पण (चित्र 40) मे भी रेखा (PI) आपतित किरण, ∠PIN आपतन-कोण, रेखा (IR) परावर्त्तित किरण, और कोण (RIN) परावर्त्तन कोण हैं। परावर्त्तित-किरण (RI) को पीछे की ओर बढाने पर, यह प्रधान अक्ष (A, C) को बिन्दु (F) पर काटती है। इसलिये (F), दर्पण की प्रमुख-नाभि और दूरी (AF) नाभ्यन्तर हुआ।



चित्र 41



चित्र 42

क्योंकि (PI) और (CA) समानान्तर हैं और रेखा (C I) इन दोनों को काटती है। इसलिए ∠(PIC) = ∠(ICF) और ∠(RIC) = ∠(PIC)

अतः $\angle(ICF) = \angle(CIF)$

त्रिभुज (CIF) मे, क्योकि $\angle(ICF) = \angle(CIF)$

$\therefore$ (IF) = (F,C)

अब मान लो कि दूरी (A, B), (AF) की अपेक्षा, इतनी कम है कि हम (IF) को (AF) के लगभग बराबर मान सके, तो

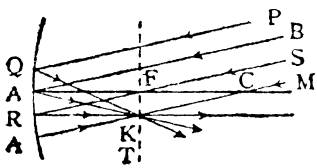
$(A, F) = (F, C) = \frac{1}{2}(A, C)$

अर्थात् $f = r/2$ ...(24·1)

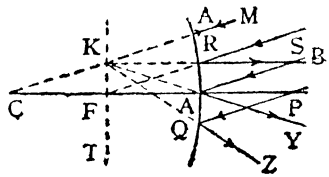
दूसरे शब्दो में छोटे मुख-पृष्ठ वाले गोलीय दर्पणों का नाभ्यन्तर; उनके वक्रता व्यासार्द्ध के आधे के बराबर होता है।

क्योकि नतोदर दर्पण मे, प्रधान-अक्ष के समानान्तर आने वाली सभी किरणें उसकी नाभि पर वास्तव मे केन्द्रित हो जाती है (चित्र 41)। इसलिये इसको वास्तविक नाभि कहते है। लेकिन उन्नतोदर-दर्पण की नाभि पर यही समानान्तर किरणे, केन्द्रित होती हुई प्रतीत होती है। वास्तव मे केन्द्रित नही होती। इसलिये उसकी नाभि काल्पनिक होती है साथ ही क्योकि प्रकाश की किरणों का मार्ग उत्क्रमणीय (reversible) होता है, इसलिए दर्पण की नाभि पर रखी वस्तु की किरणें, परावर्त्तित होकर प्रधान-अक्ष के समानान्तर हो जाती है।

25. नाभि-तल (Focal Plane)—मुख्य-नाभि पर से होकर जाने वाला और मुख्य-अक्ष के समकोणिक तल, 'नाभि-तल' कहलाता है। चित्र 43 और 44 मे (QR) दर्पण का प्रस्थच्छेद (section) है, रेखा (A, C) इसकी मुख्य-अक्ष और (F) इसकी मुख्य-नाभि है। अब अगर एक तल (plane) बिन्दु (F) मे से होता हुआ, लेकिन मुख्य-अक्ष (AC) के समकोणिक खीचा जावे, तो उसको 'नाभितल' कहेंगे। चित्र 43



चित्र 43



चित्र 44

मे बिंदीदार रेखा (F, K, T), नाभितल का प्रस्थच्छेद है। चित्र-44 मे यह चीज, रेखा (K F T) द्वारा, उन्नतोदर-दर्पण के लिये दिखलाई गई है।

नाभि-तल के गुण (Properties of a Focal Plane)—पीछे हम देख आये हैं कि गोलीय दर्पण की मुख्य-अक्ष के समानान्तर आने वाली सभी प्रकाश-किरणें, परावर्त्तित होकर, उसकी मुख्य-नाभि पर या तो वास्तव मे केन्द्रित हो जाती हैं, या ऐसी होता हुई प्रतीत होती है। चित्र 43, व 44 मे आपतित किरण (S, R), मुख्य-अक्ष (A, C) के साथ कुछ कोण बनाते हुए पड रही है। परावर्त्तित होने पर इनके केन्द्रित होने वाले बिन्दु की स्थिति जानने में ही नाभि-तल का उपयोग होता है। सभी तिरछी आपतित किरणे, परावर्त्तित होकर इसी तल के किसी न किसी बिन्दु पर

से होकर जाती हैं। नतोदर-दर्पण का नाभि तल वास्तविक होता है और उन्नतोदर का काल्पनिक। जब (i) दर्पण का मुख-पृष्ठ बडा होता है, और (ii) तिरछी किरणों द्वारा मुख्य-अक्ष के साथ बनने वाला कोण अधिक होता है, तो सारी किरणें एक ही तल (plane) मे केन्द्रित नही हो पाती, और वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, टेढी और बेढगी-सी दीखने लगती है।

26. दूरी मापने के प्रचलित नियम (Conventions as to algebric Signs of the rays)—वस्तु को दर्पण के सामने रखने पर उसकी प्रतिमूर्त्ति बनती है। वस्तु और प्रतिमूर्त्ति की स्थितियों को बतलाने के लिये, कोई सकेत-बिन्दु (reference point) लेना पडता है। प्रचलित प्रथा के अनुसार यह बिन्दु, दर्पण का 'ध्रुव' ही लिया जाता है। दूरी मापने के प्रचलित नियम इस प्रकार है—

(i) सारी मापें, दर्पण के ध्रुव से, मुख्य-अक्ष पर ली जाती हैं।

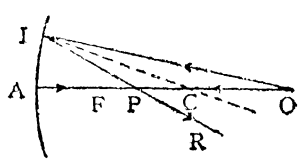
(ii) अगर कोई माप, आपतित (incident) किरणों के उल्टी (विमुख-opposite) दिशा में, ध्रुव से मापी जानी है तो उसे (+) चिन्ह देते है; उसी दिशा में होने पर (—)।

(iii) दर्पण के सूत्र (formula) में, u, v और (f) में, जो भी दूरी अज्ञात (unknown) हो, उसको कोई भी चिन्ह न देकर, बाकी सभी को उचित चिन्ह के साथ स्थानापन्न (substitute) कर देते है। इससे अज्ञात दूरी और उसका चिन्ह भी मालूम हो जाता है।

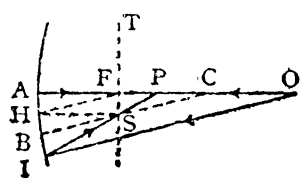
(iv) मुख्य-अक्ष के ऊपर किसी बिन्दु की दूरी (+) मानी जाती है और अक्ष से नीचे (—)। यानी सीधा प्रतिबिब (+) और उल्टी प्रतिमूर्त्ति (—) होती है।

27. गोलीय दर्पण द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और प्रकार का सूत्र (Mirror formula)—

(क) नतोदर-दर्पण (Concave Mirror)—चित्र 45 मे (A, I), नतोदर-दर्पण का मुख्य प्रस्थच्छेद (section) है। दर्पण का ध्रुव (A) पर है, और (C), दर्पण का वक्रता-केन्द्र है। एक प्रकाशमान वस्तु (O) बिदु पर रखी है। यहाँ से दर्पण की ओर चलने वाली प्रकाश-किरणे दर्पण पर परावर्त्तित होती है। इनमे से मुख्य-अक्ष (A, O) के साथ चलने वाली प्रकाश-किरण, परावर्त्तन के बाद इसी दिशा में वापिस लौट आवेगी, क्योकि आपतन और परावर्त्तन-कोण शून्य (Zero) होगे।



चित्र 45



चित्र 46

(O, I) एक दूसरी आपतित किरण है, जबकि बिदु (I), (A) के बहुत ही पास स्थित है। इसकी संगत (corresponding) परावर्त्तित किरण (IPR) है और

परावर्त्तन-कोण (RIC), आपतन-कोण (OIC) के बराबर है। दोनो परावर्त्तित किरणें (AO) और (IR), एक दूसरे को (P) बिन्दु पर काट रही है। इसलिये बिंदु (P), बिन्दु (O) की प्रतिमूर्त्ति होगा। यह प्रतिमूर्त्ति वास्तविक और (+) दिशा मे होगी। गणित की दृष्टि से—

क्योकि $\angle(OIC)=\angle(PIC)$

$\therefore$ रेखा (I, C), कोण (OIC) को द्विभाजित (bisect) करती है।

अत $\dfrac{IP}{IO}=\dfrac{PC}{CO}$

जब बिंदु (I), दर्पण के ध्रुव (A) के बहुत पास होता है, यानी जब दर्पण पर पडने वाला किरण-पुज बहुत ही सँकरा होता है, तो (IO) और (IP) को क्रमशः (AO) और (A, P) के बराबर लिया जा सकता है। अर्थात्—

$$\frac{AP}{AO}=\frac{PC}{CO}=\frac{(AC-AP)}{(AO-AC)}$$

वस्तु की दूरी (AO) को u, प्रतिमूर्त्ति की दूरी (AP) को v और वक्रता-व्यासार्द्ध (AC) को r मान कर, ऊपर वाले समीकरण मे लगाने पर—

$$\frac{v}{u}=\frac{r-v}{u-r}$$

$$\therefore\ u(r-v)=v(u-r)$$

या $ur+vr=2uv$

uvr से भाग देने पर—

$$\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{2}{r}=\frac{1}{f}\quad(\text{क्योकि } f=r/2) \qquad \ldots(27\cdot1)$$

अगर प्रकाशमान वस्तु दर्पण से बहुत अधिक दूरी पर रखी है, तो इससे आने वाली प्रकाश-किरणो को परस्पर समानान्तर माना जा सकता है। साथ ही वस्तु-दूरी $(u)=\infty$। इस मान को सूत्र (27·1) मे लगाने पर $u=f$ अर्थात् आपतित समानान्तर किरणे, परावर्त्तित होकर, दर्पण की नाभि पर केन्द्रित हो जावेगी।

नाभि-तल के गुण से भी ऊपर वाला सूत्र प्राप्त किया जा सकता है। चित्र 46 मे नतोदर-दर्पण (AHBI) का नाभितल (TFS) है। मुख्य-अक्ष के साथ-साथ चलने वाली प्रकाश-किरण, (CA), परावर्त्तित होकर इसी दिशा मे वापिस लौट जावेगी। दूसरी आपतित किरण (OI) भी परावर्त्तन के बाद, नाभि-तल के बिंदु (S) मे से होकर जावेगी, और बिंदु (P) पर, वस्तु (O) की प्रतिमूर्त्ति बन जावेगी। क्योकि (OI) और (BC) समानान्तर है और रेखा IP इनको काटती है।

$\therefore\ \angle(OIP)=\angle(CSP)$

और $\angle(COI)=\angle(PCS)$

त्रिभुज (OIP) और (CSP) एक जैसे हैं।

$$\therefore\ \frac{OI}{PI}=\frac{CS}{PS}$$

पहले की तरह बिंदु (I), ध्रुव (A) के बहुत ही पास स्थित होने पर, OI = OA और PI = PA ; साथ ही CS = CF और PS = PF

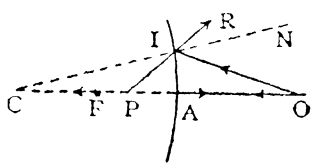
$$\therefore \frac{OA}{PA} = \frac{CF}{PF} \quad ; \quad \text{या} \quad \frac{u}{v} = \frac{f}{\theta - f}$$

(u, v, f) से भाग देने पर—

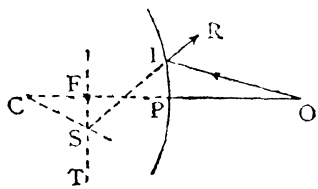
$$\frac{1}{f} = \frac{1}{u} + \frac{1}{v} \qquad (27{\cdot}2)$$

यहाँ यह बात याद रखने की है कि प्रत्येक दर्पण का नाभ्यान्तर $(=f)$ स्थिर रहता है। इसलिये जब उसके सामने रखी हुई वस्तु को आगे-पीछे करके, वस्तु-अन्तर (object-distance) बदलते है, तो सूत्र (27·1-2) को मानते हुए, उसका 'प्रतिमूर्त्ति' अन्तर (image distance) भी बदल जाता है। साथ ही u का मान (f) से कम हो जाने पर, v ऋणात्मक $(-ive)$ हो जाता है और प्रतिमूर्त्ति, दर्पण के पीछे बनने लगती है, अत काल्पनिक होती है।

(ख) **उन्नतोदर-दर्पण (Convex Mirror)**—चित्र 47 मे (AB) एक उन्नतोदर-दर्पण का मुख्य प्रस्थच्छेद (section), (A) ध्रुव और 'C' वक्रता-केन्द्र



चित्र 47



चित्र 48

है। इसकी मुख्य-अक्ष पर एक प्रकाशमान वस्तु बिंदु 'O' पर रखी है। किरण (CA), दर्पण के तल पर लम्बवत् (normally) पडने से वापिस इसी दिशा मे लौट जावेगी। एक दूसरी आपतित किरण OI, परावर्त्तित होकर (IR) दिशा मे लौटेगी। यह दोनो परावर्त्तित किरणे, एक दूसरी को कही पर भी वास्तव मे काटती नही; हाँ बिंदु (P) पर मिलती हुई अवश्य प्रतीत होती है। अत बिंदु (P) पर, वस्तु 'O' की काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति बनेगी। गणित की दृष्टि से—

क्योकि $\angle(CBN) = \angle(RBL)$

रेखा (NBC), कोण (RBO) को द्विभाजित करती है और साथ ही त्रिभुज (BPO) के आधार (PO) को बाहर से (externally) दो भागों (OC) और (CP) मे बाँट देती है। अतः (BP/BO) = (PC/OC)

अगर बिंदु (B), ध्रुव (A) के बहुत ही पास स्थित है, तो (OB) और (BP) को क्रमशः (AO) और (AP) के बराबर माना जा सकता है।

$$\therefore \frac{AP}{AO} = \frac{PC}{OC} = \frac{AC - AP}{AC + AO}$$

लेकिन (AC)=वक्रता-व्यासार्द्ध (r); (AP)=प्रतिमूर्त्ति अंतर (v) और (AO)=वस्तु अंतर (u)। इसलिए—

$$-\frac{v}{u}=\frac{-r-(-v)}{-r+u} \quad \text{या} \quad \frac{v}{u}=\frac{r-v}{u-r}$$

$\therefore u(r-v)=v(u-r)$ या $u.r+v.r=2u.v$

ऊपर वाले समीकरण को $(u.v.r)$ से भाग देने पर

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{2}{r}=\frac{1}{f} \quad (\text{क्योंकि } f=r/2)$$

नोट—नाभि-तल के गुण के द्वारा यही सूत्र प्राप्त करने के लिए चित्र—48 देखिये।

इस तरह गोलीय दर्पण (नतोदर और उन्नतोदर)—दोनो ही के नाभ्यान्तर, वस्तु अंतर और प्रतिमूर्त्ति अन्तर के बीच सबध बतलाने वाला सूत्र इस प्रकार होता है—

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \quad \ldots \quad \ldots \qquad (27{\cdot}4)$$

हाँ, इसमें सभी दूरियों को उनके उचित चिन्ह के साथ रखना चाहिये। उन्नतोदर दर्पणो का f हमेशा (−) होता है और नतोदरो का (+)

अनुबद्ध नाभियाँ (Conjugate Focii)—चित्र 45 मे (IO) आपतित किरण है और (IP) परावर्त्तित किरण है। अगर हम किरण (PI) को आपतित किरण मान ले, तो परावर्त्तित किरण IO हो जावेगी। यानी दूसरे शब्दो मे वस्तु और उसकी प्रतिमूर्त्तियो को आपस मे बदला जा सकता है। ऐसे दो बिदुओ के जोड़े (pair) को ही अनुबद्ध-नाभियाँ कहते है। ऐसे एक जोडे के किसी भी एक बिदु पर उसकी प्रतिमूर्त्ति बन जावेगी।

28. बड़ी वस्तु की प्रतिमूर्त्ति (Image of an extended source)—हरएक बडी वस्तु को छोटे-छोटे बहुत से बिन्दु-स्रोतो (point sources) से मिलकर बना हुआ माना जा सकता है। तब इन सब बिदुओ की सगत प्रतिमूर्त्तियो की स्थिति का पता लगाकर, पूरी वस्तु की प्रतिमूर्त्ति बन जावेगी।

रेखा-चित्र से वस्तु की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति का पता लगाने के नियम इस प्रकार है—

(*i*) मुख्य-अक्ष के समानान्तर, आपतित किरणें, परावर्तित होकर, दर्पण की मुख्य-नाभि पर केन्द्रित हो जाती है (The ray, incident parallel to the principal axis pass through the principal focus after reflection.)।

(*ii*) मुख्य-नाभि पर से गुजरने वाली आपतित किरणें, परावर्त्तन से मुख्य-अक्ष के समानान्तर हो जाती है (A ray, incident in a direction passing through the principal focus, becomes parallel to the principal axis, after reflection.)।

(*iii*) दर्पण के वक्रता-केन्द्र पर से होकर जाने वाली आपतित किरण, परावर्त्तित

होकर, उसी दिशा में वापस लौट जाती है (A ray, incident in a direction passing through the centre of curvature gets reflected along the same path.)।

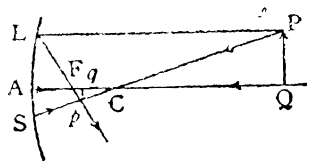
(*iv*) दर्पण पर किसी भी दिशा से, आकर पड़ने वाली किरण, परावर्त्तित होकर, गौण नाभि और आपतन-बिन्दु को मिलाने वाली रेखा की दिशा से होकर जाती है (A ray, incident in any direction, after rfleection takes up a direction along a line joining the point of incidence and the secondary focus.)।

ऊपर बतलाई गई चार प्रकार की आपतित और सगत परावर्तित किरणों में से किसी भी दो प्रकार वालियों को खींचकर, प्रतिमूर्त्ति का स्थान मालूम किया जा सकता है।

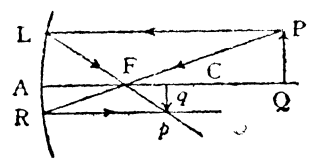
29 गोलीय दर्पण पर परावर्त्तन द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और आकार मालूम करने की ग्राफ-विधि (Graphical Method to determine the position and size of Images at a Spherical mirror)—

(क) नतोदर-दर्पण (Concave Mirror)—

(*i*) जबकि वस्तु, दर्पण से अनन्त दूरी पर रखी हो (object at infinite distance)—तो उससे चलने वाली किरणें परस्पर समानान्तर होंगी। अतः यह सब, दर्पण की मुख्य-नाभि (focus) पर केन्द्रित हो जावेंगी। इसी बिंदु पर वस्तु की वास्तविक, उल्टी और बहुत ही छोटी प्रतिमूर्त्ति (real, inverted and extremely diminished image) बनेगी (चित्र 43 में बिन्दु F)। गणित की दृष्टि से, इस अवस्था में $u = \infty$; अतः $v = f$



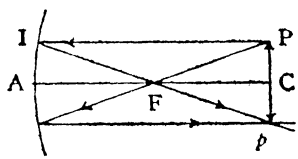
चित्र 49



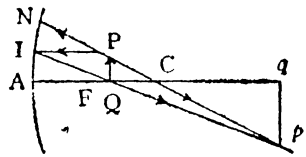
चित्र 50

(*ii*) वस्तु अनन्त दूरी और वक्रता-केन्द्र के बीच रखी होने पर स्थिति चित्र 49 जैसी होती है। इसमें (PQ) एक वस्तु, दर्पण (LAS) के वक्रता-केन्द्र (C) और अनन्त के बीच रखी है, (PL), मुख्य-अक्ष के समानान्तर और वस्तु के ऊपरी सिरे से चलने वाली किरण है। दर्पण के बिन्दु (L) पर परावर्त्तित होकर उसकी नाभि (F) पर से होती हुई यह (LP) दिशा में आगे बढ़ती है। बिन्दु (P) से एक दूसरी किरण, दर्पण के वक्रता-केन्द्र (C) में से होती हुई, उसके बिंदु (S) पर पड़ती है, और परावर्त्तित होकर इसी दिशा में वापस लौट जाती है। यह दोनों परावर्त्तित किरणें, वस्तु के एक ही बिन्दु से चली थीं, और परावर्त्तन के बाद, एक दूसरे को बिंदु (p) पर काट रही हैं। अत. बिन्दु (p), 'P' की प्रतिमूर्त्ति है। इसी तरह, वस्तु के दूसरे सिरे (Q) की प्रतिमूर्त्ति (q) बिंदु पर बनेगी। अतः वस्तु (P,Q) की प्रतिमूर्त्ति (p,q) हुई, जोकि वास्तविक, उल्टी और छोटी (real, inverted and diminished) है।

इस प्रतिमूर्त्ति को बनाने की दूसरी विधि चित्र 50 मे दिखलाई गई है इसमें एक बिंदु P से एक किरण तो दर्पण की मुख्य-अक्ष के समानान्तर, और दूसरी, उसकी नाभि पर से होकर, दर्पण पर पड़ती हुई ली गई है।



चित्र 51

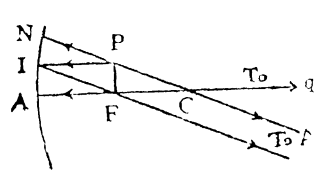


चित्र 52

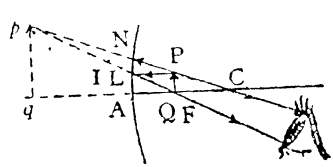
(*iii*) दर्पण के वक्रता-केन्द्र पर रखी वस्तु (Object at the radius of curvature)—(चित्र 51) मे दर्पण IA का वक्रता-केन्द्र C है, और वही पर एक वस्तु (PC) रखी है। P से एक किरण तो मुख्य-अक्ष के समानान्तर खीचो। यह दर्पण के बिंदु 'I' पर परावर्त्तित होकर, उसकी नाभि (F) पर से होकर जावेगी। इसी तरह 'P' से, नाभि (F) मे से होकर दर्पण पर पडने वाली किरण, परावर्त्तन द्वारा, मुख्य-अक्ष के समानान्तर हो जावेगी। यहाँ दोनो किरणे, परस्पर बिंदु (p) पर काट रही है, अतः बिन्दु p', P की प्रतिमूर्त्ति हुआ। अर्थात् इस स्थिति मे बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, वस्तु के बराबर, वास्तविक उल्टी और उसी स्थान पर बनती है, जहाँ पर कि वस्तु रखी है। गणित की दृष्टि से इस अवस्था मे $u=r$; अत. $v=r$।

(*iv*) नाभि और वक्रता-केन्द्र के बीच मे रखी हुई वस्तु (Object between the centre of curvature and the focus)—यह स्थिति, चित्र 52 मे दिखलाई गई है। पहले की तरह, इस बार भी एक किरण तो मुख्य-अक्ष के समानान्तर खीचो। यह दर्पण के बिंदु (I) पर परावर्त्तित होकर, उसकी नाभि (F) मे से होकर जावेगी। बिंदु P से ही दूसरी किरण, दर्पण के वक्रता-केन्द्र (C) मे से होती हुई खीचो। यह दूसरी किरण, बिन्दु (N) पर अभिलम्बवत् (normally) पडेगी। इसलिए इसी दिशा मे परावर्त्तित हो जावेगी। दोनो परावर्त्तित किरणे, बिन्दु (p') पर काट रही है। अत. यह 'P' की प्रतिमूर्त्ति हुआ—वास्तविक उल्टी लेकिन बडी (enlarged)।

(*v*) दर्पण की नाभि पर रखी हुई वस्तु (Object the focus)—चित्र 53 मे वस्तु (PQ) को दर्पण (AIN) की नाभि (F) पर रखा हुआ दिखलाया गया है।



चित्र 53



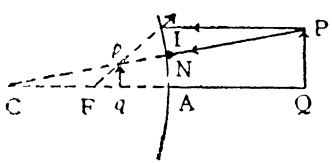
चित्र 54

इसके बिन्दु (P) से एक किरण, मुख्य-अक्ष के समानान्तर चलकर, बिन्दु (I) पर परावर्त्तित हो रही है और फिर उसी नाभि पर से होकर आगे बढ रही है। P से ही

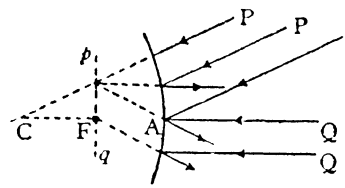
चलने वाली दूसरी किरण, वक्रता-केन्द्र C मे से होकर जा रही है और दर्पण पर लम्बवत् पडने से इसी दिशा मे वापस लौट रही है। यह दोनो किरणे एक दूसरे के समानान्तर है, इसीलिये प्रतिमूर्त्ति अनत दूरी पर बनती है। गणित की दृष्टि से, इस अवस्था मे, $u=f$; अत: $v=\infty$ ।

(v_i) दर्पण की नाभि और ध्रुव के बीच रखी वस्तु (Object between the focus and the pole)—चित्र 54 से स्पष्ट है कि इस स्थिति मे वस्तु (PQ) की प्रतिमूर्त्ति वास्तव मे नही बनती, क्योकि एक ही बिन्दु की परावर्त्तित किरणें एक दूसरे को काटती नही। हाँ, काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति (pq) अवश्य बनती है जोकि आकार मे वस्तु से बडी होती है।

(ख) **उन्नतोदर दर्पण (Convex Mirror)**—चित्र 55 मे PQ एक वस्तु, उन्नतोदर-दर्पण (A) की मुख्य-अक्ष पर सीधी खडी है। इसके बिंदु P से, मुख्य-अक्ष के समानान्तर चलने वाली किरण (PI), परावर्त्तन के बाद, नाभि (F) से आती हुई मालूम पडेगी, जबकि किरण (PN), दर्पण पर अभिलम्बवत् पडने से, इसी दिशा मे वापस लौट जावेगी, और वक्रता-केन्द्र (C) से आती हुई प्रतीत होगी। यह दोनो परावर्त्तित किरणे, परस्पर, बिंदु (p) पर मिलती प्रतीत होगी। अत बिंदु (p), P की काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति हुआ अर्थात् इस स्थिति मे, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, सदैव काल्पनिक, सीधी और छोटी बनती है।



चित्र 55



चित्र 56

नतोदर-दर्पण की तरह ही, उन्नतोदर-दर्पण के लिए भी वस्तु की कई स्थितियाँ लेकर यह सिद्ध किया जा सकता है कि जैसे-जैसे इस वस्तु को दर्पण से दूर लेते जाते है, वैसे-वैसे उसकी प्रतिमूर्त्ति का आकार भी कम होता जाता है। चित्र 56 मे, दर्पण से अनन्त दूरी पर रखी हुई वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, नाभितल मे बनती दिखलाई गई है।

30. रैखिक-अभिवर्द्धन (Linear Magnification)—प्रतिमूर्त्ति और वस्तु के विस्तार का अनुपात, रैखिक-अभिवर्द्धन कहलाता है। सीधी प्रतिमूर्त्ति के लिए यह (+) और उल्टी के लिए (—) होता है। उदाहरण के लिए चित्र 49 मे, वस्तु (PQ) की प्रतिमूर्ति (pq) बन रही है।

क्योंकि त्रिभुज (PCQ) और (pCq) एक समान है

$$\therefore \left(\frac{pq}{PQ}\right)=\left(\frac{Cq}{CQ}\right)$$

साथ ही प्रतिमूर्त्ति (pq) उल्टी है, इसलिए इसको (—) माना जावेगा

$$\therefore \text{अभिवर्द्धन (magnification) } (m) = -\frac{pq}{PQ} = -\frac{Cq}{CQ} = -\left(\frac{r-v}{u-r}\right)$$

$$= -\left(\frac{v}{u}\right) \ldots \quad \ldots \quad (30{\cdot}1)$$

उत्तलदोदर-दर्पण के लिए भी अभिवर्द्धन $\left((m) = \frac{pq}{PQ} \right)$ होता है, लेकिन इस दशा मे दोनो ही (+) होते है, क्योकि प्रतिमूर्त्ति सीधी बनती है (चित्र 55)। क्योकि त्रिभुज (Cpq) और (CPQ) एक जैसे है, अत पहले की तरह ही

$$\therefore \text{अभिवर्द्धन } (m) = \frac{pq}{PQ} = \frac{Cq}{CQ} = \frac{r-v}{u-r}$$

परन्तु इस बार, v और r दोनो ही ऋणात्मक (—) है

$$\therefore \frac{r-v}{u-r} = \frac{v-r}{u-r} = \frac{v}{u}$$

साथ ही दर्पण सूत्र से—

$$\frac{1}{v} + \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$$

इस समीकरण (equation) मे (v) से गुणा करने पर—

$$1 + \frac{v}{u} = \frac{v}{f}, \text{ या } \frac{v}{u} = \left(\frac{v}{f} - 1\right) = \left(\frac{v-f}{f}\right)$$

अत· $m = \left(-\frac{v}{u}\right) = -\frac{v-f}{f} = \frac{f-v}{f} \ldots \quad \ldots \quad (30{\cdot}2)$

इसी तरह दर्पण-सूत्र को (u) से गुणा करने से—

$$\left(\frac{u}{v} + 1\right) = \frac{u}{f}; \text{ या } \frac{u}{v} = \left(\frac{v}{f} - 1\right) = \frac{u-f}{f}$$

$$\therefore m = -\frac{v}{u} = -\frac{f}{u-f} = \frac{f}{f-u} \ldots \quad \ldots (30{\cdot}3)$$

ऊपर दिए गए अभिवर्द्धन वाले तीनो सूत्रो (30·1, 30·2, 30·3) में से किसी का भी उपयोग किया जा सकता है।

31. प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और प्रकार (Position and Nature of the Image)—ऊपर के वर्णन से स्पष्ट हो गया होगा कि जैसे-जैसे वस्तु को गोलीय दर्पण की ओर, उसकी मुख्य-अक्ष पर, अनन्त दूरी से लाते हैं, उसकी प्रतिमूर्त्ति की स्थिति, आकार और प्रकार बदलता जाता है। इन परिवर्त्तनों को तालिका के रूप मे (in a tabular form) आगे दिया गया है।

नतोदर-दर्पण

क्रम संख्या	वस्तु की स्थिति	चित्र संख्या	प्रतिमूर्त्ति की स्थिति	प्रतिमूर्त्ति का प्रकार
1.	अनन्त दूरी पर	41	मुख्य-नाभि पर	वास्तविक, उल्टी और बहुत छोटी
2	वक्रता-केन्द्र और अनन्त दूरी के बीच	49	वक्रता-केन्द्र और मुख्य-नाभि के बीच	वास्तविक, उल्टी और छोटी
3.	वक्रता-केन्द्र पर	51	वक्रता-केन्द्र पर	वास्तविक, उल्टी और बराबर
4.	वक्रता-केन्द्र और मुख्य-नाभि के बीच	52	वक्रता-केन्द्र से परे	वास्तविक, उल्टी और बड़ी हुई
5.	मुख्य-नाभि पर	53	अनन्त दूरी पर	बहुत बड़ी होकर
6.	मुख्य-नाभि और ध्रुव के बीच	54	दर्पण के पीछे	काल्पनिक, सीधी और बड़ी हुई

उन्नतोदर-दर्पण

1.	अनन्त दूरी पर	56	प्रधान-नाभि पर प्रतीत होती है	काल्पनिक, सीधी और बहुत छोटी
2.	ध्रुव और अनन्त के बीच	55	प्रधान-नाभि और ध्रुव के बीच बनती प्रतीत होती है	काल्पनिक, सीधी और छोटी

समतल-दर्पण की अनुबद्ध नाभियाँ (Conjugate Focii for Plane Mirror)—समतल-दर्पण को अनन्त वक्रता-व्यासार्द्ध वाला गोला माना जा सकता है इसलिए समीकरण (27·2) में, $r=\infty$ लगाने पर,

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{2}{r}=\frac{2}{\infty}=0 \qquad \text{अत. } v=-u \text{ ; और } m=-1$$

अर्थात् प्रतिमूर्त्ति, वस्तु के बराबर, और दर्पण के दूसरी ओर, उतना ही पीछे की ओर बनती है, जितनी दूरी पर कि वह वस्तु दर्पण के सामने रखी है।

मुख्य-नाभि को मूल-बिन्दु (origin) मानकर अनुबद्ध-नाभियाँ मालूम करना—सूत्र 27·2 को दूसरे रूप मे इस तरह भी लिखा जा सकता है—

$$\frac{f}{u}+\frac{f}{v}=1 \text{ ; या } u.f+v.f=u.v$$

अथवा $(u.v-u\,f-v.f+f^2)=f^2$

या $u(v-f)-f(v-f)=f^2$

$\therefore$ $(v-f)\,(u-f) \quad =f^2 \ldots \quad \ldots \quad \ldots (31\cdot1)$

अब अगर वस्तु और उसकी संगत (corresponding) प्रतिमूर्त्ति की दूरियाँ ध्रुव से न मापी जाकर, दर्पण की मुख्य-नाभि से मापी जावें, तो—

वस्तु-अन्तर $(x)=(u-f)$ और प्रतिमूर्त्ति-अन्तर $(x')=(v-f)$

इन मानो को ऊपर के सूत्र (30·1) मे लगाने पर—

$$x\,x'=f^2 \quad \ldots \quad \ldots \quad \ldots(31\cdot2)$$

स्पष्ट है कि चाहे f, (+) हो या (−), f^2 का मान हमेशा (+) ही रहेगा। इसलिए x और x' का एक जैसा चिन्ह होना आवश्यक है। यही कारण है कि वस्तु और प्रतिमूर्त्ति, हमेशा दर्पण के एक ही ओर रहती है, चाहे दर्पण नतोदर हो या उन्नतोदर।

आंकिक उदाहरण

1. मोमबत्ती की ज्वाला 3 से० मी० ऊँची है और यह दीवार से 3 मीटर की दूर पर रखी है। दीवार से कितनी दूरी पर एक नतोदर-दर्पण रखे कि इसमें, 9 सै० मी० ऊँची प्रतिमूर्त्ति, उसी की दीवार पर बन जावे ? दर्पण का नाभ्यन्तर भी मालूम करो। (दिल्ली *1952*)

(A candle flame 3 cm. high, is placed at a distance of 3 metres from a wall. How far from the wall must a concave mirror be placed so that it may from a 9 cm. high image of the flame on the same wall ? Also find the focal length of the mirror.)

उत्तर—मान लो दर्पण और ज्वाला के बीच की दूरी (u) है।

प्रतिमूर्ति, दीवार पर बनाई जाती है, अत प्रतिमूर्त्ति अन्तर $(v)=(u+300)$ सै० मी०

साथ ही प्रश्न के अनुसार, अभिवर्द्धन $(m)=\frac{v}{u}=\frac{9}{3}=3$, यानी $u=3u$

$\therefore\ 3u=u+300$; या $u=150$ सै० मी०

अर्थात दर्पण, दीवार से $(150+300=450)$ सै० मी० की दूरी पर रखा जावेगा। और दर्पण-सूत्र $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ मे यह मान लगाने पर

$$\frac{1}{f}=\frac{1}{450}+\frac{1}{150}=\frac{4}{450}$$

या $f=112\cdot5$ सै० मी०

2. एक प्रकाश-स्रोत, उन्नतोदर-दर्पण से 10 फुट की दूरी पर रखा है। इस स्रोत को दर्पण की ओर ले जाकर 2 फुट की दूरी पर रख देवें, तो प्रतिमूर्त्ति पहली स्थिति से कितनी हट जावेगी, जबकि दर्पण का वक्रता-व्यासार्द्ध 4·8 इंच है।

(A source of light is at first 10 ft. from a convex mirror, and is then moved up to a distance of 2 ft. from the mirror. How much does the image move if the radius of curvature of the mirror is 4·8 inches ?)

उत्तर—क्योंकि दर्पण उन्नतोदर है, इसलिये वक्रता-व्यासार्द्ध और नाभ्यन्तर दोनों ही ऋणात्मक (—) होंगे।

$$\text{दर्पण का नाभ्यन्तर } (f) = \frac{4\cdot8}{2} = 2\cdot4 \text{ इंच}$$

पहली स्थिति में वस्तु-अन्तर $(u) = 10$ फुट $= 120$ इंच

$$\therefore \quad \frac{1}{v} + \frac{1}{120} = -\frac{1}{2\cdot4}, \quad \text{अतः } v = (-2\cdot35) \text{ इंच}$$

दूसरी स्थिति में $u = 2$ फुट $= 24$ इंच

$$\therefore \quad \frac{1}{v_2} + \frac{1}{24} = \left(-\frac{1}{2\cdot4}\right), \quad \text{अतः } v_2 = (-2\cdot180) \text{ इंच}$$

$$\therefore \text{ प्रतिमूर्त्ति का स्थानान्तर (displacement)} = v_1 - v_2 = 2\cdot35 - 2\cdot18 = 0\cdot17 \text{ इंच}$$

3. एक वस्तु, 50 सैं० मी० वक्रता-व्यासार्द्ध वाले नतोदर-दर्पण से 75 सैं० मी० की दूरी पर रखी है। प्रतिमूर्ति की स्थिति और आकार मालूम करो।

(पंजाब *1952*)

(Given that an object is situated at a distance of 75 cm. from a concave mirror of radius of curvature of 50 cm. find the position of the image.)

उत्तर—प्रश्न के अनुसार, $u = 75$ सैं० मी०, और $r = 50$ सैं० मी०

$$\therefore \frac{1}{v} + \frac{1}{75} = \frac{2}{50} \quad \text{या} \quad \frac{1}{v} = \frac{1}{25} - \frac{1}{75} = \frac{2}{75}$$

अतः $v = 37\cdot5$ सैं० मी०

तथा अभिवर्द्धन $(m) = v/u = 37\cdot5/75 = \mathbf{1\cdot2}$

4. एक छोटी सी वस्तु दर्पण के सामने 20 सैं० मी० दूरी पर रखने से, उसकी काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति, दर्पण से 12 सैं० मी० की दूरी पर बनती है। दर्पण उन्नतोदर है या नतोदर, और उसका वक्रता व्यासार्द्ध कितना है? (उत्कल *1952*)

(A small object is placed on the axis of a spherical mirror at a distance of 20 cm from it. A virtual image is formed which is 12 cm. from the mirror. Determine whether the mirror is concave or convex and find its radius of curvature.) (*Utkal U. 1952*)

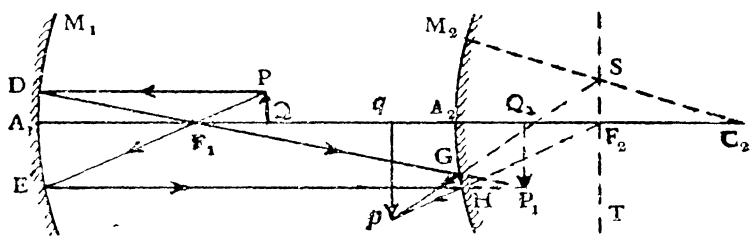
उत्तर—क्योंकि प्रतिमूर्त्ति काल्पनिक है, इसलिये यह दर्पण के पीछे की ओर बनेगी। अतः "प्रतिमूर्त्ति-अन्तर" $(v) = -12$ सैं० मी०, और 'वस्तु-अन्तर' $(u) = 20$ सैं० मी०। दर्पण-सूत्र में यह दोनों मान लगाने पर,

$$-\frac{1}{12} + \frac{1}{20} = \frac{2}{r}; \quad \text{अतः } r = 60 \text{ सैं० मी०}$$

अर्थात् दर्पण "उन्नतोदर" और 60 सैं० मी० वक्रता-व्यासार्द्ध वाला है।

३२. दो गोलीय दर्पणों द्वारा प्रतिमूर्त्ति बनना (Images due to Two Spherical Mirrors)—पिछले अध्याय मे हमने देखा था कि दो समतल-दर्पणो के बीच मे वस्तु को रख देने पर उसकी कई प्रतिमूर्त्तियाँ बन जाती है। पहले दर्पण द्वारा, वस्तु की बनने वाली काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति, दूसरे दर्पण के लिये 'काल्पनिक वस्तु' जैसा कार्य करती है। गोलीय दर्पणों के साथ भी ऐसा सम्भव है। इसकी दो अवस्थाये नीचे समझाई गई है।

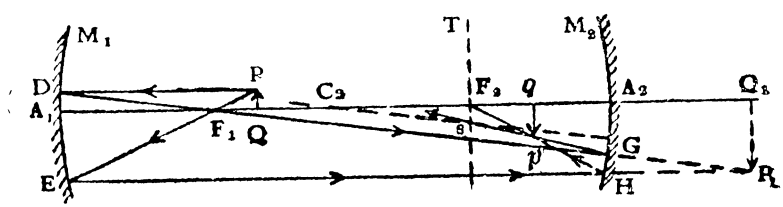
(क) जब कि एक दर्पण द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति दूसरे दर्पण के सामने पडे (When the virtual object due to one mirror is at the front of the second mirror.)—इस अवस्था मे, प्रतिमूर्ति को, दूसरे दर्पण के सामने



चित्र 57

रखी वस्तु मानकर धारा 29 और 31 के आदेशानुसार, अन्तिम प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और उसका प्रकार मालूम किया जा सकता है।

(ख) जब कि एक दर्पण द्वारा, बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, दूसरे दर्पण के पीछे पडे—चित्र-57 मे (PQ) एक वस्तु है। नतोदर दर्पण (M_1), द्वारा इसकी प्रतिमूर्त्ति (P_1Q_1) बनती है। लेकिन इससे पहले ही दूसरा नतोदर दर्पण (M_2), इस प्रतिमूर्त्ति (P_1Q_1)



चित्र 58

को बनाने वाली किरणों के मार्ग मे रख दिया जाता है। इसलिये प्रतिमूर्त्ति (P_1Q_1) इस दर्पण (M_2) के लिये 'काल्पनिक वस्तु' जैसा कार्य करने लगती है, और इसको बनाने वाली किरणे (PDF_1GP_1) और (PF_1EHP_1), क्रमशः बिन्दु (G) और (H) पर परावर्त्तित होकर अन्तिम प्रतिमूर्त्ति (pq) बना देती हैं। चित्र 58 मे यही क्रिया उन्नतोदर-दर्पणो के लिये दिखलाई गई है।

गणन के लिये, 'काल्पनिक वस्तु' (P_1Q_1) दर्पण M_2 के पीछे ही रखी मानी जावेगी। इसलिए इसकी दूरी (A_2Q_1) को (—) और (u) के बराबर और (A_2

F_2) को दूसरे दर्पण M_2 का नाभ्यन्तर माना जावेगा। अर्थात्

$$\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}$$

(i) जब $u=\alpha$, तो $v=f$ और जब (ii) $u=0$ तो $v=0$। इसलिये जैसे-जैसे 'काल्पनिक वस्तु' दर्पण के ध्रुव से अनत दूरी (दर्पण के पीछे) की ओर हटती जाती है, उसकी अन्तिम प्रतिमूर्त्ति भी ध्रुव से दर्पण की नाभि की ओर हटती जाती है। (u के (f) अधिक होने पर), उन्नतोदर-दर्पण द्वारा बनने वाली अन्तिम प्रतिमूर्त्ति काल्पनिक होती है।

33. गोलीय दर्पण का नाभ्यन्तर निकालना (Determination of the Focal Length of a Spherical Mirror)—

(क) नतोदर दर्पण (Concave Mirror)—

(1) लम्बान (भेदाभास) विधि (Parallax method) या एक पिन वाली विधि—जब कोई वस्तु-पिन (object-pin) किसी नतोदर-दर्पण के वक्रता-केन्द्र पर रख दिया जाता है तो उसकी उसी स्थान पर, उल्टी लेकिन उतनी ही बडी प्रतिमूर्त्ति बन जाती है। पिन और उसकी उल्टी प्रतिमूर्त्ति के बीच लम्बान (parallax) दूर करके वक्रता केन्द्र की स्थिति मालूम हो जावेगी। तब इस पिन और दर्पण के बीच की दूरी का आधा, नतोदर-दर्पण के बीच की दूरी का आधा नतोदर-दर्पण का 'नाभ्यन्तर' (f) होगा।

प्रयोग करने के लिये (i) वस्तु पिन का ऊपरी नुकीला सिरा, और दर्पण का ध्रुव प्रकाश-मच (optical bench) की लम्बाई के समानान्तर (parallel) होने ज़रूरी है। (ii) लम्बान दूर हो जाने पर, वस्तु-पिन का ऊपरी, नुकीला सिरा और उसकी ठीक ऊपर, प्रतिमूर्त्ति का उल्टा नुकीला सिरा, एक खडी रेखा मे दीखेगा, और दोनों की नोकें, एक दूसरे को छूती रहनी चाहिये। ठीक स्थिति मे रखे होने पर, आँख को इधर-उधर हटाये जाने पर, वस्तु पिन और उसकी प्रतिमूर्त्ति, आँच के साथ-साथ चलती दिखलाई पडेगी (iii) दर्पण का मुख-पृष्ठ (व्यास) (aperture) चौडा नही होना चाहिये।

(अधिक विस्तार के लिये, "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिए।)

(2) दो पिन वाली (या $u-v$) विधि (U—V Method)—इस विधि में एक की जगह दो पिने काम मे लाई जाती है—एक को तो नतोदर-दर्पण के सामने, उसके नाभ्यन्तर से अधिक दूरी पर रखकर, वास्तविक और उल्टी प्रतिमूर्त्ति बनाई जाती है। पश्चात् दूसरा पिन, इस उल्टी प्रतिमूर्त्ति के स्थान पर रखना होता है। अर्थात्



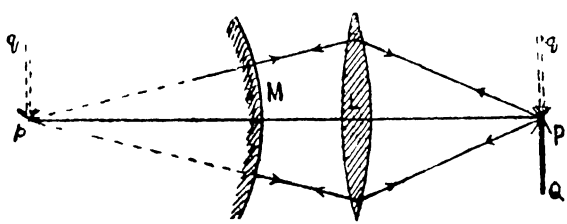
चित्र 59

इस प्रयोग मे भेदाभास (लम्बान) पहले पिन की उल्टी प्रतिमूर्त्ति और इस दूसरे पिन के बीच दूर करना होता है। इसलिए पहचान के लिए, इनमे से एक पिन के ऊपरी

नुकीले सिरे को चॉक से सकेद किया जा सकता है। लम्बान दूर हो जाने पर, दर्पण से वस्तु (पहला) पिन की दूरी तो u और दूसरे पिन की दूरी (v) मालूम हो जाती है। इन मापों को दर्पण-सूत्र $\left(\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f}\right)$ मे लगाकर गणन करने से नाभ्यन्तर (f) मालूम हो जाता है। कई मापे लेने के लिए वस्तु-पिन को थोडा आगे-पीछे करके, उसकी हरएक स्थिति के लिए सगत, प्रतिमूर्त्ति की स्थिति मालूम की जाती है। और बाद मे u और v की मापो के बीच एक ग्राफ खीच लेते है।

(ख) उन्नतोदर-दर्पण (Convex Mirror) का नाभ्यन्तर निकालना — उन्नतोदर-दर्पण, हमेशा वस्तु की, उससे छोटी, सीधी और काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति बनाता है। काल्पनिक होने के कारण हम इस प्रतिमूर्त्ति को न तो परदे पर ही ले सकते हैं और न ही उसके स्थान पर किसी पिन को रखकर, लम्बान दूर कर सकते है।

उन्नतोदर-दर्पण के सामने रखी वस्तु की दूरी ($=u$) की माप तो सीधे ही आसानी से मालूम हो जाती है। लेकिन ऊपर बतलाई हुई कठिनाई के कारण प्रतिमूर्त्ति-



चित्र 60

अंतर (v) मापना कठिन हो जाता है। इसके लिये 'उन्नतोदर' (उत्तल) ताल (लैंस) की सहायता ली जा सकती है। चित्र 60 मे यही विधि दिखलाई गई है। पहले एक वस्तु पिन (PQ) की उल्टी और वास्तविक प्रतिमूर्त्ति (pq), उन्नतोदर-लैंस (L) द्वारा उसके दूसरी ओर बना लेते है। फिर लैंस और पहले वस्तु-पिन की उल्टी प्रतिमूर्त्ति के बीच मे दिया हुआ उन्नतोदर दर्पण (M) वस्तु-पिन की ओर मुख करके रख देते हैं। इससे लैंस मे से होकर जाने वाली किरणे, जब इस उन्नतोदर-दर्पण पर पडती है, तो परावर्त्तित होकर, वापिस, लैंस मे से होकर, एक दूसरी प्रतिमूर्त्ति, वस्तु-पिन के पास ही बना लेती है। अब अगर वस्तु-पिन और उसकी उल्टी प्रतिमूर्त्ति (p,q) के बीच वाला लम्बान, सिर्फ उन्नतोदर-दर्पण (M) को आगे-पीछे करके, दूर कर लिया जावे, तो उस दशा मे, उन्नतोदर-दर्पण (M) और वस्तु-पिन की उल्टी प्रतिमूर्त्ति की जगह पर रखे हुए दूसरे पिन के बीच की दूरी, उन्नतोदर-दर्पण (M) के वक्रता-व्यासार्द्ध (R) के बराबर होगी, क्योकि तभी, दर्पण पर पडने वाली किरणें लम्बवत् पडने के कारण, उसी मार्ग से वापिस लौट कर, वस्तु-पिन पर ही, उसकी उल्टी प्रतिमूर्त्ति बना पावेगी। अन्य सब सावधानियाँ पहले की तरह ही ली जानी चाहिये। ध्यान रहे कि इस प्रयोग मे दो बार लम्बान (parallax) दूर किया जाता है—पहले तो लैंस (L) के एक ओर वस्तु-पिन को रखकर, दूसरी ओर बनने वाली उल्टी

प्रतिमूर्त्ति और दूसरे पिन के बीच; और दूसरी बार, उन्नतोदर-दर्पण (M) को दूसरे पिन की ओर, लैंस के पास रखकर, पहले वस्तु-पिन और उसी पिन की उल्टी प्रतिमूर्त्ति के बीच। दूसरी बार के प्रयोग मे वस्तु-पिन और उसके प्रतिमूर्त्ति पिन को स्थिर रखा जाता है, सिर्फ उन्नतोदर-दर्पण (M) को ही आगे-पीछे हटाकर लम्बान दूर करते है। कई मापे लेने के लिए वस्तु-पिन को आगे-पीछे किया जा सकता है। सबका औसत, शुद्ध फल होगा।

उदाहरण के लिये, मान लीजिये किसी प्रयोग मे उन्नतोदर-दर्पण और लैंस के बीच की दूरी 14 सें० मी० होने पर, लैंस के सामने 20 सें० मी० की दूरी पर रखी वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, वही पर बनने लगती है, और लैंस का नाभ्यन्तर 10 सें० मी० है, तो दर्पण का नाभ्यान्तर इस तरह निकाला जावेगा—

क्योकि उन्नतोदर लैंस के लिये $\left(\frac{1}{f}-\frac{1}{u}=\frac{1}{v}\right)$; अतः $\frac{1}{10}-\frac{1}{20}=\frac{1}{v}$,

या $v=20$ सें० मी०

$\therefore$ दर्पण का वक्रता-व्यासार्द्ध $=(20-14)=6$ सें० मी०

और नाभ्यन्तर $(f)=3$ सें० मी०

34. दर्पणों की पहचान और उपयोग (Identification and Use of Mirrors)

पहचान—

(1) नतोदर-दर्पण बीच में दबे हुए, उन्नतोदर बीच में उठे हुए, और समतल, दर्पण एकसार होते है।

(2) (i) नतोदर-दर्पण में, दूर की वस्तु उल्टी दीखती है और पास की सीधी, लेकिन अपने असली आकार से बढी हुई।

(ii) उन्नतोदर-दर्पण से, हमेशा वस्तु की सीधी, लेकिन असली आकार से छोटी प्रतिमूर्त्ति बनती है।

(iii) समतल-दर्पण से बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, वस्तु के बराबर ही होती है, और दर्पण के पीछे बनती है।

अर्थात् दर्पण के पास, वस्तु रखने पर, अगर उसकी प्रतिमूर्त्ति, सीधी, वस्तु के बराबर, और दर्पण के पीछे उतनी ही दूरी पर बने, जितना कि वह वस्तु उसके आगे रखी है, तो दिया हुआ दर्पण 'समतल' होगा। इसके विपरीत अगर बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, वस्तु से छोटी और दर्पण के पीछे बने, तो दर्पण 'उन्नतोदर' होगा। और जब प्रतिमूर्त्ति सीधी और वस्तु से बडी बने, तो दर्पण 'नतोदर' होगा। यही प्रतिमूर्त्ति, दर्पण को, वस्तु से दूरी पर हटाने से, उल्टी बनने लगेगी।

उपयोग (Uses)—

(क) समतल-दर्पण—मुँह देखने वाले शीशे अधिकतर समतल ही होते हैं। एक अच्छे शीशे मे यह गुण होने चाहियें—(i) वह पूरी तरह समतल हो (ii) काँच की पटरी, जिस पर पालिश की जाती है, ज्यादा मोटी न हो, और (iii) पटरी पर की

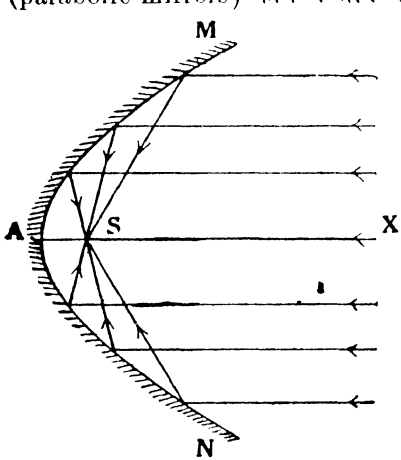
गई पालिश चमकदार और एकसार हो। समतल न होने पर, उसके द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति कही पर तो वस्तु के बराबर, कही उससे बडी और कही पर छोटी होगी, और इस तरह वस्तु की पूरी प्रतिमूर्त्ति टेढी-मेढी (distorted) हो जावेगी। इसी तरह काँच की पटरी के मोटा होने पर, उसके दोनो सतहो के बीच क्रमानुसार-परावर्तन (successive reflections) के कारण, अनेक प्रतिमूर्तियाँ बनने लगती है। इसी तरह पालिश के चमकदार और एकसार न होने पर प्रतिमूर्त्ति फीकी (dim) पड जाती है। यह जाँच करने के लिये कि दिया हुआ समतल दर्पण, ठीक से समतल है या नही उसमे दूर पर रखी किसी सीधी खडी वस्तु, जैसे जगले के छड को देखना चाहिए। अगर प्रतिमूर्त्ति, लहरदार (wavy) बने, तो दर्पण का तल समतल नही है। सस्ते दर्पणो मे यही दोष होता है।

(ख) नतोदर-दर्पण (Concave Mirror) के उपयोग—(i) मुँह के बाल बनाने के काम मे आने वाला शीशा (shaving glass)—इसे मुँह के पास ही सामने रखने पर, नतोदर होने के कारण, मुँह का सीधा और बडा प्रतिबिब दीखने लगता है।

(ii) डाक्टर लोग, छोटे मुँह वाले नतोदर-दर्पणो की सहायता से रोगी के कान, नाक, या आँख पर, प्रकाश का सँकरा और काफी चमकीला, किरण-पुंज डाल कर भीतरी भाग की परीक्षा करते है।

(iii) परावर्त्तक (reflector) के रूप मे काम मे लाने के लिए, प्रकाश-स्रोत को इन दर्पणो की नाभि पर रखा जाता है। इस स्थिति मे परावर्त्तित किरणे, एक दिशा विशेष मे ही जा पाती है और दूसरी दिशाओ मे फैलने से होने वाला प्रकाश-क्षय नही होने पाता।

आजकल, परावर्त्तन के लिए नतोदर-दर्पणो की जगह पर, परवलयाकार दर्पण (parabolic mirrors) काम मे लाये जाते है (चित्र 61)। साइकिल, मोटर-कार, ट्राम-गाडी वगैरह की प्रकाश-बत्तियो मे इसी तरह के परावर्त्तक लगे रहते है। इनमे प्रकाश-स्रोत को, दर्पण की ठीक नाभि पर न रखकर उससे थोडा हटा हुआ रखते हैं। इससे परावर्त्तित किरणे अपसृत (फैलती हुई) हो जाती हैं, और सामने के काफी चौडे क्षेत्र को दूर तक चमका देती हैं। बडे-बडे दूरबीनों (telescopes) मे इसी तरह के परावर्त्तक लगे रहते हैं। इस तरह की सबसे बडी दूरबीन, "माउण्ट पैसाडोना" केलीफोर्निया वेधशाला (observatory) मे रखी है, जिसके दर्पण का मुख-पृष्ठ (व्यास) 16 6 फुट है। भाप से चलने वाले 'स्टीमरो' और



चित्र 61

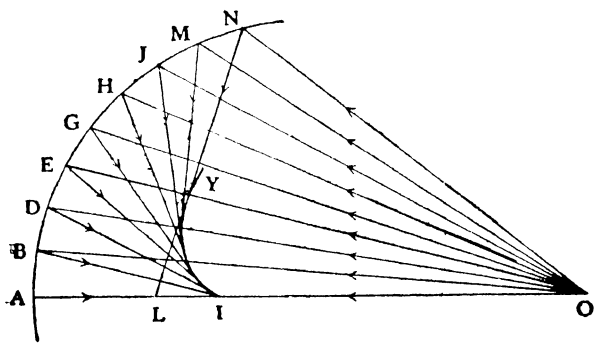
रेल के इजिनों की सर्च-लाइट (search light) मे भी इसी तरह के परावर्त्तक लगाये जाते है।

(ग) उन्नतोदर-दर्पण (Convex Mirror) के उपयोग—इन दर्पणो से, समतल नतोदर-दर्पणो की अपेक्षा, काफी अधिक चौडे क्षेत्र को एक साथ ही देखा जा सकता है। इसलिए इनका प्रयोग, मोटरकारो मे, पीछे से आने वाली गाडियो को देखने में किया जाता है। गलियो में लगी प्रकाश-बत्तियो मे भी उन्नतोदर-दर्पण लगाये जाते हैं।

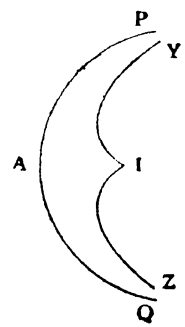
(घ) नलके के आकार वाले दर्पणों (Cylinderical Mirrors) का प्रयोग—इन दर्पणो मे परावर्त्तक-तल, नलके के रूप मे होता है। इनका प्रयोग, 'हँसी की गली' (laughing gallery) बनाने मे किया जाता है।

35. परावर्त्तन द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्ति के दोष (Defects of Image due to Reflection)—जब तक वस्तु और उसकी प्रतिमूर्त्ति, एक जैसी (Similar) रहती है, तब तक प्रतिमूर्त्ति मे कोई दोष नही माना जाता। लेकिन जब इसका कोई हिस्सा वस्तु से पतला, कोई मोटा, कोई लम्बा या कोई छोटा दीखता है, तो इसको "विकृत" (distorted) कहते है। अधिकतर समतल-दर्पण मे बनने वाली प्रतिमूर्त्ति दोष-मुक्त होती है। लेकिन गोलीय दर्पणो के साथ ऐसा नही होता क्योकि (i) उनका मुख-पृष्ठ बहुत ही छोटा नही हो पाता और (ii) आपतित किरणे, दर्पण की मुख्य-अक्ष के साथ थोडा-बहुत कोण तो बनाती ही है।

गोलीय दर्पणो की प्रतिमूर्त्ति मे प्रमुख दोष 'गोलापेरण' (Spherical Aberration) का होता है। चित्र 62 मे (ABDEGHJMN) एक, अधिक मुख-पृष्ठ वाला, नतोदर-दर्पण है। 'O' प्रकाश-स्रोत का एक बिदु है, और मुख्य-अक्ष (AO) है। (OB,



चित्र 62



चित्र 63

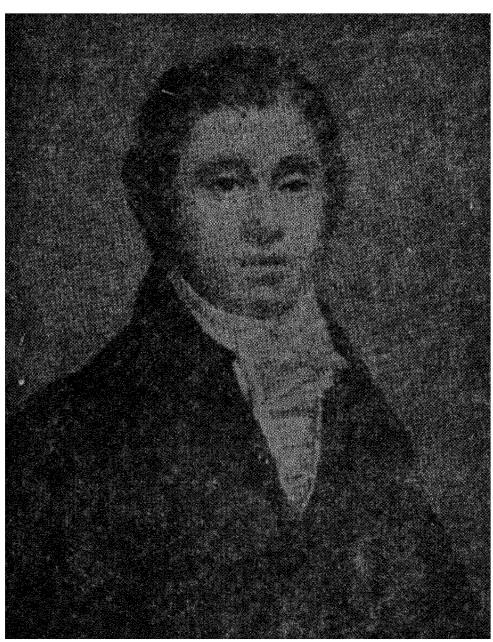
OD...ON) आपतित किरणे (incident rays) है। A, B, D, E, G, H N बिन्दुओ पर लम्ब (perpendicular) खीच कर, परावर्त्तित-किरणों की दिशा मालूम की जा सकती है। लेकिन छोटे मुख-पृष्ठ वाले दर्पण की तरह, यह परावर्त्तित किरणे, सिर्फ एक बिन्दु पर केन्द्रित नही हो पाती, वरन् दूसरे-दूसरे बिन्दुओं पर एकत्र होती हैं, और प्रतिमूर्त्ति फैली हुई व धुंधली बनती है। प्रतिमूर्ति के इस दोष को ही 'गोलापेरण' कहते हैं। यह सब मिलन-बिन्दु (point of intersection) एक वक्र-रेखा (curve) (IY) पर पडते हैं। इस वक्र-रेखा (IY) का शीर्ष (apex)

मुख्य-अक्ष पर बिन्दु (I) पर दिखलाई पडता है। इस तेज चमकने वाली वक्र-रेखा को "तीक्ष्ण वक्र" (caustic curve) भी कहते है (देखो चित्र 63), और वक्र के शीर्ष को 'कस्प" (cusp)। जब आपतित किरणे मुख्य-अक्ष के समानान्तर होती है, तो वक्र का शीर्ष दर्पण की मुख्य-नाभि पर होता है जो किरण-पुज (चित्र 62 मे) (ONL), मुख्य अक्ष के साथ काफी कोण बनाता है, उसको "तिरछा मध्य-किरण-पुज" (oblique centric pencil) कहते है। इस प्रकार के किरण-पुज की किरणे, परावर्तित होकर, एक बिन्दु पर केन्द्रित न होकर अलग-अलग एकत्र होती है। और प्रतिमूर्त्ति साफ-साफ न बनकर, धुंधली (अस्पष्ट) टेढी और विकृत हो जाती है।

तिरछी आपतित किरण (ON), परावर्त्तित होकर, (NL) दिशा मे लौटती है, और मुख्य-अक्ष को बिन्दु (L) पर काटती है। अब दूरी (LI) को "रैखिक-गोला-पेरण" (longitudinal spherical aberration) कहते है। वस्तु के छोटा होने से इस दोष पर कोई प्रभाव नही पडता। इसको दूर करने का उपाय, मुख-पृष्ठ को कम रखना ही है।

डेविड ब्रयुस्टर (1781—1868)

आपका जन्म जैडबर्ग मे 11 दिसम्बर, 1781 को हुआ। बचपन मे ही आपको नयी-नयी चीजे बनाने का शौक था। दस वर्ष की आयु मे ही आपने एक दूरबीन बना ली। पिता का विचार आपको पादरी बनाने का था। इसलिए 23 वर्ष के होने पर आपको 'स्टालिन-चर्च' मे भेजा गया। लेकिन जल्दी ही स्नायु-दुर्बलता के कारण आपको चर्च छोडना पडा। बाद मे आपने कैम्ब्रिज-विश्वविद्यालय से एम० ए० और सैंट-एण्ड्रयूज से LLD की उपाधि प्राप्त की। 28 वर्ष की आयु मे आपने प्रकाश पर खोज करते हुए 'कैलेडोस्कोप' बनाया। यह भी सिद्ध किया कि प्रकाश की किरणे अनुप्रस्थ (transverse) होती है। अपने परिश्रम के फलस्वरूप आपने 'कोप्ले-पदक' प्राप्त किया।



चित्र 64

1830 मे आपको 'सर' का खिताब मिला। प्रकाश-गृहो (Light House) की लालटेनो

को भी आपने सुधारा और 'रग न दीखने की बीमारी' (colour blindness) का कारण मालूम किया। 10 फरवरी, 1868 को आपकी मृत्यु हो गई।

सार (Summary)

गोलीय दर्पण—यह एक बड़े और खोखले गोले का छोटा सा अंश ही होता है। यह अंश 'नतोदर' या 'उन्नतोदर' हो सकता है।

वक्रता-व्यासार्द्ध—(r), यह उस बड़े गोले का अर्द्ध-व्यास होता है, जिसका कि गोलीय दर्पण, एक अंश मात्र ही होता है।

मुख्य-नाभि पर ही आपतित समानान्तर किरणें, परावर्त्तित होकर, या तो वास्तव में केन्द्रित (या फैलती हुई) हो जाती है, या ऐसा होती हुई प्रतीत होती हैं। इस बिन्दु पर से होकर, लेकिन, मुख्य-अक्ष के समकोणिक तल को *'नाभि-तल'* कहते हैं।

नाभ्यन्तर—(f), दर्पण की मुख्य-नाभि और उसके ध्रुव के बीच की दूरी के बराबर होता है। साथ ही ($f=r/2$)

गोलीय दर्पण का सूत्र—$\left(\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f}=\frac{2}{r}\right)$। नतोदर दर्पण के लिये f (+) और उन्नतोदर के लिये (—) होता है।

अभिवर्धन—$(m)=\frac{\mathrm{I}}{\mathrm{O}}=-\left(\frac{v}{u}\right)=\frac{-f}{u-f}=\frac{f-v}{f}$

अभ्यास के लिए प्रश्न

1 नतोदर-दर्पण के लिये निम्न पारिभाषिक शब्दों का अर्थ स्पष्ट करो :

(i) मुख्य नाभि (ii) नाभ्यन्तर (iii) वक्रता-व्यासार्द्ध (iv) वक्रता-केन्द्र (v) ध्रुव

(दिल्ली 1950; कलकत्ता 1941, 44)

2. नतोदर-दर्पण के लिये निम्न सूत्र को सिद्ध करो—$\left(\frac{1}{v}+\frac{1}{u}\right)=\frac{1}{r}$

(आन्ध्र 1950, 51, पंजाब 1950, 51; मद्रास 1950, राजपूताना 1949, अनामली 1951, उत्कल 1954, नागपुर 1955; विश्वभारती 1952, 55, बनारस 1950, 53; गोहाटी 1957, दिल्ली 1950, 51)

3. 15 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले नतोदर-दर्पण से कितनी दूरी पर एक वस्तु रखी जावे कि उसकी प्रतिमूर्त्ति वास्तविक और वस्तु से तीन गुनी बड़ी बने? (मद्रास 1950)

उत्तर—20 सैं० मी०।

4. सिद्ध करो कि वास्तविक वस्तु की उन्नतोदर-दर्पण द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, सदैव काल्पनिक और छोटी होती है। (राजपूताना 1950)

5. 10 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले नतोदर-दर्पण को दीवार से 35 सैं० मी० की दूरी पर रखा गया है। वस्तु को दीवार से कितनी दूरी पर रखा जावे कि इसकी दीवार पर वास्तविक प्रतिमूर्त्ति बने? (पंजाब 1950)

6. नतोदर-दर्पण के मुख-पृष्ठ से क्या तात्पर्य है? एक नतोदर-दर्पण का वक्रता व्यासार्द्ध 30 सैं० मी० है। इस दर्पण के सामने, 1 सैं० मी० ऊँची एक वस्तु रखी है। अगर इस वस्तु की दूरी, दर्पण के ध्रुव से (i) 20 सैं० मी० (ii) 5 सैं० मी० हो तो दोनों स्थितियों में बनने वाली प्रतिमूर्त्तियों की स्थितियों और आकार का गणन करो।

उत्तर—(i) 60 सैं० मी०, 3 सैं० मी० और वास्तविक

(ii) 7·5 सैं० मी०, 1·5 सैं० मी० और काल्पनिक

7. परावर्त्तन-नियमों की सहायता से, उन्नतोदर-दर्पण पर पड़ने वाली किरणों के मार्ग को व्यक्त करने वाली रेखायें खींचकर, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति, आकार, किस तरह मालूम करोगे ? चित्र खींचकर समझाओ। (उत्कल 1947)

8. एक नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर, 15 सैं० मी० है। इस दर्पण के सामने वस्तु रखकर वस्तु की दोगुनी प्रतिमूर्त्ति बनाई जाती है। वस्तु की स्थिति बतलाओ जबकि संगत प्रतिमूर्त्ति (i) वास्तविक है और जब (ii) काल्पनिक है। (आन्ध्र 1951)

उत्तर—(i) 22·5 सैं० मी० (ii) 7·5 सैं० मी०

9. सिद्ध करो कि अगर नतोदर-दर्पण के सामने (p) दूरी पर रखी वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, दर्पण से (q) दूरी पर बनती है, तो $(p\ q) = f^2$। (पटना 1252, आन्ध्र 1950)

10. "रैखिक अभिवर्धन" की परिभाषा दो। उन्नतोदर-दर्पण से होने वाले रैखिक अभिवर्धन का सूत्र, u और f के रूप में मालूम करो। इस तरह से सिद्ध करो कि वास्तविक वस्तु के लिये, उन्नतोदर-दर्पण द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, हमेशा, उससे छोटी ही बनती है। (नागपुर 1951)

11. नतोदर-दर्पण के सामने, उसकी मुख्य-अक्ष पर रखी हुई वस्तु को अनन्त दूरी से धीरे-धीरे, ध्रुव तक लाते हैं। वस्तु की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और आकार में होने वाले खास-खास परिवर्तनों को चित्र खींचकर समझाओ। (राजपूताना 1942, दिल्ली 1953, अनामली 1951; गोहाटी 1951, विश्वभारती 1952, इलाहाबाद 1932, ढाका 1933)

12. 10 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले दो दर्पण लिये जाते हैं। इनमें से एक नतोदर और दूसरा उन्नतोदर है। दोनों दर्पणों को आमने-सामने करके 15 सैं० मी० की दूरी पर रख दिया जाता है। इन दोनों दर्पणों के ठीक बीच में एक वस्तु रख दी जाती है, वस्तु की अन्तिम प्रतिमूर्त्ति की स्थिति मालूम करो, जबकि पहला परावर्तन, उन्नतोदर-दर्पण पर होता है। (पटना 1930)

संकेत—नतोदर-दर्पण के लिए $u = 1\frac{1}{2}$ सैं० मी० और $f = 5$ सैं० मी०

∴ वस्तु की पहली प्रतिमूर्त्ति, 15 सैं० मी० की दूरी पर बनती है। यानी यह दूसरे दर्पण के ध्रुव पर बनेगी। अतः अन्तिम प्रतिमूर्त्ति, दूसरे उन्नतोदर-दर्पण द्वारा परावर्त्तन से उन्नतोदर-दर्पण के ध्रुव पर बनेगी।

13. उन्नतोदर-दर्पण का वक्रता-व्यासार्द्ध, एक पिन और उन्नतोदर-लैंस को प्रकाश-मंच पर रखकर; किस प्रकार मालूम करोगे ? चित्र खींचकर समझाओ। (राजपूताना 1949)

14. (i) उन्नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर प्रयोग द्वारा किस प्रकार निकालोगे ?

(पटना 1952 ; आंध्र 1954 ; यू० पी० बोर्ड 1951)

(ii) एक उन्नतोदर-दर्पण, उन्नतोदर-लैंस के पीछे 20 सैं० मी० की दूरी पर रखा है। लैंस का नाभ्यन्तर 15 सैं० मी० है। जब लैंस के सामने 20 सैं० मी० की दूरी पर एक छोटी सी वस्तु रखते हैं, तो उसकी प्रतिमूर्त्ति वहीं पर बन जाती है। उन्नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर बताओ।

(यू० पी० बोर्ड 1952)

15. सूर्य-किरणों द्वारा एक नतोदर-दर्पण के ध्रुव पर $\frac{1}{2}°$ का कोण बना रही है और सूर्य की प्रतिमूर्त्ति का व्यास 0·157 फुट है। दर्पण का वक्रता-व्यासार्द्ध मालूम करो। (उत्कल 1954)

उत्तर—36 फुट

16. (i) एक दर्पण को बिना छुए यह बताना है कि वह नतोदर है या उन्नतोदर। यह काम किस तरह करोगे ? (उत्कल 1952 ; कलकत्ता 1941, दिल्ली 1940)

(ii) एक अच्छे मुँह देखने वाले शीशे में क्या-क्या गुण होने चाहिएँ ?

(कलकत्ता 1929 ; ढाका 1927)

17. (i) क्या कारण है कि मोटी पर्त्त वाले शीशे में देखने से प्रतिबिंब टेढ़ा-मेढ़ा और विकृत दिखाई पड़ता है ? (पटना 1952)

(ii) मोटर कारों में लगा हुआ बगली शीशा या तो समतल होता है या उन्नतोदर ?

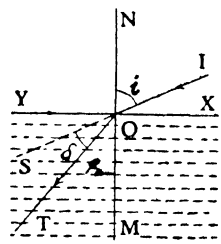
(कलकत्ता 1942)

अध्याय 4

समतलों पर आवर्त्तन

(Refraction At Plane Surfaces)

36. आवर्त्तन (Refraction)—जब प्रकाश किरणें, एक पारदर्शक (transparent) माध्यम (medium) से दूसरे पारदर्शक माध्यम मे जाती हैं, तो यह, दोनो माध्यमो के सस्पर्शक-तल (contact-plane) पर अपने पहले मार्ग से थोडा बगल (side) मे मुड जाती है। दूसरे माध्यम मे, चलने वाली इस विचलित (deviated) किरण को 'आवर्त्तित किरण' और इस क्रिया को 'आवर्त्तन' कहते है।



चित्र 65

चित्र 65 मे रेखा (XY), सस्पर्शक-तल को बतलाती है। प्रकाश की एक किरण, (IO), ऊपर वाले माध्यम (मानलो हवा) मे चलती हुई, जब इस तल (XY) के बिदु (O) पर पडती है और साथ ही यदि नीचे वाला माध्यम, ऊपर वाले से सघन (denser) है (जैसे कि पानी), तो यह किरण, आवर्त्तन के कारण, अभिलम्ब (normal) (NOM) की ओर झुक जावेगी, और दूसरे, माध्यम मे इसकी दिशा (OT) होगी। इस तरह $\angle$(ION) तो आपतन-कोण ($=i$) और $\angle$(MOT), आवर्त्तन-कोण ($=r$) होगा। रेखा (OT) को 'आवर्त्तित-किरण' कहते हैं।

आवर्त्तन-नियम (Laws of Refraction)—

(1) आपतित-किरण, संस्पर्शक-तल के आपतन-बिन्दु पर अभिलम्ब और आवर्त्तित-किरण सब एक ही तल में रहते हैं।

(2) दो माध्यमो के एक जोडे (pair) और एकरंगे प्रकाश (mono-chromotic light) के लिए, आपतन-कोण (i) की 'ज्या' (sine) और आवर्त्तन-कोण (r) की 'ज्या' इन दोनों का अनुपात, स्थिर (constant) रहता है। अर्थात्

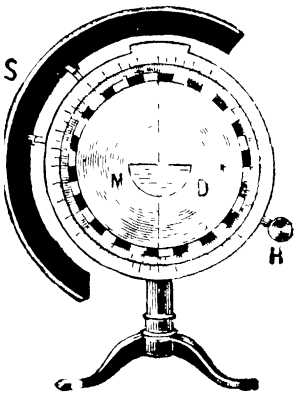
$$\frac{\sin(i)}{\sin(r)} = \text{स्थिर}$$

इस नियम को 'ज्या-नियम' (Law of Sines) कहते हैं। **विल्लीबोर्ड स्नैलियम** के नाम पर इसका दूसरा नाम "स्नैल-नियम" भी है।

नियमों की परीक्षा (Experimental Verification of the Laws)—

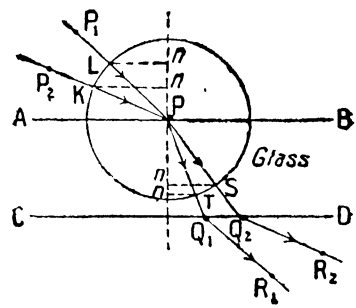
(1) हार्टिल-यन्त्र द्वारा—इस यन्त्र का वर्णन धारा 15 मे पीछे किया जा

चुका है। आवर्त्तन-नियमों की परीक्षा के लिए, अर्द्ध-गोलाकार (semispherical), काँच का टुकडा, यन्त्र की चकती (Disc) (D) के केन्द्र पर लगे हुए स्टैंड मे लगा देते है (चित्र 66)। ठीक लगाने पर इस टुकडे का समतली किनारा, चकती के गोल पैमानो की (90°—90°) वाली व्यास-रेखा (diameter) पर आ जाता है। तब 0°—0° वाली व्यास-रेखा इस किनारे पर अभिलम्ब हो जाती है। जब यन्त्र की झिरी (S) मे से प्रकाश-किरणो का एक पुँज (beam) इस काँच के टुकडे पर डालते है तो आपतित किरणो का कुछ अश तो परावर्तित (reflected) हो जाता है और बाकी, टुकडे मे से होकर बाहर निकलता है। आपतन और आवर्त्तन कोण की मापे, चकती के गोल-पैमाने पर सीधे ही ले ली जाती है। इसके बाद यन्त्र के पर्दे को, स्थिर रखते हुए, चकती को थोडा इधर-उधर घुमाते है और उसकी हरएक स्थिति मे, आपतन और आवर्त्तन-कोणो को मापते जाते है। माप के प्रत्येक जोडे के लिए ज्याओ का मान, 'साइन-तालिकाओ' (sine tables) से मालूम करके उसका अनुपात मालूम कर लेते है। अगर यह अनुपात स्थिर रहे तो नियम सिद्ध हुए माने जाते है।



चित्र 66

(2) पिन-विधि (Pin Method)—लकडी के समतल तख्ते (drawing board) पर एक सफेद कागज लगा लो। उस पर काँच का आयताकार टुकडा ABCD (चित्र 67), बीच मे रखकर, एक नोकदार पेसिल से, उसके चारों ओर रेखाओ से 'सीमा-रेखा' (boundaries) खीच लो। अब हवा और काँच के सस्पर्शक-तल (AB) के बीच वाले बिदु (P) पर एक पिन लगा दो। एक दूसरा पिन, (P_1) पर गाड दो। इस तरह रेखा (P_1, P), आपतित-किरण को व्यक्त करेगी। काँच के टुकडे के दूसरी ओर से इन दोनों पिनो (P, P_1) की प्रति-मूर्त्ति देखकर, उनकी सीध मे एक पिन (Q_1) पर गाड दो, और चौथा पिन (R_1) बिन्दु पर लगा लो। ठीक तरह से लगने पर, काँच के टुकडे मे से देखने पर, P, P_1, Q_1 और R_1 सभी के निचले सिरे, एक सीधी रेखा मे, एक दूसरे पर छाये हुए (over-lapping) मालूम पडेगे। इसी तरह एक दूसरा पिन P_2 पर लगाकर, Q_2 और R_2 बिदुओ पर पिन लगाये जा सकते है।



चित्र 67

अब काँच के टुकडे (ABCD) को कागज पर से हटा लो और पिन के नुकीले बिदुओ को नुकीली पेसिल से मिला दो। पहले (P_1P) और (P,P) को

मिलाकर, आपतित किरणे बनाओ। फिर टुकडे से बाहर निकलने वाली, निर्गम-किरणे (emergent rays) (Q_1R_1) और (Q_2R_2) बनाओ। इसके बाद, (PQ_1) और (PQ_2) को मिला दो। सस्पर्शक-तल (AB) के आपतन-बिदु (P) पर अभिलम्ब (nPn) खीचो। P को केन्द्र मानकर और कुछ भी अर्द्धव्यास लेकर, एक वृत्त (circle) खीचो। यह वृत्त, (P_1P), (PQ_1) और (PQ) रेखाओ को क्रमशः (L, K, S और T) बिदुओ पर काटेगा। इन बिदुओ से, (P) बिदुओ पर खिचे अभिलम्ब पर, लम्ब (perpendicular) (Kn), (Ln), (Sn) और (Tn) खीचो। तब आपतित-किरण (P_1P) के लिये

$$\frac{\text{Sin}\,(P_1Pn)}{\text{Sin}\,(Q_1Qn)} = \frac{(Ln)}{(PL)} = \frac{(Tn)}{(PT)} = \frac{Ln}{Tn} \text{ (क्योकि PL=PT=} r$$

वृत्त का अर्ध-व्यास)

इसी तरह, आपतित किरण (P_2P) के लिये

$$\frac{\text{Sin}\,(P_2Pn)}{\text{Sin}\,(Q_2Pn)} = \frac{(Kn)}{(PK)} = \frac{(Sn)}{(PS)} = \frac{(Kn)}{(Sn)}$$

(Ln), (Tn), (Kn) और (Sn) की मापे सावधानी से लेने पर, पता लगेगा कि

$$\frac{(Ln)}{(Tn)} = \frac{(Kn)}{(Sn)}$$

दूसरी कोई भी आपतित किरण लेकर प्रयोग करने पर भी इतना ही अनुपात आवेगा।

[अधिक विस्तार के लिये "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" लेखक ज्योतिर्मय चटर्जी देखिये।]

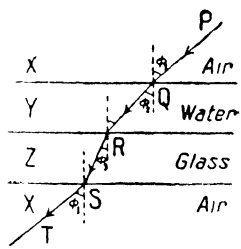
37. वर्त्तनांक (आवर्त्तन-संख्या) (Refractive Index)—पीछे धारा 36 में हम देख आये है कि दूसरे आवर्त्तन-नियम के अनुसार, आपतन और आवर्त्तन कोणों की ज्याओ का अनुपात स्थिर रहता है। इस स्थिराक को ही 'वर्त्तनाक' कहते है और इसको ग्रीक अक्षर (μ) से व्यक्त (represent) करते है। साथ ही जिस माध्यम मे से किरणे आती है, उसको इसके बांयी ओर और जिसमे से यह आवर्त्तित होती है, उसको दाये ओर लिखते है। उदाहरण के लिए अगर प्रकाश-किरणे माध्यम (a) से माध्यम (b) मे जा रही है तो दूसरे माध्यम की आवर्त्तन-सख्या, पहले माध्यम की अपेक्षा, $(a\mu_b)$ से व्यक्त होगी। ध्यान रहे कि जब प्रकाश-किरणे विरल (rare) माध्यम मे से सघन (dense) माध्यम मे जाती हैं तो वे अभिलम्ब की ओर झुक जाती है। लेकिन घने माध्यम से हलके माध्यम मे जाते हुए वह अभिलम्ब से परे (away) हट जाती है, और आवर्त्तन-सख्या (या वर्त्तनाँक) का मान इकाई से कम हो जाता है। व्यवहारत सभी माध्यमो की आवर्त्तन-सख्या को वायु की अपेक्षा (with respect to air) ही लिखा जाता है, क्योकि वायु का परम वर्त्तनांक (यानी शून्य स्थान—vacuum की अपेक्षा) 1·091293 है। साथ ही यह बात भी याद

रखनी चाहिए कि प्रकाश-किरणों का मार्ग उत्क्रमणीय (reversible) होता है।

$$\therefore \quad {}_a\mu_b = \frac{1}{{}_b\mu_a}$$

उदाहरणतः पानी का वर्त्तनांक हवा की अपेक्षा $\frac{4}{3}$ है। इसलिये हवा का वर्त्तनाक, पानी की अपेक्षा $\frac{3}{4}$ होगा।

आपेक्षिक वर्त्तनांक (Relative Refractive Index)—मान लो एक किरण, (PQ), हवा मे (माध्यम—'X') (चित्र 68) चलकर, दूसरे माध्यम (Y) (=पानी) मे आवर्त्तित होती है, तो इसकी दिशा (QR) होगी। किरण (QR), तीसरे माध्यम (काँच) मे आवर्त्तित होकर (RS) दिशा मे चलेगी। काँच के बाद, फिर पहले वाला (हवा) का माध्यम आ जाता है और निर्गम-किरण की दिशा (ST) हो जाती है। यहाँ हम यह मान लेते है कि सभी माध्यमों के सस्पर्शक-तल, परस्पर समानान्तर हैं। क्योंकि पहला और आखिरी माध्यम एक ही है, इसलिये आपतित और निर्गम किरणो की दिशाये एक ही रहेगी। अतः (Q) पर आपतन-कोण (S) पर निर्गम-कोण के बराबर होगा। मान लो कि प्रत्येक माध्यम मे आपतन-कोण क्रमशः ϕ_1, ϕ_2, ϕ_3 है। तो आवर्तन-नियमो के अनुसार



चित्र 68

$$\therefore \quad {}_a\mu_w = \frac{\sin\phi_1}{\sin\phi_2}$$

इसी तरह, $\quad {}_w\mu_g = \frac{\sin\phi_2}{\sin\phi_3}$, और ${}_g\mu_a = -\frac{\sin\phi_3}{\sin\phi_1}$

$$\therefore \quad ({}_a\mu_w \cdot {}_w\mu_g \cdot {}_g\mu_a) = \frac{\sin\phi_1}{\sin\phi_2} \cdot \frac{\sin\phi_2}{\sin\phi_3} \cdot \frac{\sin\phi_3}{\sin\phi_1} = 1$$

अत. $$({}_a\mu_w \cdot {}_w\mu_g) = \frac{1}{{}_g\mu_a} = {}_a\mu_g$$

या $$ {}_w\mu_g = \frac{{}_a\mu_g}{{}_a\mu_w}$$

इस तरह माध्यम (g) का वर्त्तनाक, माध्यम (w) की अपेक्षा, माध्यम (g) और (w) के परम-वर्तनाको के अनुपात के बराबर होता है। साथ ही—

$$ {}_w\mu_g = \frac{\sin\phi_2}{\sin\phi_3} = \frac{{}_a\mu_g}{{}_a\mu_w}$$

$$\therefore \quad {}_a\mu_w \sin\phi_2 = {}_a\mu_g \sin\phi_3$$

इसलिये अगर (μ_1, μ_2) दो माध्यमों के परम-वर्त्तनांक हैं, और किरण, पहले माध्यम पर, अभिलम्ब के साथ ϕ_1, और दूसरे पर ϕ_2 कोण बनाती है तो—

$$\mu_1 \sin\phi_1 = \mu_2 \sin\phi_2 \qquad \ldots(37\,5)$$

आंकिक उदाहरण

1. काँच का एक आयताकार सुडौल टुकडा, पानी से भरे बर्त्तन की तलेटी पर रखा है। प्रकाश की एक किरण, पानी के स्वतन्त्र-तल के साथ 50° कोण बनाती

है, और आवर्त्तित होकर, पहले पानी और फिर काँच मे प्रवेश करती है, तो काँच मे किरण का आवर्त्तन-कोण कितना होगा ? (पानी का वर्त्तनाक=4/3 और काँच का 3/2, हवा की अपेक्षा)। (मद्रास *1950*)

(A rectangular glass slab rests at the bottom of a trough of water. A ray of light incident on water-surface at an angle of 50°, passes through water into glass. Calculate the angle of refraction in the glass. [Refractive-indices of glass and water being $\frac{3}{2}$ and $\frac{4}{3}$ respectively] ?) (*Madras 1950*)

उत्तर—क्योंकि पानी के तल के साथ बनाया गया कोण=50°

∴ काँच के तल पर आपतन-कोण $=(90-50)\ 40^\circ$

मान लो कि काँच मे आवर्त्तन-कोण $=\angle r$

तो सूत्र (37·5) के अनुसार—

$$\frac{4}{3}\ \text{Sin}\ 40^\circ=\frac{3}{2}\ \text{Sin}\ r$$

लेकिन Sin $40^\circ=0{\cdot}6428$; अतः Sin $r=0{\cdot}5714$; और $r=34^\circ-51^\circ$

2. पानी और काँच के वर्त्तनाक, क्रमशः $\frac{4}{3}$ और $\frac{3}{2}$ है। काँच से पानी में आवर्त्तित होने वाली किरण का वर्त्तनाक कितना होगा ? (अनामली *1951*)

(The refractive indices of water ane glass are $\frac{4}{3}$ and $\frac{3}{2}$ respectively. What is the refractiveindex for a ray travelling from glass to water ?) [*Anna. U. 1951*]

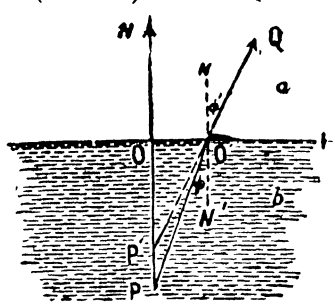
उत्तर :—प्रश्न के अनुसार

$$_a\mu_g=\frac{3}{2}\ \text{और}\ _a\mu_w=\frac{4}{3}$$

परन्तु $$_g\mu_w=\frac{_a\mu_w}{_g\mu_a}=\frac{\frac{4}{3}}{\frac{3}{2}}=\frac{8}{9}$$

38. समतल पर आवर्त्तन (Refraction at a Plane Surface)—

(क) साधन माध्यम में रखी हुई वस्तु को विरल माध्यम में से ऊपर होकर देखना—चित्र 69 मे एक वस्तु (P), सघन माध्यम (जैसे पानी) मे रखी है और इसको ऊपर हवा मे से देखा जा रहा है। (PO), इस वस्तु से चलने वाली एक आपतित किरण है, और (O) आपतन-बिंदु। यह किरण, सस्पर्शक-तल (I) पर, लम्बवत् (normally) पड़ती है, इसलिए अपने इस मार्ग से बिना विचलित हुए, आगे दूसरे माध्यम मे चली जाती है। (PO'), एक दूसरी आपतित किरण है, जोकि संस्पर्शक-तल पर के बिंदु (O') पर थोडा तिरछी आकर पड़ती है। ध्यान रहे कि बिन्दु (O), (O') काफी पास-पास है। आवर्तित होकर, यह तिरछी किरण (O'Q) दिशा मे हवा मे चली जाती है क्योकि यह दूसरा माध्यम (हवा), पहले



चित्र 69

(यानी काँच) से विरलतर (rarer) होता है, इसलिये यह आवर्त्तित किरण, अपने अभिलम्ब से परे हट जाती है। अगर इस आवर्त्तित किरण को पीछे की ओर बढाया जावे तो यह रेखा (PON) को बिन्दु (P') पर मिलेगी। इसलिये बिदु (P'), वस्तु बिंदु (P) की प्रतिमूर्त्ति होगा। यही कारण है कि विरल माध्यम मे से देखने पर, वस्तु थोडी ऊपर उठी हुई मालूम पडने लगती है अगर वायु की अपेक्षा, पानी का वर्त्तनांक ${}_a\mu_w$ है, तो

$${}_a\mu_w = \frac{\text{Sin (QON)}}{\text{Sin (PO'N')}} = \frac{\text{Sin (O'P'O)}}{\text{Sin (O'PO)}} = \frac{\text{(PO')}}{\text{(P'O')}}$$

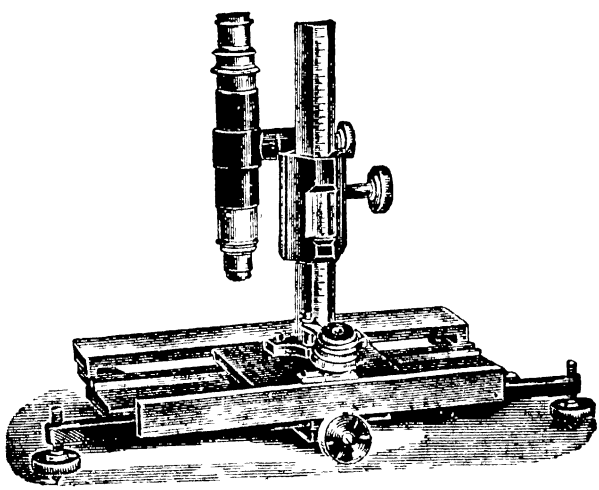
जब (O,O') दोनो बहुत ही पास आ जाते है, तो (P'O') और (PO'), क्रमशः (P'O) और (PO) के बराबर लिये जा सकते है।

$$\text{अतः } {}_a\mu_w = \frac{PO}{P'O} = \frac{\text{वास्तविक गहराई}}{\text{मालूम पडने वाली (प्रतीयमान) गहराई}} = \frac{u}{v}$$

$$\text{या } u = {}_a\mu_w v \quad \ldots \quad \ldots \quad (38{\cdot}1)$$

क्योकि ${}_a\mu_w$ का मान, हमेशा इकाई से अधिक होता है, इसलिए प्रतिमूर्त्ति वस्तु से अधिक पास रखी मालूम पडती है। u और v को मापकर, माध्यम का वर्त्तनाक मालूम किया जा सकती है।

उपयोग (Application)—ऊपर का सिद्धान्त, किसी समानान्तर तलो वाले माध्यम का 'वर्त्तनाक' निकालने के काम मे आता है। इसके लिए एक माइक्रोस्कोप (microscope) लिया जाता है, जिसको एक स्टैड के सहारे ऊपर-नीचे सरकाया



चित्र 70

जा सकता है। साथ ही इसको पैच से, किसी भी ऊँचाई पर कसा भी जा सकता है। इस स्थिति की माप लेने के लिए स्टैड पर एक पैमाना और वर्नियर लगे रहते हैं। इस प्रबन्ध से तो ऊर्ध्व-तल (vertical plane) में माइक्रोस्कोप का हटाव मालूम हो जाता है। क्षैतिज-तल (horizontal plane) में हटाव जानने के लिए

भी इसी तरह का प्रबन्ध किया रहता है। चित्र 70 मे एक ऐसी ही परिचालित (travelling) माइक्रोस्कोप दिखलाया गया है।

प्रयोग के लिये उचित मोटाई वाला काँच का एक सुडौल आयताकार टुकडा लो। एक साफ कागज पर पेंसिल से चिन्ह बनाकर, माइक्रोस्कोप की पटरी (platform) से चिपका दो। इसके बाद माइक्रोस्कोप की अक्ष को बिलकुल ठीक सीधा खडा रखते हुए, उसको ऊपर-नीचे करके, कागज पर बने हुए चिन्ह की शुद्ध और स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति देखो। ठीक अनुकूलन (adjustment) हो जाने पर, माइक्रोस्कोप की 'क्राम-तारे' (cross-wires) और चिन्ह की प्रतिमूर्त्ति के बीच कोई लम्बान नही दीखेगा। तब माइक्रोस्कोप को पेंच से कस कर, उसकी स्थिति की, पैमाने पर "पहली माप" ले लो। अब इस कागज के ऊपर, काँच की पट्टी रखकर, दुबारा, माइक्रोस्कोप मे से चिन्ह की स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति देखो और माइक्रोस्कोप की बदली हुई स्थिति की "दूसरी माप" ले लो। इसके बाद काँच की पटरी की ऊपरी सतह पर थोडा सा लकडी का बारीक बुरादा या 'लाइकोपोडियम (lycopodium) चूर्ण (powder) छिडक दो, और माइक्रोस्कोप मे इस बुरादे के कणो की स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति देखो। यह माइक्रोस्कोप की "तीसरी माप" होगी, तब

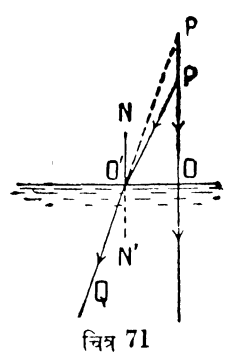
$$\text{वास्तविक गहराई} = (\text{तीसरी माप} - \text{पहली माप})$$

$$\text{और प्रतीयमान गहराई} = (\text{तीसरी माप} - \text{दूसरी माप})$$

$$\therefore \quad \text{वर्त्तनाक } ({}_a\mu_g) = \left(\frac{\text{तीसरी माप} - \text{पहली माप}}{\text{तीसरी माप} - \text{दूसरी माप}}\right) \quad \ldots\ldots (38{\cdot}2)$$

पतली पेंदी वाले बीकर मे पानी भर कर, काँच की पटरी की जगह पर रखकर, यही प्रयोग करने से, पानी का वर्त्तनाक मालूम किया जा सकता है।

(ख) **विरल माध्यम में रखी वस्तु को, सघन माध्यम में से ऊपर होकर देखना** चित्र 71 मे एक वस्तु बिंदु (P) पर विरल माध्यम (जैसे हवा) मे रखी है। (PO) एक किरण, दोनो माध्यमों के सस्पर्शक-तल पर लम्बवत् पड रही है। इसलिये यह इस दिशा से बिना हटे हुए ही, इससे सघन माध्यम (जैसे पानी या काँच) मे चली जाती है। एक दूसरी किरण (PO') है, जो कि आवर्त्तित होकर, (O'Q) की दिशा मे चलने लगती है। बिंदु O,O' काफी पास-पास है, और रेखा NO'N', सस्पर्शक-तल के आपतन-बिंदु (O') पर अभिलम्ब (normal) है। अगर दोनो आवर्त्तित किरणो को पीछे की ओर बढाया जावे तो यह बिंदु (P') पर मिलती हुई प्रतीत होगी। अतः बिन्दु P' P की प्रतिमूर्त्ति है।



चित्र 71

मान लो सघन माध्यम पानी (वर्त्तनाक μ) है, तो—

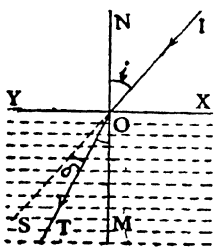
$$\mu = \frac{\sin PO'N}{\sin QO'N'} = \frac{\sin O'PO}{\sin O'P'O} = \frac{O'P'}{O'P}$$

बिंदु O और O′ के पास-पास होने से, O′P′ और O′P को OP′ और OP के बराबर लिया जा सकता है। अगर OP $=u$ और OP′ $=v$

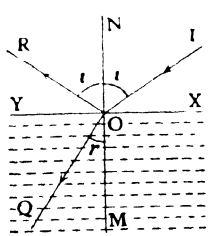
$$\text{तो} \quad \mu=\frac{\text{OP}'}{\text{OP}}=\frac{v}{u} \quad \text{या} \quad v=\mu u \qquad \ldots \ (38{\cdot}3)$$

क्योंकि P का मान, इकाई से अधिक होता है, इसलिये, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति उससे परे (away) ही बनती मालूम होती है।

आवर्त्तन में विचलन (Deviation by Refraction)—आपतित-किरण, और आवर्तित किरण, दोनो के बीच बनने वाला कोण, (δ) ही 'आवर्त्तन द्वारा विचलन' की माप होता है, चित्र 72 मे रेखा (IO) आपतित किरण और (OT) आवर्त्तित किरण है। तब 'विचलन-कोण'।



चित्र 72



चित्र 73

$$\delta=\angle(\text{SOT})=i-r \qquad \ldots \ (38{\cdot}4)$$

अब आपतन-कोण को धीरे-धीरे लगातार बढाते जाओ। आप देखोगे कि आवर्त्तन-कोण उसी अनुपात मे नही बढता। इसलिये जैसे-जैसे आपतन-कोण (i) बढता जाता है, विचलन-कोण (δ) भी बढता जाता है। चित्र 71 में आपतन कोण लगभग 38°, आवर्त्तन कोण, लगभग 24° और दूसरे (सघन) माध्यम का वर्त्तनाक 1·5 माना गया है। चित्र 72 मे यही मान बढकर क्रमशः 70° और 39° हो गये है। यानी चित्र 71 मे विचलन-कोण $(38-24=14°)$ हुआ, और चित्र 72 मे $(70-39=31°)$। यही तथ्य गणित से भी सिद्ध किया जा सकता है—

क्योंकि $\mu=\dfrac{\sin i}{\sin r}$

$$\therefore \frac{\mu+1}{\mu-1}=\frac{\sin i+\sin r}{\sin i-\sin r}=\frac{2\sin\frac{i+r}{2}\cos\frac{i-r}{2}}{2\cos\frac{i+r}{2}\sin\frac{i-r}{2}}$$

परन्तु $\dfrac{i-r}{2}=\dfrac{\delta}{2}$, जब कि δ = विचलन-कोण

$$\therefore \tan\frac{\delta}{2}=\left(\frac{\mu-1}{\mu+1}\tan\frac{i+r}{2}\right) \quad \ldots \quad \ldots \quad (38{\cdot}5)$$

यानी (i) के बढने पर r भी बढेगा। किसी भी एक माध्यम के (वर्त्तनांक $=\mu$) के लिये ऊपर वाले सूत्र में सीधे हाथ वाली भिन्न का मान बढ़ता जायेगा। इसलिए उसमें हाथ वाली राशि भी बढनी जरूरी है।

आंकिक उदाहरण

1. साफ पानी से भरे एक तालाब की मालूम पड़ने वाली गहराई मालूम करो, जबकि उसकी असली गहराई 16 फुट है और पानी का वर्त्तनांक 1·34 है। (आंध्र *1952*)

(Calculate the apparent depth of a tank of clear water 16 ft. deep, given that the refractive index of water is 1 34.) [*Andhra U. 1952*]

उत्तर—मान लो मालूम पडने वाली गहराई (h) फुट है

$$\text{तो } \mu = \frac{\text{वास्तविक गहराई}}{\text{व्यक्त गहराई}} = \frac{16}{h} = 1{\cdot}34$$

$$\therefore\ h = \mathbf{11{\cdot}94} \text{ फुट}$$

2. एक पारदर्शक घनक की प्रत्येक भुजा 16 सैं० मी० लम्बी है। घनक के भीतर हवा का एक बुलबुला रह गया है। घनक के एक पार्श्व (face) से देखने पर इसकी दूरी 6 सैं० मी० और ठीक पीछे वाले पार्श्व से देखने पर 4 सैं० मी० मालूम पडती है। सामने वाले पार्श्व से बुलबुले की वास्तविक दूरी और घनक के पदार्थ का वर्त्तनाक बतलाओ। (गोहाटी *1952*)

(A transparent cube of 16 cm. edge contains a small air bubble. Its apparent depth when viewed through one face of the cube is 6 cm. and when viewed through the opposite face it is 4 cm. What is the actual distance of the bubble from the first face and what is the refractive index of the substance of the cube ?) (*Gau. U. 1952*)

उत्तर—मानलो कि सामने वाले पार्श्व से बुलबुले की वास्तविक दूरी $= x$ सैं० मी०

और घनक के पदार्थ का वर्त्तनाक $= \mu$

तो सामने वाले पार्श्व मे देखने पर, $\frac{x}{6} = \mu$ ... ... (1)

और ठीक पीछे वाले पार्श्व मे देखने पर, $\frac{15-x}{4} = \mu$ ... (2)

समीकरण (1) और (2) से, $\mu = \mathbf{1{\cdot}5}$ और $x = \mathbf{9}$ सैं० मी०

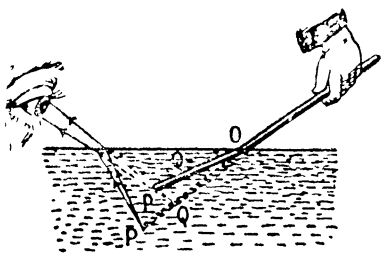
3. माइक्रोस्कोप-विधि से दिये हुए द्रव का वर्त्तनाँक मालूम करो, जबकि पहली माप 11·324 सैं० मी०, दूसरी माप 11 802 सैं० मी० और तीसरी माप 12·395 सैं० मी० है। (दिल्ली *1953*)

(Calculate the index of refraction of a liquid by the microscope method from the following data—Reading for the bottom of an empty beaker : 11·324 cm. Reading for the bottom of the beaker when partially filled with a liquid : 11·802 cm. ; Reading for the upper level of the liquid in the beaker : 12·395 cm.) (*Delhi H.S. 1953*)

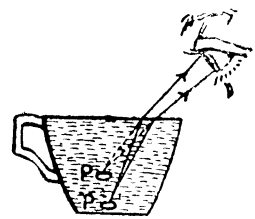
उत्तर—वर्त्तनांक $(\mu) = \frac{\text{वास्तविक गहराई}}{\text{व्यक्त गहराई}} = \frac{\text{तीसरी माप} - \text{पहली माप}}{\text{तीसरी माप} - \text{दूसरी माप}}$

$$= \frac{12{\cdot}895 - 11{\cdot}324}{12{\cdot}895 - 11\ 802} = \frac{1{\cdot}571}{1{\cdot}093} = 1{\cdot}437$$

39. साधारण आवर्त्तन के व्यवहारिक उदाहरण (Practical Illustrations of Simple Refraction)—पीछे चित्र 69 मे हमने देखा था कि पानी में पडी हुई चीज को, ऊपर हवा मे देखने पर, वह थोडा ऊपर उठी हुई मालूम पड़ती है। पानी के भीतर चलती हुई मछलियों को छेदने मे इस बात को ध्यान मे रखना होता है। काँच के टुकडे की तलेटी पर चिपके हुए सफेद कागज के टुकडे को, कांच में से ऊपर हवा में देखने पर, इसी कारण से ही, वह ऊपर उठा हुआ मालूम पडता है।



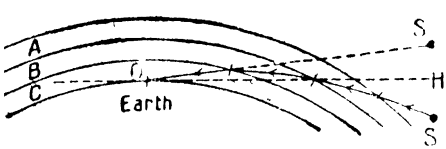
चित्र 74



चित्र 75

जितना ही तिरछा होकर वस्तु को दूसरे माध्यम से देखते है उतनी ही वह वस्तु अपनी वास्तविक स्थिति से ऊपर उठी हुई प्रतीत होती है। यही कारण है कि प्याले मे पानी भरकर किनारे से देखने पर, प्याले की पेंदी ऊपर उठी हुई मालूम पड़ती है (चित्र 75)। चित्र 74 मे पानी मे तिरछा डुबाया हुआ छड दिखलाया गया है। ऊपर हवा मे से देखने पर, इस छड का डुबा हुआ हिस्सा (OP), छोटा और ऊपर उठा हुआ दीखता है। इस तरह छड, बिदु (O) पर मुडा हुआ सा प्रतीत होता है।

आकाशीय-आवर्त्तन (Atmospheric Refraction)—जैसे-जैसे हम पृथ्वी के तल से ऊपर उठते हैं, हवा की घनता (density) कम होती जाती है। किसी भी माध्यम द्वारा आवर्त्तन उसकी सघनता पर निर्भर करता है। वायु मंडल को पृथ्वी के तल के समानान्तर, कई अलग-अलग घनत्व वाली पर्त्तों से बना मान सकते है।



चित्र 76

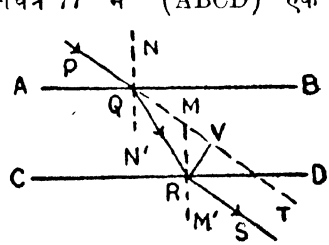
चित्र 76 में (A, B, C) इत्यादि द्वारा इन पर्त्तों को दिखलाया गया है। इनमें से (C) वाली पर्त्त, दूसरी पर्त्तों की अपेक्षा, धरातल के अधिक पास होने से, सबसे अधिक घनत्व वाली; (B) उससे कम घनत्व वाली और A इन दोनों से कम घनत्व वाली पर्त्त होगी। दूसरे शब्दो मे हम जैसे-जैसे वायुमडल में ऊपर उठते जाते है, स्थान-विशेष की हवा का वर्त्तनाक कम होता जाता है। चित्र 76 में सूर्य की वास्तविक स्थिति (S), क्षैतिज-तल (OH) से नीचे है। सूर्य से चलने वाली

प्रकाश-किरणें जब सबसे ऊपर वाली पर्त्त मे से, उससे नीचे वाली कम घनी पर्त्त में जाने लगती हैं, तो अपने पथ से, अभिलम्ब की ओर मुड जाती हैं। यही क्रम, आगे आने वाली दूसरी पर्त्तों के साथ भी चलता रहता है। इस तरह, यह किरण, सीधी रेखा मे न चलकर, पृथ्वी की ओर झुकती चली आती है। इसका मार्ग, उन्नतोदर-वक्र का भाँति हो जाता है (पृथ्वी की ओर से देखने पर)। बिंदु (O) पर बैठे हुए आदमी को यह किरणें बिन्दु (S') से आती हुई मालूम होंगी। इस तरह, सूर्य क्षैतिज तल से नीचा होने पर भी आकाश मे ऊपर चमकता हुआ दीखेगा। यही कारण है कि वास्तव मे सूर्य छिप जाने पर भी, सूर्य, आकाश मे काफी देर तक दिखलाई देता रहता है। इससे दिन का मान कुछ मिनिट बढ जाता है। साथ ही 'गोधूलि' (twi-light) का समय भी थोडा बढ जाता है। वैसे मौसम के हिसाब से भी इसमे बदल होता रहती है। इसी तरह सुबह भी, सूर्य, वास्तव मे क्षितिज से नीचा रहते हुए भी दिखलाई देता है।

आवर्त्तन द्वारा, वास्तविक स्थिति से ऊपर प्रतीत होने की क्रिया का प्रभाव, क्षितिज के पास सबसे अधिक होता है। जब कभी सूर्य या चन्द्रमा, क्षितिज के पास होता है, तो इसका बिम्ब, क्षैतिज-अक्ष पर बढा हुआ, दीर्घ वृत्ताकार (elliptical) मालूम पडता है, क्योकि इसका निचला सिरा, ऊपरी सिरे की अपेक्षा, अधिक ऊपर उठा हुआ प्रतीत होता है, जबकि दाँये-बाँये वाले सिरे, एक ही ऊँचाई पर होने से, बराबर उठते है। इस तरह बिंब की ऊर्ध्व-अक्ष (vertical axis) तो छोटी लगने लगती है और क्षैतिज-अक्ष वास्तविक मान से बडी। इसके विपरीत, दोपहर को प्रकाश की किरणे, हम तक सीधी चली आती है, और बिम्ब गोल दीखता है।

गर्म धरातल को छूने से वायु की पर्त्तों का घनत्व कम होता जाता है। हवा गर्मी पाकर हल्की हो जाती है और ऊपर की ओर उठती है। इसकी जगह ठण्डी और सघन हवा ले लेती है और सवाहन धाराये चलने लगती है जिनके कारण माध्यम की घनता समय-समय पर बदलती रहती है। फलस्वरूप आकाश मे स्थित, कोई दूर वाली वस्तु, जैसे कि नक्षत्रो (तारे) से, जब प्रकाश किरणे, इस माध्यम मे से होकर पृथ्वी तक आती है तो घनता बदलते रहने से, नक्षत्र भी टिमटिमाते से लगने लगते हैं। इसी को **तारों की टिमटिमाहट** (twinkling of stars) कहते है। सिर के ठीक ऊपर वाले तारो और ग्रहों के साथ यह बात नही होती।

***40. समतल आयताकार टुकडे में पार्श्विक स्थानान्तर (Lateral Deviation in a Plane Parallel Plate)**—चित्र 77 मे (ABCD) एक समतल आयताकार, पारदर्शक माध्यम (जैसे काँच) का टुकडा हवा मे रखा हुआ दिखलाया गया है। रेखा (PQ), इस पर तिरछी पड़ने वाली एक प्रकाश-किरण को व्यक्त करती है। टुकडे के किनारे (AB) और (CD) समानान्तर है। आवर्त्तित होकर यह किरण (QR) दिशा मे, इस माध्यम मे से होकर चलेगी, और फिर बाहर,



चित्र 77

(RS) दिशा में निकल जावेगी। मान लो कि माध्यम का वर्त्तनांक μ है, तो—

बिंदु (Q) पर आवर्त्तन के लिये $\mu = \frac{\sin PQN}{\sin RQN'}$

और बिंदु (R) ,, ,, $\frac{1}{\mu} = \frac{\sin QRM}{\sin SRM'}$

$$\therefore \frac{\sin PQN}{\sin RQN'} = \frac{\sin SRM'}{\sin QRM}$$

क्योंकि $\angle RQN' =$ एकान्तर $\angle QRM$, $\angle PQN = \angle SRM'$

साथ ही NQN' और MRM', अभिलम्ब है, इसलिये रेखा RS, PQ के समानान्तर हुई। अर्थात् समानान्तर पारदर्शक पटरी मे से जाते हुए, प्रकाश किरण की दिशा मे कोई अन्तर नही पडता। हाँ, वह अपने पथ से थोडा-सा हट जाती है। इस हटाव को ही 'पार्श्विक स्थानान्तर' कहते है।

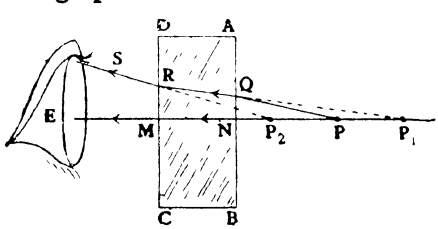
RV को PQ (आगे बढाई हुई) पर लम्बरूप खीचो तो यही 'पार्श्विक-स्थानान्तर' का मान होगा। अगर प्लेट की मोटाई (t) है, आयतन कोण (i) और आवर्त्तन कोण (r) है तो,

$$RV = QR \sin RQV = QR \sin (i-r) = \frac{t \sin (i-r)}{\cos r} \quad \ldots(40\cdot1)$$

अगर किरणे, अभिलम्ब रूप मे पड रही है तो $i=0$ और $r=0$

अर्थात् किरण मे पार्श्विक-स्थानान्तर नही होता।

समतल-आयताकार प्लेट में से आवर्त्तन में प्रतिमूर्त्ति-स्थानान्तर (Shift of Image position due to Refraction in a Plane Parallel Plate)—



चित्र 78

चित्र 78 मे बिन्दु P से प्रकाश-किरणे, आँख (E) की ओर आ रही है। बीच मे एक पारदर्शक, आयताकार, काँच की प्लेट (ABCD) इस तरह रखी है, $(BC) = (t)$ की अक्ष (PE) के समकोणिक रहे। आपतित किरण PQ, इस प्लेट के QR दिशा मे चलेगी और प्लेट मे से बाहर RS दिशा मे। RQ को पीछे की ओर बढाने पर वह अक्ष को बिंदु (P_1) पर काटती है। अतः पहले तल AB पर आवर्त्तन के कारण P की प्रतिमूर्त्ति (P_1) पर बनी। यह प्रतिमूर्त्ति P_1', दूसरे तल CD के लिये काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति जैसा काम करती है और अन्तिम प्रतिमूर्त्ति (P_2) पर बन जाती है। अगर काँच का वर्त्तनांक μ है, और $PN = u$, तो सूत्र (38·3) से—

$NP_1 = \mu . u$ और $MP_1 = t + \mu u$

साथ ही $\frac{MP_1}{MP_2} = \mu$ या $MP_2 = \frac{MP_1}{\mu} = \frac{t+\mu u}{\mu} = \frac{t}{u} + \mu$

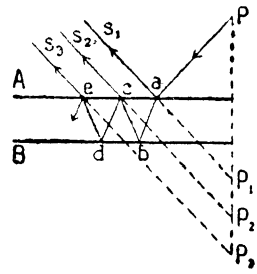
अतः पूरा स्थानान्तर = (प्रेक्षक की ओर) $= MP - MP_2 = PP_2$

$$= t + u - \left(\frac{t}{\mu} + u\right)$$

$$= t\left(1 - \frac{1}{\mu}\right) \quad \ldots (40{\cdot}2)$$

इस फल पर वस्तु की दूरी या प्लेट की स्थिति का कोई प्रभाव नही पड़ता।

मोटे काँच वाले दर्पण में अनेक प्रतिमूर्त्तियाँ दीखना—अगर एक प्रकाशमान वस्तु (जैसे कि जलती हुई मोमबत्ती), मोटे काँच वाले दर्पण के सामने रख दी जावे, तो तिरछा देखने पर, मोमबत्ती की कई प्रतिमूर्त्तियाँ बनती मालूम होती है। इन प्रतिमूर्त्तियों मे से दूसरी प्रतिमूर्त्ति, पहले वाले से ज्यादा चमकीली होती है। बाकी बिंब, धीरे-धीरे धुंधले होते जाते है। इस घटना को इस तरह समझना चाहिये—



चित्र 79

प्रकाशमान वस्तु P (चित्र-79) से एक लम्ब, दर्पण के तल (AB) पर डाला गया है। किरण (Pa), दर्पण के ऊपरी तल (A) के बिन्दु (a) पर आकर पड रही है। इसका थोडा-सा अश तो (aS_1) दिशा मे परावर्त्तित हो जाता है, और बाकी (ab) दिशा मे आवर्त्तित (refracted) परावर्त्तित किरण (aS_1), बिंदु (P) की पहली प्रतिमूर्त्ति, दर्पण के पीछे बिंदु (P_1) पर बनाती है। आवर्त्तित किरण (ab), दर्पण के काँच के निचले तल (B) पर (bc) दिशा मे परावर्त्तित होती है। काँच मे से बाहर निकलने पर इसकी दिशा (cS_2) हो जाती है, और बिंदु (P_2) पर, (P) की दूसरी प्रतिमूर्त्ति बन जाती है। किरण (bc) का थोडा सा अश, (c) पर, दर्पण के भीतर की ओर, cd दिशा मे परावर्त्तित होता है। d पर फिर से परावर्त्तन होता है, और किरण (dc) दिशा में चलती है। बिंदु (c) पर इसका ज्यादा हिस्सा तो, काँच के बाहर (cS_3) दिशा मे बाहर निकलकर, तीसरी प्रतिमूर्त्ति (P_3) बनाता है, और बाकी भाग, (c) पर भीतर की ओर परावर्त्तित हो जाता है। यही क्रम लगातार चलता रहता है, और परावर्त्तन द्वारा, बारी-बारी से, वस्तु की काल्पनिक प्रतिमूर्त्तियाँ बनती जाती है। हाँ, ठीक सामने खडे होकर देखने पर यह अनेक प्रतिमूर्त्तियाँ नहीं दीखतीं, क्योंकि एक दूसरे पर छा जाती है।

आंकिक उदाहरण

नतोदर-दर्पण की अक्ष पर उसके ध्रुव से 20 से० मी० की दूरी पर छोटी सी वस्तु पर रखी है। इसकी प्रतिमूर्त्ति 30 से० मी० की दूरी पर बन रही है। अब काँच की एक आयताकर समतली पटरी वस्तु और दर्पण के बीच मे अक्ष के समकोणिक रख देते हैं। प्रतिमूर्त्ति कितनी और किस ओर हट जावेगी, जबकि वर्त्तनांक $(\mu) = 1{\cdot}5$ और पटरी की मोटाई 6 से० मी० है? (राजपूताना *1954*)

(A small object on the axis of a concave mirror, distant 20 cm. from its pole, is imaged at a distance of 30 cm. A glass slab with parallel sides 6 cm. thick is placed between the object and mirror, with one side close to the object and perpendicular to the axis. Calculate the consequent shift of the position of the image; μ for glass is 1·5). *(Raj. U. 1954)*

उत्तर—काँच की पटरी, प्रतिमूर्त्ति को, दर्पण के ध्रुव के पास ले आवेगी। इसलिये सूत्र (40·2) के अनुसार पार्श्विक स्थानान्तर

$$t\left(1-\frac{1}{\mu}\right) = 6\left(1-\frac{1}{1{\cdot}5}\right) = 2 \text{ सें० मी०}$$

यानी प्रतीयमान (apparent) वस्तु-अन्तर $= (20-2) = 18$ सें० मी० परन्तु दर्पण-सूत्र के अनुसार—

$$\frac{1}{f}=\frac{1}{v}+\frac{1}{u} \quad \text{या} \quad \frac{1}{30}+\frac{1}{20}=\frac{1}{12}; \quad \text{अतः } f=12 \text{ सें० मी०}$$

अगर, काँच की पटरी न होने पर, प्रतिमूर्त्ति-अन्तर v_1 है, तो

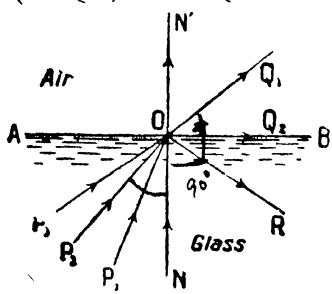
$$\frac{1}{12}=\frac{1}{18}+\frac{1}{v}; \quad \text{अर्थात्} \quad v_1=\frac{12\times 18}{6}=36 \text{ सें० मी०}$$

यदि काँच की आयताकार पटरी मे से आवर्त्तन के कारण, प्रतिमूर्त्ति-अन्तर (v_2) हो, तो सें० मी० पार्श्वक-स्थानान्तर के लिये,

$$v_2=\mu_1+2=36+2 \text{ सें० मी०}$$

अर्थात् प्रतिमूर्त्ति का पूरा स्थानान्तर $=(38-30)=8$ सें०मी० (दर्पण से परे)

41. पूर्ण-परावर्त्तन (Total Internal Reflection)—जब प्रकाश-किरणें किसी सघन (dense) माध्यम (जैसे पानी या काँच) मे से विरल (rare) माध्यम (जैसे हवा) में जाती हैं, तो वे अभिलम्ब (normal) से थोड़ा दूर हट जाती हैं।



चित्र 80

यानी उनका आवर्त्तन-कोण (angle of refraction) ($\angle N'OQ_1$) (चित्र 80 मे) आयतन (incidence) कोण ($\angle P_1ON$) से अधिक होता है। जैसे जैसे आपतन कोण बढता जाता है, वैसे-वैसे आवर्त्तन कोण (BON') $90°$ हो जाता है। अब अगर हमने आपतन-कोण (P_2ON) को थोड़ा सा भी अधिक बढ़ाया ($=P_3ON$) तो किरणें, सघन माध्यम से विरल माध्यम में न जाकर, पहले (सघन) ही माध्यम में परावर्त्तित (reflected) हो जावेंगी। इस तरह लौटी हुई किरणों (OR) को "पूर्णतः परावर्त्तित" (totally reflected) कहते हैं। आपतन-कोण के उस मान (value) (P_2ON) को, जिसके लिये संगत (corresponding) आवर्त्तन-कोण $90°$ होता है, 'चरम-कोण' (critical angle) कहते हैं (चित्र 80 मे कोण P_2ON)

मान लो काँच का वर्त्तनाक μ है और $\angle(P_2OL)=\theta=$चरमकोण, तो

$$\frac{\sin P_2ON}{\sin N'OB}={}_a\mu_g \quad \text{या} \quad \frac{\sin\theta}{\sin 90}=\frac{1}{{}_a\mu_g}$$

अर्थात् $\sin\theta=\frac{1}{{}_a\mu_g}$ या ${}_a\mu_g=\frac{1}{\sin\theta}$ ...(41·1)

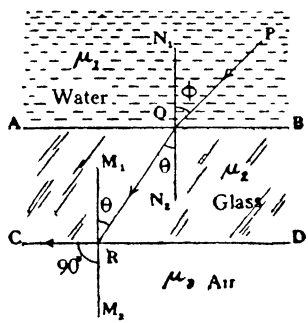
पानी माध्यमो के एक जोडे (pair) के लिये उसके चरमकोण का मान स्थिर रहता है। जैसे कि काँच के लिये इसका मान 40°49′ और पानी के लिये 48°39′ क्योकि प्रकाश-किरण के रग पर उनका वर्त्तनाक निर्भर करता है, इसलिए अलग-अलग रंगों के प्रकाश के लिये, एक ही जोड़े के सगत चरम-कोण भी अलग-अलग होते हैं।

इस तरह पूर्ण परावर्त्तन के लिये लिखी बातें पूरी होनी चाहियें—

(i) प्रकाश-किरणे, सघन माध्यम मे से विरल माध्यम में जानी चाहियें।

(ii) आपतन-कोण दोनो माध्यमो के संगत चरम-कोण से अधिक होना चाहिये।

कई माध्यमों के बीच चरम-कोण (Critical Angle in Multiple Media)—अगर दो पारदर्शक माध्यमो के बीच मे एक तीसरे पारदर्शक माध्यम की आयताकार पटरी डाल दे, तो उससे, उनके चरम-कोण मे कोई बदल नही आता। मान लो कि हवा और पानी के बीच चरम-कोण Q है (चित्र-81) इन दोनों के बीच मे काँच मे काँच की आयताकार पर्त A B C D पडी है। मानलो कि आपतित किरण PQ के लिये काँच मे आवर्त्तन कोण, N_2OR $(=M_1RO)$, θ है, तो



चित्र 81

$$\frac{\sin\phi}{\sin\theta}=\frac{\mu_2}{\mu_1}$$

जब कि μ_1', μ_2 क्रमश. पानी और काँच के वर्त्तनांक हैं। हवा का वर्त्तनांक इकाई होने पर

$$\mu_1=\frac{1}{\sin\phi} \quad \text{या} \quad \sin\phi=\frac{1}{\mu_1}$$

$$\therefore \frac{1}{\mu_1\sin\theta}=\frac{\mu_1}{{}_2\mu}\ ;\ \text{अर्थात्}\ \mu_2=\frac{1}{\sin\theta}$$

यानी $\angle N_2QR=$काँच और हवा के बीच चरम-कोण $=\angle M_1RQ$। और निर्गत किरण (RC), काँच के बाहरी तल को बस छूती हुई सी (grazes) बाहर जाती है।

आंकिक उदाहरण

1. दिये हुए द्रव का चरम-कोण (हवा की अपेक्षा) 45° है। उसका वर्त्तनांक क्या है? (दिल्ली 1949 · यू० पी० 1950)

(Critical angle of a liquid with respcet to air is 45°. What is its refractive index ?)

उत्तर—क्योंकि, वर्त्तनांक $\mu = \frac{1}{\sin\theta} = \frac{1}{\sin 45°} = \sqrt{2} = 1{\cdot}41$

2. काँच और पानी के वर्त्तनांक क्रमशः 1·52 और 1·33 है। अगर प्रकाश-किरणें, काँच से पानी में जा रही है, तो चरम-कोण का मान निकालो (आन्ध्र *1950*)

(Refractive indices of glass and water are 1·52 and 1·33 respectively. If the rays of light are passing from glass to water what will be critical angle.) (*Andhra 1950*)

उत्तर—जब प्रकाश-किरणें काँच में से पानी मे जाती है, तो—

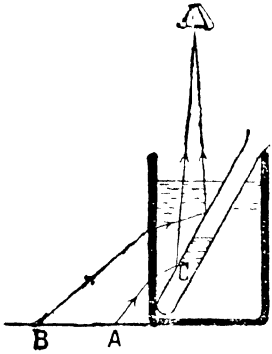
$${}_g\mu_w = 1{\cdot}33 \div 1{\cdot}52 = 0{\cdot}8750$$

लेकिन ${}_w\mu_g = \frac{1}{\sin\theta}$; यानी $\sin\theta = {}_g\mu_w = 0{\cdot}8750$

$$\therefore \theta = \sin^{-1}(0{\cdot}8750) = 61°3'$$

42. पूर्ण-परावर्त्तन के उदाहरण—

(i) परख-नली (test-tube) के भीतर लगभग आधी ऊँचाई तक पानी भरकर, उसको काँच के बने और पानी से भरे बडे बर्तन (jar) में तिरछा रखकर देखो। आपको परख-नली का खाली हिस्सा, (जिसमें कि सिर्फ हवा भरी है) कलई किया हुआ, चमकदार दिखलाई देगा। लेकिन इसका निचला भाग, (पानी से भरा हुआ धुंधला दीखेगा। ऊपरी भाग की चमक का कारण पूर्ण-परावर्त्तन है।



चित्र 82

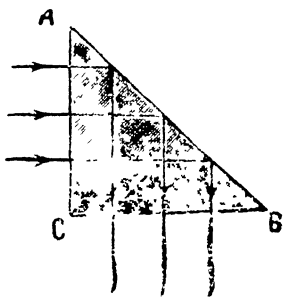
(ii) काँच के गिलास मे पानी भरकर, आँखों के तल (eye-level) से ऊपर रखकर देखने पर इसका स्वतन्त्र-तल कलई किया हुआ चमकीला दीखता है।

(iii) धातु की गैद पर सूखी कालिख लगाकर, इसको पानी से भरे, काँच के बीकर मे रख दो। इसका तल चमकीला, कलई किया हुआ दीखेगा। पानी सूखी कालिख के स्पर्श में नहीं आ पाता, इसलिए पानी और गेंद के तल के बीच थोडी सी हवा फँसी रह जाती है। प्रकाश-किरणें, इसी हवा के तल पर पूर्णतः परावर्त्तित होती हैं।

(iv) हीरे-जवाहरातों की चमक का कारण भी पूर्ण-परावर्त्तन ही है। क्योंकि इनका वर्त्तनांक काफी अधिक होता है, इसलिए चरम-कोण का मान काफी कम होता है और तराशे (छीले) हुए हीरे मे जब प्रकाश-किरणें भीतर घुसती हैं, तो अन्दर ही अन्दर कई स्थानों पर पूर्णतः परावर्त्तित होकर चक्कर काटती रहती हैं। और बाद में सिर्फ थोडे से कोणों पर से बाहर निकल पाती हैं, और हीरे को चमका देती हैं।

(v) पानी में बुलबुले और पारदर्शक वस्तुओं मे भीतरी कड़क (crack) के चमकीला होने का कारण भी पूर्ण-परावर्त्तन है।

पूर्ण-परावर्त्तक प्रिज्म (Total Reflection Prism)—चित्र 83 में एक समद्विबाहु समकोणिक प्रिज्म (isosceles right-angled prism) (ABC) दिखलाया गया है। इसमें कोण CAB और ABC तो 45°, 45° के हैं और तीसरा कोण ACB, 90° का है। प्रकाश की समानान्तर-किरणे जब इसके AC पार्श्व पर आकर पडती है, तो इनका आपतन-कोण, 45° तल (AB) पर बनता है। क्राऊन-कांच और हवा के जोड के लिए, चरम-कोण लगभग 41° होता है। इसलिए यह किरणें, तल AB पर पूर्णतः परावर्त्तित होकर, प्रिज्म के तल BC पर लम्बवत् पडती हुई सीधी आगे बढी चली जाती हैं। यानी इस तरफ प्रिज्म द्वारा आपतित किरणें अपने पूर्व मार्ग पर 90° घूम जाती है। यही क्रिया, अक्ष के साथ 45° पर रखे हुए समतल-दर्पण जैसे ही होती है, फिर भी दर्पण की जगह पर त्रिपार्श्व का प्रयोग करने से यह लाभ है—



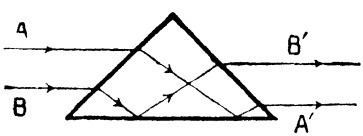
चित्र 83

(i) प्रिज्म मे वस्तु की केवल एक प्रतिमूर्त्ति बनती है, जबकि दर्पण का कांच गोल होने पर, दो प्रतिमूर्त्तियाँ बनती है, जिससे भ्रम होने का डर है।

(ii) प्रिज्म द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, दर्पण की अपेक्षा अधिक चमकीली होती है क्योंकि प्रिज्म में तो पूर्ण-परावर्त्तन होता है, जबकि दर्पण पर पडने वाले प्रकाश का कुछ अश ऊपरी सतह पर फैलकर बेकार हो जाता है।

(iii) ऊपर बतलाये दोष (i) को दूर करने के लिए कुछ समतल-दर्पणों मे सामने के तल पर पालिश की जाती है, लेकिन यह पालिश जल्दी ही उतर जाती है।

उल्टी प्रतिमूर्त्ति को सीधा करने वाला प्रिज्म (Erecting Prism)—अगर 'समद्विबाहु समकोणिक-प्रिज्म' को उसकी कर्ण (hypotenuse) पर रख दें, तो उल्टी प्रतिमूर्त्ति सीधी बनने लगती है। चित्र 84 मे यही क्रिया दिखलाई गई है। प्रिज्म की कर्ण के समानान्तर आपतित किरणों में, A बिंदु वाली किरणे ऊपर हैं और B वाली नीचे। आवर्त्तित होकर यह किरणें, प्रिज्म के आधार (base) पर पडती है। लेकिन अब इनका आपतन-कोण, चरम-कोण से अधिक होता है और यह पूर्ण-परावर्त्तित होकर, प्रिज्म के तीसरे पार्श्व पर पडती हैं और आवर्त्तित होकर बाहर निकल जाती हैं। लेकिन अब B किरणें ऊपर और A किरणें नीचे आ जाती हैं।

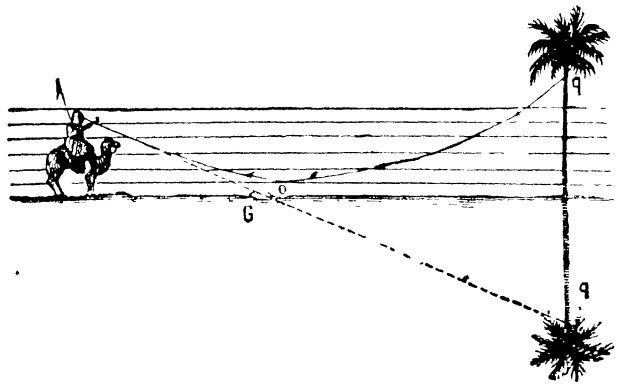


चित्र 84

43. मरीचिका (Mirage)—गर्मी के दिनों में रेगिस्तानों (या खुली और गरम जगहों) में चलते हुए कई बार ऐसा मालूम पडता है कि मानो दूर दीखने वाले

पेड़ों वगैरह के पास ही पानी की झील या तालाब है। इस भ्रम का कारण, उन पेडो की उल्टी प्रतिमूर्त्ति, ठीक उनके नीचे बनती हुई दीखना है। साधारणतः, पानी के किनारे खड़ा होने पर, हमें दूसरे किनारे पर खड़ी हुई चीजो का उल्टा प्रतिबिंब, ठीक उन वस्तुओ की तलेटी से सटा हुआ दीखता है। साथ ही पानी के हिलते रहने से, यह प्रतिबिंब भी लहराता रहता है। रेगिस्तान में दीखने वाला प्रतिबिंब भी ऐसा ही दीखता है, लेकिन वास्तव में वहाँ पानी नही होता। यात्री इस भ्रम की ओर बढते चले जाते हैं और मरीचिका (भ्रम) दूर हटती जाती है और वे प्यासे के प्यासे रह जाते हैं। कभी-कभी इससे वे मार्ग से भी भटक जाते है।

ऊपर बतलाई हुई मरीचिका के कारण, प्रकाश-किरणो का पूर्ण-परावर्त्तन ही है। रेगिस्तान में सूर्य की गर्मी से रेत बहुत ज्यादा गर्म हो जाती है। इससे, इस गर्म रेत के पास वाली हवा की पर्त्त भी गर्म हो जाती है। यानी पृथ्वी के तल से कुछ फुट की ऊँचाई तक, हवा की घनता, ऊपर की ओर, धीरे-धीरे घटने के बजाय, बढ़ने लगती है। घनता पर ही इस माध्यम का वर्त्तनांक निर्भर करता है। दूर स्थित



चित्र 85

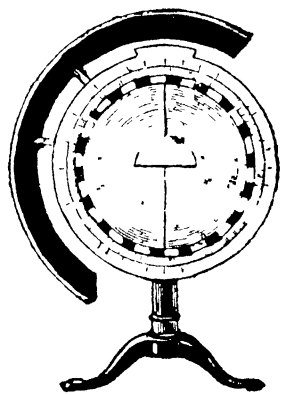
किसी वस्तु, जैसे कि पेड (P) से चलने वाली प्रकाश-किरणें, ऊपर से नीचे की ओर चलेंगी (चित्र 85)। जैसे-जैसे यह किरणें नीचे आती जावेंगी, इनको पहले से कम घनता वाली वायु की पर्त्त मिलती जावेगी। अतः यह अभिलम्ब से दूर हटती जावेगी। अन्त में किसी एक पर्त्त (जैसे कि चित्र 85 मे बिंदु 'O') पर आकर इसका आपतन-कोण, इस पर्त्त के लिए चरम-कोण से अधिक हो जावेगा और किरण पूर्णतः परावर्त्तित हो जावेगी। इसके बाद किरण, नीचे से ऊपर (यानी लगातार सघन होते हुए माध्यम में) जाने लगेगी। अतः अभिलम्ब की ओर मुडती जावेगी, और अन्त में दर्शक तक पहुँचकर (P) की ऊपर प्रतिमूर्त्ति (p) बना देगी। G बिंदु पर पृथ्वी और आकाश मिलते हुए प्रतीत होंगे। हवा में संवाहन धाराओं के कारण, उसकी सघनता बदलती रहती है। इससे यह उल्टी प्रतिमूर्त्ति भी लहराती हुई सी दीखती है।

बहुत ही ठण्डे देशों में इसके ठीक उल्टी बात होती है। वहाँ पर बहुत अधिक ठंड के कारण, हवा की घनता, ऊपर से नीचे बढती है। इसलिये दूरी पर स्थित

वस्तु से चलने वाली किरणों के पूर्ण-परावर्त्तन से उल्टी प्रतिमूर्त्ति बनती है। इससे ऐसा मालूम पड़ता है कि मानो दूरवाली वह वस्तु ऊपर हवा में उल्टी लटक रही हो।

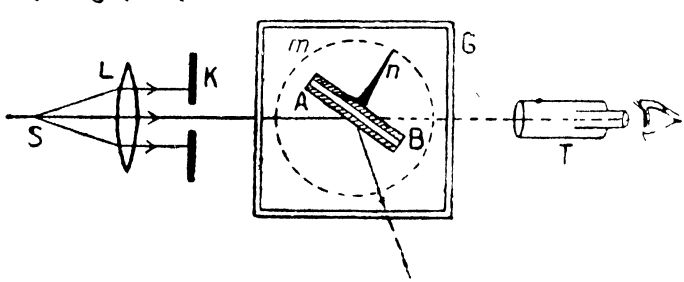
44. 'पूर्ण-परावर्त्तन द्वारा वर्त्तनांक निकालना—

(क) ठोस वस्तु का वर्त्तनांक—दिये हुए पारदर्शक ठोस, जैसे कि काँच का अर्धगोलाकार टुकड़े के समतल वाले किनारे को हार्टल-यन्त्र के बीच वाले स्टेंड में चित्र 86 की तरह लगा लो। यंत्र की झिरी मे से प्रकाश की पतली किरण, इस पर डालो। यह परावर्त्तित होकर, गोल-चकती पर दूसरी ओर दीखेगी। अब गोल-चक्र को इतना घुमाओ कि 'आवर्त्तित किरण' (refracted ray), काँच के एकसार सिरे के सहारे बाहर निकले। तब आपतन-कोण की माप, चरम कोण θ की माप होगी, और $\mu = \frac{1}{\text{Sin } \theta}$ ।



चित्र 86

(ख) द्रव के लिये—इस प्रयोग के लिये एक "वायु-सैल" (air-cell) AB (चित्र 87) ली जाती है। इसमें काँच की दो समतल प्लेटो (A) और (B) के किनारों पर रबड की पत्तियाँ (strips) रखकर, दोनों प्लेटों को मोम या चपडे से बन्द किया होता है। इस तरह दोनों प्लेटों के बीच मे हवा फंसी रह जाती है। इस 'वायु-सैलो' को क्लैप मे लगाकर सीधा खडा लटकाया जाता है। टीन या दूसरी धातु का एक चौकोर बक्सा (G) लेते है। इस बक्स (G) मे आमने-सामने, दो छेद बने होते हैं। इस बक्स मे प्रायोगिक द्रव भरा जाता है और द्रव मे वायु सैल को क्लैप के साथ लटका देते हैं। साथ ही इस सैल को बक्से के ऊपरी पार्श्व पर ही उसके केन्द्र के चारों ओर घुमाने का भी प्रबन्ध रहता है। यह जानने के लिये कि सैल को उसके केन्द्र पर कितना डिग्री घुमाया गया उसके ऊपरी सिरे पर एक निर्देशक (n) लगा होता है, जोकि एक गोल-पैमाने (m) पर घूमता है। सैल और गोल-पैमाने का केन्द्र एक ही बिन्दु होता है।



चित्र 87

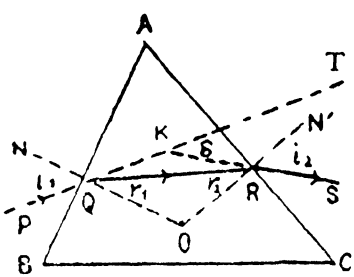
बक्स (G) की जिस दीवार में छेद है, उस ओर एक प्रकाश-स्रोत (जैसे बुन्सन बर्नर) रख दो। बर्नर की लौ के बीच मे अस्बेसटास के बने मोटे छल्ले को नमक के

घोल से संतृप्त करके रख दो। इस प्रबन्ध से, प्रकाश, एकरंगा (mono-chromatic) हो जावेगा। इन एकरंगी किरणों को उन्नतोदर (उत्तल) लैंस (L) द्वारा समानान्तर बनाकर, छेद पर डालो। आगे यह समानान्तर किरणें द्रव में से होती हुई, वायु सैल पर पहुँचती है और वहाँ से टैलिस्कोप (T) में जाती है, टैलिस्कोप (T) को पहले ही से दूर की वस्तु के लिए साधा हुआ रखते है। वायु-सैल मे घुसते हुए, प्रकाश-किरणें सघन माध्यम मे से विरल माध्यम मे जाती है, इसलिये आवर्त्तन कोण आपतन कोण से अधिक होता है। अब आरा क्लेप को घुमाकर, आपतन-कोण बढ़ाया जावे, तो एक स्थिति मे आवर्त्तन-कोण 90° हो जावेगा, और आवर्त्तन बद हो जावेगा। फल-स्वरूप किरणें पूर्णतः परावर्त्तित होने लगेंगी और टैलिस्कोप मे ज्वाला दीखनी बंद हो जावेगी। एक ऐसी ही दूसरी स्थिति, अभिलम्ब के दूसरी ओर भी होती है। निर्देशक की इन दोनो मापो का अन्तर 2 होता है जबकि θ चरम-कोण है। तब

द्रव का वर्त्तनाक $\mu = \frac{1}{\text{Sin } \theta}$

बहुत ही कम मात्रा मे मिल पाने वाले द्रव का वर्त्तनाक "पुलफ्रिक-रिफ्रेक्टो-मीटर" (Pulfrick Refractometer) द्वारा मापा जाता है। (विशेष विवरण के लिये "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिये)।

45. प्रिज्म, त्रिपार्श्व में से आवर्त्तन (Refraction through a Prism)—प्रिज्म, तीन आयताकार तलो द्वारा सीमित पारदर्शक माध्यम होता है। जिस स्थान पर कोई से दो तल मिलते है वह उसका कोर (किनारा—edge) कहलाता है। उसका आधार और उसके ठीक ऊपर वाला तल, दोनों ही त्रिभुजाकार समतल होते हैं। चित्र 88 मे एक प्रिज्म का प्रमुख प्रस्थ-छेद (Principal section) (ABC) दिखलाया गया है। दो किनारों के बीच वाले कोणों को (ABC) मे 'आवर्त्तन-कोण' या सिर्फ 'प्रिज्म-कोण' (angle of the prism) (=A) कहते है।



चित्र 88

अगर प्रिज्म का माध्यम, उसके चारों ओर वाले माध्यम से सघन है तो इसके 'वर्त्तक-पार्श्व' (refracting edge) पर पडने वाली किरणें (P Q) आवर्त्तित होने पर, अभिलम्ब (NO) की ओर झुक जाती है। और बाहर निकलते हुए दूसरे 'कोर' (AC) के अभिलम्ब (N'O) से परे हट जाती हैं। इस प्रकार (PQRS) इस प्रकाश-किरण का पूरा पथ है।

मान लो कि अभिलम्ब रेखायें (NQ) और (N'R), आगे बढाये जाने पर, बिन्दु (O) पर मिलती हैं; रेखा (PQ) और (RS) के बीच का 'विचलन-कोण' (angle of deviation) (δ) है, और यह दोनों रेखायें, K बिन्दु पर मिलती हैं तो—

$\angle PQN = i_1$; $\angle RQO = r_1$; $\angle QRO = r_2$ और $\angle SRN' = i_2$ अगर काँच का वर्त्तनांक μ है, तो—

$$\mu = \frac{\text{Sin } i_1}{\text{Sin } r_2} = \frac{\text{Sin } i_2}{\text{Sin } r_2} \quad \ldots \quad \ldots \quad (45{\cdot}1)$$

परन्तु $\delta = \angle SKT = \angle KQR + \angle KRQ = (i_1 - r_1) + (i_2 - r_2)$

$$= (i_1 + i_2) - (r_1 + r_2) \quad \ldots \quad \ldots \quad (45\,2)$$

क्योंकि चतुर्भुज AQOR का प्रत्येक कोण AQR और ARO, 90° है।

$\therefore \quad (\angle QAR + \angle ROQ) = 180°$

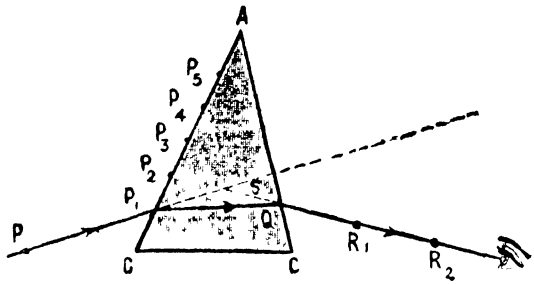
साथ ही $\triangle QRO$ में $\angle QOR + \angle QRO + \angle OQR = 180°$

$$\angle RAQ = \angle RQO + \angle QRO$$

अतः $\angle A (= \text{प्रिज्म-कोण}) = r_1 + r_2 \quad \ldots \quad (45.3)$

और सूत्र (45·2) से, $\delta = (i_1 + i_2 - A) \quad \ldots \quad (45{\cdot}4)$

46. 'प्रिज्म' में विचलन को मापना—प्रिज्म ABC (चित्र 89) को सफेद कागज के टुकड़े पर रख दो। कागज ड्राइंग बोर्ड पर लगा होना चाहिये। प्रिज्म की सीमा-रेखा, कागज पर पेन्सिल से बना लो। P_1 बिंदु पर एक पिन लगा दो। एक दूसरा पिन, बिंदु (P) पर भी सीधा खडा लगा दो। अब पार्श्व (face) AC की ओर देखते हुए इन दोनो पिनो (P, P_1) की प्रतिमूर्त्तियाँ



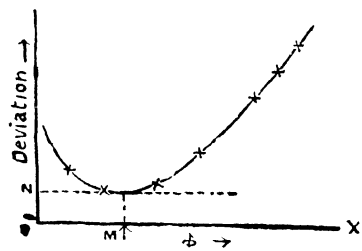
चित्र 89

देखो, और एक पिन, Q बिंदु पर इस तरह लगाओ कि इसका निचला सिरा, दूसरे पिन P और P_1 की प्रतिमूर्त्तियों के सिरों की सीध मे दीखने लगे। थोडा हटकर, पिन R_1, R_2 भी इसी तरह लगाओ। अब पिन (P) को तो लगा रहने दो, लेकिन पिन P_1 को हटाकर P_2 पर लगाकर प्रयोग को दोहराओ। यही क्रिया P_3, P_4, P_1 P_5, इत्यादि पर करो। प्रयोग को पूरा करके, पिनो व प्रिज्म को हटा लो। रेखा (P P_1 Q R_1 R_2) प्रकाश-किरण का पूरा मार्ग होगी। इसमे P P_1 तो आपतित किरण; और (Q R_1 R_2) निर्गत (emergent) किरण होगी। रेखा (P P_1) को आगे की ओर बढाओ। रेखा R_1 R_2 इसको बिंदु (S) पर काटेगी। सभी कोणो की माप लेकर, सूत्र (45·4) को सिद्ध करो। (विस्तार के लिये, "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक विज्ञान" ले० चटर्जी देखिये)।

47. अल्पतम विचलन-कोण (Angle of Minimum Deviation)—सूत्र 45·4 से स्पष्ट है कि प्रिज्म मे विचलन (δ), आपतन-कोण (i_1) के साथ-साथ बदलता है। इसका परिवर्त्तन, चित्र 90 के ग्राफ जैसा होता है। ग्राफ से स्पष्ट है कि

विचलन कोण का अल्पतम मान आयतन-कोण (i_1) के एक विशेष मान पर होता है। इसी कोण को "अल्पतम-विचलन-कोण" ($=\delta_{min}$) कहते हैं। यह सिद्ध किया जा सकता है कि इस स्थिति में आयतन और निर्गमन-कोण बराबर होते हैं ($i_1=i^2$)।

(क) प्रायोगिक-प्रमाण—धारा 46 वाला प्रयोग, विभिन्न बिन्दुओं P_1, P_2, P_3, P_4 इत्यादि पर करके, आपतन और विचलन-कोणों के बीच चित्र 90 जैसा ग्राफ खीचो। इसमे (ON), δm का मान है। अल्पतम विचलन की स्थिति मे आपतित और निर्गत किरणो को खीचने से $i_1=i_2$ आवेगा।



चित्र 90

*(ख) गणित का प्रमाण (Mathematical Proof)—सूत्र 45·1 से

$$\mu = \frac{\sin i_1}{\sin r_1} = \frac{\sin i_2}{\sin r_2}$$

$$= \frac{\sin i_1 + \sin i_2}{\sin r_1 + \sin r_2}$$

$$= \frac{2 \sin \frac{i_1+i_2}{2} \cos \frac{i_1-i_2}{2}}{2 \sin \frac{r_1+r_2}{2} \cos \frac{r_1+r_2}{2}} = \frac{\sin \frac{A+\delta}{2}}{\sin \frac{A}{2}} \times \frac{\cos \frac{i_1-i_2}{2}}{\cos \frac{r_1-r_2}{2}}$$

$$= x \cdot y \qquad \text{(मान लो)} \qquad \ldots \qquad \ldots \qquad \ldots \quad (47·1)$$

इस समीकरण मे x और y दोनो ही बदलने वाली राशियाँ है, δ के बदलने से 'x' का मान बदलता है। इसी तरह i_1, i_2 के बदलने से, r_1, r_2 बदलते है, और उसके साथ 'y'। लेकिन $(x.y)$=स्थिर। इसलिये अगर x अल्पतम होगा तो y अधिकतम। यानी—अल्पतम विचलन के लिये—

$$y = \frac{\cos\left(\frac{i_1-i_2}{2}\right)}{\cos\left(\frac{r_1-r_2}{2}\right)} = \frac{\cos \phi}{\cos \psi} \text{ (मान लो)}$$

जब $i_1 > i_2$, तो आवर्त्तन-नियम से $r_1 > r_2$। अतः $(i_1-i_2) > (r_1-r^2)$। इस तरह $\phi > \psi$ या $\frac{\cos \phi}{\cos \psi} <$।

साथ ही जब $i_1 < i_2$, $r_1 < r_2$; लेकिन $(i_2-i_1) < (r_2-r_1)$। अतः $(-\phi) > (-\psi)$ क्योंकि $\cos(-\phi) = \cos \phi$; और $\cos(-\psi) = \cos \psi$, इसलिये इस अवस्था में भी $(\cos \phi / \cos \psi) <$।

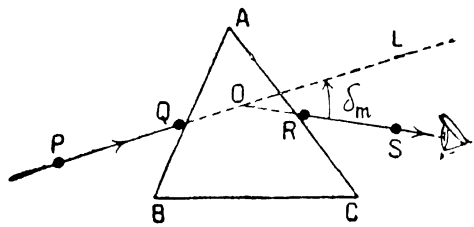
इस तरह, दोनों ही हालतों में यह अनुपात (ratio) इकाई से कम रहता है। लेकिन जब $i_1 = i_2$, तो $r_1 = r_2$ और यह अनुपात इकाई हो जाता है। इसलिये 'y' का अधिकतम मान इकाई हुआ। तभी विचलन भी अल्पतम होगा।

अतः अल्पतम-विचलन की स्थिति में

$$\mu = \sin\frac{A+\delta_{min}}{2} \Big/ \sin\frac{A}{2} \qquad \ldots (47{\cdot}2)$$

48. प्रिज्म के माध्यम का वर्त्तनांक (μ) निकालना—इस प्रयोग के दो भाग हैं—(i) अल्पतम विचलन कोण ($=\delta_{min}$) का मान निकालना और (ii) प्रिज्म-कोण (A) को मापना। बाद मे इन दोनो मानों का (47·2) मे लगाने से, प्रिज्म के वर्त्तनाक (μ) का गणान किया जा सकता है।

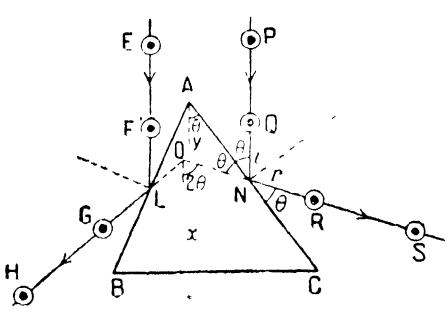
अल्पतम-विचलन-कोण का मान मालूम करने के लिये, सफेद कागज पर चित्र प्रिज्म (ABC) को रख दो। (चित्र 91)। कागज पर पेन्सिल से प्रिज़्म की सीमा-रेखा खीचो। इसके आवर्त्तन कोण (A) से AB और AC तलो पर, दो बराबर दूरियाँ (AQ) और (AR) काट लो Q और R बिंदुओ पर सीधे खडे पिन लगा दो। अब प्रिज्म के पार्श्व AC की ओर देखते हुए, एक पिन (S) बिंदु पर इस तरह लगाओ कि पिन Q, R और S के निचले सिरे एक ही रेखा मे दीखने लगें। इसी तरह (AB) की ओर से देखते हुए, पिन P लगाओ। प्रिज्म और पिनो को हटाकर PQ और RS रेखाये खीचो। यह दोनो, बिंदु O पर मिलेगी। $\angle$(LORS) को मापो। यही (δ_{min}) का मान है।



चित्र 91

इसी विधि मे AQ और AR को बराबर काटने का कारण यह है कि तभी $\triangle$AQR (चित्र-88) समद्विबाहु होगा और साथ ही $\angle r_1 = \angle r_2$ या $\angle i_1 = \angle i_2$। अल्पतम-विचलन के लिये भी यही बात आवश्यक होती है।

प्रिज़्म-कोण (A) निकालने की दो विधियाँ है—(i) सीधी विधि और (ii) पिनवाली। सीधी विधि मे तो प्रिज़्म की, सफेद कागज पर बनी सीमा रेखा से ही कोण 'A' को सीधे ही चाँदे से माप लेते है। पिन वाली विधि मे चित्र 92 जैसा प्रबध किया जाता है। प्रिज्म के कोण 'A' के इधर-उधर दो समानान्तर रेखाये (P, Q) और (EE) खीचो। इनके बिंदुओं (P, Q) पर सीधे खडे पिन लगा दो। दो दूसरे पिन, R, S बिंदुओं पर इस तरह लगाओ कि P, Q पर लगे हुए पिनों की, तल AC पर परावर्त्तन से बनने वाली प्रतिमूर्त्तियाँ और R, S पर लगे हुए पिनों के निचले सिरे, एक ही सीधी रेखा मे दीखने लगें। इसी तरह (E, F)



चित्र 92

पर पिनें लगाकर, दूसरे पिन, (G, H) लगाओ। रेखा (LGH) और (NRS) को पीछे की ओर बढाओ। यह दोनो बिंदु (O) पर मिलेगे। (Ay) और (Ox) को, (EFL) या (PQN) के समानान्तर खीचो। तब—

$$\angle QNA = \angle RNC = \theta \text{ (मान लो)}$$

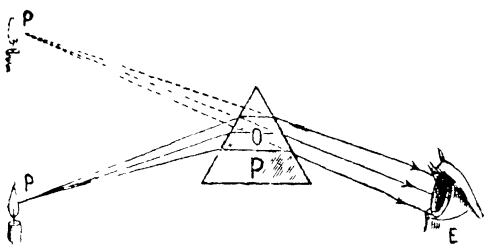
लेकिन $\angle(yAN) = \angle QNA = \theta$ और $\angle$ (ONA) $= \angle RNC = \theta$

$\therefore \quad \angle(NO^x) = \angle QNO = 2\angle\theta = 2(yAN)$

इसी तरह $\angle(LO^x) = 2\ \angle yAL$; अतः $\angle(LON) = 2\angle LA$

कोण (LON) को माप लो। इसका आधा, (A) होगा। 'A' और δ min के मान, सूत्र मे लगाकर μ का गणन करो।

49. प्रिज्म द्वारा प्रतिमूर्त्ति बनाना (Image by a Prism)—अल्पतम-विचलन स्थिति के पास मे अगर आपतन-कोण मे थोडी सी बदल होती है, तो भी विचलन कोण (δ) का मान कुछ अधिक नही बदलता। इसलिये अगर किसी प्रकाश-बिंदु (P) से फैलती हुई प्रकाश-किरणो का काफी सँकरा (narrow) पुंज (pencil),



चित्र 93



चित्र 94

प्रिज्म पर पडे, और इस पुंज के बीच वाली किरण के लिये, प्रिज्म अल्पतम विचलन की स्थिति मे रखा हो, तो इस पुंज की बाकी किरणे भी अल्पतम विचलन की स्थिति मे रहेगी। अतः निर्गम-किरणें, बिन्दु (P′) से आती हुई प्रतीत होगी, और बिन्दु (P_1P'), प्रिज्म कोण को समद्विभाग करने वाले तल से बराबर दूरी पर होगे। यह दोनों बिन्दु परस्पर अनुबद्ध (conjugate) होते हैं।

किसी द्रव का वर्त्तनाक निकालने के लिये खोखला प्रिज्म लेते है (चित्र 94)। यह काँच की पट्टियो से बनाया जाता है और इसके ऊपर एक ढकना लगा होता है। पहले ही बतलाये ढंग से *im* और 'A' को मालूम करके μ का गणन कर लेते है।

50. पतले प्रिज्म द्वारा विचलन (Deviation produced by a Thin Prism)—बहुत ही कम प्रिज्म-कोण (A) वाले प्रिज्म को पतला कहते है। आपतन कोण के भी कम होने पर, प्रकाश-किरणें, लगभग लम्बवत् पडेगी, और प्रिज्म के दोनों आवर्त्तक तलों पर, आवर्त्तन-कोण का मान भी कम होगा। सूत्र 45·1 से

$\sin i = \sin r_1$ और $\sin r_1 = \sin r_2$। कोण के काफी कम होने पर—

$$i_1 = r_1 \text{ और } i_2 = r_2$$

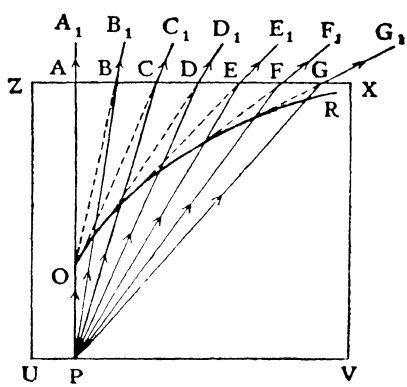
$$\therefore \quad (i_1+i_2)-(r_1+r_2)=A \qquad \ldots (50{\cdot}1)$$

क्योंकि $(i_1+i_2)=(A+\delta)$; अतः $\delta=(\mu-1)A$

अर्थात् 'विचलन-कोण' (δ), प्रिज्म-कोण (A) के समक्रमानुपाती होता है।

51. समतल पर आवर्त्तन द्वारा तीक्ष्ण वक्र (Caustic due to Refraction at a Plane Surface)—पीछे धारा 38 मे हमने देखा था कि सघन माध्यम मे रहती हुई वस्तु को विरल माध्यम मे, ऊपर से देखने पर वह थोडा उठी मालूम पडती है। यह उठाव, वस्तु और आँख को मिलाने वाली रेखा की दिशा मे होता है। साथ ही प्रतिमूर्त्ति की स्थिति, इन किरणो के झुकाव पर निर्भर करती है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण नीचे दिया जा रहा है।

चित्र 95 मे एक वस्तु सघन माध्यम (जैसे *f* काँच) मे, विदु (P) पर रखी है। इससे चलने वाली प्रकाश किरणे अभिलम्ब (PA) की दिशा मे विरल माध्यम (जैसे हवा) की ओर चलती है। PA और PB आवर्तित रेखायें, पीछे की ओर बढाई जाने पर विदु (O) पर मिलती हैं। इसी तरह (PB) और (PC) को खीचकर पीछे की ओर बढाओ। जिस बिन्दु पर यह दोनो मिले उसको चिन्हित कर लो। इसी तरह दूसरी तिरछी किरणे लेकर, (P) की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति का पता लगाते जाओ। आप देखोगे कि यह सारी प्रतिमूर्त्तियाँ, एक वक्र (curve) (OR) पर बनती है। माध्यम के बाँये भाग मे भी इसी प्रकार का वक्र बनाया जा सकता है। इस तरह स्पष्ट है कि एक बडे और फैले हुए माध्यम मे रखी हुई वस्तु 'P' से चलने वाली प्रकाश-किरणे, जब तिरछी होकर, विरल माध्यम की ओर चलती है, तो उसकी प्रतिमूर्त्ति के एक वक्र पर बनती है, बिदु पर नही। इस वक्र को ही 'तीक्ष्ण-वक्र' (caustic curve) कहते हैं। इसका सबसे अधिक चमकीला और स्पष्ट भाग बीच मे होता है।



चित्र 95

अब विदु P की 'O' से दूरी और (PA) को माप लो। तो—

PO=काँच के टुकड़े की व्यक्त चौडाई

और PA= ,, ,, वास्तविक चौड़ाई

$\therefore$ वर्तनाक $(\mu)=PA/PO$

अर्थात् तीक्ष्ण-वक्र खीचकर μ का मान निकाला जा सकता है।

आंकिक उदाहरण

1. डूबते हुए सूर्य को देखने के लिए मछली किस दिशा मे देखे, जब कि पानी का वर्त्तनांक 1·33 है।

(In what direction must a fish look in order to see the setting sun ? The index of refraction of water is 1·33.)

उत्तर—डूबते हुए सूर्य से चलने वाली किरणे, पानी के तल के साथ वाली दिशा मे आकर पडनी चाहिये, तभी मछली उनको देख सकेगी। लेकिन ऐसा होने पर आयतन-कोण $i=90°$। अत. आवर्त्तन-नियमानुसार—

$$\frac{\sin i}{\sin r}=\frac{\sin 90°}{\sin r}=\frac{1}{\sin r}=\mu=1·33$$

$$\therefore \quad \sin r=\frac{1}{1·33}=0\ 7594;\ \text{और}\ r=\mathbf{49°24'}$$

2. काँच के प्रिज्म का कोण 45°4′ है। सोडियम-प्रकाश के लिये अल्पतम विचलन कोण का मान 26°40′ है, तो काँच का वर्त्तनाक बतलाओ, जब कि sin 35°52′ =0·586 और sin 22°32′=0·383)

(Calculate the refractive index of a glass prism for sodium light when the refracting angle of prism is 45°4′ and the minimum deviation of a ray of sodium light passing through it is 26°40′. (sin 35°52′=0·586 ond sin 22°32′=0·383).

उत्तर—

$$\mu=\frac{\sin\frac{45°4'+26°40'}{2}}{\sin\frac{45°4'}{2}}=\frac{\sin 35°52'}{\sin 22°32'}=\frac{0·586}{0\ 383}$$

$$=\mathbf{1\ 53}$$

3. एक प्रिज्म के माध्यम का वर्त्तनाक 1 6 है। प्रकाश की एक किरण, इसमे से होकर जाते हुए, दूसरे तल पर पूर्णत. परावर्त्तित हो जाती है। अगर इसका आवर्त्तन-कोण 60° है तो पहले पार्श्व पर आपतन-कोण कितना होगा ? (मद्रास *1947*)

(A ray of light traverses a prism of refractive index 1 6 and just undergoes total reflection at the second face. If the reflecting angle of the prism is 60°, what is the angle of incidence at the first face ?) *(Madras 1947)*

उत्तर—क्योकि $A=r_1+r_2$; परन्तु प्रश्न के अनुसार $r_2=$चरम-कोण

यानी $\mu=\frac{1}{\sin r_2}$ या $r_2=\sin^{-1}\left(\frac{1}{\mu}\right)=\sin^{-1}\frac{1}{1\,6}=\sin^{-1}(0\ 6250)$

अत. $r_2=38°\ 41'$

साथ ही $A=60°=(r_1+38°41')$, अत: $r_1=21°19'$

लेकिन $\frac{\sin i_1}{\sin r_1}=1\ 6$ यानी $\sin i_1=1·6\ (\sin 21°19')=1·6\ (0·3633)$

$=·5817$

अत: $i_1=\sin^{-1}(·5817)=35°35'$

4. सिद्ध करो कि अगर प्रिज्म का कोण, उसके चरम-कोण के दो गुने से अधिक है, तो प्रिज्म मे से प्रकाश-किरणे बाहर ही नही निकल पावेगी।

(पटना *1953*, पजाब *1929*; कलकत्ता *B. Sc. 1932*)

(Show that if the angle of the prism be greater than twice the critical angle of glass of which it is made, there will be no emergent ray.) *(Patna 1953, Punjab 1929, C. U B.Sc. 1932)*

उत्तर—प्रकाश-किरणो का प्रिज्म मे से बाहर न निकल पाना तभी सम्भव है जबकि वे भीतर ही भीतर परावर्त्तित होती रहे। यानी i_2 का मान, सभी अवस्थाओ मे 60° होना चाहिए। अर्थात्

$$i_1 = i_2 = 90^\circ, \text{ क्योकि } \frac{\sin i_1}{\sin r_1} = \frac{\sin i_2}{\sin r_2} = \mu$$

$$\therefore \sin r_1 = \sin r_2 = \frac{1}{\mu}$$

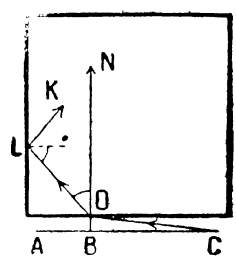
$$\text{या } r_1 = r_2 = \sin^{-1}\left(\frac{1}{\mu}\right)$$

$$\therefore A = (r_1 + r_2) = 2 \sin^{-1}\left(\frac{1}{\mu}\right) = 2 \text{ (चरम-कोण)}$$

5. काँच का एक घनक किताब पर रखा है। इस घनक ने, पृष्ठ का जितना अश ढँक रखा है, उसको घनक के चारो ओर पार्श्वो मे से किसी एक मे भी नहीं देखा जा सकता। चित्र खीचकर इसका कारण समझाओ। काँच के लिए $i = 90^\circ$ होने पर $r = 42^\circ$

(The cover print is not visible from any of the four sides of a glass cube, placed on a book. Explain what happens by a simple diagram for air to glass, when $i = 90^\circ$, $r = 42^\circ$)

उत्तर—चित्र 96 मे (ABC) पुस्तक का पृष्ठ है। मानलो कि पृष्ठ और काँच के घनक (cube) के बीच मे हवा की पतली पर्त्त है। इसलिए प्रकाश-किरण (BO), जोकि पृष्ठ पर लम्बवत् (normally) पडती है, घनक मे से (BON) दिशा मे चली जावेगी। एक दूसरी किरण, (CO), जो कि घनक के निचले सिरे को छूती हुई मिलती है, आवर्त्तित होकर (OL) दिशा मे चली जावेगी। इस तरह $\angle$(LON), चरम-कोण होगा, और इसका मान 42° होगा। इसलिए (OL) किरण घनक के पार्श्व पर, चरम-कोण से अधिक कोण पर आपतित होगी, और पूर्णतः परावर्त्तित होकर (LK) दिशा मे चली जावेगी। इस तरह,



चित्र 96

घनक मे से किरणे बाहर नही निकल पावेगी और पुस्तक के पृष्ठ का वह भाग, इस ओर से नही देखा जा सकेगा। घनक के दूसरे पार्श्वों से भी इसी तरह इसको नहीं देखा जा सकता।

6. काँच के प्रिज्म (वर्त्तनाक=1·52) के एक पार्श्व पर प्रकाश-किरण लम्बवत् पड रही है। ठीक सामने वाले विपरीत पार्श्व मे से निकलने के लिए प्रिज्म-कोण कितना हो ? (आन्ध्र *1951*)

(A ray of light is incident normally on one face of a glass prism of refractive index 1·52. What should be the angle of the prism in order that the ray may just emerge from the opposite face) (*Andhra 1951*)

उत्तर—मान लो प्रिज्म-कोण A है, तो $A = r_1 + r_2$

क्योंकि किरण, पहले पार्श्व पर लम्बवत् पड रही है, इसलिए $i = 0$ और $r_1 = 0$। अतः $A = r_2$। लेकिन निर्गत किरण तो दूसरे पार्श्व के सहारे-सहारे चलनी चाहिये। यानी r_2, चरम-कोण हुआ।

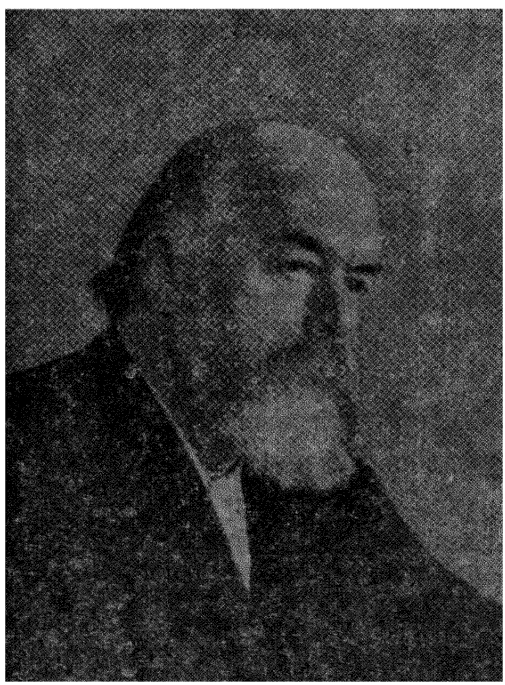
अर्थात् $\mu = \frac{1}{\sin r_2}$ या $r_2 = A = \sin^{-1}\left(\frac{1}{\mu}\right) = \sin^{-1}\left(\frac{1}{1\cdot52}\right)$

$\therefore A = r_2 = \sin^{-1}(0\cdot6579)$

$A = \mathbf{41°8'}$

आलिवर जौसेफ लौज (1851-1940)
(Oliver Joseph Lodge)

आपका जन्म स्ट्रैफोर्ड प्रान्त के तैनखुल नामक स्थान पर 12 जून, 1851 को हुआ। आपके पिता बर्तन बनाने का कार्य करते थे। आपने अपनी शिक्षा के साथ-साथ इस कला का भी अध्ययन किया। लेकिन आपकी वास्तविक रुचि तो वैज्ञानिक अनुसंधान की ओर थी। अपने पुत्र की रुचि और प्रतिभा को ध्यान मे रखकर पिता ने आपको "लण्डन-विश्व-विद्यालय" मे प्रो० टिण्डैल की देख-रेख मे अध्ययन करने भेज दिया। वहाँ से डी० एस०- सी की उपाधि पाने पर आप लिवरपूल विश्वविद्यालय मे 'भौतिक विज्ञान' और 'गणित' के सहायक प्रोफेसर बन गये। वहाँ आपने विद्युत् पर काफी खोज-कार्य किया और 'रुमफोर्ड पदक' प्राप्त किया। तब आप 'बर्मिंघम



चित्र 97

विश्वविद्यालय' मे प्रिंसिपल नियुक्त हो गये।

आपने बेतार के तार, टेलीफोन, कोहरा हटाना और कृत्रिम-वर्षा पर खोज की। जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'मनोविज्ञान' का अध्ययन करने लगे थे और 1920 मे अध्यात्मवाद पर व्याख्यान देने अमेरिका गये। 22 अगस्त, 1940 को आपकी मृत्यु हो गई।

सार (Summary)

आवर्त्तन नियम (i)—**आपतित-किरण, अभिलम्ब और आवर्त्तित-किरण, सब एक ही तल में होते है।** (ii) $(\sin i/\sin r)=/4$

वर्त्तनांक (μ)—**जब प्रकाश किरणें माध्यम** (a) **से** (b) **में जाती है, तो** $\sin i$ **और** $\sin r$ **का अनुपात माध्यम** b **की,** a **की अपेक्षा, वर्त्तनांक कहलाता है।** ${}_a\mu_b$ **लिखा जाता है। जब माध्यम** (a), **शून्य-स्थान मानकर** (निर्वात vacuum) **होता है, तो वर्त्तनांक का मान परम** (absolute) **होता है।**

चरम कोण—**जब प्रकाश किरणें घने माध्यम में पूर्णत. परावर्तित होती हैं तो जिस आपतन-कोण पर परावर्त्तित किरण सस्पर्शक-तल के साथ चलने लगती है उसको 'चरम-कोण' कहते है। अतः** $\sin\theta=0\ 1/\mu$

पूर्ण-परावर्त्तन—**जब आपतित किरण का आवर्तन न होकर वह संस्पर्शक तल पर परावर्तित होने लगती है, तो इस क्रिया को पूर्ण-परावर्त्तन कहते हैं। इसके लिए यह बाते होना जरूरी हैं** (i) **संस्पर्शक तल पर प्रकाश-किरणें सघन माध्यम से विरल माध्यम में जाये।** (ii) **आपतन-कोण चरम-कोण से अधिक हो।**

त्रिपार्श्व मे से आवर्त्तन—$\delta=(i_1+i_2)-A$ **जबकि** $\delta=$**अल्पतम, तो** $i_1=i$ **और** $r_1=r_2$। साथ ही $\mu=\dfrac{\sin\frac{A+Sm}{2}}{\sin\frac{A}{2}}$

अभ्यास के लिये प्रश्नावली

1. प्रकाश के आवर्त्तन-नियमों को लिखो। वर्त्तनांक से क्या अर्थ समझते हो? प्रयोग द्वारा आवर्त्तन-नियमों को किस प्रकार सिद्ध करोगे?

(अनामली 1952; पटना 1955; पंजाब 1952; ढाका 1942; कलकत्ता 1950, 53; मद्रास 1950)

2. 'वर्त्तनांक' की परिभाषा दो। यह किन-किन बातों पर निर्भर करती है? किसी द्रव के लिये इसका शुद्ध मान प्रयोग द्वारा किस प्रकार ज्ञात करोगे?

(गोहाटी 1952; यू० पी० बोर्ड 1942; मद्रास 1947; राजपूताना 1952; पंजाब 1951. पटना 1952: विश्व भारती 1954)

3. पानी से भरे तालाब को एक आदमी ऊपर से देख रहा है। उसे तालाब की गहराई 10 फुट मालूम पड़ती है। अगर पानी का वर्त्तनांक 1·33 है, तो तालाब की वास्तविक गहराई बतलाओ।

उत्तर—13·3 फुट (यू० पी० बोर्ड 1948)

4. एक बर्त्तन की वास्तविक गहराई 2d है। इसमें d गहराई तक μ, वर्त्तनांक वाला द्रव, और बाकी हिस्से में μ_2 वर्त्तनांक वाला द्रव भरा हुआ है। ऊपर से देखने पर, बर्त्तन की गहराई कितनी मालूम होगी? (मद्रास 1948)

उत्तर— $d\left(\frac{1}{\mu}+\frac{1}{\mu_2}\right)$

5. निम्न घटनाओं का स्पष्टीकरण दो—

(i) तालाब के साफ पानी में, ऊपर से देखने पर, उसकी गहराई कम और नतोदर जैसी दीखती है।

(ii) घर्षित काच (ground glass) की पट्टी, गीली (wet) हो जाने पर करीब-करीब पारदर्शक (transparent) बन जाती है।

(iii) पीछे की ओर कलई किये हुए मोटे दर्पण में, जलती हुई मोमबत्ती की कई प्रति-मूर्त्तियाँ दीखती हैं।

(iv) वास्तव में सूर्य के छिप जाने पर भी वह कुछ देर तक आकाश में दीखता रहता है।

(v) सूर्योदय या सूर्यास्त के समय उसका आकार दीर्घ-वृत्ताकार हो जाता है।

(vi) कभी-कभी आकाश में तारे टिमटिमाते हुए प्रतीत होते हैं।

(vii) सूखी कालिख लगी गेंद को पानी में डालने पर वह चमकने लगती है।

6. चित्र खींचकर समझाओ कि किस तरह एक समद्विबाहु, समकोणिक त्रिपार्श्व (प्रिज्म) को, एक समतल-दर्पण की जगह पर, प्रकाश-किरणों को विचलित करने के काम में लाया जा सकता है। त्रिपार्श्व के प्रयोग से क्या-क्या अतिरिक्त लाभ होंगे?

(गोहाटी 1955; पंजाब 1952, 51; ढाका 43; उत्कल 1947)

7. 'पूर्ण-परावर्त्तन' और 'चरम-कोण' से क्या तात्पर्य है? वर्त्तनांक और 'चरम कोण' के बीच सम्बन्ध बतलाने वाले समीकरण को सिद्ध करो।

(आन्ध्र 1950, 51; राजपूताना 1953, 55, उत्कल 1954; नागपुर 1950; विश्व-भारती 1952; कलकत्ता 1948; यू० पी० बोर्ड 1941)

8 (i) आवर्त्तन-नियमों से "पूर्ण-परावर्त्तन" के लिए जरूरी शर्तों का पता लगाओ। पूर्ण-परावर्त्तन के कुछ उदाहरण देकर समझाओ। (पंजाब 1931; कलकत्ता 1940)

(ii) "पूर्ण परावर्त्तन" पर निर्भर किसी विधि से द्रव का वर्त्तनांक किस तरह निकालोगे? (पंजाब 1950; नागपुर 1952, 53; मद्रास 1946, 51; राजपूताना 1950; यू० पी० बोर्ड 1944, '48, '50, '52; अजमेर 1949)।

9. (i) रेगिस्तान और ध्रुवीय प्रदेशों में 'मरीचिका' (Mirage) के प्रभाव को समझाओ। (पंजाब 1952; यू० पी० बोर्ड 1937; विश्व-भारती 1953; दिल्ली 1953).

(ii) "पूर्ण-परावर्त्तक त्रिपार्श्व", समतल-दर्पण से किन-किन बातों में अच्छा होता है, (गोहाटी 1955; पंजाब 1952, 51; ढाका 1943; उत्कल 1953, 54)।

10. पानी और ग्लिसरीन के वर्त्तनांक क्रमशः 1·33 और 1·47 है। ग्लिसरीन से पानी में जाने वाली किरण के लिये 'चरम-कोण' कितना होगा? (नागपुर 1953)

उत्तर—64°48′

11. एक समकोणिक त्रिपार्श्व द्वारा एक किरण को 90° पर मोड़ना है। इसके माध्यम के वर्त्तनांक का कम से कम मान क्या होगा? (नागपुर 1950)

उत्तर—1·41।

12. एक तालाब में 1·6 वर्त्तनांक वाला द्रव भरा हुआ है। धातु की एक गोल और पतली चिमनी को इस पर तैराया जाता है। चिमनी से 6 सैं० मी० नीचे एक बत्ती जल रही है। इस चकती का कम से कम अर्धव्यास कितना रखा जावे कि तालाब से बाहर, बत्ती न दीखे। (राजपूताना 1955

उत्तर—4·8 सैं० मी०।

13. काच के बर्त्तन में रखे हुए पानी में से उठने वाले हवा के बुलबुले, बाहर खड़े हुए आदमी को सफेद चमकदार दीखते हैं, क्यों? (पटना 1952; 1953)

14. त्रिपार्श्व के आवर्त्तक-कोर पर एक किरण का आपतन-कोण (i) है, त्रिपार्श्व-कोण (A) है अगर विचलन-कोण d हो और निर्गमन-कोण (angle of emergence) भी (i) हो तो सिद्ध करो कि $d=(i_1+i_2-A)$ (अनामली 1950)

15. त्रिपार्श्व में से होकर जाने पर प्रकाश-किरण का विचलन कोण किस तरह बदलेगा? जबकि त्रिपार्श्व कोण को धीरे-धीरे 0° से 90° तक बढ़ाया जाता है? त्रिपार्श्व के माध्यम का वर्त्तनांक μ, आवर्त्तन-कोण A और अल्पतम-विचलन-कोण (δ_m) के बीच सम्बन्ध बतलाने वाले सूत्र को सिद्ध करो। (राजपूताना 1951)

16. सिद्ध करो कि अगर किसी त्रिपार्श्व पर प्रकाश किरणें लम्बवत् पड़ रही हैं तो सामने दूसरे पार्श्व में से, ठीक उसके सहारे-सहारे बाहर निकलने के लिये यह जरूरी है कि त्रिपार्श्व-कोण, उसके चरम-कोण से अधिक न हो।

17. (i) सिद्ध करो कि $\mu=\dfrac{\text{Sin}\,\dfrac{\delta_m+A}{2}}{\text{Sin}\,\dfrac{A}{2}}$; जबकि δ_m=अल्पतम-विचलन कोण, A=त्रिपार्श्व कोण

(दिल्ली 1951; आंध्र 1951; पंजाब 1950, 52, 53; पटना 53)

(ii) इस सूत्र द्वारा, त्रिपार्श्व के वर्त्तनांक को प्रयोग द्वारा कैसे निकालोगे? (ढाका 1947)

18. थोड़ा ही आवर्त्तन-कोण (=A) वाला एक त्रिपार्श्व, प्रकाश किरणों को 6° पर विचलित कर देता है, काच का वर्त्तनांक (μ) 1·5 है, तो उसके कोण (A) का मान बतलाओ। (दिल्ली 1943)

उत्तर—10°

19. त्रिपार्श्व की "अल्पतम-विचलन-स्थिति" से क्या तात्पर्य है? त्रिपार्श्व के लिये इसको प्रयोग द्वारा किस तरह मालूम करोगे?

(आंध्र 1951; कलकत्ता 1950; विश्व-भारती 1953; पंजाब 1953; पटना 1953)

20. सिद्ध करो कि "अल्पतम विचलन-स्थिति" में त्रिपार्श्व में प्रकाश-किरणें, समसीमित (symmetrical) हो जाती हैं। यदि त्रिपार्श्व का आवर्त्तन-कोण 60° और वर्त्तनांक $\sqrt{2}$ हो तो 'अल्पतम-विचलन-कोण' मालूम करो। (ढाका 1930; राजपूताना 1936)

उत्तर—30°

21. त्रिपार्श्व माध्यम का वर्त्तनांक 1·532 है। इसके एक पार्श्व पर किरणें 50° पर पड़ रही है। अल्पतम-विचलन के लिये इसका आवर्त्तन-कोण 'A' कितना होना चाहिये ?

उत्तर—60° (मद्रास 1949)

22. एक त्रिपार्श्व का आवर्त्तन-कोण 60° है, और सोडियम-प्रकाश के लिये इसका वर्त्तनांक 2·5 है। सोडियम-प्रकाश-किरणों के लिये अल्पतम-विचलन-कोण का मान बताओ (Sin 48°36′ =0 75)।

उत्तर—37°12′ (कलकत्ता 1938)

23. संक्षिप्त टिप्पणियां लिखो—

(i) तीक्ष्ण-वक्र (विश्व-भारती 1953 ; गोहाटी 1951)

(ii) पूर्ण परावर्त्तक त्रिपार्श्व।

अध्याय 5

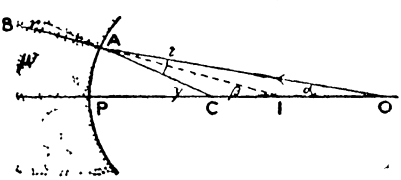
गोलीय तलों पर आवर्त्तन : ताल (लैंस)

(Refraction at Spherical Surfaces : Lenses)

52. गोलीय तल पर आवर्त्तन—प्रकाश-किरणें, जब हवा मे से चलते हुए किसी पारदर्शक माध्यम के गोलीय तल पर पडती है, तो वे आवर्त्तित हो जाती है। यह क्रिया, समतलो की तरह ही आवर्त्तन-नियमो के अनुसार होती है।

पारदर्शक गोलीय तलो के लिये, 'वक्रता-केन्द्र', 'मुख्य-अक्ष', ध्रुव, 'मुख-पृष्ठ' और 'मुख्य-प्रस्थछेद' की परिभाषाएँ गोलीय दर्पणों की तरह ही होती है। 'आपतन-कोण', वह कोण होता है जो कि 'आपतन-बिदु' को 'वक्रता-केन्द्र' से मिलाने वाली रेखा के साथ 'आपतित-किरण' (incident ray) बनावे। समतलो की तरह ही, माध्यम की सघनता (अतः वर्त्तनाक μ) पर ही प्रकाश-किरणो का, अभिलम्ब (normal) की ओर झुकना (bend) या दूर हटना निर्भर करता है।

(क) **नतोदर-तल (Concave Surface)**—जिस पारदर्शक माध्यम का सस्पर्शक-तल (Contact plane), बीच मे भीतर की ओर धँसा होता है, उसे 'नतोदर' कहते है। चित्र 98 मे इस तरह के तल का मुख्य-प्रस्थछेद (AP) दिखलाया गया है। इसमे तल के बाँये ओर वाला माध्यम सघन (जैसे काँच) और दाँयी ओर वाला 'विरल' (rarer) (जैसे कि हवा) माध्यम है। वर्त्तनाक μ



चित्र 98

है; 'P', ध्रुव है और C इस गोलीय तल का वक्रता-केन्द्र है। तल की मुख्य-अक्ष (ICP) है। (O) बिदु पर एक वस्तु रखी है। इससे प्रकाश-किरणें चलकर, तल के (A) बिदु पर पडती हैं। बिदु (A) और ध्रुव (P) दोनो पास-पास हैं। तो रेखा (CA), आपतन-बिदु (A) पर अभिलम्ब (normal) को बतलावेगी। क्योंकि प्रकाश-किरणें, विरल माध्यम में से सघन माध्यम में घुस रही है इसलिये वे अभिलम्ब की ओर झुक जावेगी, और आवर्त्तित होकर, रेखा (OA) की दिशा, (AB) हो जावेगी। मुख्य-अक्ष के साथ-साथ चलने वाली किरण (OP), तल पर लम्बवत् पडने के कारण, इसी दिशा मे, बिना विचलित हुए, दूसरे माध्यम मे आगे चली जाती है। अब अगर आवर्त्तित किरण (YB) को पीछे की ओर बढाया जावे, तो यह मुख्य-अक्ष को (P) बिंदु पर काटेगी। इसलिये (O) की काल्पनिक-प्रतिमूर्त्ति (P) बिंदु पर बनेगी।

यहाँ पर $\angle(CAO)$ = 'आपतन (सस्पर्श)-कोण' = i

और $\angle(PAC)$ = सामने वाला 'आवर्त्तन-कोण' = r

$$\therefore \text{ वर्त्तनांक } (\mu) = \frac{\sin i}{\sin r} \qquad \ldots (52{\cdot}1)$$

क्योंकि बिंदु (A) और (P) पास-पास है, इसलिये आपतन, और आवर्त्तन कोण, काफी छोटे होंगे। अतः $(i = \mu r)$। मान लो कि $\angle(AOC) = \alpha$ और $\angle(AIC) = \beta$ और $\angle(ACP) = \gamma$। त्रिभुज (CAO) मे, $i = (\gamma - \alpha)$

और त्रिभुज (CAI), से $r = \angle(CAI) = (\gamma - \beta)$

अतः समीकरण (52·1) से $= \mu(\gamma - \beta) = (\gamma - \alpha)$

इन सभी कोणो की कोणीय माप लेकर, और साथ ही PO, PI और PC को क्रमशः u, v और R से व्यक्त करने पर—

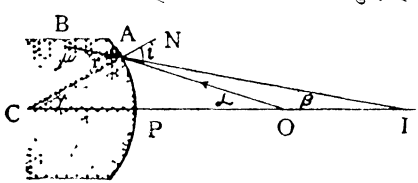
$$\mu\left(\frac{AP}{R} - \frac{AP}{v}\right) = \frac{AP}{R} - \frac{AP}{u}$$

(AP) से भाग देने पर,

$$\frac{\mu}{v} - \frac{1}{u} = \left(\frac{\mu - 1}{R}\right) \qquad . \quad (52{\cdot}2)$$

क्योंकि नतोदर-तल पर आवर्त्तित होकर, किरण-पुंज, किसी काल्पनिक बिन्दु पर केन्द्रित होता हुआ मालूम पडता है, इसलिये नतोदर तल को फैलाने वाला (diverging) तल भी कह देते है।

(ख) उन्नतोदर तल (Convex Surface)—इस तरह के आवर्त्तक गोलीय तल बीच मे बाहर की ओर उभरे हुए होते है (चित्र 99)। नतोदर-तल की तरह प्रकाश किरणें खीचने पर, आप देखोगे कि आपतन-बिंदु (O) की काल्पनिक-प्रतिमूर्त्ति (I) बिंदु पर बनती है। यहाँ कोण (OAN) आवतन-कोण $(= i)$, और कोण (BAC), सगत आवर्त्तन-कोण $(= r)$ होगा। साथ ही



चित्र 99

इन कोणो के छोटा होने के कारण,

$$i = \mu r$$

त्रिभुज (CAO) मे, $i = (\gamma + \alpha)$

और त्रिभुज (CAI) मे, $r = (\gamma + \beta)$

$$\therefore \qquad i = \gamma + \alpha = \mu r = \mu(\gamma + \beta)$$

क्योंकि वृत्ताश (arc) AC, उभयनिष्ठ (common) है, और $PO = u$; $PI = v$ और $PC = -R$, तो

$$\left(\frac{\mu}{v} - \frac{1}{u}\right) = \left(\frac{\mu - 1}{R}\right) \qquad \ldots (52{\cdot}3)$$

कहना न होगा कि प्रकाश की किरणों का कोणीय फैलाव, आवर्त्तन होने के बाद कम हो जाता है। इसलिए ऐसे तलो को कभी-कभी 'केन्द्रीकारक' तल (converging surfaces) भी कह देते हैं।

गोलीय तलों की मुख्य नालिया—मानलो कि सूत्र 52 2 मे, $u = \infty$ यानी प्रकाश-किरणे बहुत ही अधिक दूरी से मुख्य-अक्ष के समानान्तर आ रही है। अत:

$$\frac{1}{u} = 0 \; ; \; \therefore \frac{\mu}{v} = \frac{\mu - 1}{R} \; ; \text{ या } v = \frac{R}{\mu - 1} = f_2 \ldots \quad \ldots (52{\cdot}4)$$

(v) का यह मान, "द्वितीय मुख्य-नाभि" (second principal focus) की, तल के ध्रुव से दूरी बतलाता है। इसको ज्यादातर (F_2) लिखते है। दूसरे शब्दो मे प्रकाश-किरणों का एक सँकरा पुंज, जब किसी तल की मुख्य-अक्ष के समानान्तर आकर पडता है, तो या तो वे वास्तव में तल की 'द्वितीय मुख्य नाभि' पर वास्तव में केन्द्रित हो जाती है, या ऐसा होती हुई मालूम पडती है।

अगर किरण-पुज, आवर्त्तन के बाद, समानान्तर (parallel) हो जाता है, तो $v = \infty$

$$\text{या } \frac{1}{v} = 0 \; ; \text{ अत: } \frac{1}{\mu} = \left(\frac{-1}{\mu R}\right) \text{ या } u = -\frac{R}{\mu - 1} = 1 \quad \ldots \quad (52{\cdot}5)$$

(u) का यह मान, तल की 'प्रथम मुख्य-नाभि' (first principal focus) की तल के ध्रुव से दूरी बतलाता है। इसको (F_1) से लिखते है। दूसरे शब्दो मे प्रकाश किरणें जब आवर्त्तक तल की प्रथम मुख्य-नाभि पर या तो वास्तव मे केन्द्रित हो जाती है या ऐसा होती हुई प्रतीत होती है तो आवर्त्तन के बाद यह किरणें, मुख्य-अक्ष के समानान्तर हो जाती है।

सूत्र (52 2), समतल-दर्पण पर भी लागू होता है क्योकि इसके लिए $R = \infty$ इसलिए $u = \infty$ ।

आकिक उदाहरण

1. एक उन्नतोदर आवर्त्तक तल का वक्रता-व्यासार्द्ध 10 सै० मी० है। इसके सामने हवा मे एक वस्तु 30 सै० मी० की दूरी पर रखी है। बनने वाली प्रतिमूर्त्ति की स्थिति और आकार मालूम करो, जबकि काँच का वर्त्तनाक μ, 1·5 है। तल की मुख्य नाभि कहाँ पर है ?

(One side of a block of glass is cut into a convex spherical form of radius 10 cm. A point object is placed at a distance of 30 cm. in air from the spherical surface. Find the position and nature of the image formed. Find also the principal foci for such a surface, given that the refractive index of glass in air is 1·5.)

उत्तर—वस्तु-अन्तर (μ) = 30 सै० मी०; वक्रता-व्यासार्द्ध (R) = —10 सै० मी०

मान लो 'प्रतिमूर्त्ति-अन्तर' (image distance) = v सै० मी०

तो सूत्र (52·3) से—

$$\frac{1{\cdot}5}{v} - \frac{1}{-30} = \frac{1{\cdot}5 - 1}{10} \; ; \text{ अत: } v = -90 \text{ सै० मी०}$$

अर्थात् प्रतिमूर्त्ति, वस्तु के दूसरी ओर, काँच के उन्नतोदर तल की ओर, 90 सें० मी० दूरी पर बनती है और वास्तविक है। साथ ही

$$\text{गोलीय तल की प्रथम-मुख्य नाभियाँ } (f_1) = \left(\frac{7}{\mu - 1}\right) = \frac{10}{0\cdot 5} = 20 \text{ सें० मी०}$$

$$\text{और } ,, \ ,, \text{ द्वितीय मुख्य नाभ्यन्तर} = f_2 = \frac{\mu R}{\mu - 1} = \left(\frac{1\cdot 5 \times 10}{0\cdot 5}\right)$$

$$= (30) \text{ सें० मी०}$$

2 काँच के ठोस गोले के भीतर एक छोटी सी वस्तु रखी है। गोले का अर्द्ध-व्यास 7 सें० मी० है। वस्तु, गोले के केन्द्र से 1 सें० मी० पर है। अगर काँच का वर्त्तनाक 1·4 हो तो यह वस्तु किस जगह पर रखी हुई मालूम पड़ेगी ?

(राजपूताना *1943*)

(A small object is enclosed in a sphere of solid glass 7 cms. in radius. It is situated 1 cm. from the centre and is viewed from the side to which it is nearest. Where will it appear to be if the refractive index of glass is 1·4 ?) (*R.P.B 1943*)

उत्तर—क्योंकि प्रकाश-किरणें, काँच में से हवा में आ रही है, इसलिए सूत्र (52·3) में μ की जगह पर $1/\mu$ लिखना होगा। अर्थात्

$$\left(\frac{1/\mu}{v} - \frac{1}{u}\right) = \frac{(1/\mu - 1)}{R}, \text{ या } \left(\frac{1}{v} - \frac{\mu}{u}\right) = \left(\frac{1-R}{R}\right)$$

परन्तु प्रश्न के अनुसार $u = 7 - 1 = 6$ सें० मी०, और $R = 1\cdot 7$ सें० मी०।

अत $\left(\frac{1}{v} - \frac{1\cdot 4}{6}\right) = \left(\frac{1-1\cdot 4}{\mu}\right) = -\left(\frac{0\cdot 7}{4}\right)$

या $v = 5\cdot 67$ सें० मी०

(यह प्रतिमूर्त्ति काल्पनिक होगी)

53. ताल (लैंस) (Lenses)—जब किसी पारदर्शक-माध्यम को दो गोलीय तलों से सीमित (bound) कर देते हैं, तो इस सीमित टुकड़े को 'ताल' (लैंस) कहते हैं। इसको मुखपृष्ठ के समकोणिक तल पर के प्रस्थच्छेद से कागज पर व्यक्त करते हैं।

ताल (लैंस) ज्यादातर दो तरह के होते हैं। (i) **'उन्नतोदर'** (या उत्तल) और (ii) **नतोदर** (अवतली) (Concave)। उन्नतोदर-लैंस, किनारों की अपेक्षा बीच में उभरा हुआ होता है, जबकि नतोदर (अवतल) लैंस, बीच में दबा हुआ रहता है। लैंसों के दूसरे प्रकार भी होते हैं। चित्र 100 में A, 'युगल उन्नतोदर' (Double convex) या (Bi-convex) लैंस है; 'B', समोन्नतोदर (Plano-Convex) लैंस है, और और तीसरा लैंस 'C', नतोन्नतोदर-लैंस (Concavo-convex) है। इसी तरह, नतोदर-लैंस के भी तीन रूप चित्र 101 में दिखलाये गये हैं। जब लैंस के दोनों तलों (surfaces)



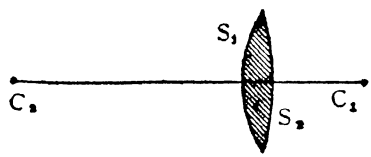
चित्र 100



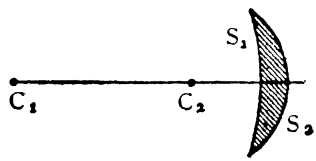
चित्र 101

का वक्रता-व्यासार्द्ध बराबर होता है, तो ऐसे लैंस को 'युगल उन्नतोदर' (equi convex) या 'युगल नतोदर' (equi-concave) कहते हैं।

मुख्य-अक्ष (Principal Axis)—हरएक लैंस के दो गोलीय तल होते है। इसलिये दो वक्रता-केन्द्र (centres of curvature) भी होते है। इन दोनो केन्द्रो को मिलाने वाली रेखा ही, लैंस की मुख्य-अक्ष कहलाती है। चित्र 102 मे एक उन्नतोदर (उत्तल) लैंस दिखलाया गया है; S_1 व S_2 इसके दो वक्र-तल हैं और C_1, C_2 इन तलो के वक्रता-केन्द्र हैं। अतः रेखा (C_1C_2), लैंस की मुख्य-अक्ष हुई। चित्र 103 मे अवतल-उत्तल लैंस (Concave-convexo Lens) के वक्रता-केन्द्र, लैंस के इधर-उधर न होकर एक ही ओर हैं, और (C_1C_2) मुख्य-अक्ष है।

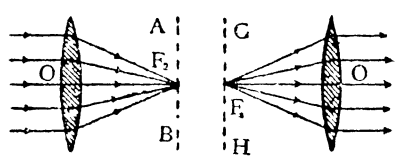


चित्र 102



चित्र 103

54. मुख्य-नाभियाँ (Principal Focii)—लैंस की मुख्य-अक्ष पर स्थित यह ऐसे दो बिन्दु होते है कि जिन पर आपतित (incident) समानान्तर (parallel) प्रकाश-किरणे, आवर्त्तित (refracted) होकर या तो वास्तव मे केन्द्रित हो जाती है, या ऐसा होती हुई मालूम पडती है। चित्र 104 मे आपतित समानान्तर, लैंस के दूसरी ओर बिन्दु F_2 पर केन्द्रित हो रही है। बिन्दु F_2 लैंस, की 'द्वितीय-मुख्य नाभि' (second principal focii) कहलाता है। इसके विपरीत, अगर किसी एक बिन्दु (F_1) से फैलकर चलने वाली किरणे, लैंस से आवर्त्तित होने पर आपस मे समानान्तर हो जावें, ता इस बिन्दु (F_1) को लैंस की 'प्रथम-मुख्य नाभि (first principal focus) कहते है। इस चित्र 105 मे यह नाभि बिंदु (F_1) से व्यक्त की गई है।



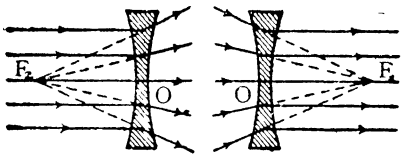
चित्र 104

चित्र 105

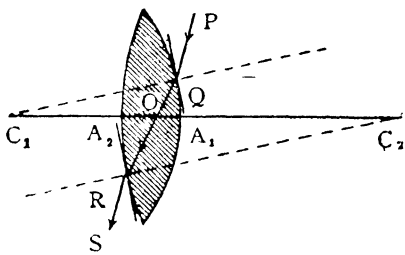
यहाँ पर यह बात ध्यान रखने की है कि लैंस की दोनो मुख्य नाभियाँ आपस मे अनुबद्ध (conjugate) होती है। इनमे से किसी एक पर से भी होकर जाने वाला और साथ ही मुख्य-अक्ष के समकोणिक तल, 'नाभि-तल' (focal plane) कहलाता है। चित्र 104 और 105 मे यह क्रमशः AB और GH से दिखलाये गये है।

नतोदर (अवतल) लैंस की नाभियाँ चित्र 106 और 107 मे दिखलाई गई है, चित्र 106 मे आपतित समानान्तर किरणे, आवर्त्तित होकर, बिंदु (F_2) से फैलती हुई मालूम पड़ती है। इसलिये बिन्दु (F_2), इस लैंस की 'द्वितीय मुख्य नाभि' हुआ। इसी तरह चित्र 107 मे बिन्दु F_1 पर से फैलती हुई मालूम पडने वाली

प्रकाश-किरणें, आवर्त्तन के बाद, परस्पर समानान्तर हो जाती हैं। इसलिये बिन्दु F_1, लैंस की 'प्रथम-मुख्य नाभि' हुई।



चित्र 106 चित्र 107



चित्र 108

55. लैंस का 'मध्य-बिन्दु' (Optical Centre of a Lens)—चित्र 108 मे एक उत्तल (उन्नतोदर) लैंस दिखलाया गया है; C_1 C_2 इसके वक्रता केन्द्र हैं; इसके वक्रता-व्यासार्द्ध $C_1 Q = r_1$ और $C_2 R = r_2$। बिन्दु Q और R पर यह व्यासार्द्ध, लम्बवत् (normal) है, इसलिए इन बिंदुओ के छोटे-छोटे अशो को आपस मे समानान्तर माना जा सकता है। जब किरण (PQ), लैंस के बिंदु 'Q' पर आकर पडती है, तो आवर्त्तित होकर, RS दिशा मे लैंस मे से बाहर निकल जावेगी। साथ ही रेखाये PQ और RS परस्पर समानान्तर भी होगी। यह क्रिया, बहुत कुछ, चौकोर आयताकार काँच की पटरी द्वारा होने वाले आवर्त्तन जैसी होती है। इस तरह PQRS प्रकाश-किरण का मार्ग है। जिस बिंदु पर रेखा QR, लैंस की 'मुख्य-अक्ष' को काटे, उसको लैंस का **'मध्य-बिन्दु'** कहते है।

लैंस के "मध्य-बिन्दु" की स्थिति (position) मालूम करना—

$$\text{क्योंकि } \frac{OA_1}{OA_2} = \frac{r_1}{r_2} \therefore \left(\frac{OA_1}{ON_1 + OA_2}\right) = \frac{r_1}{r_1 + r_2}$$

$$\text{या } \frac{OA_1}{t} = \frac{r_1}{r_1 + r_2} \text{ ; अत: } OA_1 = \frac{r_1 t}{r_1 + t_2} \text{ और } OA_2 = \frac{r_2 t}{r + r_2}$$

जब कि t = लैंस की मोटाई। "मध्य-बिन्दु" O, ध्रुवो को मिलाने वाली रेखा (A_1 A_2) को वक्रतलो के अर्द्ध-व्यासो के अनुपातो मे बाँटता है। अगर कोई किरण, लैंस मे से इस तरह आवर्त्तित होती है कि आपतित (incident) और निर्गत (emergent) किरणें आपस मे समानान्तर है, तो लैंस के भीतर किरणें, उसके मध्य-बिंदु पर से होकर जावेगी। इसकी उल्टी बात भी उतनी ही सत्य है। यानी अगर कोई किरण, लैंस के मध्य-बिन्दु पर से होकर जा रही है, तो आपतित और निर्गत किरणें परस्पर समानान्तर होगी। यहाँ तक कि पहले लैंस मे तो यह दोनो एक ही सीधी रेखा मे होती है। यह सिद्ध किया जा सकता है कि 'द्वि-उन्नतोदर' लैंस का मध्य-बिंदु उसके भीतर ही होता है, जबकि सम-उन्नतोदर (plano convex) या सम-उन्नतोदर (plano-concavo) लैंस का मध्य-बिन्दु उसके वक्रतल के ध्रुव पर ही होता है। नतोन्नतोदर-लैंस (concavo-convex) का मध्य-बिन्दु, लैंस से बाहर होता है।

दूरियाँ मापने के प्रचलित नियम (Convention as to Algebraic Signs)—लैंस द्वारा, वस्तु की बनने वाली प्रतिमूर्त्ति की स्थिति इत्यादि बतलाने के लिये, इनकी दूरियाँ मापनी होती है। इन दूरियो को मापने के प्रचलित नियम इस तरह है—

1. सभी दूरियाँ, हमेशा, लैंस, के 'मध्य बिन्दु' से मापी जाती हैं।

2. 'मध्य-बिन्दु' से वस्तु की ओर यानी, आपतित किरणो के उल्टी दिशा में, मापी गई दूरियाँ, धनात्मक (positive) (+) होती है, और उसी दिशा मे 'ऋणात्मक' (negative) (−)।

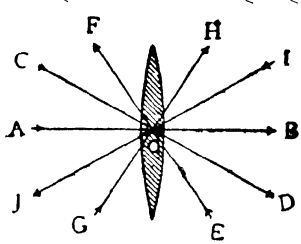
3. मुख्य-अक्ष से ऊपर की दूरियाँ (+) और नीचे वाली (−) मानी जाती है।

4. उल्टी (inverted) प्रतिमूर्त्ति की अभिवर्धकता (magnification), (−) और सीधे (erect) की (+) मानी जाती है।

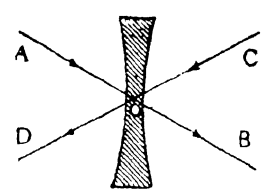
लैंस के मध्य-बिंदु से मुख्य-नाभि तक की दूरी "नाभ्यन्तर" (focal length) कहलाती है। उन्नतोदर (convex) (उत्तल) लैंस का नाभ्यन्तर (—) और नतोदर (अवतल) का (+) होता है।

56. पतले लैंस (Thin Lens)—अगर लैंस के नाभ्यन्तर की अपेक्षा, उसकी मोटाई बहुत ही कम है, तो ऐसे लैंस को 'पतला' कहते है। इन लैंसो मे बिंदु A_1, A_2 इतने पास-पास आ जाते है कि उनको एक ही बिंदु मान सकते है (चित्र 109)। साथ ही इस मध्य-बिंदु पर से होकर जाने वाली आपतित और निर्गत किरणे, अलग-अलग (समानान्तर, न रहकर, एक ही रेखा बन जाती है।

पतले लैंस द्वारा प्रतिमूर्त्ति-रचना के नियम—(i) प्रकाशमान वस्तु के किसी बिंदु से चलकर लैंस के मध्य-बिंदु पर से होकर जाने वाली किरण, बिना विचलित हुई, उसी दिशा में, लैंस से बाहर निकल जाती है। चित्र 109 मे एक पतला उन्नतोदर (convex) लैंस का मध्य-बिंदु (O) है। और चित्र 110 मे 'O', नतोदर (अवतल) लैंस का मध्य-बिंदु है। इन दोनो ही चित्रो मे किरणे AO और CO, इस नियम के अनुसार, उसी दिशा मे आगे चली जाती है। लैंस के दूसरी ओर से आने वाली किरणो के साथ भी यही बात होती है। इनका मार्ग, चित्र 109 मे IOJ व EOF है। चित्र-110 मे किरणे COD से व्यक्त हो रही है।



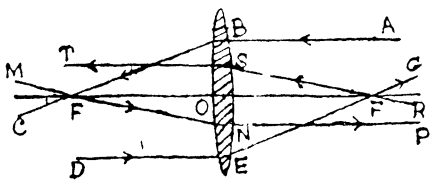
चित्र 109



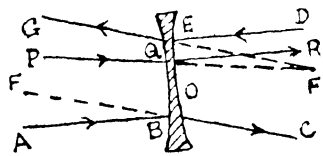
चित्र 110

(ii) एक ही बिंदु से, लैंस की मुख्य-अक्ष के समानान्तर आने वाली किरणें लैंस के दूसरी ओर, बाहर निकलने पर, उसकी द्वितीय नाभि पर से होकर जाती है। चित्र 111 मे

दिखलाये गये उन्नतोदर-लैंस (convex lens) पर, उसकी मुख्य-अक्ष के समानान्तर पड़ने वाली किरणें, (B, B) और (D, E) आवर्तित होकर, उसकी नाभि (F) पर से होकर जा रही है। चित्र 112 मे यही क्रिया, नतोदर (अवतल) लैंस के लिये दिखलाई गई है। मुख्य-अक्ष के समानान्तर आपतित (incident) किरण (AB)



चित्र 111



चित्र 112

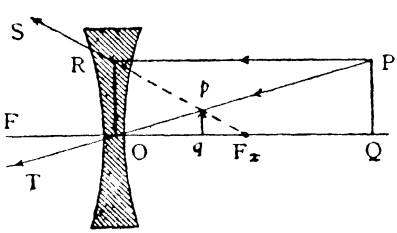
आवर्त्तित होकर, (BC) दिशा मे बाहर जा रही है। अगर (BC) रेखा को पीछे की ओर बढाया जावे, तो यह, लैंस की मुख्य-नाभि पर से होकर जावेगी। इसी तरह दूसरी किरण DE, लैंस मे से होकर, बाहर निकलने पर (EG) दिशा मे चलती है। यह भी मुख्य नाभि (F) से फैलती हुई मालूम हो रही है।

(iii) वस्तु को एक ही बिंदु से चलकर, उसकी मुख्य नाभि मे से होकर जाने वाली किरण, लैंस में से बाहर निकलने पर, मुख्य-अक्ष के समानान्तर हो जाती है। चित्र 111 मे रेखा (MFN) एक ऐसी ही किरण को व्यक्त करती है। लैंस मे से बाहर निकलने पर इस किरण की दिशा (FP), (मुख्य-अक्ष के समानान्तर) हो जावेगी। ऐसी ही एक दूसरी (RFS), लैंस मे से बाहर निकलने पर, मुख्य-अक्ष के समानान्तर (ST) मे चलती है। नतोदर-लैंस पर आपतित किरण (PQ), मुख्य-नाभि (F) पर केन्द्रित होती हुई मालूम पडती है। इसलिये लैंस मे से बाहर निकलने पर इसकी दिशा भी मुख्य-अक्ष के समानान्तर (QR) होगी।

ऊपर बतलाये गये तीन नियमो मे से किन्ही दो की सहायता से किरणो का मार्ग बनाकर, जिस बिंदु पर, एक ही बिंदु से चलने वाली, आपतित किरणें, आवर्त्तन के बाद, मिल जावे, वह बिंदु, उस बिंदु की प्रतिमूर्त्ति कहलाती है। वस्तु के दूसरे बिंदुओ से भी इसी तरह किरणें खीचकर, वस्तु की पूरी प्रतिमूर्त्ति बनाई जा सकती है।

57 रेखागणित विधि से प्रतिमूर्त्ति रचना (Geometrical Method of finding Image, corresponding to an Object)—

(क) नतोदर (अवतल) (Concave Lens) लैंस—चित्र 113 मे एक नतोदर-लैंस दिखलाया गया है। 'O' इसका 'मध्य-बिंदु' (FF_2) मुख्य-अक्ष; बिंदु F_2 'द्वितीय मुख्य-नाभि' और 'PQ' एक वस्तु (object) है। वस्तु के बिंदु P से एक किरण, लैंस के मध्य-बिंदु मे से होकर खीची गई है। यह इसी दिशा मे लैंस मे से बाहर निकलेगी। इसी बिंदु (P) से एक दूसरी रेखा PR मुख्य-अक्ष के समानान्तर खीची गई है। इसलिये



चित्र 113

निर्गत (emergent) किरण की दिशा (RS) होगी, जबकि यह रेखा पीछे की ओर बढाई जाने पर मुख्य-अक्ष को लैंस की द्वितीय मुख्य-नाभि 'F_2' पर काटेगी। इस तरह वस्तु के एक ही बिंदु 'P' से चलने वाली किरणें, आवर्त्तन के बाद, बिंदु, 'P' पर मिलती हुई लगेंगी। इसलिये बिंदु (p), 'P' की प्रतिमूर्त्ति हुआ, और 'q', Q की। दूसरे शब्दों मे नतोदर-लैंस द्वारा वस्तु (PQ) की प्रतिमूर्त्ति (pq), काल्पनिक, सीधी (erect) और वस्तु से छोटी (diminished) बनती है।

मान लो $(OQ)=u$, $(Oq)=v$ और $(QF_2)=f$

क्योंकि त्रिभुज (OPQ) और (Opq) समान (similar) है, इसलिये—

$$\frac{PQ}{qp}=\frac{OQ}{Oq}=\frac{v}{u}$$

साथ ही त्रिभुज (RF_2O) और (pF_2q) समान है, इसलिये

$$\frac{RO}{pq}=\frac{OF_2}{qF_2}=\frac{f}{f-v}$$

लेकिन क्योंकि $RO=PQ$, $\quad \frac{PQ}{pq}=\frac{u}{v}=\frac{f}{f-v}$

$\therefore \quad uf-uv=vf$ या $-vf+uf=u.v$

($u.v\,f.$) से भाग देने पर—

$$\left(\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}\right) \qquad \ldots (57{\cdot}1)$$

क्योंकि नतोदर-लैंस के लिये, u, v और f सभी (+) होते है, इसलिये ऊपर वाले लैंस-सूत्र का रूप नही बदलता।

(ख) **उन्नतोदर (उत्तल) लैंस (Convex Lens)**—

(1) जबकि वस्तु, लैंस की नाभि और 'मध्य-बिंदु' के बीच रखी हो (Object within the focal-length of the lens)—यह स्थिति चित्र 114 मे दिखलाई गई। 'O' बिंदु लैंस का 'मध्य-बिंदु' है, (F_1,F_2) इसकी मुख्य-नाभियाँ है, रेखा (F_1OF_2) मुख्य-अक्ष है और (PQ) वस्तु, नाभि F_1 और मध्य-बिंदु 'O' के बीच रखी है। वस्तु के बिंदु 'P' से एक किरण, (PR), मुख्य-अक्ष के समानान्तर, लैंस पर आकर पड रही है। इसलिये आवर्त्तन के बाद यह लैंस की 'द्वितीय मुख्य-नाभि' F_2 पर से जावेगी। उसी बिंदु (P) से एक दूसरी किरण 'PO', लैंस के 'मध्य-बिंदु O पर से होकर जा रही है। इसलिये यह, लैंस मे से इसी दिशा मे बाहर निकलेगी। दोनो निर्गत-किरणें (RS) और (OT), बिंदु (p) पर मिलती हुई मालूम पडेगी। अर्थात् बिंदु 'p', P की प्रतिमूर्त्ति हुई। और 'q', Q की। दूसरे शब्दो मे इसलिये इस स्थिति मे बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, काल्पनिक, सीधी और बढी हुई (magnified) बनती है।

मानलो $OQ=u$; $Oq=v$ और $OF_2=f$

क्योंकि त्रिभुज (OPQ) और (Opq) समान हैं, इसलिए

$$\frac{PQ}{pq}=\frac{OQ}{Oq}=\frac{u}{v}$$

साथ ही क्योकि त्रिभुज (RF_2O) और (pF_2q) समान हैं, इसलिए

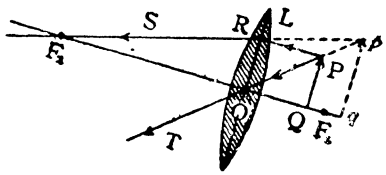
$$\frac{RO}{pq}=\frac{OF_2}{qF_2}=\frac{OF_2}{Oq+OF_2}$$

परन्तु RO=PQ, इसलिए $\frac{u}{v}=\frac{f}{f+v}$; या $uv+uf=uf$

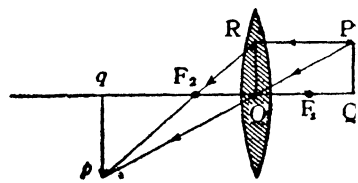
$uv.f$ से भाग देने पर–

$$(-)\ \frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \quad \ldots \quad (57{\cdot}2)$$

उन्नतोदर लैस के लिए नाभ्यन्तर f, (—) होता है। इस चिन्ह को ऊपर वाले सूत्र मे लगाने से (57·1) वाला सूत्र ही प्राप्त हो जाता है।



चित्र 115



चित्र 115

(ii) जबकि वस्तु नाभ्यन्तर से अधिक दूरी पर रखी हो (object beyond the focal-length of the Lens)- यह स्थिति चित्र 115 मे दिखलाई गई है। पहले की तरह ही वस्तु (PQ) के बिदु P से एक किरण (PR), मुख्य-अक्ष के समानान्तर लैस पर पड रही है। इसलिए आवर्तन के बाद यह लैस की द्वितीय मुख्य-नाभि (F_2) पर से होती हुई जावेगी। इसी बिंदु P से एक दूसरी किरण (PO), लैस के 'मध्य-बिदु' (O) पर से होकर जाती है और इसी दिशा मे आगे बढ जाती है। इस तरह, वस्तु की उल्टी (inverted) लेकिन वास्तविक (real) प्रतिमूर्त्ति (pq) बनती है। पहले की तरह ही—

$$\frac{PQ}{pq}=\frac{OQ}{Oq} \text{ और } \frac{RO}{pq}=\frac{OF_2}{qF_2}=\frac{OF_2}{Oq-OF_2}$$

मानलो, $OQ=u$; $Oq=v$ और $OF_2=f$, क्योकि RO=PQ,

$$\therefore \frac{u}{v}=\frac{f}{v-f} \text{ या } uv-uf=vf$$

$u.v.f$ से भाग देने पर—

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \quad \ldots \quad \ldots \quad (57\ 3)$$

क्योकि उन्नतोदर लैस के लिए नाभ्यन्तर f, (—) होता है। साथ ही इस स्थिति मे प्रतिमूर्त्ति अन्तर (v) का भी चिन्ह (—) होगा, क्योकि यह लैस के दूसरी ओर बन रही है। इन दोनो चिन्हो को ऊपर वाले सूत्र मे लगाने पर, (57·1) वाला सूत्र ही प्राप्त हो जावेगा। इसलिए

"उन्नततोदर-लैंस द्वारा बनने वाली सभी तरह की प्रतिमूर्त्तियों के लिए, लागू होने वाला सूत्र (formula), $\left(\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}\right)$ होता है . (57·4)

अनुबद्ध-नाभियाँ (Conjugate Focii)—ऊपर के वर्णन से साफ जाहिर है कि लैंस किसी भी तरह का क्यो न हो, उसके सामने वस्तु रख देने पर, प्रतिमूर्त्ति (image) जरूर बनती है। क्योकि प्रकाश-किरणो का मार्ग 'उत्क्रमणीय' (reversible) होता है, इसलिए अगर जिस जगह पर प्रतिमूर्त्ति बनती है, वहाँ पर लाकर 'वस्तु' (object) को रख दे, तो इस नई स्थिति मे वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, उस स्थान पर बनेगी, जहाँ पर कि पहले वस्तु रखी थी। दूसरे शब्दो मे, 'वस्तु' और उसकी 'प्रतिमूर्त्ति' की स्थितियो को आपस मे अदला-बदला (inter-changeable) जा सकता है। इन दोनो स्थितियों को ही "अनुबद्ध-बिंदु" कहते है।

चिन्ह लगाने की नवीन रीति (New Convention of Signs)—इस पुस्तक मे प्रकाशसम्बन्धी मापो के लिए यह नियम माने गए है—

(i) वस्तु अन्तर (u), नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर, गोलीय-दर्पणो द्वारा बनने वाली वास्तविक प्रतिमूर्त्तियो की दूरियाँ, इन सबको (+) माना जावेगा। उन्नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर, और दर्पणो द्वारा बनाने वाली काल्पनिक प्रतिमूर्त्तियो की दूरी, (—) ली जावेंगी।

(ii) लैंसो द्वारा आवर्त्तन होने पर भी वस्तु अन्तर (u), नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर, और काल्पनिक प्रतिमूर्त्तियो की दूरी (—) ली जावेगी।

(iii) 1934 मे "कमेटी ऑफ फिजीकल सोसाइटी" द्वारा बनाये गए नियम के अनुसार प्रकाश-किरणो द्वारा वास्तव मे चली गई दूरियाँ, (+) मानी जावेगी चाहे यह किरणे किसी वस्तु से आ रही हो, या किसी वास्तविक प्रतिमूर्त्ति को जा रही हो। काल्पनिक वस्तु या प्रतिमूर्त्ति से आने या जाने वाली प्रकाश-किरणो की दूरियाँ (—) होगी।

58. लैंस मे से आवर्त्तन (Refraction through a Lens)—लैंस सूत्र का सीधा गणन (direct deduction of the Lens Formula)—

चित्र 116 मे एक उन्नत-नतोदर-दर्पण और चित्र 117 मे एक द्वि-उन्नतोदर-लैंस दिखलाए गए हैं। मान लो इनके काँच का वर्त्तनाक (μ) है, और दूसरे गोलीय तलो के वक्रता-व्यासार्द्ध क्रमशः r_1 और r_2 है और मुख्य अक्ष पर स्थित बिंदु P से प्रकाश-किरणे, लैंस की ओर चल रही है।

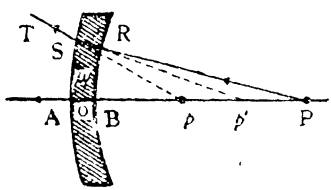
बिंदु (P) से चलने वाली किरण (PR), लैंस के पहले तल पर पडती है लैंस मे से इसका मार्ग (RS) होगा। अगर (RS) रेखा को पीछे की ओर बढाया जावे, तो यह मुख्य-अक्ष को, बिंदु (p') पर काटेगी ; इस तल पर, लैंस के पहले तल द्वारा (P) की प्रतिमूर्त्ति (p') बनती है। मानलो बिंदु (P) और उसकी पहली प्रतिमूर्त्ति (p') की दूरियाँ क्रमश. u और v_1 है, तो सूत्र (52·2) से

$$\frac{\mu}{v_1}-\frac{1}{u}=\frac{\mu-1}{r_1} \quad . \quad (1)$$

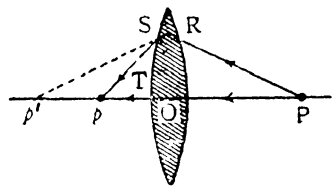
RS किरण, जब लैंस के दूसरे तल पर पडती है तो आवर्त्तित होकर (ST) दिशा मे आगे बढती है। निर्गत-किरण (emergent ray) (ST को पीछे की ओर बढाने पर, यह मुख्य अक्ष को बिंदु (P) पर काटेगी। इस तरह वस्तु (P) की अन्तिम प्रतिमूर्त्ति (p) बनती है। इस 'प्रतिमूर्त्ति' की वस्तु काल्पनिक है। अगर लैंस की मोटाई (t) है, तो (p') की 'A' से दूरी (v_1+t) होगी। मान लो कि अन्तिम प्रतिमूर्ति (p) की (A) से दूरी ( ) है जब प्रकाश-किरणे लैंस मे से बाहर हवा में जाती है, तो वर्त्तनांक ($1/\mu$) हो जाता है। इसलिए—

$$\left(\frac{1/\mu}{\mu/v}\right)=\left(\frac{1}{v_1+t}\right)1-1\left(\frac{1/\mu-1}{r_2}\right)$$

या $$\frac{1}{v}-\frac{\mu}{v_1+f}=\frac{1-1}{r_2} \qquad \ldots(ii)$$



चित्र 116



चित्र 117

लैंस के बहुत पतला होने पर, 't' को नगण्य (negligible) मानकर छोड़ा जा सकता है। तब समीकरण (equation) (i) और (ii) को जोडने पर

$$\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=(\mu-1)\left(\frac{1}{r_1}-\frac{1}{r_2}\right) \qquad \ldots(58\cdot1)$$

उन्नतोदर लैंस के लिए यही सूत्र, इसी ढग से प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिये चित्र 117 देखना चाहिए।

ऊपर वाले सूत्र (58·1) की कुछ विशेष अवस्थाये भी है। जब वस्तु लैंस से दूरी पर रखी हो (अर्थात् $v=\infty$) तो इसकी प्रतिमूर्त्ति, लैंस की 'द्वितीय मुख्य नाभि' (F_2) पर बनेगी (अर्थात् $v=f$)। इन दोनो मानो (Values) को, सूत्र (58·1) में लगाने पर

$$\frac{1}{f}=(\mu-1)\left(\frac{1}{r_1}-\frac{1}{r_2}\right) \qquad \ldots(58\cdot2)$$

समीकरण (i) और (ii) से—

$$\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \qquad \ldots(58\cdot3)$$

द्वि-उन्नतोदर-लैंस के लिये r_1 (−) और (r_2) (+) होता है।

$$\frac{1}{f}=\mu-(-1)\left(\frac{1}{r_1}+\frac{1}{r_2}\right) \qquad \ldots(58\cdot4)$$

यानी उन्नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर (—) होता है। इसी तरह द्वि-नतोदर लैंस के लिये, r_1 (+) और r_2 (—) होता है।

$$\therefore \quad \frac{1}{f}=(\mu-1)\left(\frac{1}{r_1}+\frac{1}{r_2}\right) \qquad ..(58{\cdot}5)$$

अर्थात् इस लैंस का नाभ्यन्तर (f) होता है।

आंकिक उदाहरण

1. एक द्वि-उन्नतोदर लैंस के दोनों तलों की त्रिज्यायें क्रमश. 18 और 24 सें० मी० है और इसका नाभ्यन्तर 20 सें० मी० है। लैंस के काँच का वर्त्तनांक मालूम करो। (राजपूताना *1952*)

(The faces of a double convex lens have radii of 18 cm. and 24 cm. respectively and its focal length is 20 cm. Find the refractive index of the material of the lens.) (*Raj. U. 1952*)

उत्तर—सूत्र (58·2) से, उन्नतोदर लैंस के लिये—

$$\left(\frac{1}{f}\right)=(\mu-1)\left(\frac{1}{r_1}-\frac{1}{r_2}\right)$$

प्रश्न के अनुसार, $r_1=18$ सें० मी०; $r_2=24$ सें० मी० और $f=(-20$ सें० मी०)

$$\therefore -\left(\frac{1}{20}\right)=-(\mu-1)\left(\frac{1}{18}+\frac{1}{24}\right)$$

या $\mu=\mathbf{1{\cdot}514}$

2. सिद्ध करो कि सम-नतोदर या सम-उन्नतोदर लैंस की त्रिज्या, उसके नाभ्यन्तर के बराबर होती है, जबकि लैंस के माध्यम का वर्त्तनांक 1·5 हो।

(Show that the radius of curvature of an equi-concave or equi-convex lens is equal to its focal length, if the refractive index of the material of the lens be 1·5.)

उत्तर—सम-उन्नतोदर लैंस के लिये—

$$-\frac{1}{f}=-(\mu-1)\left(\frac{1}{r}+\frac{1}{r}\right) \;;\; -(1{\cdot}5-1)\left(\frac{2}{r}\right)=-\frac{1}{r}$$

अतः $f=r$

इसी तरह सम-नतोदर-लैंस के लिये—

$$\frac{1}{f}=(\mu-1)\left(\frac{1}{r}+\frac{1}{r}\right)=(1{\cdot}5-1)\left(\frac{2}{r}\right)=\frac{1}{r}$$

$\therefore \quad f=r$

59. रैखिक अभिवर्धन (Linear Magnification)—'वस्तु' और उसकी प्रतिमूर्त्ति के आकारों की तुलना, उसका 'रैखिक अभिवर्धन' कहलाता है। चित्र 114 और 115 में—

रैखिक-अभिवर्धन $(m)=\frac{pq}{PQ}=\frac{Oq}{OQ}=\frac{v}{u}$

है। स्पष्ट है कि इस स्थिति मे बनने वाली प्रतिमूर्त्ति लैंस के इसी ओर सीधी, काल्पनिक और बढ़ी हुई बनती है।

(ख) **नतोदर-लैंस (Concave Lens)**—चित्र 113 मे नतोदर-लैंस की मुख्य-अक्ष पर, वस्तु PQ कहीं पर भी रखी है। इसकी प्रतिमूर्त्ति (pq), हमेशा काल्पनिक, सीधी, छोटी और लैंस के इसी ओर बनती है। जैसे-जैसे वस्तु, लैंस के पास आती जाती है, वैसे-वैसे ही प्रतिमूर्त्ति का आकार थोडा-थोडा बढता जाता है।

नीचे दी गई तालिका (table) मे उन्नतोदर-लैंस के सामने रखी वस्तु और उसकी सगत (corresponding) प्रतिमूर्त्तियो की स्थितियाँ और प्रकार बतलाए गए है।

उन्नतोदर-लैंस (Convex Lens)

क्रमांक	वस्तु की स्थिति	चित्र सख्या	प्रतिमूर्त्ति की स्थिति	प्रतिमूर्त्ति का प्रकार
1	अनन्त दूरी पर	118	मुख्य-नाभि पर	वास्तविक, उल्टी और छोटी
2	$2f$ से अधिक दूरी पर	115	f और $2f$ के बीच में	वास्तविक, उल्टी और छोटी
3	$2f$ पर	119	$2f$ पर	वास्तविक, उल्टी और बराबर
4	f और $2f$ के बीच	120	$2f$ से परे	वास्तविक, उल्टी और बढी हुई
5	f पर	121	अनन्त दूरी पर	वास्तविक, उल्टी और बहुत अधिक बढी
6	मध्य बिदु और f के बीच	114	लैंस के इसी ओर	काल्पनिक, सीधी और बढी हुई

61. लैंस-शक्ति (Power of a Lens)—'लैंस-शक्ति' से यह पता लगता है कि वह लैंस आपतित-किरणो को कितना ससृत (converge) या अपसृत (diverge) कर सकता है। 'नाभ्यन्तर' का विलोम (reciprocal), लैंस-शक्ति होती है। एक मीटर नाभ्यन्तर वाले लैंस की शक्ति, इकाई 'डाइ-ओप्टर' (Dioptre) कहलाती है। चश्मे वाले (opticians), नतोदर-लैंस की शक्ति को (—) और, उन्नतोदर-लैंस की शक्ति को (+) मानते है। इसलिए लैंस के नाभ्यन्तर को मीटरों मे बदलकर, उसका विलोम चिन्ह उल्टा करके, उस लैंस की 'शक्ति' 'डाइ-ओप्टर' मे मालूम हो जाती है। उदाहरण के लिए 25 सै० मी० नाभ्यन्तर वाले उन्नतोदर-लैंस की शक्ति $\left(+\frac{100}{25}\right)=(+4\text{D})$ होगी, जबकि (-5D) वाले लैंस का नाभ्यन्तर $\left(+\frac{100}{5}=20\right.$ सै० मी०—नतोदर[3]$\left.\right)$ होगा।

आंकिक उदाहरण

1. एक उन्नतोदर-लैंस द्वारा, 5 सै० मी० लम्बी और 40 सै० मी० की दूरी पर रखी हुई वस्तु की प्रतिमूर्त्ति 1 सै० मी० लम्बी बन रही है। लैंस का नाभ्यन्तर कितना है? (मद्रास *1951*)

(An image of length 1 cm. is formed by a convex lens, when an object of length 5 cms., is placed at a distance of 40 cms. from it. Calculate the focal length of the lens) (*Madras 1951*)

उत्तर—अभिवर्धन $=\frac{v}{u}=\frac{1}{5}$; $\therefore u=5v$; क्योंकि $u=40$ सें० मी० ; अतः $v=8$ सें० मी०

परन्तु उन्नतोदर-लेंस द्वारा काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति बनने पर, अभिवर्धन इकाई से कम नहीं हो सकता, इसलिए इस प्रश्न मे बनने वाली प्रतिमूर्त्ति, वास्तविक ही है। अत

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \text{ या } \frac{1}{8}+\frac{1}{40}=\frac{1}{f} \text{ , अत. } f=6\tfrac{2}{3} \text{ सें० मी०}$$

2. उन्नतोदर-लेंस के सामने रखी वस्तु की 5 गुनी प्रतिमूर्त्ति बन रही है। जब वस्तु को लेंस से 3 सें० मी० दूर हटा लेते है, तो नयी प्रतिमूर्त्ति सिर्फ 2 गुनी बडी बनती है। लेंस का नाभ्यन्तर और वस्तु की पहली स्थिति मालूम करो। (नागपुर *1953*)

(A convex-lens gives a real image 5 times as large as a small object, when the latter is at a certain distance from the lens. When the object is moved 3 cms. farther from the lens, the magnification is only 2 times. Find the focal-length of the lens, and the original position of the object) (*Nag. 1953*)

उत्तर—मान लो पहली स्थिति मे वस्तु-अन्तर $=u$, प्रतिमूर्त्ति-अन्तर $=v$, तो उन्नतोदर-लेंस द्वारा वास्तविक-प्रतिमूर्त्ति के लिए—

$$\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \text{ और } \frac{v}{u}=5 \text{ या } v=5u$$

$$\therefore \quad \frac{1}{5u}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f} \quad \ldots \qquad (1)$$

दूसरी स्थिति मे, वस्तु-अन्तर $=(u+3)$ और प्रतिमूर्त्ति-अन्तर $=v_1$ (मानलो)। तो—

$$\frac{1}{v_1}+\frac{1}{u+3}=\frac{1}{f} \text{ और } \left(\frac{v_1}{u+3}\right)=2 \text{ या } (v_1=2u+6)$$

अत $\quad \frac{1}{2u+6}+\frac{1}{u+3}=\frac{1}{f} \ldots \qquad (2)$

इसलिए, $\quad \frac{1}{5u}+\frac{1}{u}=\frac{1}{2u+6}+\frac{1}{u+3}$

या $\quad \frac{6}{5u}=\frac{3}{2u+6}$; अत. $u=$ **12 सें० मी०**

ऊपर वाले समीकरण (1) से—

$$\frac{1}{5u}+\frac{1}{u}=\frac{6}{5u}=\frac{1}{10}=\frac{1}{f} \text{ ; अतः } f=\textbf{10 सें० मी०}$$

3. उन्नतोदर-लैंस के सामने, 12 सैं० मी० पर वस्तु को रखने से, उसकी 3 गुना प्रतिमूर्त्ति बनती है। अगर 4 गुना प्रतिमूर्त्ति बनानी हो, तो वस्तु को कितना हटाना पड़ेगा ? (दिल्ली *1952*)

(A real image of an object, magnified 3 times, is formed when the object is placed at a distance of 12 cms., from the convex lens. If it is required to get an image magnified 4 times how should the object be shifted ? (*Delhi U. 1952*)

उत्तर—वास्तविक प्रतिमूर्त्ति के लिए उन्नतोदर-लैंस-सूत्र $=\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f}$

और $m=\frac{v}{u}$

पहली स्थिति मे, $m=\frac{v}{u}=3=\frac{v}{13}$; अत. $v=36$ सैं० मी०

$\therefore \quad \frac{1}{36}+\frac{1}{12}=\frac{1}{f}$; इसलिये $f=9$ सैं० मी०

दूसरी स्थिति मे, मान लो वस्तु अंतर $=(u_1)$ और प्रतिमूर्त्ति-अंतर $=(v_1)$, तो

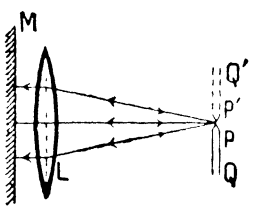
$$m=\frac{v_1}{u}=4 \text{ ; या } v_1=4u_1$$

साथ ही, $\frac{1}{v_1}+\frac{1}{u_1}=\frac{1}{f}$; या $\frac{1}{4u_1}+\frac{1}{u_1}=\frac{1}{9}$; अत. $u_1=11{\cdot}25$ सैं० मी०

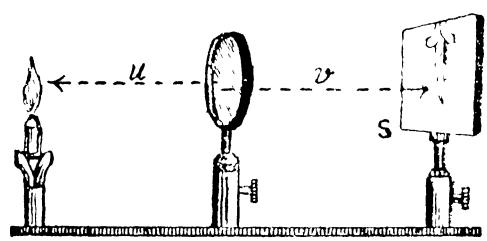
इसलिये **वस्तु को $(12-11{\cdot}25)=0{\cdot}75$ सैं० मी०, लैंस की ओर हटाना होगा।**

62. उन्नतोदर (उत्तल) लैंस का नाभ्यन्तर निकालना

(1) समतल-दर्पण विधि (Plane Mirror Method)—चित्र 122 मे वस्तु-पिन (PQ) के सामने, नाभ्यन्तर ( ) के बराबर दूरी पर, प्रायोगिक-लैंस (L)



चित्र 122



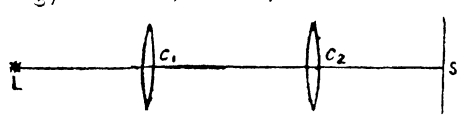
चित्र 123

रखा हुआ है। लैंस के पास ही एक समतल-दर्पण (M) इस तरह रखा है कि इसका चमकीला तल लैंस की ओर रहे। इस तरह रखने पर नाभि पर वस्तु रखी होने से, लैंस मे से बाहर निकलने वाली किरणे परस्पर समानान्तर होगी। जब यह

समानान्तर किरणें, उनके समकोणिक रखे समतल-दर्पण (M) पर पड़ेंगी, तो परावर्त्तित होकर वापस इसी मार्ग पर लौट आवेंगी और वस्तु की उल्टी प्रतिमूर्त्ति, (P^1Q^1) उसी स्थान पर बनने लगेगी। इसलिये वस्तु-पिन को आगे-पीछे करके वस्तु-पिन और उसकी ही उल्टी प्रतिमूर्त्ति के बीच लम्बान (भेदाभास) (parallax) दूर करने पर, पिन और लैंस के बीच की दूरी, लैंस का नाभ्यन्तर होगी। विशेष विवरण के लिये "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक-विज्ञान" ले० ज्योतिर्मय चटर्जी देखिये।

(2) U—V (या दो पिन वाली) विधि (U—V Method)—दिये हुए उन्नतोदर-लैंस को स्टैंड मे सीधा खड़ा लगा दो। एक मोमबत्ती या पिन, इसके एक ओर रख दो। इसकी उल्टी प्रतिमूर्त्ति, लैंस के दूसरी ओर बनेगी। इसलिए लैंस के दूसरी ओर एक दूसरा पिन (या खुरदरे काँच की प्लेट) रखकर, पहले पिन की उल्टी प्रतिमूर्त्ति और दूसरे पिन के बीच लम्बान दूर कर लो। ठीक अनुकूलन हो जाने पर, यह दोनो आँख के साथ-साथ चलते हुए दिखलाई देगे। तब दूसरा पिन पहले पिन की प्रतिमूर्त्ति की स्थिति बतलावेगा। इस तरह लैंस से पहले पिन की दूरी u और दूसरे पिन की दूरी v होगी। यह एक माप मे $u-v$ का एक जोडा हुआ। वस्तु-पिन को थोडा आगे-पीछे करके, ऐसे-ऐसे कई जोडे, मापो के प्राप्त हो जावेगे। तब रएक जोडे (pair) के लिये सूत्र $\left(\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f}\right)$ में u और v की मापो का मान लगाकर का गणन करो। (अधिक विस्तार के लिए "माध्यमिक प्रायोगिक भौतिक विज्ञान" ले० चटर्जी देखिये)

(3) स्थानान्तर-विधि (Displacement Method)—एक पिन (या पर्दे) और एक दूसरे पिन (या प्रकाशमान वस्तु) के बीच मे, अगर एक उचित नाभ्यन्तर वाला उन्नतोदर-लैंस रख दिया जावे, तो इसको इधर-उधर हटाने से, ऐसी दो स्थितियाँ आती है, जिनमे कि वस्तु की स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति बनती है। ध्यान देने की बात यह है कि इस विधि मे वस्तु और पर्दा अपने-अपने स्थानों पर स्थिर रहते है, सिर्फ लैंस ही को इन दोनों के बीच आगे-पीछे करते है। साथ ही वस्तु और पर्दे (या दोनों पिनों) के बीच की दूरी, लैंस के नाभ्यन्तर के चार गुने से अधिक होनी चाहिये।



चित्र 124

मान लो लैंस की दो स्थितियो के बीच की दूरी (x) है और दोनों पिनो के बीच की दूरी D है तो लैंस के नाभ्यन्तर f का गणन इस सूत्र से किया जाता है।

$$\left(f=\frac{D^2-x^2}{4D}\right)$$

प्रमाण (Proof)— यदि वस्तु-अन्तर $=u$ तो प्रतिमूर्त्ति अन्तर $(v)=(D-4)$

क्योंकि प्रतिमूर्त्ति वास्तविक है, अतः $\left(\frac{1}{u}+\frac{1}{D-u}\right)=\frac{1}{f}$

$\therefore u^2-u.\ D+D\,f=0$

इस 'द्विघातिक' (quadriatic) समीकरण के हल से u के दो मान u_1, u_2 मिलते है। लैंस की दो स्थितियाँ है। अर्थात्

$$u_1=\frac{D+\sqrt{D^2-4Df}}{2} \quad \text{और} \quad u^2=\frac{D-\sqrt{D^2-4Df}}{2} \ldots(62{\cdot}1)$$

$$\therefore\ x=(u_1-u_2)=\sqrt{D^2-4Df};\ \text{अतः}=f=\frac{D^2-x^2}{4D} \quad \ldots(62{\cdot}2)$$

जब दोनो स्थितियाँ मिल जाती है, तो $x=0$; अतः $f=D/4$; यानी $D=4f$। यही कारण है कि इस प्रयोग के लिए दोनों पिनो के बीच की दूरी लैंस के नाभ्यन्तर के चार गुने से अधिक होना जरूरी है।

स्थानान्तर विधि में अभिवर्द्धन (Magnification in the Displacement method)—मान लो कि वस्तु की रैखिक (linear) लम्बाई I_o है। लैंस की पहली स्थिति मे प्रतिमूर्त्ति की लम्बाई I_1 है, जब कि वस्तु-अन्तर u_1 और प्रतिमूर्ति-अन्तर $(D-u_1)$ है।

$$\therefore \qquad m_1=\frac{I_1}{I_o}=\frac{D-u_1}{u_2} \qquad \ldots(क)$$

लैंस की दूसरी स्थिति मे, मान लो प्रतिमूर्त्ति की लम्बाई I_2 हो जाती है। इस स्थिति मे वस्तु अन्तर ( ) होता है और प्रतिमूर्त्ति अन्तर $(D-u_2)$

$$\therefore\ m_2=\frac{I_2}{I_o}=\frac{D-u_2}{u_2} \qquad \ldots(ख)$$

ऊपर वाले दोनो समीकरणो (क) (ख) को गुणा करने पर

$$\frac{I_1 I_2}{I_o^2}=\frac{(D-u_1)(D-u_2)}{u_1.\ u_2}$$

क्योकि $(u_1+u)=D$; इसलिये $(D-u_1)(D-u_2)=u_2\ u_1$

$$\therefore\ I_1.\ I_2=I_o^2 \qquad \ldots(62{\cdot}3)$$

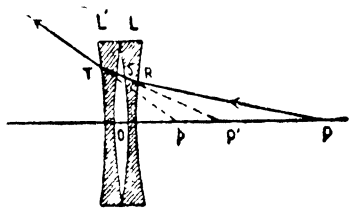
उदाहरण के लिए मान लो किसी प्रयोग मे $x=40$ सैं० मी०; $I_1=0{\cdot}66$ और $I_2=1{\cdot}57$ सैं० मी०, और $D=100$ सैं० मी०, तो सूत्र (62 2) से

$$f=\frac{100^2-40^2}{4\times 100}=21 \text{ सैं० मी०}$$

साथ ही सूत्र (63 3) मे—

$(0{\cdot}66\times 1{\cdot}51)=I_o^2$; इसलिए $I_o=1$ सैं० मी० (लगभग)

63. पतले लैंसो को आपस में छूते हुए रखने का प्रभाव (Thin Lenses in Contact)—चित्र 125 मे दो पतले लस (L, L') आपस मे सटाकर रखे दिखलाए गए है। इनके नाभ्यन्तर क्रमशः $f_1 f_2$ हैं। पहले लैंस (L) द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति (p') दूसरे लैंस (L') के लिये 'वस्तु' जैसा काम करने लगती है, और अन्तिम प्रतिमूर्त्ति (P) बन जाती है। मान लो पहले लैंस के लिये, वस्तु-अन्तर $(PO)=\mu$; और प्रतिमूर्त्ति-अन्तर



चित्र 125

$(v_1) = (OP')$ इसका लैंस (L) का नाभ्यन्तर (f_1) है। तो—

$$\frac{1}{v_1} - \frac{1}{u} = \frac{1}{f_1} \qquad \ldots (63{\cdot}1)$$

अब (p'), दूसरे लैंस (L) के लिये, 'काल्पनिक वस्तु' जैसा कार्य करेगी। लैंस का नाभ्यन्तर (f_2) है, वस्तु-अंतर $= OP' = v_1$ और प्रतिमूर्त्ति-अंतर $(= OP = v)$ तो लैंस-सूत्र से—

$$\frac{1}{v} - \frac{1}{v} = \frac{1}{f_2} \qquad \ldots (63{\cdot}2)$$

समीकरण (1) और (2) को जोड़ने से—

$$\frac{1}{v} - \frac{1}{u} = \frac{1}{f_1} + \frac{1}{f_2} \qquad \ldots (63\ 3)$$

अब अगर इन दोनों लैंसों की जगह पर एक ऐसा अकेला (single) लैंस रख दें, जोकि वस्तु (P) की प्रतिमूर्त्ति (p) पर बनावे तो इस अकेले लैंस को इन दोनों के समतुल्य (equivalent) कहते हैं। इस समतुल्य-लैंस का नाभ्यन्तर (F) है तो—

$$\frac{1}{v} - \frac{1}{u} = \frac{1}{F} \quad \cdots (63{\cdot}4) \quad \text{या} \quad \frac{1}{F} = \left(\frac{1}{f_1} + \frac{1}{f_2}\right) \cdots (63{\cdot}5)$$

आंकिक उदाहरण

1. एक उन्नतोदर-लैंस (नाभ्यन्तर = 50 सैं० मी०) द्वारा, सूर्य की, 2 मीटर की दूरी पर वास्तविक प्रतिमूर्त्ति बनाई जानी है। इस लैंस के साथ किस तरह का और कितने नाभ्यन्तर वाला लैंस सटाकर रखना होगा ?

(It is proposed to project the real image of the Sun at a distance of 2 metres from a convex lens of focal length 50 cm. Find the nature and focal length of a lens which being placed in contact with the convex lens would be able to fulfil the condition.)

उत्तर—मान लो $f_1 = -50$ सैं० मी०, f_2 = आवश्यक लैंस का नाभ्यन्तर सयुक्त-लैंस का नाभ्यन्तर, मानलो (F) है। प्रश्न के अनुसार इसका मान (—200) सैं० मी० और यह उन्नतोदर होना चाहिए, तभी इससे वास्तविक प्रतिमूर्त्ति बनेगी।

$$\text{परन्तु} \quad \frac{1}{F} = \frac{1}{f_1} + \frac{1}{f_2} \quad \text{या} \quad -\frac{1}{200} = -\frac{1}{50} + \frac{1}{f_2}$$

$$\text{या} \quad \frac{1}{f_2} = \frac{1}{50} - \frac{1}{200}, \quad \text{अतः} \quad f_2 = 66{\cdot}66 \text{ सैं० मी० (नतोदर)}$$

2. एक नतोदर-लैंस (नाभ्यन्तर = 25 सैं० मी०) के साथ कैसा और कितने नाभ्यन्तर वाला लैंस सटाकर रखें कि इस सयोग से 25 सैं० मी० की दूरी पर रखी वस्तु की 3 गुनी वास्तविक प्रतिमूर्त्ति बने ? (पंजाब *1953*)

(Find the nature and focal length of a lens which must be placed in contact with a concave lens of focal length 25 cm. in

order that the lens combination may produce a real image three times the size of the object placed 25 cm. from the combination.) *(E.P.U. 1953)*

उत्तर—संयुक्त-लैंस के लिये, वस्तु-अंतर $(u) = 25$ सै० मी०

रैखिक अभिवर्धन $(m) = 3$

मान लो प्रतिमूर्त्ति-अंतर $= v$

$$\therefore \quad 3 = \frac{v}{25} \; ; \text{ अतः } u = 75 \text{ सै० मी०}$$

वास्तविक प्रतिमूर्त्ति के संयुक्त-लैंस उन्नतोदर होना चाहिए, और यह प्रतिमूर्त्ति, लैंस के (—) दिशा में बननी चाहिये। तब लैंस-सूत्र से—

$$\frac{1}{75} + \frac{1}{25} = \frac{1}{F} \; ; \text{ अतः } F = \frac{75}{4} = 18{\cdot}75 \text{ सै० मी०}$$

मान लो आवश्यक लैंस का नाभ्यन्तर f है। तो

$$\frac{1}{f} + \frac{1}{25} = -\frac{1}{F} = -\frac{4}{75}$$

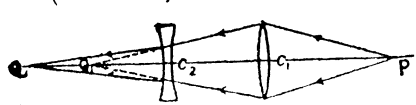
$$\text{या } \frac{1}{f} = -\frac{1}{25} - \frac{4}{75} \; ; \text{ या } f = -\frac{75}{7} = -10{\cdot}71 \text{ सै० मी० (उन्नतोदर)}$$

64. नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर मालूम करना—क्योंकि नतोदर-लैंस से, वस्तु की हमेशा काल्पनिक प्रतिमूर्त्ति बनती है, इसलिये ऐसे लैंस का नाभ्यन्तर, दूसरे लैंस या अन्य साधन की सहायता से मालूम किया जाता है।

(1) उन्नतोदर-लैंस के साथ मिलाकर (Combination method)—नतोदर-लैंस के साथ, एक दूसरा ज्ञात और उचित नाभ्यन्तर (f_1) वाला उन्नतोदर लैंस मिलाकर, एक उन्नतोदर प्रकार का संयुक्त लैंस बना लेते हैं। मान लो इस संयुक्त-लैंस का नाभ्यन्तर F है। तब सूत्र (63·5) से f_2 का गणन कर लेते हैं। व्यवहारतः F और ( ) दोनों ही (—) उन्नतोदर होते हैं।

अतः नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर $(f_2) = \dfrac{f_1 F}{F - f_1}$ (64·1)

(2) उन्नतोदर-लैंस से कुछ दूरी पर रखकर—जब दिये हुए उन्नतोदर-लैंस की 'शक्ति' (पावर) अधिक नहीं होती तो इस विधि को काम में लाते हैं। पहले वस्तु 'P' (चित्र 126) की साफ और उल्टी प्रतिमूर्त्ति, Q_1, उन्नतोदर-लैंस (C_1) द्वारा बनाते हैं। अब 'वस्तु' और 'लैंस' को स्थिर रखते हुए, दिये हुए नतोदर-लैंस (C_2) को उन्नतोदर-लैंस और पहले पिन (P) की प्रतिमूर्त्ति के बीच रख देते हैं। यह नतोदर-लैंस, (C_2) उन्नतोदर-लैंस (C_1) से बाहर निकलने वाली किरणों को थोड़ा अपसृत (diverge) कर देता है, और पिन 'P' की प्रतिमूर्त्ति, अब 'Q' पर



चित्र 126

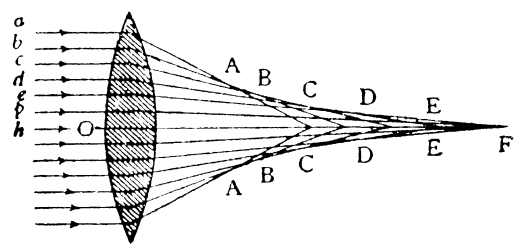
न बनकर, Q_2 पर बनने लगती है। तब—

$C_2Q_1 = u$ और $C_2Q_2 = v$

लैंस-सूत्र मे इन मानो को लगाने से 'f' का गणन किया जा सकता है

65. लैंसों की पहचान (Identification of Lenses)—लैंस को वस्तु के काफी पास रखो, और उसमे से आर-पार देखो। अगर दीखने वाली प्रतिमूर्त्ति, (i) सीधी और बढी हुई हो तो लैंस उन्नतोदर होगा, (ii) सीधी और छोटी है, तो लैंस नतोदर होगा और (iii) वस्तु के बराबर होने पर, यह लैंस सिर्फ समानान्तर-तलों वाली प्लेट होगा। अब लैंस द्वारा दूर की वस्तु देखो। लैंस के दूसरी ओर कुछ दूरी पर एक साफ कागज रखो। अगर इस पर बनने वाली प्रतिमूर्त्ति साफ-साफ बन जाती है, तो यह लैंस उन्नतोदर होगा।

66. लैंस में गोलारोपण (गोलीय विपथन) (Spherical Aberration)—अब तक के वर्णन मे हम यह मानकर चले है कि (i) लैंस का मुख-पृष्ठ (aperture) छोटा ही है और (ii) लैंस पर पडने वाली किरणो का पुंज काफी सँकरा (narrow) और मुख्य-अक्ष के लगभग समानान्तर है। इन बातो के होने पर ही यह समानान्तर किरणे, लैंस की मुख्य नाभि पर केन्द्रित हो पाती है, या सिर्फ एक ही बिदु से फैलती हुई मालूम पडती है।



चित्र 127

लेकिन लैंस का मुख-पृष्ठ काफी बडा होने पर, उस पर पडने वाली समानान्तर-किरणे, मुख्य-अक्ष के साथ काफी बडा कोण बनाती है, तो यह किरणे, सिर्फ एक ही बिन्दु पर केन्द्रित नही होती। मुख्य-अक्ष के बिलकुल पास वाली किरणे (L p, h) तो मुख्य नाभि (F) पर ही केन्द्रित हो जाती है। लेकिन किनारे वाली (marginal) किरणे नाभि तक पहुँचने से पहले ही दूसरे बिन्दु (A, B, C, D, E) पर केन्द्रित हो जाती है। इस दोष को "गोलापेरण" कहते है। इसके कारण, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, टेढी और अस्पष्ट हो जाती है। (चित्र 127)। बिदुओ (A B C D E F) को मिलाने वाली वक्र को तीक्ष्ण-वक्र (caustic curve) कहते हैं।

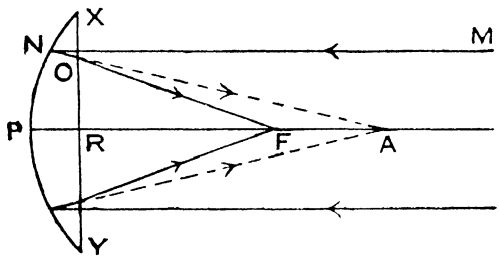
गोलापेरण के दोष को दूर करने के लिए, लैंस के पृष्ठ (face) पर एक काला मोटा कागज चिपका देते है। इस गोल कागज के बीच मे बना हुआ छोटा-सा छेद प्रकाश-किरणों को सीमित कर देता है। इस दोष को समतल-उन्नतोदर (plano-convex) लैंस से भी दूर किया जा सकता है।

आंकिक उदाहरण

1. एक पतले समतल-उन्नतोदर लैंस (नाभ्यन्तर $= f_0$) के गोलीय तल पर पालिश कर दी गई है। इससे यह नतोदर-दर्पण जैसा काम करने लगता है। इस तरह बनने वाले दर्पण का नाभ्यन्तर मालूम करो, जबकि काँच का वर्त्तनांक μ है।

(A thin plano-convex lens of focal length $f_\circ$ and refractive index μ is silvered on its spherical surface. It then acts as a concave mirror with regard to light incident on the plane surface. Calculate the focal length of the mirror thus formed.)

उत्तर—मान लो दिये हुए समतल-उन्नतोदर लैंस के समतल पृष्ठ (XY) पर, समानान्तर किरणें (MX) पड रही है (चित्र 128)। यह किरणें, क्योंकि इस तल पर लम्बवत् पड रही है, इसलिये यह इसी दिशा मे, लैंस के भीतर घुसेगी और लैंस की पालिश की हुई गोल सतह पर पडेगी। परावर्त्तित (reflected) होने पर यह किरणें इस गोलीय-दर्पण नतोदर की नाभि 'A' पर केन्द्रित होना चाहेगी। (जबकि PA$=r/2$), r=गोल तल का वक्रता-व्यासार्द्ध)। लेकिन परावर्त्तन के बाद किरणों को लैंस के काँच मे से होकर जाना पडता है। इसलिये यह किरणें थोडा झुक जावेंगी और अन्तिम प्रतिमूर्त्ति बिन्दु (F) पर बनने लगेंगी। जबकि—



चित्र 128

प्रतिमूर्त्ति-अंतर (v) = PF ; और काल्पनिक वस्तु अंतर = PA

$\therefore$ PF $=$ PA$/\mu = r/2\mu$ (धारा 38)

मान लो PF $= f_1$. तो दर्पण का नाभ्यन्तर $= f_1 = r/2\mu$ (1)

साथ ही समतल-उन्नतोदर लैंस (नाभ्यन्तर $= f_\circ$) के लिये—

$$\frac{1}{f_\circ} = (\mu - 1)\left(\frac{1}{\infty} - \frac{1}{r}\right) = -\frac{\mu - 1}{r} \quad \ldots (2)$$

समीकरण (1) और (2) से, $\frac{f_1}{f_\circ} = -\frac{\mu - 1}{2\mu}$ या $f_1 = -\frac{\mu - 1}{2\mu} f_\circ$ (3)

2. एक पतले समतल-उन्नतोदर लैंस (नाभ्यांतर $= f_\circ$ और वर्त्तनांक $= \mu$) के समतल वाले पृष्ठ पर पालिश कर देने से यह एक नतोदर-दर्पण जैसा काम करने लगता है। इस नये दर्पण का नाभ्यन्तर कितना होगा ?

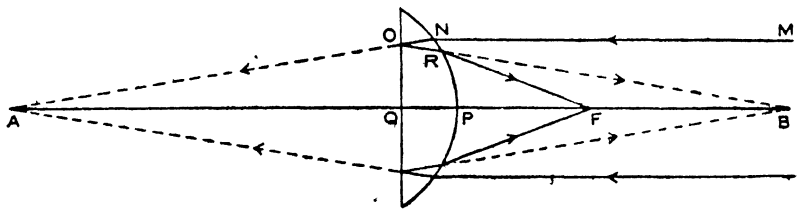
(A thin plano-convex lens of focal length $f_\circ$ and refractive index μ is silvered on its plane side. It then acts as a concave mirror with regard to the incident light on the spherical surface. Calculate the focal length of the mirror thus formed.)

उत्तर—चित्र 129 से दिखलाये गये समतल-उन्नतोदर-लैंस के समतल पृष्ठ (OQ) पर पालिश की गई है। समानान्तर किरणें (M) लैंस पर दाँयी ओर से आ रही हैं। अगर पालिश की हुई न होती तो यह किरणें, बिंदु 'A' पर केन्द्रित होती, जबकि PA, लैंस का द्वितीय नाभ्यन्तर है।

अर्थात् PA $= f = -\frac{\mu r}{\mu - 1}$

जबकि r = गोलीय तल का वक्रता-व्यासार्द्ध

लेकिन केन्द्रित होने से पहले ही यह किरणें पालिश किये हुए समतल पर परावर्त्तित (reflected) हो जाती है और बिंदु (B) पर केन्द्रित होना चाहती हैं। जबकि QA = QB। क्योंकि लैंस पतला है, इसलिये PA को QA के करीब-करीब बराबर माना जा सकता है। इसलिये



चित्र 129

$$QB = PA = \frac{\mu R}{(\mu - 1)} \qquad \ldots (1)$$

बिंदु (B), लैंस के लिये 'काल्पनिक वस्तु' जैसा कार्य करता है और इसके द्वारा अन्तिम प्रतिमूर्त्ति बिंदु (F) पर बनता है। क्योंकि किरणें काँच में से हवा में जा रही है, वर्त्तनांक का मान $(1/\mu)$ होगा। अगर $PF = f_2$, तो f_2 को इस तरह बनने वाले नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर कहा जा सकता है। तब सूत्र (52·2) से—

$$\frac{\frac{1}{\mu}}{f_2} - \frac{1}{QB} = \frac{\frac{1}{\mu} - 1}{-r} \quad \text{या} \quad \frac{\frac{1}{\mu}}{f_2} - \frac{\mu - 1}{\mu r} = \frac{\frac{1}{\mu} - 1}{-r}$$

μ से गुणा करने पर—

$$\frac{1}{f_2} = \frac{2(\mu - 1)}{r} \quad \text{या} \quad f_2 = \frac{r}{2(\mu - 1)} \qquad \ldots (2)$$

$$\text{लेकिन } \frac{1}{f_0} = -\frac{\mu - 1}{r}; \quad \therefore f_2 = -\tfrac{1}{2} f_0 \qquad \ldots (3)$$

3. एक समतल-उन्नतोदर लैंस के समतल वाले पृष्ठ पर कलई कर देने से यह नतोदर-दर्पण जैसा काम करने लगता है। इस नये नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर 20 सें० मी० है। अगर गोलीय तल पर कलई करदे तो इस तरह बनने वाले नतोदर-दर्पण का नाभ्यन्तर 7 सें० मी० ही होता। लैंस के माध्यम का वर्त्तनांक मालूम करो। (नागपुर *1951*; यू० पी० बोर्ड *1953*)

(A plano-convex lens is silvered on its plane side and then it acts like a concave mirror of 20 cms. focal-length. Calculate the refractive-index of the material of the lens.)
(*Nag 1951*; *U. P. Board 1953*)

उत्तर—मान लो गोलीय तल का वक्रता-व्यासार्द्ध (r) है, तो इसको समतल पार्श्व (plane face) पर पालिश करने पर यह लैंस (f_2) नाभ्यन्तर वाला नतोदर-दर्पण जैसा काम करने लगता है। जबकि

$$f = \frac{r}{2(\mu-1)} \text{ ; (देखो ऊपर वाला उदाहरण)}$$

$$\therefore \quad 20 = \frac{r}{2(\mu-1)} \text{ ;} \qquad \ldots \quad (1)$$

इसी लैंस के गोलीय तल पर पालिश कर देने पर यह, f_1 नाभ्यन्तर वाले, उन्नतोदर-दर्पण जैसा काम करने लगता है। जबकि—

$$f = \frac{r}{2\mu} \text{ या } 7 = \frac{r}{2\mu} \text{ ;} \qquad \text{(देखो उदाहरण 1)...(2)}$$

समीकरण (1) और (2) से—

$$\frac{20}{7} = \frac{2\mu}{2(\mu-1)} = \frac{\mu}{\mu-1}$$

या $(20\mu - 20) = 7\mu$ या $\mu = \mathbf{1{\cdot}54}$

4. एक नतोदर-लैंस को, नतोदर-दर्पण के सामने, 25 सै० मी० पर रख दिया गया है। दर्पण का नाभ्यन्तर 20 सै० मी० है। प्रयोग करने पर पता चला कि अगर एक पिन, लैंस के सामने 68·6 सै० मी० पर रख दे, तो उसकी प्रतिमूर्त्ति वहीं पर बनने लगती है। लैंस का नाभ्यन्तर मालूम करो। उत्तर को चित्र खींचकर समझाओ। (गोहाटी *1953*)

(A concave lens is placed at a distance of 25 cms. in front of a concave-mirror of focal length 20 cms. and it is found that a pin placed 68·6 cms. in front of the lens, coincides with its own inverted image formed by the lens and mirror. Find the focal-length of the lens and draw a diagram to show how image is formed.) (*Gauhati 1953*)

उत्तर—मान लो लैंस का नाभ्यन्तर $= f$ (सै० मी०)

प्रश्न के अनुसार, वस्तु-अन्तर $(u) = 68{\cdot}6$ सै० मी०। इसकी प्रतिमूर्त्ति, लैंस द्वारा, नतोदर-दर्पण के वक्रता-केन्द्र पर से होकर जाने वाले तल में बननी चाहिए, तभी वस्तु की उल्टी प्रतिमूर्त्ति, उसी स्थान पर बन सकेगी। अर्थात्

प्रतिमूर्त्ति-अन्तर $(v) = (2 \times 20 - 25) = 15$ सै० मी०

अतः लैंस-सूत्र से—

$$\frac{1}{15} - \frac{1}{68{\cdot}6} = \frac{1}{f} \text{ या } f = \mathbf{19{\cdot}2 \text{ सै० मी०}}$$

जौसेफ नाइसफोर नीपसे (1765—1833)

आपका जन्म, फ्रांस के "चैकलान-सुर-साने" नामक स्थान पर 7 मार्च, 1765 को हुआ। बचपन से ही आपका लालन-पालन, बड़े ऐश्वर्य और सुख के वातावरण में

हुआ। फ्रांस की राज्य-क्रान्ति के समय आपको 1792 मे सेना मे सब-लैफ्टीनेंट का पद मिला। लेकिन अपनी आँखों और शरीर की कमजोरी के कारण आपको त्यागपत्र देना पड़ा। 1794 ई० मे आपको 'नाईस' नामक प्रदेश का शासक बना दिया गया। 1801 मे आप घर वापस लौट आये और वैज्ञानिक खोज-कार्य मे लग गये।

सबसे पहले आपका ध्यान नकली रगो को बनाने पर गया और बाद में 'लिथोग्राफी' पर। तभी आपको सूर्य के प्रकाश से, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति बनाने का विचार सूझा। उन दिनो कलाकार लोग (artist), बाहरी दृश्यो का चित्र बनाने के लिये उस दृश्य की प्रतिमूर्त्ति एक उन्नतोदर-लैंस द्वारा खुरदरे काँच की प्लेट पर बनाकर, उसके ऊपर पतला कागज रखकर, 'कापी' (trace) किया करते थे। आपने सोचा कि क्यों न एक ऐसा रासायनिक पदार्थ खोजा जावे, जो कि प्रकाश-किरणों के प्रभाव से बदल जावे, तो उन्नतोदर-लैंस द्वारा बनने वाली प्रतिमूर्त्ति स्थायी (permanent) बनाई जा सकती है। इसलिये आपने, एसफाल्ट का घोल, धातु की चादर पर पतली पर्त्त मे डाल, और उसको सुखाकर, खाकी रग की पतली पर्त्त (film) बना ली; इस पर्त्त को आपने उन्नतोदर-लैंस के पीछे रख दिया और इस पर वस्तु की उल्टी प्रतिमूर्त्ति बनाई। प्रतिमूर्त्ति के प्रकाशमान अशो पर घोल का "एसफाल्ट", प्रकाश पड़ने से स्थिर (fixed) हो गया। तब इस पतली पर्त्त को लैवेण्डर के तेल मे अच्छी तरह से धोने पर, स्थिर अश तो रह गये, और बाकी घुल गये, और पत्त पर दृश्य का स्थायी चित्र बन गया। इस दिशा मे आगे की खोज आर्गो द्वारा की गई।

सार (Summary)

लैंस—दो गोलीय तलों द्वारा सीमित पारदर्शक माध्यम को 'लैंस' कहते हैं। यह उन्नतोदर (उत्तल) या नतोदर (अवतल) हो सकता है।

मध्य-बिंदु—यह लैंस की मुख्य-अक्ष पर स्थित वह बिंदु होता है जिस पर से कि होकर जाने वाली हर एक प्रकाश-किरण, लैंस मे से बाहर निकलने पर, अपने पहले मार्ग के समानान्तर ही आगे बढ़ जाती है।

मुख्य-नाभि—अगर प्रकाश-किरणों का एक सँकरा पुंज, लैंस की मुख्य-अक्ष के समानान्तर चलता हुआ आकर पड़े, तो यह पुंज आवर्त्तित होने पर, या तो वास्तव में किसी बिंदु पर केन्द्रित हो जावेगा; नहीं तो ऐसा होता हुआ प्रतीत होगा। इसी बिंदु को 'मुख्य-नाभि' कहते हैं। नतोदर-लैंस की नाभि काल्पनिक और उन्नतोदर-लैंस की नाभि वास्तविक होती है।

नाभ्यन्तर—यह, लैंस के मध्य-बिंदु से उसी की मुख्य नाभि तक की दूरी होती है, नतोदर लैंस के लिये इसका चिन्ह (+) और उन्नतोदर के लिये (−) होता है।

लैंस-सूत्र—सभी प्रकार के पतले लैंसों के लिये, $\left(\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}\right)$

जबकि v=प्रतिमूर्त्ति-अंतर; u=वस्तु-अंतर; और f=नाभ्यन्तर। प्रश्न हल करने के लिये u, v और f को उचित चिन्ह लगाने जरूरी हैं।

रैखिक-अभिवर्धन—$(m) = I/O = v/u$

गोलीय तल पर आवर्त्तन—**हवा में रखे, काँच के गोलीय तल पर जब प्रकाश-किरणें आकर पड़ती हैं तो लेंस-सूत्र इस तरह हो जाता है —**

$$\frac{\mu}{v} - \frac{1}{u} = \frac{\mu - 1}{r}$$

लैंस में से आवर्त्तन— $$\frac{1}{f} = (\mu - 1)\left(\frac{1}{r_1} - \frac{1}{r_2}\right)$$

अभ्यास के लिये प्रश्न

1. सिद्ध करो कि नतोदर-आवर्त्तक तल के लिये—

$$\frac{\mu}{v} - \frac{1}{\mu} = \frac{\mu - 1}{r}$$

जब कि μ=वर्त्तनांक। इस सूत्र से लैंस के नाभ्यन्तर के लिये सूत्र मालूम करो।
(नागपुर 1954, विश्वभारती 1953, दिल्ली 1938, ढाका 1940; यू० पी० 1946)

2. (क) परिभाषायें दो—
(i) लैंस का मध्य-बिन्दु (ii) लैंस की मुख्य नाभियां (iii) लैंस के नाभ्यन्तर।
(कलकत्ता 1953)

(ख) सिद्ध करो कि लैंस का मध्य-बिन्दु, उसकी मोटाई को, वक्रता-व्यासार्द्धों के अनुपात में बाँटता है। (राजपूताना 1947, अजमेर 1949)

3. उन्नतोदर लैंस कितनी दूरी पर रखा जावे कि उसकी प्रतिमूर्त्ति (i) वास्तविक (ii) काल्पनिक बने। लैंस का नाभ्यन्तर 1 इंच है, और प्रतिमूर्त्ति लैंस से 1 फुट की दूरी पर बनती है? अपने उत्तर को चित्र खींचकर स्पष्ट करो। (यू० पी० बोर्ड 1944)

उत्तर—(i) $1\frac{1}{11}$ इंच (ii) $\frac{12}{13}$ इंच।

4 एक उन्नतोदर-दर्पण के सामने 15 सैं० मी० की दूरी पर, 25 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाला उन्नतोदर लैंस रखा हुआ है। प्रयोग करने पर पता चला कि अगर एक दिन लैंस के सामने 45 सैं० मी० पर रख दिया जावे, तो उसकी उल्टी प्रतिमूर्ति लैंस और दर्पण द्वारा उसी स्थान पर बनने लगती है। दर्पण का नाभ्यन्तर मालूम करो। (पटना 1952)

उत्तर—20·625 सैं० मी०।

5 3 इंच लम्बी एक वस्तु 6 सैं० मी० की दूरी पर (i) उन्नतोदर लैंस (ii) नतोदर लैंस के सामने रखी जाती है। प्रतिमूर्त्ति का आकार मालूम करो, जबकि नाभ्यन्तर 8 सैं० मी० है।
(विश्वभारती 1952)

उत्तर—(i) 12 इंच (ii) $1\frac{5}{7}$ इंच।

6. दो उन्नतोदर लैंस, 3 और 4 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले, एक दूसरे से 8 सैं० मी० की दूरी पर रखे हैं। इन दोनों की सर्व-निष्ठ (common) अक्ष पर, कम नाभ्यन्तर वाले लैंस के सामने 4 सैं० मी० पर 1 सैं० मी० लम्बी वस्तु रखी है। वस्तु की प्रतिमूर्ति की स्थिति और आकार मालूम करो।

उत्तर—2 सैं० मी०, सामने $\frac{3}{2}$ सैं० मी०। (यू० पी० बोर्ड 1951)

7. उन्नतोदर लैंस के सामने विभिन्न दूरियों पर रखने से बनने वाली प्रतिमूर्त्तियों की स्थिति और आकार चित्र खींचकर समझाओ।

(कलकत्ता 1956; पंजाब 1952)

8. (i) लैंस शक्ति से क्या तात्पर्य है ? (आंध्र 1953; पंजाब 1952)

(ii) दो लैंसों की शक्ति +6 और −2D है। दोनों को सटाकर रखने से, इनकी समतुल्य लैंस की शक्ति कितनी हो जावेगी ?

उत्तर—P=4D ; F=25 सैं० मी० (पंजाब 1950)

9. 30 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले उन्नतोदर लैंस से कितनी दूरी पर वस्तु रखी जावे कि उसकी प्रतिमूर्त्ति 3 गुना बड़ी बने ? यह प्रतिमूर्त्ति कहां पर और कैसे बनेगी ? (पटना 1951)

उत्तर—$u=40$ सैं० मी०, $v=120$ सैं० मी०, वास्तविक और उल्टी

10. निम्न लैंस सूत्रों को प्रमाणित करो—

(i) $\frac{1}{f}=(\mu-1)\left(\frac{1}{r_1}-\frac{1}{r_2}\right)$ (यू० पी० बोर्ड 1955; मैसूर 1950, 51)

(ii) $\frac{1}{v}=\frac{1}{u}-\frac{1}{f}$ (कलकत्ता 1956; दिल्ली 1954, नागपुर 1953; मैसूर 1951)

11. समतल-उन्नतोदर लैंस के नाभ्यन्तर का मान मालूम करो, जबकि इसके कांच का वर्त्तनांक 1·5 और उन्नतोदर तल वक्रता व्यासार्द्ध 10 सैं० मी० है ?

(यू० पी० बोर्ड 1955)

12. द्वि-उन्नतोदर लैंस के वक्र तलों के वक्रता व्यासार्द्ध क्रमशः 20 और 40 सैं० मी है और नाभ्यन्तर 20 सैं० मी है। इसका वर्त्तनांक कितना है ?

उत्तर—1·67 (कलकत्ता 1956)

13. 110 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले उन्नतोदर-लैंस द्वारा सूर्य की प्रतिमूर्त्ति कितनी बड़ी बनेगी, जबकि सूर्य के गोले के व्यास द्वारा, लैंस के मध्य बिन्दु पर बनने वाला कोण $\left(\frac{1}{110}\right)$ रेडियन है ?

उत्तर—1 सैं० मी०

14. उन्नतोदर लैंस से कितनी दूर पर वस्तु को रखें कि बनने वाली प्रतिमूर्त्ति (i) वास्तविक और तीन गुना बड़ी बने, (ii) काल्पनिक और 3 गुना बड़ी बने, जबकि दोनों अवस्थाओं में लैंस का नाभ्यन्तर 20 सैं० मी० है ?

उत्तर (i) $26\frac{2}{3}$ सैं० मी (ii) $13\frac{1}{3}$। (गौहाटी 1955)

15. एक सम-सीमित (Symmetrical) द्वि-उन्नतोदर (Bi-Convex) लैंस का नाभ्यन्तर 30 सैं० मी० है और वर्त्तनांक 1·51 है। गोलीय तल का वक्रता व्यासार्द्ध मालूम करो।

उत्तर—$r=30·6$ सैं० मी० (नागपुर 1950)

16. लैंस के नाभ्यन्तर से क्या तात्पर्य है ? उन्नतोदर लैंस का नाभ्यन्तर निकालने के सभी संक्षिप्त सिद्धान्त समझाकर उनमें से किसी एक का पूरा-पूरा वर्णन करो। अपनी छोटे का कारण भी बतलाओ। (राजपूताना 1952, पंजाब 1951; दिल्ली 1952; विश्वभारती 1952)

17. सिद्ध करो कि दो पतले लैंसों को आपस में सटाकर रखने से बनने वाले संयोग के समतुल्य-लैंस की शक्ति दोनों लैंसों की शक्तियों के जोड़ के बराबर होती है। (मैसूर 1952, पंजाब 1950; ढाका 1943)

18. एक वस्तु को उन्नतोदर लैंस के सामने रखने पर उसकी वास्तविक प्रतिमूर्त्ति लैंस के दूसरी ओर उतनी ही बड़ी बन रही है। इस वस्तु को लैंस की ओर 16 सैं० मी० हटा लेते हैं, तो प्रतिमूर्त्ति दुगुनी बड़ी बनने लगती है। लैंस का नाभ्यन्तर मालूम करो।

19. एक नतोदर-दर्पण के सामने 25 सैं० मी० की दूरी पर पिन रखने पर उसकी प्रतिमूर्त्ति उसी जगह पर बन जाती है। दर्पण और पिन के बीच, एक नतोदर-लैंस, दक्षिण से 20 सैं० मी० की दूरी पर रख दिया गया है। इस अवस्था में भी, वस्तु की प्रतिमूर्त्ति, पिन की दर्पण से 35 सैं० मी० की दूरी पर, वस्तु-पिन के स्थान पर बनती है। लैंस की शक्ति बतलाओ। (उत्कल 1947)

उत्तर—7·5 सैं० मी०

20. 'स्थानान्तर-विधि' से उन्नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर (f) निकालने की विधि को चित्र से समझाओ। सूत्र $\left(f=\frac{D^2-x^2}{4D}\right)$ को सिद्ध करो, जब कि वस्तु और पर्दे के बीच की दूरी D है, और लैंस की दोनों स्थितियों में दूरी x है। (राजपूताना 1950)

21. दीवार से 6 फुट की दूरी पर बिजली का लैंप रखा है। इस लैंप से 2 फुट की दूरी पर उन्नतोदर लैंस रखने से दीवार की स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति बनती है। जब लैंप को दीवार से दूरी 2 फुट रहती है, तो फिर से स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति बनने लगती है। लैंस का नाभ्यन्तर मालूम करो और लैंस की दोनों स्थितियों में होने वाले अभिवर्धनों की तुलना करो।

उत्तर—$f=\frac{4}{3}$ फुट ; 4। (कलकत्ता 1950)

22. 12 इं० नाभ्यन्तर वाला एक लैंस, एक 'स्लाइड' की स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति बनाने के काम में लाया जा रहा है। 'स्लाइड' का आकार 3 इंच वर्ग है और पर्दा लैंस से 25 फुट की दूरी पर रखा है। स्लाइड को किस जगह पर रखें कि उसकी स्पष्ट प्रतिमूर्त्ति बने? इस प्रतिमूर्त्ति का आकार भी बतलाओ।

उत्तर—12·5 इंच, 6 फुट-वर्ग (आंध्र 1952)

23. प्रयोग द्वारा, नतोदर-लैंस का नाभ्यन्तर निकालने की दो विधियां लिखो।
(मद्रास 1950, यू० पी० बोर्ड 1949, 50, मैसूर 1952, विश्वभारती 1952, गोहाटी 1953)

24. सिद्ध करो कि दो पतले लैंसों के मिलने से बनने वाले संयुक्त-लैंस का नाभ्यन्तर $F=\frac{f1.f2}{f1+f2}$ होता है, जबकि f_1 और f_2 दोनों लैंसों के अलग-अलग नाभ्यन्तर हैं।
(पंजाब 1953)

25. एक 5 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले उन्नतोदर-लैंस और 10 सैं० मी० नाभ्यन्तर वाले नतोदर-लैंस दोनों को सटाकर रखा गया है। इस संयुक्त लैंस से 15 सैं० मी० की दूरी पर रखी वस्तु से चलने वाली किरणें लैंस में से होकर एक नतोदर दर्पण पर पड़ रही हैं। दर्पण का वक्रता-व्यासार्द्ध 200 सैं० मी० है, और यह संयुक्त लैंस से 5 सैं० मी० पर रखा है। वस्तु की प्रतिमूर्त्ति कहाँ पर बन रही है? (यू० पी० 1947)

उत्तर—संयुक्त-लैंस से वस्तु की ओर 6 सैं० मी० पर।

26. एक नतोदर-लैंस, जिसका नाभ्यन्तर 12 इंच है, नतोदर दर्पण की अक्ष पर 6 इंच की दूरी पर रखा है। दर्पण का नाभ्यन्तर भी 12 इंच है। एक वस्तु इस तरह रखी है कि उससे चलने वाली किरणें लैंस में से होकर दर्पण पर परावर्त्तित होती हैं और वापस लैंस में से होकर, वस्तु के ऊपर ही उसकी उल्टी प्रतिमूर्त्ति बना देती हैं। वस्तु की स्थिति मालूम करो। (पंजाब 1951)

उत्तर—लैंस के सामने 12 इंच पर।

27. एक समतल-उन्नतोदर लैंस, पारे पर इस तरह तैर रहा है कि उसका समतल वाला पृष्ठ (face) पारे के संपर्क में है। जब एक पिन को इससे 40 सैं० मी० की दूरी पर रखते हैं तो उस वस्तु की उल्टी प्रतिमूर्त्ति वहीं पर बन जाती है। अगर काँच का वर्त्तनांक 1·54 हो तो, उन्नतोदर-तल का वक्रता-व्यासार्द्ध कितना है? (नागपुर 1954)

उत्तर—21·6 सैं० मी०।

28. [illegible] सैं० [illegible] है। [illegible] की सेवक लेकर [illegible] बनाओगे

पारिभाषिक शब्द-कोष

[GLOSSARY]

पदार्थों के सामान्य गुण

(General Properties of Matter)

A

Absolute	परम (निरपेक्ष)
,, ,,-conductivity	निरपेक्ष-चालकता
,, ,,-humidity	निरपेक्ष-आर्द्रता
,, ,,-Temperature	परम-तापमान
,, ,,-rest	निरपेक्ष-स्थिरता
,, ,,-motion	निरपेक्ष-गति
,, ,,-unit of work	काम की परम इकाई
,, ,,-zero	परम-शून्यांक
,, ,,-vacuum	परम-शून्यता
Absorption	अवशोषण
Absorptive-power	अवशोषण-क्षमता
Abscissa	(भुजांक) क-अक्ष
Ability	योग्यता
Acid	अम्ल (क्षार)
Action	क्रिया
Actua	यथार्थ (वास्तविक)
Accelerlation	प्रवेग (त्वरण)
Acute	न्यून
Acidulated	क्षार (तेजाब) घुला हुआ
Acquired	अर्जित, जनित
Adjacent	आसन्न, पास की
Adhesion	आसक्ति
Adjustment	अनुकूलन
Adiabatic	रुद्धोष्म (स्थिरोष्म)
Aero-nautics	वायुयान-सचालन-कला
Aero-dynamics	वायवीय गति-विज्ञान
Agate	अगेट (धातु विशेष)
Air-chamber	वायु कोष्ठ
Air-cushion	वायवीय कोच
Air-tight	वायु-रुद्ध
Air-pump	वायु-पंप
Air-conditioning	वायु-प्रतिबंध
Air-suction pump	वायु-चूषण पंप
Altimeter (तुंगतामापक)	(आल्टीमीटर)
Alum	फिटकरी
Alloy	मिश्र-धातु
Amplitude	(आयाम) कंप-विस्तार
Angle	कोण
,, of contact	स्पर्श-कोण
,, of friction	घर्षण-कोण
,, repose	विराम-कोण
Anti-clockwise	वामावर्त्ती
Anomaly	विषमता
Anchor	लंगर
Anemometer	पवनमापी (अनीमोमीटर)
Apparatus	उपकरण
Apparent	प्रतीयमान (आभासी)
Apparent solar day	प्रतीयमान सौर दिन
Appreciable	थोड़ा-सा
Arc	(चाप) परिधि खंड
Arm	(बाहु) भुजा
Area of cross-section	अनुच्छेदीय क्षेत्रीय
Artesian well	आर्टीजियन कूप
Arresting arrangement	रोक-प्रबंध
Arithmetic Progression	अंकगणितीय वृद्धि-क्रम
Astronomy	ज्योतिष-विज्ञान
Atom	परमाणु
Attraction	आकर्षण
Atmosphere	(वातावरण) वायुमंडल
Atmospheric pressure	वायु-दाब
Atomic weight	परमाणु-भार
Atomic-structure	परमाणु-रचना
Automatic	स्वत चलित
Average	औसत
Axle	अक्ष
Axis	अक्ष, कीली

B

Paragraph	[illegible]

Barometer बैरोमीटर (वायु-दाब मापक)
Banking (of rails) मोड़ पर पटरियाँ लगाना
Balance (physical) (भौतिक) तुला
Balanced सतुलित
Balance-wheel दोलन-चक्र
Balloon बैलून, गुब्बारा
,, -sounding ,, बेधक
Barrel बैरल (नलका)
Ball-Bearing गोली धुराधार (बॉल-बेयरिंग)
Bath उष्मक
,, —water जल-उष्मक
Back-push धक्का
Bash-lash पिच्छट
Base-line आधार-रेखा
Beaker बीकर
Bellows धौंकनी
Behaviour व्यवहार
Beam (दण्ड) डंडी
Bend मोड, झुकाव
Binding-Energy बधन-ऊर्जा
Blade फलक
Blader ब्लैडर
Blurred अस्पष्ट
Boyle's Law बॉयल का नियम
Bob (गोलक) लटकन
Body पिंड
Bottom पैंदी, तलेटी
Botany वनस्पति-शास्त्र
Bow गज (बाजे की)
Bore छेद
Bracket ब्रेकिट, दीवार-गिरी, कोष्ठ
Brake ब्रेक (रोक)
Bronze (ब्रोंज) कासा
Breaking-Weight विभजन-भार
Brahmah-Press ब्राम्हा-दाबक
Bulb गोलक, कुप्पी, घुंडी
Bumping स्फोट से
Buoyancy उत्प्लावकता
Burner (बर्नर) ज्वालक
Burette ब्यूरेट

C

Callipers (Vernier) (वर्नियर) कैलिपर्स
Calculation (हिसाब लगाना) गणन
Capacity (धारिता) ग्राहिता, क्षमता
Capillarity केशाकर्षणता
Capillary-tube केश-नली
Card Board गत्ता
Cartesian Diver कार्टिजियन-डूबक
Cauldron कढाव
Calibration अशाकन
Cathetometer ऊर्ध्वता मापी
Centre of mass भार केन्द्र
,, ,, curvature वक्रता-केन्द्र
,, ,, oscillation दोलन-केन्द्र
,, , gravity गुरुत्व-केन्द्र
Centroid परिमित-केन्द्र
Centrifugal (अपकेन्द्री) केन्द्रापसारी
Centimeter सेंटीमीटर
Centripetal (अभिकेन्द्री) केन्द्राभिसारी
Clockwise दक्षिणावर्ती
Clamp (सधार), क्लैंप
Clip क्लिप
C. G S Unit स० ग० स० इकाई
Classification वर्गीकरण
Chart चार्ट
Chronometer क्रोनोमीटर
Chord चाप
Chain जरीब, जंजीर
Change (परिवर्त्तन) बदल
Characteristic लाक्षणिक
Chimney चिमनी
Circumference परिधि
Component (घटक) अवयव
Co-ordinates (निर्देशांक), नियामक, कोटिज
Couple युग्म
Complementary पूरक
Constriction सूक्ष्म-द्वार
Construction रचना, बनावट
Composition (संयोग), सयोजन
Column स्तभ
Cohesion ससक्ति
Cork डाट, काग
Condenser (संचक), धारित्र, शीतक

Coincident	सन्निपाती
Concentration	ओज, समाहार
Coaxial	समअक्षीय
Collinear	(एकरेखस्थ) समरेखिक
Control	नियन्त्रण
Continuous	लगातार
Condensing-pump	वायु-सचक पप
Converse	उल्टा, विलोम
Cover	ढँकना
Communicating	जुड़े हुए, सम्बन्धित
Concentric	(सकेन्द्र), समकेन्द्रिक
Compound	सयुक्त
Conclusion	निष्कर्ष
Corresponding	सगत
Conservation	अविनाशिता
Contrivance	साधन
Curve	वक्र
Cube	घनक
Crow-bar	कुदा
Crane	क्रेन (भार-वाहक)
Cycle-pump	साईकिल पप
Cycle	आवृत्ति
Cylindrical	बेलनाकार, सिलिडराकार
Crystal	मणिभ, रवा

D

Damping	अवमंदन
Denominator	हर (भिन्न का)
Density	घनत्व
,, -relative	आपेक्षिक-घनत्व
Deflection	विक्षेप
Definition	परिभाषा
Demerits	दोष
Degree	घात, अश
Delicate	सुग्राहक
Diagonally	कर्णानुसार
Diffusion	(विसरण), प्रसरण
Dimension	विभा
Displacement	(विस्थापन) स्थानान्तर
Diving Bell	अवगाहन-कोष्ठ
Direction	दिशा
Dissociation	विच्छेदन
Distillation	सत्रावण
Disintegration	विघटन
Diurnal	दैनिक
Dissipation	व्यय (शक्ति का)
Divider	परकार
Dram	ड्राम (इकाई)
Drift	अपवहन
Driver	प्राजक, चालक
Driven	चालित
Draught	खिचाव
Dyne	डाईन (इकाई)
Dynamics	चल-गति शास्त्र
Ductility	तन्यता

E

Ebonite	(इबोनाइट), आबनूस
Eccentric	विकेन्द्रिक
Eccentricity	विषमता (पथ की)
Effective	(कार्यकारी) सार्थक
Effort	प्रयास
Efficiency	दक्षता
Electron	(इलैक्ट्रॉन) ऋण-विद्युत् अणु
Elastic-limit	लचक-सीमा
Elastic-fatigue	स्थितिस्थापक (प्रत्यास्थता) श्राति
Elastic-impact	लचीली टक्कर
Element	तत्व
Elliptical	(दीर्घवृत्ताकार), अडाकार
Empirical	प्रयोग-सिद्ध
Energy—	ऊर्जा
,, —kinetic	गतिज-ऊर्जा
,, —potential	स्थितिज-ऊर्जा
,, —chemical	रासायनिक-ऊर्जा
,, —mechanical	यात्रिक-ऊर्जा
Equator	भूमध्य-रेखा, विषुवत्-रेखा
Equilibrium	(साम्यावस्था) सतुलन
,, stable	स्थायी-सतुलन
,, unstable	अस्थायी-सतुलन
,, neutral	उदासीन-सतुलन
,, limiting	सीमित-सतुलन
Equilateral	समत्रिबाहु (त्रिभुज)
Equation	समीकरण
Equivalent	समतुल्य
Erg	अर्ग- (इकाई)
Error-zero	शून्य-त्रुटि
Estimate	अनुमान

Experiment	परीक्षण, प्रयोग
Exhaust-pump	रेचक पम्प
Extension	(वितान), बढाव
Explanation	स्पष्टीकरण
Explosive	विस्फोटक

F

False	असत्य
Fault	दोष
Filter	(छानक), (फल्टर) निस्पदक
Flexible	(नम्य), लचकीली
Fly-wheel	गतिपालक-चक्र
Flexure	घुमाव
Flash	दमक
Flush	फ्लश (प्रक्षालक)
Flask	(फ्लास्क)
Fluid	तरल
Flat	चपटा
Fire-Extinguisher	अग्नि-शामक
Fire-proof	अग्नि-सह
Foot	फुट (इकाई)
Form	आकृति, रूप
Formulae	सूत्र
Force	बल
,, of gravity	गुरुत्वाकर्षण-बल
,, controlling	नियत्रक-बल
,, of restitution	प्रत्यानयन दल
,, of attraction	आकर्षण-बल
,, of repulsion	विकर्षण-बल
,, —resultant	सयुक्त-बल
,, —resolution of	(बलो का संयोजन)
,, —analysis of	बलों का विश्लेषण
,, —parallelogram of	समानान्तर — चतुर्भुज
Force-ratio	बलानुपात
Forcepts	चिमटी
Force-pump	बल-पम्प
Fountain-pen	फाउन्टेनपैन
Friction	घर्षण
,, —coefficient	घर्षण-गुणक
,, —limiting	सीमित-घर्षण
,, —rolling	लुण्ठन-घर्षण
,, —sliding	विसर्पी-घर्षण
Frame	फ्रेम (चौखटा)

Fulcrum	आलम्ब (टेक)
Funnel	(फनल) कीप
Fundamental	(मूल) मौलिक
Fusion	(गलन) विलय
Furnace	भट्टी

G

Gas-constant	गैस-स्थिरांक
,, ,, (universal)	(सार्वभौमिक ,, ,, R)
Gallon	गैलन (इकाई)
Gauge	(प्रमापी) मापक
,, —screw	पेंच-मापक
,, —Macleods	मैकलायड-गेज
Gear	(गीयर), यन्त्र
Generator	(जनित्र), उत्पादक
Geology	भूगर्भ-विज्ञान
Geodic Survey	भूगर्भ सम्बन्धी जाँच
Glass-screen	काँच के पर्दे
Glide	नीचे गिरना
Glue	सरेस
Gradient	प्रवणता
Gravitational constant	गुरुत्वाक (G)
,, —acceleration due to gravity	(गुरुत्वाकर्षणीय प्रवेग)
Graph-paper	ग्राफ-कागज
Grain	ग्रेन (इकाई)
Graduations	निशान अश
Groove	खाच
Gram	ग्राम (तौल की इकाई)
Grease	ग्रीज
Geometric-Mean	गुणोत्तर-मध्यमान
Glacier	ग्लेशियर
Gutta-Parcha	गट्टा-पार्चा

H

Handle	हत्था
Hare's Apparatus	हेयर-उपकरण
Hawkbee's Air Pump	हॉकबी वायु-पप
Hardness	कठोरता
Helium	हीलियम
Head	टोपी
Hermetically sealed	समदित

Hemispherical	अर्ध-गोलाकार
Hinges	कब्जे
Horse-Power (H P.)	अश्व-सामर्थ्य
Hook	हुक, काँटा
Hook's Law	हुक-नियम
Homogeneous	समागी,सम
— non	विषमागी
Horizontal component	अनुभूमिक भाग
Horizontal Plane	क्षैतिज-तल
Hose-pipe	किरमिच की कली
Hyperbola	अतिपरवलय
Hydro-meter (हाइड्रोमीटर)	घनत्वमापक
,,—Nicholson's	निकलसन का
,,—(constant immersion)	घनत्वमापक स्थिर निमज्जनी
Hypotenuse	कर्ण
Hydro-dynamics	द्रव-गति विज्ञान
Hydro-statics	स्थिर-द्रव विज्ञान
Hydrostatic-balance	उत्प्लावन-तुला
Hypothesis	परिकल्पना
,,—press	जल-प्रेरित दाबक
,,—lift	,, उत्थापक
,,—bellows	,, धौकनी
Hydro-electric	जल-विद्युतीय
Hy vac pump	हाइवैक-पप

I

Ideal	आदर्श
Ignition	प्रज्ज्वलन
Illusion	दृष्टि-भ्रम
Impurity	अशुद्धि
Impact	(सघात) आघात
Impulse	(आवेग) सवेग
Inactive	निष्क्रिय
Invesrely proportional	व्युत्क्रमानुपाती
Instrument	यत्र
,, —error	यात्रिक-दोष
Inch	इंच
Instantaneous	तात्कालिक
Inclined	तिरछा
Intensity	तीव्रता
Inter-molecular space	अन्तर आणवीय स्थान
Integer	पूर्णांक
Initial	प्रारम्भिक
Injection syringe	सुँई
Inlet	प्रवेश (द्वार)
International	अन्तर्राष्ट्रीय
Inertia	जडत्व
Intermittent	आन्तरायिक
Input	दी गई
Invention	(ईजाद) आविष्कार
Induction coil	उपपादन वेष्टन
Inter-action	अन्तर्क्रिया
Insoluble	न घुलने वाला
Index	सकेत
Ionisation	आयनीकरण
Isobar	सम-दाब
Iso chronic	समकालिक
Iso-thermal	समतापिक
Iso-gonic line	समकोणिक रेखा
Iso-tropic	समदिक्

J

Jar	जार (बर्तन)
Jaw	जबडा
Jacket	जैकट
Jet	(जैट) फुहार
Jib	(जिब)
Joint	जोड
Joule	जूल (इकाई)
Jupiter	बृहस्पति (ग्रह)
Juxtapose	सन्निधि

K

Key	(की) चाबी, कुंजी
Key-board	(की-बोर्ड)
Kinetic	गतिज, गत्यात्मक
,, theory	सिद्धान्त
Kilo	किलो ($=10^3$)
Knife-edge	(क्षुर-धार) पैने सिरे
Kink	उलझन
Kiln	भट्ठी
Kilo-gram	किलोग्राम

L

Lathe	(कुद), खराद
Laboratory	प्रयोगशाला
Lateral	पार्श्विक
,, — contraction	पार्श्विक सपीडन

Lhteral extension	पार्श्विक-प्रसरण
Lactometer	दुग्ध-घनत्व-मापक (लैक्टोमीटर)
Land-Breeze	स्थलीय समीर
Lattitude	अक्षांश
Land-mark	स्थल-चिह्न
Lawn-roller	माली का बेलन
Latest	आधुनिकतम
Leyers	पर्त्त
Lead	सीसा
Level	तल
Leakage	(क्षरण) निस्सरण
Lever	(उत्तोलक), लीवर
Least-count	(लघुतम-माप) अल्पतम-मापांक
Light	हल्की
Lipuid	द्रव
Lift-Pump	लिफ्ट-पम्प
Lifting power	उत्थापक बल
Like	(सजातीय) सदृश
Line of action	कार्य-रेखा
,, ,, contact	स्पर्श-रेखा
Liquefaction	(द्रवण) द्रवीकरण
Life-buoy	उत्प्लावक
Life-Belt	तैरने की पेटी
Litre	लिटर (इकाई)
Loop	फंदा
Logarithm	लघु-गुणक
,, anti	प्रति ,,
Load	बोझा
Load-arm	अवरोध भुजा
Longitudinal	(अनुदैर्ध्य) रैखिक
Lubrication	चिकनाहट लगाना
Lycopodium	लाइकोपोडियम (स्नेहन)

M

Matter	द्रव पदार्थ
Main-shaft	प्रधान धुरा
,, Scale	पैमाना (मुख्य)
Manometer	दाब मापी
Magnitude	मान
Mantissa	अशक (ल० गु० का)
Manufacture	निर्माण
Machine	मशीन, यन्त्र
Machinery	कल, यंत्रजात
Mars	मंगल (ग्रह)
Map	मानचित्र नक्शा
Mason	राज, मीमार
Mark	चिह्न
Maximum	(महत्तम) अधिकतम
Meaning	अर्थ
Mean-difference	मध्य-मानान्तर
Medium	माध्यम
Megha	मेधा ($=10^6$)
Method	विधि
Melting-point	(गलनांक), पिघलन-बिन्दु (द्रवणांक)
Membrane	झिल्ली
Mercury	(पारा); बुध (ग्रह)
Merry-go-round	झूला
Meteorology	ऋतु-परीक्षण-विज्ञान
Mechanical advantage	यान्त्रिक-लाभ
Measuring-chain	जरीब
Measuring-glass	नपना गिलास
Mechanics	गति-विज्ञान
Meridian	(यामोत्तर) मध्यान्ह-रेखा
Meter	मीटर
Meter-scale	मीटर-पैमाना
,, -deci	डैसीमीटर
,, centi	सैंटीमीटर
,, -milli	मिली मीटर
Meta-centre	मित-केन्द्र
Meteor	उल्कापात
Metronome	मीट्रोनोम
Mica	अभ्रक
Micro-meter	सूक्ष्ममापी
Minimum	(न्यूनतम) अल्पतम
Micro	माइक्रो ($=10^{-6}$ मीटर)
Milli	मिली ($=10^{-3}$ मीटर)
Mine	खान
Milk glass	दूधिया-काँच
Mile	मील (इकाई)
Millimeter	मि० मी० (इकाई)
Miscible	मिलने वाले
Milled	दाँतेदार
Mount	आरोप
Moment	घूर्ण
Momentum	आवेग
Moving coil	चल-वेष्टन

Model	प्रतिरूप, नमूना
Modulus	मापाक
,, Young's	यग-मापाक
,, Bulk	आयतन-मापाक
Moisture	नमी
Molecule	अणु
Motion	गति
,, Simple harmonic	सरल-आवर्त्त-गति
,, angular	कोणीय गति
,, rotatory	चक्रिक-गति
,, equation of	गति का समीकरण
Mould	साँचा
Mud-guard	मड-गार्ड
Mutual	पारस्परिक

N

Nature	स्वभाव
Napthlene	नेपथलीन
Net	जाल
Neutron	न्यूट्रोन
Neon	निग्रोन
Negligible	(उपेक्षणीय) नगण्य
Nitrogen	(नाइट्रोजन), नत्रजन
Nominator	अंश (भिन्न का)
Normal	प्रकृत, अभिलम्ब
,, acceleration	अभिलम्ब प्रवेग
,, reaction	,, प्रतिक्रिया
Nozzle	(तुंड), पतली नोक
Numerically	आंकिक रूप से
Nucleus	(नाभिक) नाभि-कण
Nut-cracker	सरौता

O

Optimum	अनुकूलतम
Observations	(प्रेक्षित अंक) माप-तौल
Origin	मूल-बिन्दु
Ordinate	कोटिपक
Orbit	कक्षा, मार्ग
Ounce	औंस (इकाई)
Outline	रूपरेखा
Outlet	निर्गम-द्वार
Output	प्राप्त हुई
Oven	तंदूर
Oscillation	दोलन
,, period of	दोलन-काल, आवृत्ति-काल
Osmosis	रस-मिश्रण

P

Partial	आंशिक
Parachute	पैराशूट, हवाई छतरी
Parambulator	बच्चा-गाडी
Parabola	परवलय
,, hyperbola	अतिपरवलय
Paradox	भ्रम
Pan	पलडा
Parallel	समानान्तर
Particle	कण
Phase	कला
Phenomena	घटना
Peneumatic	हवा भरे हुए टायर
Pedal	पाँवदान
Pellet	गुटिका
Petrol	पैट्रोल
Perfect	पूर्ण
Periscope	परिदर्शक, पैरिसकोप
Perimeter	परिमाप
Permanent	स्थायी
Perpetual	सतत
Pendulum	(लोलक), दोलक
,, Simple	सरल-दोलक
,, grid-iron	बहु-दंडी दोलक
,, second's	सैकिंड दोलक
Compeusated Pendulum	(समीकृत), पूरक-दोलक
Compound Pendulum	(यौगिक), संयुक्त-दोलक
Peripherical	परिकेन्द्रिक
Period	आवृत्ति-काल
Penetration	(वेधन), भेदन
Pivot	चूल
Piston	पिस्टन
Pipette	पिपेट
Pitch (चूडी अंतर)	'पिच' (पैंच की) रास्त
Pinch-cork	काग
Platform-balance	प्लेटफार्म-बैलेंस
Plastic	प्लास्टिक
Platinum	प्लेटिनम
Plumb-line	साहुल, सूत्र
Plug	(डाट), प्लग, टोपी
Planet	ग्रह

Pliability	आनम्यता
Power	घात, शक्ति
,, arm	प्रयास-भुजा
Pound	पौंड
Poundal	पौंडल
,, foot	फुट-पौंड
Position	स्थिति
Powder	चूर्ण
Poker	चिमटा
Poisson's ratio	पोयशा-निष्पत्ति
Porous	सरध्र
Polish	पालिश
Pointer	(संकेतक) निर्देशक
Precaution	सावधानी
Pressure	दबाव
,, difference	दबावान्तर
,, critical	चरम-दाब
,, saturated	संतृप्त-दाब
,, un ,,	असंतृप्त-दाब
,, total	पूर्ण-दाब
,, centre of	दाब-केन्द्र
Propeller	प्रोपैलर
Pulley	घिर्री
,, moving	चलित घिर्री
Pump	पप

Q

Quality	विशेषता
Quantity	परिमाण
Quartz	स्फटिक
Quart	क्वार्ट (इकाई)
Quadruped	चौपाये
Quadrant	(पाद), वृत्त-भाग
Qualitative	गुणात्मक
Quantitative	मात्रात्मक
Quantum	क्वाटम

R

Radian	रेडियन (इकाई)
Radiation	विकिरण
Range	परास
Ratio	अनुपात
Rare	विरल
Rate	दर
Random	मनचाही
Reading	पाठ्यांक
Reaction	प्रतिक्रिया
Real	वास्तविक
Rebound	उच्छलन
Reasonable	युक्तिपूर्ण
Recede	पीछे हटना
Recoil (प्रतिक्षेप),	धक्का (पीछे की ओर)
Record	(रेकार्ड), अभिलेख
Rectangular	आयताकार
Reciprocal	व्युत्क्रात
Replacement	प्रतिस्थापन
Reference	सदर्भ
Regulator	नियत्रक
Regulation (पुनर्हिमायन)	पुनसिलीभवन
Relative	आपेक्षिक, तुलनात्मक
Release-Valve	निकास-द्वार
Reproduction	पुनरुत्पादन
Rest-position	स्थिर-स्थिति
Resultant	फलित, परिणामित
Reservoir	जलाशय
Residual	अवशिष्ट
Ribbon	फीता
Resolution	विश्लेषण (बलो का)
Resistance	प्रतिरोध, अवरोध
Retardation	वेग-ह्रास, वेग-रोध (मदन)
Restitution	प्रत्यवस्थान
Reynold's Number	रेनाल्ड-सख्या
Rider	आरोही
Right angle	सम-कोण
Rigidity	सुदृढता
Roughness	कठोरता
Roler	बेलन
Rudder	पतवार
Ring	वलय
Root	मूल

S

Sag	झुकाव
Safety Valve	सुरक्षा-वाल्व
Saturn	शनि (ग्रह)
Saturated	संतृप्त
,, Vapour-pressure	संतृप्त वाष्प-दाब
Sails	पाल (जहाजों के)
Satellite	(अनुषंगी); उपग्रह

Saucer	प्याली
Screw	पैंच
Screw-gauge	पैंच-मापक
Scintillation	जगमगाहट
Scaler	(अदिष्ट), अदैशिक
Scattered (प्रकीर्ण),	बिखरी हुई, विक्षिप्त
Section-cross	अनुप्रस्थ काट
Sheet	पर्त्त, चादर
Shield	परिरक्षक
Shear elasticity	विरूपक-स्थिति-स्थापकता
Shade	आभा
Shear force	विरूपक-बल
Shell	छद, पिट्टिका
Shellac	चपड़ा
Sensitivity	(संवेदिता) सुग्राहकता
Selective	वरणात्मक
Self-starter	स्वय-प्रचालक
Series	क्रम, श्रेणी
Senses	ज्ञानेन्द्रिय
Sea-level	समुद्र-तल
See-Saw	चैं-चैं
Searl's apparatus	सर्ल-उपकरण
Sea-Breeze	समुद्री-समीर
Simple Harmonic Motion (SHM)	सरल-आवर्त्त-गति
Similar	समरूप
Siphon	साइफन
Simultaneous	समक्षणिक
Sine-curve	ज्या-वक्र
Sieve	छलनी
Simmering	सुनसुनाहट
Sinker	डूबक
Silica	सिलिका (काँच)
Sleeve	आस्तीन
Slaturing	बुझाना (चूने का)
Slope	(प्रवणता), ढलान, उतार
Slip	(स्खलन), सरकन, रपट
Slit	(दीर्घ छिद्र), झिरी
Sluice	जल-द्वार
Soak	सोखना
Smooth	चिकना
Softness	कोमलता
Solid	ठोस
Solution	(विलयन) घोल
Solute	(विलयशील) घुलक
Solvent	(विलायक) घोलक
Source	(उद्गम) स्रोत
Solidification	घनीभवन
,, -temperature	,,-तापमान
Space-time	दिक्-काल
Soldering	टाँका लगाना
Speedo-meter	गति-मापी
Speed-governor	गति-नियन्त्रक
Spherometer	गोलाई-मापक (स्फैरोमीटर)
Spirit-level	तल-दर्शक (स्प्रिट-लैविल)
Spade	फावडा
Spirical	सर्पिल
Spring	कमानी
,, -Balance	कमानीदार तुला
,, -hair	-बालकमानी
Spark	चिनगारी, स्फुलिंग
Span	विस्तार
Specifed	निर्दिष्ट
Specific-gravity bottle	आपेक्षिक-घनत्व वाली बोतल
Sprangel-Pump	स्प्रैंगल-पंप
Spin	परिभ्रमण
Spout	टोंटी
Sponge	स्पंज
Stretched	तनी हुई
Strain	(विकृति) चाप
Stress	(प्रतिबल) विक्रिया
Stellar	तारकीय
Standard	प्रमाणभूत
Statics	स्थिर-गति-विज्ञान
Stirrup	रकाब
Stability	स्थिरता, स्थायी साम्य
Steel-Yard	लोहे का काँटा
Stroke	धक्का
Stopper	डाट
Stop-clock	विराम-घडी
Strained (over)	प्रतिस्थापित
Stove	स्टोव
Suction	चूषण
Sun-spots	सूर्य-कलंक

Super-saturated	अति-संतृप्त
Sun-dial	धूप-घड़ी
Sublimation	उद्धूमन
Sub-normal	उपप्रकृत
Supposed	कल्पित
Sweep-blade	वेगी फलक
Swimming	तैरना
Synthesis	सश्लेषण
System	तंत्र, प्रणाली, क्रम
Synchronous	समक्रमिक

T

Tar	(अलकतरा), तारकोल
Table	(सारिणी) तालिका
Tap	टोटी
Tape	फीता
Tapered	शुण्डाकृति
Tangent	स्पर्श-रेखा
Taken in order	क्रमानुसार
Target	लक्ष्य
Tepid	गुनगुना
Test	जाँच, परीक्षा, परख
Test-tube	परख-नली
Tension	तनाव
Tensile stress	कर्षण-चाप
Tendency	प्रवृत्ति
Temporary	अल्पकालिक
Telephone	टेलीफोन
Telegraph	तार-यंत्र, टेलीग्राफ
Teleprinter	तारलेखी, टेलीप्रिंटर
Theodolite	थियोडिलाइट
Threads	चूड़ियाँ (पेंच की)
Theory	वाद, सिद्धान्त
Thermo-electric couple	ताप-विद्युत् युग्म
Thurst	दाब
Tongs	चिमटी
Torsion	ऐंठन
Touch	स्पर्श
Torpedo	तारपीडो
Toothed	दाँतेदार
Track	पथ
Transmission	संचरण, भेदन
Projection (path of)	प्रक्षिप्त-मार्ग
Transverse	तिर्यक
Trolley	ट्राली
Tripod	तिपाई
Twist	मरोड
Tube-Well	ट्यूब-वैल
Turbine	टरबाइन
Tug	रस्सी
Tint	रंग
Tyre	टायर

U

Un-stable	अस्थायी
Un-corrected	अशोधित
Ultimate	अन्तिम
Unit	इकाई
,, -absolute	परम इकाई
,, -practical	व्यावहारिक इकाई
,, -fundamental	मौलिक इकाई
,, -derived	व्युत्पन्न इकाई
Upthrust	(उत्क्षेप) उत्प्लावन, उछाल
U-tube	यू-नली
Universal	सार्वभौमिक
,, -gas-constant (R)	सार्वभौमिक गैस स्थिरांक (R)
Uni-axial	एकाक्षी
Unlike	(प्रतिकूल), असम, प्रतिमुखी
Uniform	सम

V

Valve	वाल्व (कपाटी)
,, -safety	सुरक्षा-वाल्व
,, -needle	सूक्ष्म-वाल्व
,, -tube	वाल्व-ट्यूब (साइकिल का)
Variable	चल
,, -independent	स्वतन्त्र-चल-राशि
,, -dependent	परतन्त्र-चल राशि
Vanes	पखे
Vacuum Brake	वैकुअम-ब्रेक
Ventilation	वायु-शुद्धि
Vernier	वर्नियर
,, -scale	वर्नियर-पैमाना
,, -constant	वर्नियर-स्थिरांक
,. -calliper's	वर्नियर-कैलीपर्स
Velocity	वेग
Velocity-ratio	वेगानुपात
Verification	सत्यापन
Vertical	ऊर्ध्वतलीय

Vertex	शीर्ष
Vector	दैशिक (राशि)
Venus	शुक्र (ग्रह)
Viscous	सान्द्र, लसलसा
Vibration	कंपन
Vortex	भँवर
Volatile	वाष्पशील
Vice	(वाइस) शिकंजा

W

Watch	घड़ी
,, -stop	विराम-घड़ी
Water-tight	जलरुद्ध
Water-Vapour	जल-वाष्प-कण
Water-supply	पानी का वितरण
Watch-glass	शीशे की छोटी प्याली, (वाच-गिलास)
Weigh-Bridge	तोलने का बड़ा काँटा
Weight	भार
,, -box	बाटों का बक्स
Worm	पेंच विशेष
Work	कार्य
Wheel	पहिया, चक्र
,, -fly	गतिपालक-चक्र
Wrench	रिंच

Y

Yard	गज़
Year	वर्ष

Z

Zoology	जीव-शास्त्र
Zero-(absolure)	(परम) शून्य
Zero-error	(शून्यांकी त्रुटि) शून्य-त्रुटि
Zodiac	राशि-चक्र

ताप

(Heat)

A

Absorption-power	अवशोषण-क्षमता
Air-thermometer	वायु-तापमापक
Arsenic	सखिया (आरसनिक)
Asbestos	एसबसटॉस
Aspirator	(एसपिरेटर), चूषक
Atomic	परमाणवीय
,, -mono	एक-परमाणवीय
,, -di	द्वि-परमाणवीय

B

Ball	गैंद
British Thermal Unit (B Th. U.)	(ब्रिटिश-ताप-इकाई)
Blotting Paper	स्याहीसोख्ता
Boiler	बॉयलर
Brine	नमकीन पानी
Breeze	समीर
,, -land	स्थली समीर
,, -sea	समुद्री समीर
Bubbles	बुलबुले

C

Calori	कैलोरी (इकाई)
Calorimeter	कैलोरी मीटर
Calorimeter Bomb	बम-कैलोरीमीटर
Balorimeter Black's	ब्लैक-कैलोरीमीटर
,, -Bunsen's	बुनसन-कैलोरीमीटर
,, -Joly's (steam)	जौली-कैलोरी-मीटर (भापीय)
,, -Ice	बर्फीय-कैलोरीमीटर
Calorimetry	कैलोरीमापन
Camphor	कपूर
Carburetter	कारबुरेटर
Centigrade	सेंटीग्रेड
Cooling	शीतलीभवन
Conduction	संचालन
Conductor	संचालक
,, -good	सुचालक
,, -bad	कुचालक
,, -non	अचालक
Conductivity	चालकता
Convection	संवाहन
,, -currents	संवाहन धाराएँ
Compression	संचन
Combustion	दहन
,, -internal	अन्तर्दहन
,, -external	बाह्य-दहन
C_p=Specific Heat at constant pressure	स्थिर दाबीय [illegible]

C_v = Specific Heat at constant volume	(स्थिर आयतनीय वि. ताप)
Critical	चरम
,, -temperature	चरम-तापमान
,, -pressure	चरम-दाब
Crank	क्रैंक
Clouds	बादल, मेघ
,, -cirrus	केश-गुच्छाकृति
,, -camulus	शालमली-मेघ
,, -stratus	बलाहक-मेघ
,, -nimbus	चपल-मेघ
Cube-Leslie's	लीज़ले-घनक
Coefficient	गुणक
,, -pressure	दबाव-गुणक
,, -volume	आयतन-गुणक
,, -cubical expansion	घन-प्रसार-गुणक
,, linear expansion	रैखिक-प्रसार-गुणक
,, -superficial expansion	क्षेत्र-प्रसार-गुणक
Cycle	आवृत्ति
,, -Otto	ओटो-आवृत्ति

D

Davy's Safety Lamp	डैवी का सुरक्षा लैंप
Dead centres	मृत-बिन्दु
Degree	अंश (डिग्री)
Dew	ओस
Dew-point	ओसांक
Digestor (Papin's)	पैपिन की पतीली
Duct	डक्ट
D-valve	डी-वाल्व
Dynamic theory (of heat)	(ताप का) गतिज सिद्धान्त

E

Ebolution	उबलना
Ether	ईथर
Engine	इंजिन
,, -petrol	पैट्रोल-इंजिन
,, -gas	गैस-इंजिन
,, -reversible	पार्श्व-इंजिन
Exhaust	निर्गम
Expansion	प्रसरण
,, -linear	रैखिक-प्रसार
,, -superficial	क्षेत्र-प्रसार
,, -cubical	आयतन-प्रसार

F

Fire-Box	अग्नि-कोष्ठ
Fire-place	अँगीठी
Filter	निस्पदक
Final	अन्तिम
Fog	कोहरा
Freezing-point	हिमांक
Fresh	ताज़ा
Float	तैरक (फ्लोट)
Flint-stone	चकमक-पत्थर
Frequency	कंपनांक
Fusion	विलय, गलन
Furnace	भट्टी
Fuel	ईंधन

G

Glacier's factor	ग्लेशियर-अंक
Glass-screen	काँच का पर्दा
Green-House	काँच-गृह
Gama rays	गामा-किरणें

H

Halo	प्रभा-मंडल
Hail stones	ओले
Heat	ताप
,, latent (of fusion)	(गलन) गुप्त-ताप
,, ,, of steam	भाप का गुप्त ताप
,, -specific	विशिष्ट-ताप
,, -sensible	प्रकट-ताप
Hoar frost	पाला, तुषार
Hole	छेद, गढ़ा
Humidity	आर्द्रता
,, -relative	आपेक्षिक-आर्द्रता
Hygrometer	(हाइग्रोमीटर) आर्द्रता-मापक
,, -Regnault's	रैनूं ,,
,, -Wet and Dry Bulb.	गीली सूखी घुंडी वाला हाइग्रोमीटर
Hypsometer	हिप्सोमीटर

I

Ice-machine	बर्फ जमाने की मशीन
Invisible	अदृश्य

Infra (red) लघु-लाल (किरणे)

J

Joule जूल (इकाई)
Joul's Equivalent जूल स्थिराक
Joul Thomson Effect जूल-टामसन-प्रभाव

K

Kettle केतली
Kelvin's scale कैलविन्-क्रम (तापमान का)

L

Lid ढँकना
Loss क्षय
Liquefaction द्रवीभवन

M

Mechanical Equivalent (of Heat) यांत्रिक तुल्याक (ताप का)
Molten पिघली हुई
Mist धुंध
Muslin मलमल

P

Paraffin पैराफिन (मोम)
Point बिन्दु
,, -Freezing हिमाक (बर्फांक)
,, -melting पिघाल बिन्दु, द्रवणांक
,, boiling वाष्पांक, क्वथनांक
,, -ignition ज्वलन-तापमान
Porous सुषिर
Port द्वार
Polarisation ध्रुवीकरण
Polish मुलम्मा, कलई
Precaution सावधानी
Protection बचाव
Present वर्त्तमान, विद्यमान
Pressure दबाव
,, -atmospheric वायु-दबाव

Q

Quilt रजाई

R

Raise ऊपर उठाना
Radiation विकिरण, परिवहन
,, -correction विकिरण-शुद्धि
Radiator विकीर्णक, (रेडियेटर)
Rain-gauge वर्षा-मापक-यंत्र
Required आवश्यक
Regelation पुनर्हिमायन, पुनर्सिलीभवन
Rim किनारा
Rug कम्बल

S

Safe (अभय), सेफ
Safe-limit अभय मान
Sensitive सुग्राहक
Self-starter स्वय-प्रचालक
Selective वरणात्मक
,, -absorption वरणात्मक-शोषण
Sleet तुषार-वर्षा
Smoke धुआँ
,, -box धूम्र-कोष्ठ
Solidification धनीभवन
Socalled तथाकथित
Specific heat विशिष्ट ताप
Spray फव्वारा
Stefan's constant स्टीफेन-स्थिराक
Steam भाप
,, -chest भाप-कोष्ठ
Stirrer मथक
Storage घर, गोदाम, आलय
,, -cold बर्फ-घर
Stuffing Box पूरक-कोष्ठ
Surrounding चारो ओर का
Super-cooling अति-शीतलन
Sulphur गधक
Sudden आकस्मिक
Sublimation उद्धूमन

T

Temperature तापमान
,, -gradient तापमान-उतार
,, -critical चरम-तापमान
,, -normal वैधिक-तापमान
Textile (mill) पुतलीघर
Thermometer थर्मामीटर, तापमापक
,, -clinical डाक्टरी थर्मामीटर
,, -Air वायु-तापमापक
,, -Gas गैस-थर्मामीटर
,, -Maximum अधिकतम तापमान मापक
,, -Minimum अल्पतम ,, ,,
,, -Standard प्रमाणभूत

,, -Platinum-Resistance	प्लेटीनम-प्रतिरोध थर्मामीटर
Thermo-Electric Couple	ताप-विद्युत् युग्म
Thermal	तापीय
,, -conductivity	ताप-चालकता
,, -capacity	ताप-ग्राहिता
Thermos (flask)	थर्मोस (बोतल)
Thermoscope	थर्मोस्कोप
Thermodynamics	गतिज सिद्धान्त (ताप का)
Transmission	सचरण

U

Ultra-violet	पराकासनी किरणे

V

Value	मान
,, -calorific	कैलोरीमान
Vaporisation	वाष्पीकरण
Vacuum	शून्य-स्थान
,, Torcelli's	टारसैली ,,
Ventilation	वायु-शुद्धि
Violent	उग्र, तीव्र
Volatile	उडने वाली

W

Water Equivalent	जल-तुल्यभार
Water-trap	जल-कूट
Weight Thermometer	भार-तापमापक
Wire-gauge	तार की जाली
Winds	हवाये
,, -trade	व्यापारिक
,, -North	उत्तरी ,,
,, -monsoon	मानसून ,,
Wien's Law	वीन का नियम

प्रकाश

(Light)

A

Aberration	(विपथन), अपेरण
,, -chromatic	वर्णापेरण
,, spherical	गोलापेरण
Achromatic (lens)	नीरग, अवर्णक
Actinic ray	कियाशील किरण
Angle of (incidence)	आपतन-कोण
,, ,, reflection	परावर्त्तन-कोण
Angle of refraction	आवर्त्तन-कोण
,, ,, deviation	विचलन-कोण
,, ,, emergence	निर्गमन-कोण
,, ,, critical	(क्रान्तिक) चरम-कोण
Analyser	विश्लेषक
Apart	हटे हुए
Apex	(शिखाग्र) शीर्ष
Aperture (of lens)	(व्यास) मुख-पृष्ठ
Astigmatism	दृष्टि-वैषम्य
Aungstrom (unit)	आन्गस्ट्रम (इकाई)
Axis	अक्ष
,, -principal	मुख्य (प्रमुख) अक्ष
,, -secondary	गौण अक्ष

B

Band	पट्ट
Beam (of light)	किरण-पुंज
Bench-(optical)	प्रकाश-मच, (पीठ)
,, -Error	मच-अशुद्धि
,, ,, -rod	मच-अशुद्धि-शोधक छड
Brightness	चमक
Binocular (vision)	द्विनेत्री (दृष्टि)

C

Candle	मोमबत्ती, कैंडल
,, -power	कैंडल-पावर (शक्ति)
,, -Standard	प्रमाण-बत्ती
,, foot	फुट-कैंडिल
Caustic-curve	(किरण) तीक्ष्ण-वक्र
Camera	(चलचित्र) कैमरा
,, -pin-hole	पिन-होल कैमरा
Common	सर्वनिष्ठ
Configuration	जमावट
Conventional	प्रथानुसार
Conjugate (focii)	(संबद्ध) अनुबद्ध (सगम)
Convergent	(अभिबिन्दु), संसृत